हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीजका २२ वाँ ग्रन्थ ।

छत्रसाल ।

मराठी भाषाके सुप्रसिद्ध
ऐतिहासिक उपन्यासका
हिन्दी अनुवाद ।

अनुवादकर्त्ता—

श्रीयुत बाबू रामचन्द्रवर्मा,

सम्पादक नागरीप्रचारिणीपत्रिका और
हिन्दी-शब्दसागर ।

प्रकाशक—

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई ।

मार्गशीर्ष, १९७६ वि० ।

नवम्बर, सन् १९१९ ई० ।

जिल्दवारका मूल्य १।।।=)]   द्वितीयावृत्ति ।   [सादीका मूल्य १।।)

निवेदन ।

आधुनिक हिन्दी-साहित्यमें प्राय उपन्यासोंकी ही भरमार है, और उन उपन्यासोंका भी अधिकाश बंगलासे ही अनुवादित है । यद्यपि भारतकी अन्यान्य देशी भाषाओंमें भी बहुतसे अच्छे उपन्यास और दूसरे ग्रन्थ हैं पर न जाने क्यों हिन्दीके लेखक उनसे बहुत ही कम काम लेते हैं । हिन्दी-सेवियोंको इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए ।

मराठी भाषा बहुत ही उन्नत ओर पुष्ट है । उसके सेवियोंमें केवल अनुवादक ही नहीं बल्कि बहुतसे लेखक भी हैं । श्रीयुक्त बालचन्द नानचन्द शहा वकील भी उन्हींमेंसे एक नये, पर होनहार लेखक हैं । आपने 'सम्राट्-अशोक' नामक एक बहुत अच्छा उपन्यास लिखा है । आपकी रचना-चातुरीसे प्रसन्न होकर सुप्रसिद्ध देशभक्त श्रीयुक्त दादासाहब खापर्डेने सम्मति दी है कि आप मराठी भाषाके सर वाल्टर स्काट होंगे । प्रस्तुत पुस्तक आपके ही लिखे हुए छत्रसाल नामक उपन्यासका अनुवाद है । पुस्तककी उपयोगिता आदि सिद्ध करनेके लिए केवल इतना ही बतला देना यथेष्ठ है कि 'केसरी' और 'इन्दुप्रकाश' आदि अच्छे अच्छे पत्रोंने उसकी बहुत अच्छी आलोचना और श्रीयुत शिवराम महादेव पराजपे तथा श्रीयुक्त दादासाहब खापर्डेने बहुत प्रशसा की है ।

औरंगजेबके राजकालमें बुन्देलखण्डको मोगलोंके अधिकारसे निकालकर स्वतत्र करनेके लिए महेवाके राजा (बल्कि जागीरदार) चम्पतराय और उनके पुत्र छत्रसालको जितना परिश्रम और जैसी कठिनाइयोंका सामना करना पडा था, उनका इस पुस्तकमें बहुत ही उत्तम वर्णन है। सभी युगों और देशोंमें देशसेवी भी होते हैं और देशद्रोही भी और इस पुस्तकमें दोनों प्रकारके लोगोंके कार्य आदि दिखलाये गये है । इस पुस्तकसे सबसे बडी शिक्षा इसी बातकी मिलती है कि जो कार्य्य—विशेषत देशसेवाका कार्य्य—सच्चे हृदयसे, परोपकारके विचारसे और दृढतापूर्वक किया जाता है वह अन्तमें अवश्य पूरा हो जाता है । इस उपन्यासके नायक छत्रसाल बहुत बडे वीर, प्रतापी, और देश-हितैषी थे, इस लिए देशसे कुछ भी प्रेम रखनेवाले मनुष्यके लिए यह उपन्यास बडे ही महत्त्वका और अवश्य पठनीय है । इसके पढनेसे हृदयमें स्वाभिमानकी जागृति होगी, इसमें कोई सन्देह नहीं । सुन्दर चरित्राङ्कन और मनोहर स्थल-वर्णन इस उपन्यासरूपी स्वर्णमें मानों सुगन्ध हो गये हैं ।

हमारी समझमें चरित्राङ्कनमें थोडासा दोष आ गया है, पर तो भी अनेक कारणोंसे वह क्षम्य है। मूल पुस्तकमें बादशाही महलोंके दृश्य दिखलाते समय कुछ असबद्धता आ गई है, पर इसका कारण केवल यही है कि लेखक महाराष्ट्र हैं और वे शाही महलोंकी रीति नीति आदिसे यथेष्ट परिचित नहीं हैं। कचुकीरायका चरित आवश्यकतासे कहीं अधिक नीच, तुच्छ और घृणित दिखलाया गया है। तीसरे प्रकरणमें कचुकीरायको जनाने वेशमें रणदूलहखॉके पास भेजा है और वहॉ उनसे खॉके पैर दबवाये हैं। औरगजेबकी बेगम आयेशाको राजा शुभकरणकी बहन सिद्ध किया है। इनके अतिरिक्त कई ऐतिहासिक और नाम-सम्बन्धी भूलें भी हैं। चम्पतरायको 'महोबा' का राजा लिखा है जो वास्तवमें महेबाके जागीरदार थे। महोबा और महेबा जुदा जुदा स्थान हैं।

पर तो भी पुस्तकमें जितने गुण हैं उन्हें देखते हुए उक्त दोष विशेष महत्त्वके नहीं रह जाते। इस अनुवादमें यथासाध्य वे दोष निकाल दिये गये हैं। जो बातें बहुत अनावश्यक, अनुचित या असबद्ध जान पड़ी हैं वे या तो छोड दी गई हैं और या बदल दी गई हैं। इसके अतिरिक्त मूल पुस्तकका चौवीसवॉं प्रकरण बिलकुल ही छोड़ दिया गया है, क्योंकि उसमें राजा शुभकरणकी दिल्लीके शाही महलमें उनकी बहन आयेशा (असली ललिता) से भेंट कराई गई है। पर इस अनुवादमें ललिताका आयेशा होना इस लिए सिद्ध नहीं किया गया है कि बुन्देलखण्डके राजकुलकी कोई कुमारी मोगलोंके महलोंमें नहीं गई।

आशा है, एक परम शिक्षा-प्रद, मनोहर और उच्च कोटिके उपन्यासका यह अनुवाद पाठकोंको रुचिकर होगा।

काशी,
१ जून १९१६।

निवेदक—
रामचन्द्र वर्म्मा।

कृतज्ञता-प्रकाश।
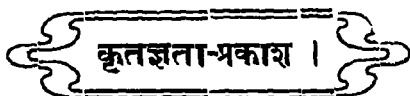
छत्रसालके मूल लेखक श्रीयुत बालचन्द नानचन्द शहा वकील और प्रकाशक श्रीयुत बालचन्द रामचन्द कोठारी बी ए. महाशयके हम बहुत ही कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने इस अपूर्व उपन्यासके हिन्दी अनुवादको प्रकाशित करनेकी आज्ञा देकर हमें बहुत ही उपकृत किया है। आप लोग यदि आज्ञा न देते, तो हिन्दी संसार इस अभिनव रचनाके आस्वादसे वंचित रहता।

—प्रकाशक।

छत्रसाल ।

पहला प्रकरण ।

देवीका प्रसाद ।

'जय ! विन्ध्यवासिनी देवीकी जय ! ' मुक्त-कठसे जय-घोष करते हुए चम्पतरायके मनमें तरह तरहके भावोंकी विमल लहरें उठने लगीं। उनके चेहरे पर मनकी उच्चताकी मनोहर झलक दिखाई देने लगी। उनके स्वभावत गम्भीर और तेजस्वी चेहरेपर सुजनता और अभिमानका अलौकिक चित्रसा खिंच गया। भक्तिकी पराकाष्ठा दिखलानेके अभिप्रायसे देवीके चरणोंपर अपना सिर अर्पित करनेके लिए उद्युक्त बुंदेले राज-घरानेके मूल-पुरुषका स्मरण करके उनका प्रेमभाव जाग्रत हुआ और देवीकी कृपासे अपनी तलवारके भरोसे पर स्वावलवन और स्वतन्त्रताका मार्ग ग्रहण करनेवाले अपने प्रपितामह रुद्रप्रतापका स्मरण करके उनके मनमें अभिमानका सचार हुआ। दोनों एक ही देवीके भक्त थे। परन्तु उन दोनोंकी उपासना करनेकी पद्धति अलग अलग थी। एकने देवीके सामने अपना रक्त बहाकर बुंदेले राज-वशकी स्थापना की थी, और दूसरेने अपने शत्रुओंका रक्त बहाकर बुंदेले राज-वशका नाम उज्ज्वल किया था। मन्दिरमें प्रवेश करनेके समय चम्पतरायकी आँखोंके सामने अपने कुलकी उत्पत्ति और वैभवका चित्र खिंच गया। उनकी आँखोंमें प्रेमाश्रु भर आये। अभिमानके कारण उनके सारे शरीरमे रोमाच हो आया। मन्दिरके मडपमें देवीके सामने पहुँचकर उन्होंने पुन देवीका जयजयकार किया। परन्तु उस समय उन्हें देवीके

दर्शन न हुए। चम्पतरायको इस बातके कारण बहुत आश्चर्य हुआ कि बहुत दूरसे तो मुझे देवीके दर्शन हो गये पर बहुत पास पहुँचनेपर दर्शन न हुए। उन्होंने अपने उद्विग्न मनको शान्त किया, सेल्हेके किनारेसे उन्होंने अपनी आँखोंके आँसू पोंछे। तब कहीं जाकर उन्हें दिखलाई पडा कि विन्ध्यवासिनी देवी सोनेके सिंहासनपर अचल रूपसे बैठी हुई है।

ज्योंही चम्पतराय देवीके दर्शन करके वहाँसे हटने लगे त्योंही फिर देवीका जयजयकार हुआ। उस जयजयकारके कारण चम्पतरायको कुछ आश्चर्य हुआ। आज देवीका वार्षिक शृंगार और उत्सव था, इसलिए वे अच्छी तरह जानते थे कि अपनी कुलदेवीके दर्शनोंके लिए विंध्याचल पर सारे बुंदेलखडी उमड पडे हैं। वे अच्छी तरह जानते थे कि देवीके जय-कारों और उनकी प्रतिध्वनियोंसे महोत्सवके दिन वह सारा वन्यप्रदेश गूँज उठता है। इतना होनेपर भी जयजयकारकी ध्वनि सुनते ही चम्पतराय चकित हो गये। उस काँपती हुई और बहुत ही धीमी आवाजसे उन्होंने अनुमान कर लिया कि यह जय-ध्वनि किसी मरणोन्मुख वृद्धके गलेसे निकली है। उन्होंने पीछे उलट कर देखा कि रणवीर शुभकरण खड़े हैं। चम्पतराय यह न समझ सके कि समरक्षेत्रमें समरतेजसे विचरनेवाला वीर देवीके सामने इतना भीरु क्यों हो गया। अपनी भीषण गरजसे सारे जगत्को कँपा देनेवाले शेरकी तरह समरभूमिको कँपाकर शत्रुओं पर अपनी वीरताका सिक्का जमानेवाला रणकेसरी देवीके मन्दिरमें पहुँच कर गीदडोंकी तरह क्यों बोला। चम्पतरायकी समझमें यह बात न आई कि देवीका जयजयकार करते समय मेरा मन जैसा प्रफुल्लित और प्रसन्न रहता है वैसा ही उनका भी क्यों नहीं है, किसी पातकी मनुष्यकी तरह उनका मुँह काले ठीकरेसा क्यों हो गया है, उनकी आवाज इतना नि सत्व क्यों हो रही है। चम्पतरायके शुभकरण कट्टर वैरी थे। परन्तु शुभकरणकी वह शोचनीय दशा देखकर चम्पतरायको बहुत दु ख हुआ। वे उनकी ओर करुणाकी दृष्टिसे देखने लगे। उस समय उन्हें शुभकरणके गालों पर दो बूँद आँसू चमकते हुए दिखाई दिये। वे उसी समय ताड गये कि वे आँसू प्रेमके नहीं बल्कि दु खके हैं, रणधीर शुभकरण अपने किये हुए दुष्कर्मोंके लिए पश्चात्ताप और शोक कर रहे हैं। चम्पतरायको अपनी और शुभकरणकी बाल्यावस्थाके वे दिन याद आगये जब कि वे दोनों मिलकर स्वावलम्बनकी बातें किया करते थे और अपनी जन्म-भूमि बुंदेलखंडको यवनोंके दासत्वसे मुक्त करनेके उपाय सोचा करते थे। उन्हें यह भी

स्मरण हो आया कि वाल्यावस्थाके मधुर स्वप्नका आनन्द लेनेके समय अकस्मात् बीचमें ही हम लोगोंकी मित्रता और उसके साथ हमारी सारी कल्पनाओंका किस प्रकार विनाश हो गया और परस्पर एक दूसरेकी सहायता करनेवाली तलवारें किस प्रकार एक दूसरेकी खूनकी प्यासी हो गईं। उन्होंने एक वार फिर अपने लडकपनके मित्रकी ओर देखा। वे अच्छी तरह समझ गये कि यद्यपि वाल्यावस्थाके कल्पनाओंके अकुरसे वडा वृक्ष न तैयार हुआ हो तो भी वह अकुर पहलेकी तरह ज्योंका त्यों वना है, उसका समूल नाश नहीं हुआ है। यह सोचकर चम्पतरायके मनमें कुछ दु ख हुआ कि हमने आज तक अपने मित्रके मनवाले अकुरको वढने न दिया वल्कि समय समय पर उस पर आघात किया, उनके अविवेक और विचारशून्यताका उचित वदला लेकर ही हम सन्तुष्ट हुए। उन्होंने उसी समय मनमें निश्चय किया कि अव तक जो कुछ भूल हुई है उसका सुधार होना चाहिए और अपने मित्रके मानसिक दोषका कारण पूछकर उसे निर्मूल करना चाहिए। अपने पुराने मानापमानकी सव बाते वे भूल गये। चम्पतराय मेल करनेके लिए ज्योंही कुछ वोलना चाहते थे त्योंही उन्होंने देखा कि शुभकरण मेरी ओर करुणादृष्टिसे देख रहे हैं और दूर खडे हुए ढोंडेरके राजा कंचुकीरायसे वातें कर रहे हैं। मानी चम्पतरायका स्वाभिमान फिर जाग्रत हुआ। वे मन-ही-मन यह निश्चय करके पासके एक आसनपर वैठ गये कि इस देशद्रोहीके प्राण लेकर इसकी लाशपर ही वुंदेलखडकी स्वतंत्रताका झंडा खडा करना चाहिए।

वाल्यावस्थाकी शुभकरणकी प्रेमपूर्वक मित्रताका स्मरण करके तो चम्पतरायका हृदय पुराने प्रेमसे भर जाता था और उसके उपरान्तका उनका दुष्टतापूर्ण व्यवहार याद करके तुरन्त ही उनके मनमे घृणा उत्पन्न हो आती थी। इतनेमें ओडछेके राजा पहाडसिंह और उनकी रानी हीरादेवीका वहाँ सपरिवार आगमन हुआ। उनके चोपदार तथा दूसरे सेवक उस समय भी उनके साथ थे। ज्योंही राजा पहाडसिंहकी सवारी मन्दिरके दरवाजेके पास पहुँची त्योंही उनके चारणों और भाटोंने ललकार कर उनकी विरुदावलीका वखान आरम्भ किया। कदाचित् यह जाननेके लिए कि देवी इस ललकारका क्या उत्तर देती है उनकी सवारी थोडी देर तक दरवाजे पर ही रुकी रही। अभिमानी पहाडसिंह और उनके चारणों आदिको यह वतलानेके लिए कि यह गर्वोक्ति देवीको स्वीकार नहीं है, उनकी ललकारका प्रत्येक शब्द प्रतिध्वनिके रूपमें उनके कानोंतक

पहुँचा। उसे सुनकर पहाडसिंह मुस्कराए, उन्होंने अपने मनमें समझा कि स्वयं देवी अपने मुँहसे कह रही है कि बन्दीजनोंकी ये सब बातें सत्य हैं। यह देख-कर कि देवीने हमारे स्वामीकी महत्ता स्वीकार कर ली है, बन्दीजनों, चोपदारों और दूसरे सेवकोंने जोरसे जय-घोष किया। चाहे यह कह लीजिए कि उस जयजयकारमें सम्मिलित होनेमें पहाडसिंह और उनकी रानीने अपनी अप्रतिष्ठा समझी और चाहे यह मान लीजिए कि उन्होंने बडे आदमी होकर सब लोगोंके सामने ईश्वरका नाम लेना उचित नहीं समझा, पर उन लोगोंके मुँहसे उस समय एक भी शब्द न निकला। वे दोनों उसी प्रकार सिर उठाये हुए मन्दिरमें घुसे और चम्पतरायसे जहाँ तक दूर हो सका एक ऊँचे आसन पर जा बैठे। चम्पतराय उनके चचेरे भाई थे, वे उन्हें ओडछेका राज्य दिलवानेवाले और उनके हितकर्ता थे। उनके पास जाकर उनसे शिष्टाचारकी बातें करना तो दूर रहा, उन दोनोंने शान्त और सौम्यभावसे उनकी ओर देखना भी उचित न समझा। मत्सर, क्रोध और तुच्छता आदि विकारोंसे कलंकित दृष्टिसे देख कर ही वे दोनों अपने उपकार करनेवालेके उपकारोंका बदला दे रहे थे।

पहाडसिंह और उनकी रानीका आजका व्यवहार देखकर चम्पतराय बहुत ही चकित हुए। कार्य्य सिद्ध होने तक—ओडछेके राजसिंहासन पर पूरा पूरा अधिकार पानेके समय तक—हमारे चचेरे भाई पहाड़सिंह हमारे साथ कितना उत्तम व्यवहार करते थे, उनकी पत्नी हीरादेवी हमारा कितना आदर सत्कार करती थी, परन्तु ओडछेका राजमुकुट सिरपर धारण करते ही पहाड-सिंहका नम्र जान पडनेवाला मस्तक कितना उद्धत हो गया हीरादेवीका पह-लेका आदर-सत्कार फीका पडता पडता अन्तमें किस प्रकार बिलकुल मायावी प्रमाणित हुआ, आदि आदि सब बातोंका चित्र चम्पतरायकी आँखोंके सामने खिंच गया। चम्पतरायने स्वप्नमें भी इस बातका अनुमान नहीं किया था कि दिखौआ व्यवहारके स्वच्छ परदेकी आडमें उनका कितना निन्दनीय स्वभाव छिपा हुआ है। वे आज तक पहाडसिंहका उपकार ही करते आये थे। हीरा-देवीके आजके वैभव और अभिमानके कारण ये ही थे। उन्होंने पहाडसिंह या हीरादेवीका कोई ऐसा अपकार नहीं किया था जिसके कारण वे लोग उनके साथ मत्सर और द्वेष करते अथवा उनकी ओर तुच्छतापूर्ण दृष्टिसे देखते। अपने पराक्रमसे मुसलमानोंके अधिकारसे ओडछेका प्रबल राज्य निकाल कर और उसपर परावलंबी पहाडसिंह और हीरादेवीका अधिकार कराके चम्पतराय

महेवाकी अपनी छोटीसी जागीर पर ही सतुष्ट रहे थे । जिस ओडछा राज्यपर उन्होंने स्वयं अधिकार किया था उसपर अधिकार वनाये रखनेकी कभी इच्छा नहीं हुई । उनके इस उदार व्यवहार और अलौकिक उपकारके वदलमें ही उन्हें पहाडसिंहके मत्सर, क्रोध और तुच्छता आदिभाव इनाममें मिले थे । अस्तु ।

वुदेलखडके सव राजा-महाराजाओंको अपने अपने स्थानपर वैठे हुए देख कर मन्दिरके मुख्य पुजारी चम्पतरायके पास पहुँचे और हाथ जोडकर कहने लगे—" राजन्, देवीकी सव सामग्री तैयार है । यहाँके प्रधान प्राणनाथ महा-राज पूछते हैं कि पूजा आरम्भ हो अथवा अभी और कोई आनेवाला है ? "

चम्पतरायने कहा—" आजका पुण्यमहोत्सव देखनेके लिए प्रतिवर्षके नियमानुसार सभी वुदेले नृपति यहाँ आगये हैं । महाराजसे जाकर मेरी ओरसे प्रार्थना करो कि अव पूजा आरम्भ कर दी जाय ।" इसके वाद इधर उधर चारों ओर देखा, पर वहाँ उन्हें कुमार दिखाई न दिये । इस पर उन्होंने पुजा-रीसे फिर कहा—" आचार्य ! कुमार यहाँ दिखलाई नहीं देते । वह अभी आते ही होंगे । आजका पुण्य महोत्सव देखनेकी उनकी वडी इच्छा है । इस लिए महाराजसे कह दो कि यदि वे थोडी देर ठहर जायँ और कुमारके आनेपर पूजन आरम्भ करें तो कुमार आपके और समस्त उपस्थित सज्जनोंके वहुत कृतज्ञ होंगे । " इसके उपरान्त तुरन्त ही चम्पतरायने अपने एक सेवकको आज्ञा दी कि वहुत जल्दी जाकर कुमारको ढूँढ लाओ ।

पुजारीको चम्पतरायसे पूजनकी आज्ञा माँगते हुए देखकर हीरादेवीने मनमें अपना वहुत अपमान समझा । उसे इस वातका वहुत दुःख हुआ कि एक क्षुद्र राजकुमारके लिए हम लोगोंको रुकना पडता है और विना उसके आये पूजन आरम्भ नहीं हो सकता । उसने तुरन्त अपने पतिसे आज्ञायुक्त प्रार्थना की कि इस अपमानकारक व्यवहारके लिए पुजारीको उचित दड दिया जाना चाहिए । शुभकरण वुँदेलेने भी उसकी वातका समर्थन किया । पहाडसिंह विकट रूपसे हँस पडे । वे वोले—" पहले यह देख लो कि युवराज विमलदेव और युवराज दलपतिराय यहाँ उपस्थित हैं या नहीं । यदि उन दोनोंकी अनुपस्थितिमें भी तुम लोग पूजन प्रारभ करना चाहो तो मैं आज्ञा दे दूँगा कि महेवाके राजकुमा-रकी प्रतीक्षा न की जाय और पूजन तुरन्त आरम्भ किया जाय । "

हीरादेवी और शुभकरणको शान्त होकर अपना अपना क्रोध दवाना पडा । वे दोनों फिर कुछ न वोले । हाँ दोनोंने राजकुमारोंको ढूँढनेके लिए नौकर भेज दिये ।

जो नौकर युवराजोंको ढूँढनेके लिए निकले थे उन्हें मदिरसे बाहर निकलनेके पहले ही दोनों युवराज मिल गये।

इतनेमें ही वहाँ बारह वर्षकी एक बालिका दौड़ती हुई आ पहुँची । उसके घने बाल कन्धोंपर बिखरकर इधर उधर हवासे खेल रहे थे, दौड़नेके कारण जल्दी जल्दी चलनेवाली उसकी साँससे मदिरकी हवा सुगन्धित हो रही थी। भयके कारण उसके लाल हुए कपोल और चचल दृष्टिको उसके ललाटके साथ एक ही समयमें देखकर मनमे आप ही आप यह प्रश्न उत्पन्न होता था कि बरफके समान स्वच्छ आकाशमें रक्तवर्णकी उषा-देवीको चमकते हुए देखकर चचल चपला उसके साथ क्यों सम्मिलित हो रही है ? उसके कलहप्रिय ओंठ यह समझकर कि संसारके किसी युवतीके ओंठ हमारी बराबरी नहीं कर सकते आपसमें झगड़ झगड कर लाल और एक दूसरेसे अलग हो रहे थे। उस कलहसे लाभ उठा कर उसके दाँतोंने भी अपनी सौम्य किरणें और साँसकी सुगध बाहर निकाल कर मानो यह कहना आरभ किया कि—"हममें जूहीके फूलोंकी सुगधि और शुद्धता तथा चंद्रकिरणोंकी रुचिरता और तेज है; तुम्हारे सौन्दर्यमें रक्खा ही क्या है ?" दौडती हुई बालिका आकर मदिरमें मंडपके पास खडी हो गई। यदि उसकी मनोहर गति, नेत्रोंकी दिव्य चपलता और साँसमेंसे निकलनेवाली अलौकिक सुगंधिको एक ओर छोड दिया जाता और देवीके अस्त्रों और क्रूरदृष्टि पर ध्यान न दिया जाता तो अवश्य ही कुछ देरके लिए सब लोगोंको यह भ्रम अवश्य हो जाता कि वह साक्षात् विन्ध्यवासिनी देवी ही है। विंध्यवासिनीके मस्तक पर मोतियोका मुकुट सुशोभित था परंतु बालिकाके माथेपर पसीनेके मोती ऐसी उत्तमतासे लगे हुए थे कि विंध्यवासिनीकी बराबरी करनेके लिए उसे किसी दूसरे नकली मुकुटकी आवश्यकता ही न थी। बहुतसे लोगोंको यह आशंका होने लगी कि सुन्दरताकी वह जीती जागती पुतली बढती बढती कहीं विंध्यवासिनीकी मूर्तिमें मिलकर एक रूप न हो जाय। पर उस सुन्दर बालिकाने लोगोंकी वह आशका थोड़ी ही देरमें दूर कर दी। विशाल मडपके पास खडी होकर वह मंदिरके प्रधान प्राणनाथजीसे स्वर्गीय मनोहर स्वरमें कहने लगी,—

"प्रभो! युवराज छत्रसाल और उनके मित्र युवराज दलपतिराय तथा युव-राज विमलदेव एक सत्कार्यमें यश प्राप्त करके देवीके दर्शनोंके लिए आ रहे

है। उन्होंने मुझे आपसे यह प्रार्थना करनेकी अनुमति दी है कि जब तक वे लोग न आवें तब तक आप मगलकार्य आरंभ न करें।" मंडपसे बाहर निकलते हुए प्राणनाथने पूछा—"छत्रसाल और उनके मित्रोंने किस कार्यमें यश प्राप्त किया है?" जिस समय वे बाहर निकले उस समय उनके तेजस्वी चेहरेके चारों ओर तेजका मडलमा चमकता हुआ दिखाई पडता था। उनकी निष्काम बुद्धि, अखड ब्रह्मचर्य्य और उत्कट तपोबलका पूरा पूरा पता उनके गभीर परतु तेजस्वी चेहरेसे सहजमे ही लग जाता था। जिस समय वे हँसते हुए मुखसे बालिकासे पूँछते हुए मडपके बाहर निकले, उस समय उन्हें देख कर उनके भक्त-चकोरोंने समझा कि अमृतकी वर्षा करनेवाला चद्रमा मेघके काले आवरणको दूर हटाकर अपना वदन प्रकाशित करने लगा है। उनके प्रति आदर प्रकट करनेके लिए सब लोग उठ खडे हुए। केवल ओडछेके राजा पहाडसिंह और उनकी पत्नी हीरादेवीने अपना स्थान न छोडा। भक्तोंको बैठनेका इशारा करके प्राणनाथने कहा—"सज्जनो! बैठ जाइये। मेरे हर बार आने जाने पर इस प्रकार उठने बैठनेकी आवश्यकता नहीं। यह सुदर बालिका आप लोगोंके लिए जो समाचार लाई है उसे आप लोग शात होकर सुनें। (बालिकाकी ओर मुडकर) हाँ, बतलाओ, हमारे छत्रसाल और उनके मित्र कौनसा उत्तम कार्य करके यहाँ आ रहे हैं? किस सत्कार्यमें लगे रहनेके कारण उन लोगोंको यहाँ आनेमें इतना विलब हो रहा है?"

इस पर बालिकाने उत्तर दिया—"देवीको सुन्दर माला चढानेके उद्देश्यसे विंध्यपर्वतपरसे वन-पुष्प सग्रह करनेके लिए आज प्रात काल मैं युवराज विमल-देवके साथ दाहिनी ओरकी पहाडीसे ऊपर चढी थी। उस समय बाल-रविकी सुनहरी किरणें वहाँके फूलोंपर पड रही थीं। ऐसा जान पड़ता था कि मानो वे फूल सोनेके बने हुए है। उस प्रकारकी शोभा हम लोगोंने पहले कभी नही देखी थी और आगे हम लोगोंको और भी सुदर दृश्यकी आशा थी, इस लिए हम लोग बहुत दूर निकल गये। हम लोगोंके फूल-सग्रह कर चुकनेके बाद पूजन आरभ होनेमें बहुत विलब था। इस लिए हम लोगोंने वहीं बैठ कर माला गूँथना निश्चय किया। एक ओरसे मैं माला गूँथने लगी और दूसरी ओरसे युव-राज विमलदेव गूँथने लगे। थोडी ही देरमें माला तैयार हो गई। विमलदेवने बहुत ही जल्दी और बहुत ही अच्छी माला गूँथी थी इस लिए मैं हँसती

हुई स्त्रियोंके योग्य काममें उनकी इस चतुरताकी प्रशंसा करने लगी । इतनेमें वहुतसे मनुष्योंने—मनुष्यों क्या बल्कि असुरोंने—हम लोगोंको घेर लिया। ”

वालिकाकी वातें सब लोग एकाग्रचित्त होकर सुनते रहे । विमलदेवका नाम सुनते ही हीरादेवी और पहाड़सिंह दोनों आकर उस वालिकाके पास खड़े हो गये। ढँडेरके राजा कचुकीराय तो पहलेसे ही वहाँ खड़े हुए थे ।

पंडित प्राणनाथने पूछा—" तुम लोगोंको घेर कर खड़े हो जानेवाले लोग कौन थे ? तुम लोगोंको क्या वे असुर सरीखे जान पड़े ? ”

वालिकाने उत्तर दिया,—“ जी हाँ । सीतादेवीकी कथामें लकाके असुरोंके स्वभावका आप जैसा वर्णन करते हैं, उन लोगोंका स्वभाव भी वैसा ही था । पर असुरोंकी तरह उनके लबे दाँत, मोटी नाक और होंठोंसे वाहर निकली हुई जीभ न थी । उनके कपडे वढिया और अधिक दामोंके थे । अफीमचियोंकी तरह उनकी आँखें झपी हुई और आधी वद थीं। वे लोग मनमें मानो समझते थे कि और लोगोंको क्षुद्र समझ कर उन पर हुकुम चलाना हमारा कर्तव्य है । ऐसे असुर पिताजीके दरवारमें प्राय आया करते हैं । पिताजी उन्हें देवताओंकी तरह पूज्य समझते हैं और उनका वहुत आदर-सत्कार करते हैं । जव तक वे लोग उनके पास रहते हैं तव तक वे वरावर उनकी सेवामें निमग्न रहते हैं ।—”

ढँडेरके राजा कंचुकीरायने वीचमें ही बात काट दी और बिगड कर कहा—“ विजया, व्यर्थकी बातें मत कर । साफ साफ वतला कि हमारे सार्वभौम राजाके उन जात-भाइयोंने क्या किया ? ”

चम्पतरायने कहा—“ कचुकीराय ! इस वालिकाको क्या मालूम कि सार्वभौम राजा कौन हैं और उनके जात-भाई कौन हैं । दिल्लीके वादशाही तख्तके सामने जाने पर, वल्कि दिल्लीकी वादशाहीका नाम सुनते ही अपने ही भाईवदोंमें अभिमानसे उठा रहनेवाला मस्तक कितना झुकाना पड़ता है, उद्धतपनसे वाते करनेवाली जवानको कितना सौम्य करना पडता है, और अपने प्रभुत्वका ध्यान छोडकर सेवक वने रहनेमें ही किस प्रकार अपनेको धन्य समझना पड़ता है, ये सब राजनीतिके गूढ तत्त्व यह अज्ञान बालिका किस प्रकार समझ सकती है ? यह अपनी टेढी सीधी भाषामें जो कुछ कह रही है, उसी पर हमें सन्तोष करना चाहिए। ”

चम्पतरायकी बात सुनकर कचुकीरायने क्रोधभरी दृष्टिसे उनकी ओर देखा और तव अपनी कन्यासे पूछा—" हाँ, तब क्या हुआ ? "

बालिका फिर कहने लगी—" हम लोगोंको चारों ओरसे घेर कर वे लोग बहुत देर तक आपसमें बातचीत करते रहे और हम लोगोंको देख कर हँसते रहे। उनकी बातचीत उसी आसुरी भाषामें होती थी, इस लिए मैं उसका तात्पर्य न समझ सकी। तो भी—" इतना कहते कहते उस बालिकाको कुछ आवेश आगया—" इतना मैंने अवश्य समझ लिया कि वे मेरे और विमलदेवके अत्यन्त अपमानकी बातें कर रहे हैं। वे लोग यह कहकर हम लोगोंका अपमान कर रहे थे कि मैं शाहजादेके महलमें रक्खी जाने योग्य सुदर हूँ और युवराज विमलदेव दरबारमें गुलाम बनाये जानेके काबिल हैं।" उस समय बालिकाका चेहरा क्रोधसे लाल हो गया और वह अधिक न बोल सकी।

चम्पतराय बोले—" सुनो कचुकीराय, सुनो तुम्हारे सार्वभौम राजाके ये जात-भाई तुम्हारी ही कन्याके विषयमे क्या कहते थे ! केवल तुम्हारी कन्याका ही नहीं बल्कि अपनी अधीनतामें आये हुए प्रत्येक स्त्रीपुरुषका ये असुर राजकर्म्मचारी सदा इसी प्रकारका अपमान किया करते हैं। दिल्लीके सुलतान और उनके जात-भाई चाहते हैं कि हम लोगोंकी कन्यायें उनकी अमानुषी विषय-लालसा तृप्त करें, हम लोगोंके सुकुमार राजकुमार उनके दरबारके गुलाम बनें, उनकी जूतियाँ और उगालदान उठावें, हम लोग अपने ही भाईबदोंको उनके अधीन करनेके लिए लड़ें, हम लोग दिन रात दाने दानेको मोहताज होनेके लिए ही प्रयत्न करें और हमारे चतुर कारीगर अपने देवताओंके मदिर गिराकर उनके स्थान पर बढ़ियाँ मसजिदे बनानेमें ही अपना जन्म बितावें। तुम्हारे सार्वभौम राजा और उनके जातभाई बुदेलखडकी राजकन्याओंको सस्ते दामोंपर बाजारमें मिलनेवाला मेवा समझते है और बुदेलखडके राजपुत्रोंको पदवीके टुकड़ोंके लालची कुत्ते समझकर हम लोगोंके साथ व्यवहार करते हैं। बेटी ! तुमने उन असुरोंको यह बात बतला दी थी न कि मै डॉडेरके राजाकी कन्या हूँ और विमलदेव ओड़छेके युवराज हैं ? "

बालिकाने उत्तर दिया—" मैने यही समझ कर उन लोगोंको अपना परिचय दे दिया था कि हम लोगोंकी योग्यता समझ कर कदाचित् वे लोग जल्दी ही हमें छोड़ देगे। परतु हम लोगोंका परिचय पाकर हमें छोड़ना तो

दूर रहा, उन लोगोंने यह दृढ निश्चय कर लिया कि वे हम लोगोंको ले जाकर शाहजादेकी नजर करें। ”

चम्पतरायने कचुकीरायसे कहा,—“ राजासाहब ! आप सुन रहे हैं न ? ”

कचुकीराय बोले,—“ हॉं हॉं, मैं सुन रहा हूँ। पर आप मुझे क्या सुनाते हैं ? ऐश्वर्य्य और सौन्दर्य्यमें इद्रकी अमरावतीसे बढ कर दिल्ली, देवलोककी अप्सराओंको लज्जित करनेवाली शाही महलकी सुदरियॉं, और इद्रसे भी बढ कर ऐशो आराम करनेवाले दिल्लीके सुलतानके जब तक आपको दर्शन न हों तब तक आपको मुसलमानोंके वास्तविक महत्त्व, ऐश्वर्य्य और बल आदिका ज्ञान नहीं हो सकता। ”

चम्पत०—“ राजासाहब ! बादशाहके मायावी वैभवसे आपकी ऑंखें चौंधिया गई हैं, नहीं तो आप इस ससारके नरककी उपमा अमरावतीसे न देते। यदि किसीको ससारमें निर्लज्जता और विषयासक्तताका जन्मस्थान और विलास तथा आलस्यका अड्डा देखना हो, अतिशय नीच कोटिकी क्रूरता, और ससार भरके दुर्गुणों और व्यसनोंको एक ही स्थान पर एकत्र देखना हो तो वह दिल्ली जाय। पर विषयासक्तताको विलास, क्रूरताको शूरता, आलस्यको सुख, और व्यसनोंको आनंद माननेवाले मूर्खोंने भ्रममें पडकर उस दिल्लीको इस ससारका स्वर्ग बना दिया है। जब तक ऐसे मूर्ख इस भूमाताके गर्भमें जन्म लेते रहेंगे तब तक इस देशका मुसलमानोंके हाथसे निकल कर स्वतत्र होना बहुत ही कठिन है। अस्तु, इस प्रकार शोक करनेके लिए बहुत समय है। (विजयासे) बेटी, बतलाओ फिर क्या हुआ ? ”

विजया—“ हम लोगोंको दिल्लीके शाहजादेकी भेट करनेका विचार करके वे लोग थोडी देरके लिए विश्राम करने लगे। इतनेमें उन्हीं से पर उनसे कुछ अधिक मूल्यवान् वस्त्र पहने हुए एक और असुर वहॉं आ पहुॅंचा। उसके आते ही पहलेवाले सब असुरोंने झुक कर उसे सलाम किया, इससे हम लोगोंने समझ लिया कि वह उन सबका प्रधान है। पहलेवाले असुरोंने उस नये असुरको हम लोगोंका परिचय देकर अपना विचार बतलाया। उसे सुनकर वह हँसता हुआ बोला,—“ शाही दरबारमें बडे बडे पद और ऊॅंचे आसन पानेके लिए यहॉंके सभी हिन्दू राजे अपनी लडकियों और बहनोंको शाही महलमें भेजनेको तरसते हैं। हिन्दू राजे अब यह भी समझ गये हैं कि हमारे राजकुमार दिल्लीके शाही

दरबारमें खिदमतगारीके सिवा राज्यका और कोई भारी उत्तरदायित्वका काम नहीं कर सकते। इस लिए आजकल पहलेकी तरह शाही महलके लिए राज कन्याओं और खिदमतगारीके लिए राजकुमारोंको धर पकड कर लानेकी आवश्यकता नहीं रह गई। इन लोगोंको छोड दो, और निश्चय रक्खो कि ये आप ही शाही महल और दरबार तक पहुँच जायँगे।"

रानी हीरादेवी बीचमें ही बोल उठी—" हाँ, हाँ, उन लोगोंका कहना बहुत ठीक है। क्या कहूँ, आजकल हम लोगोंकी बादशाह तक पहुँच नहीं है, नहीं तो युवराज विमलदेव अब तक कभीके बादशाहकी सेवामें नियुक्त हो गये होते।"

चम्पत०—" हे ईश्वर, कहाँ हो? ऐसे देशद्रोहियों और दासत्व-प्रिय लोगोंसे कब देशका छुटकारा होगा? हीरादेवी, बोलनेसे पहले कुछ तो सोच समझ लिया करो। जिस रुद्रप्रतापने इतना रक्त बहाकर अपने देशको स्वतंत्र किया था उसी अपने भक्त रुद्रप्रतापके एक वंशजको म्लेच्छोंके दरबारमें सेवा करनेके लिए तैयार देखकर देवीके पत्थरके नेत्रोंसे भी आँसू निकलने लगे हैं।"

चम्पतरायकी बात अनसुनी करके हीरादेवी बोली—" हाँ विजया, तब फिर क्या हुआ?"

विज०—" उस प्रधान असुरने हम लोगोंको वहाँसे चले जानेकी आज्ञा दी। हम लोग भी देवीकी पूजाके समय पर पहुँचनेके लिए वहाँसे चल पड़े। इतनेमें हम लोगोंकी भाषामें उस प्रधान असुरने हम लोगोंसे पूछा कि क्या यहाँ पास ही देवीका कोई मंदिर है? उस समय मैं उसके पूछनेका अभिप्राय न समझ सकी, इस लिए मैंने सरलतासे कह दिया कि पास ही विंध्यवासिनी देवीका सुंदर मंदिर है, आज वहाँका वार्षिक शृंगार और उत्सव है इस लिए बुंदेलखंडके सभी राजे और बहुतसे बुंदेले वहाँ एकत्र हैं। इसपर उसने पूछा कि उत्सव कब आरंभ होगा, तो भी उसके पूछनेका अभिप्राय मेरी समझमें न आया। मैंने सीधी तरहसे उसे बतला दिया कि सूर्योदयके दस घडी बाद पूजा आरंभ होगी। उसने कहा कि अभी पूजामें दो घडीकी देर है, इस लिए मैं पूजासे पहले ही वहाँ पहुँच कर मंदिर तोड फोड डालता हूँ। उस समय मैं धकसे हो गई। विमलदेव भी बहुत सुस्त होकर मेरे पास खडे थे। मेरा मन आप-ही-आप इस विचारसे बहुत ही कचोटने लगा कि देवीके मंदिरका हाल बतलाकर मैंने बडा भारी पातक किया। यद्यपि विंध्यवासिनीका मंदिर वहाँसे

बहुत दूर नहीं था, पर तोभी मैं समझती थी कि नये आदमीको जल्दी उसका पता नहीं लग सकता। उस प्रधान असुरने मुझसे कहा कि आगे आगे चलकर मुझे देवीके मंदिरका रास्ता दिखलाओ। मैंने भी अपने मनमें निश्चय कर लिया कि उसे देवीका मदिर नहीं दिखलाऊँगी और अपना यह विचार विमलदेवको भी बतला दिया। उन सब असुरोंको हम मदिरसे उलटी तरफ ले चले। वे लोग भी बड़ी प्रसन्नतासे तरह तरहके बॉधनू बाँधते हुए हम लोगोंके पीछे आरहे थे। इस प्रकार हम लोग मदिरसे बराबर दूर होते जा रहे थे। इतनेमें हम लोगोंको दूरसे युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय अपने अपने घोडोंपर सवार आते हुए दिखाई पडे।

शुभकरणने पूछा—"तुम लोगोंके साथ चलनेवाले यवन सख्यामें कितने थे?"

वि०—"प्रधान असुर समेत वे सब मिलाकर बीस थे। परन्तु उनमेंसे आधेसे अधिक विना अस्त्रशस्त्रके थे। पास पहुँचते ही छत्रसालने प्रधान असुरसे पूछा कि इन लोगोंको कहॉ ले जा रहे हो? जब विमलदेवने देखा कि उन्हें अपमानकारक हास्यके अतिरिक्त और कोई उत्तर नहीं मिला तब उन्होंने थोडेमें सब बातें बतला दी। सुनते ही दोनों युवराजोंने अपनी अपनी तलवारें म्यानसे बाहर निकाल लीं और यह कहते हुए वे दोनों उन असुरों पर टूट पडे कि—"देवीके मदिरका मार्ग भक्तोंके लिए भले ही सुगम और सुखदायक हो, पर तुम्हारे सरीखे पामरोंके लिए वह बहुत ही दुर्गम और धोखेका है।"

पहाड़सिंह बोल उठे,—"क्या कहा? दो लड़के और बीस बहादुरों पर टूट पडे? इसीको लडकपन कहते हैं। (शुभकरणसे) शुभकरण! तुम्हारा दलपति इस छत्रसालके साथ रह कर बिगडता जा रहा है। इन लडकोंको उनकी मूर्खताके लिए उचित दड देना चाहिए।"

कचुकीराय बोले,—"बहुत करके तो उन्हें वहीं दड मिल गया होगा। और यदि उन उदार यवन वीरोंने उन्हें बालक समझकर छोड दिया हो तब अवश्य उन्हें यहॉ आते ही उचित दड देना चाहिए। अपने शासकोंके जात-भाइयोंका अपमान करना भला यह भी कोई बात है? अगर वह एक मदिर गिरा देते तो हम लोग दूसरा बना लेते। पत्थरोंकी यहाँ कोई कमी तो थी ही नहीं। (विजयासे) हॉ भला बतलाओ तो, उन लडकोंने वहॉ क्या क्या अनाचार किये।"

वि०—" उन लोगोंने वहाँ अनाचार नहीं किया। उन्होंने उन बीसों असुरोंसे केवल लडना आरभ कर दिया। अकेले अभिमन्युके साथ जिस प्रकार कौरवोंने अधर्म युद्ध किया था उसी प्रकार वे बीसों असुर उन युवराजोंसे लडने लगे। विमलदेवसे पुरुष होकर भी वह युद्ध देखा न गया, तव भला मैं किस गिनतीमें थी? अकेले छत्रसाल पर छ असुर अपनी अपनी तलवारे लेकर टूट पड़े। उनमेंसे एककी तलवारका घाव भी छत्रसालको बहुत गहरा लग गया। युवराज दलपति अकेले ही दस असुरोंसे लट रहे थे। वह भयानक सग्राम देख कर मैंने भयसे आँखें बद कर लीं। थोडी देर बाद जब मैंने आँखें खोलीं तब देखा कि विमलदेव सामने खडे हुए मुस्करा रहे हैं और पास ही खूनमे नहाये हुए चार पाँच असुर जमीन पर लोट रहे हैं। प्रधान असुरकी सारी शेखी किरकिरी हो गई थी और वह सिर नीचा किये हुए खडा था। युवराज छत्रसाल और दलपतिराय उसकी मुश्कें बाँध रहे थे। मेरी ओर देख कर छत्रसालने कहा 'देवीके पूजनका समय हो रहा है। तुम दौड कर जाओ और महाराजसे थोडी देरके लिए पूजा रोकनेकी प्रार्थना करो, तब तक हम लोग इस यवन सरदारको लाकर वहाँ पहुँचते हे।' युवराजकी बात सुनते ही मैं वहाँसे चल पडी और जल्दी जल्दी यहाँ पहुँची।"

विजयाकी बात समाप्त होते होते मदिरके वडे दालानके पास ही जयजयकार हुआ। जयजयकारकी ध्वनि बडी ही मधुर थी। प्राणनाथ प्रभु इतनी देर तक शात होकर विजयाकी बातें सुन रहे थे। परन्तु अब उनसे न रहा गया। तुरन्त ही उनके शिष्य युवराज छत्रसाल आकर उनके चरणोंपर अपना सिर रखते हुए दिखलाई देते, पर इतनी देर तक उन्होंने अपने प्रेमके जिस आवेशको रोक रक्खा था वह अब उनसे रोका न गया। खोये हुए बालकसे मिलनेके समय माताके कोमल मनकी जो स्थिति होती है वही प्रेम-पूर्ण स्थिति प्राणनाथ प्रभुकी भी हुई। बहुत देरसे छूटे हुए बछडेसे मिलनेके लिए जितनी आतुरतासे गौ आगे बढती है, उतनी ही आतुरतासे वे वडे दालानकी ओर बढे। उस समय छत्रसाल और उनमें जो थोडासा अतर था, वह अतर अकेले छत्रसाल ही कम करें, यह उनसे देखा न गया। जयजयकारकी प्रतिध्वनि उत्पन्न होनेसे पहले ही वे मदिरके बडे दालानमें पहुच गये। वहाँ उनका प्राणोंसे भी अधिक प्रिय बालक छत्रसाल सजल नेत्रोंसे उनके चरणोंकी धूलि लेनेके लिए तैयार खडा हुआ था।

यह बात प्राय सभी लोग जानते हैं कि बहुत ही छोटी छोटी बातोंकी ओर विशेष ध्यान देनेवालोंसे भी कभी कभी भारी भूलें हो जाया करती हैं। न जाने इसी सिद्धान्तकी सत्यता दिखलानेके लिए अथवा किसी और कारणसे जगतकी रचना करनेवाले परमेश्वरने अपने रचना-चातुर्यमें एक बडा धव्बा लगा लिया था। यह तो परमेश्वर अवश्य ही जानता था कि चद्र-सूर्यकी रचना करना हँसी खेल नहीं है। पर तो भी सूर्यमें आवश्यकतासे अधिक प्रचण्डता और चंद्रमामें आवश्यकतासे अधिक सौम्यता रह गई थी। इसका कारण या तो यह हो सकता है कि चन्द्रमा और सूर्य्यको ईश्वरने सबसे पहले बनाया था और उस समय तक चीजें तैयार करनेमें उसका हाथ अच्छी तरह मॅजा नहीं था, अथवा उन दोनोंको उसने सबके अतमें बनाया था और उस समय उसकी सब सामग्री प्राय समाप्त हो चुकी थी। परतु अपनी कृतिका यह दोष जगन्नियताके ध्यानमें अवश्य आ गया। बहुत सी छोटी और फुटकर बातोंको निर्दोष और केवल प्रधान वस्तुओंको सदोष देख कर सहस्रनेत्र परमेश्वरको बहुत ही पश्चात्ताप हुआ और इसी लिए वह सालमें चार महीने अपने सब नेत्रोंसे ऑसू बहाने लगा। परमेश्वरके इस पश्चात्तापको नष्ट करनेके लिए बुदेलखंडने एक एक प्रकाशराजका उदय किया। उस प्रकाशराजमें सूर्य्यका तेज भी था और चद्रमाकी शीतलता भी थी। चद्रमा और सूर्य्यने भी जब देखा कि संसारमें एक ऐसा अवतार हुआ जिसमें हम लोगोंके गुण तो सब हैं पर दोष एक भी नहीं, तब उन लोगोंने अपना अपना विशेष अश उस नये प्रकाशराजमें आरोपित कर दिया। एक ओर प्रतापशाली दलपतिराय अपने तीव्र तेजसे सुशोभित थे और दूसरी ओर विमलदेवका निष्कलक मुखचद्र सौम्यतासे प्रकाशित हो रहा था। बुदेलखंडके इस सूर्य्य और चद्रमाके बीचमें वह नया प्रकाशराज अपने पूरे तेजसे प्रकाशित हो रहा था, जिसके प्रकाशमें सूर्य्यके प्रकाशका प्रभाव भी था और चद्रमाके प्रकाशकी रुचिरता भी। जिसमें प्राणिमात्रमें नवीन जीवन और तेजकी सृष्टि करनेवाले चंद्रमाके भी गुण थे और शाति तथा सुखकी वर्षा करनेवाले सूर्य्यके भी। उसीके पास पहुँच कर प्राणनाथने गद्गद स्वरसे कहा,—

"छत्रसाल! तुम धन्य हो। इस थोडी अवस्थामें ही तुम्हारी धर्मनिष्ठा और स्वातत्र्य-प्रियताकी सुन्दर किरणें प्रकाशित होने लगी हैं।"

जिस प्रकार उदयकालका सूर्य्य अपनी भूमाताका चरणरज लेनेके लिए आगे बढ कर उसके प्रभाकित रक्त वर्ण अक पर विराजमान् होता है, उसी

प्रकार युवराज छत्रसाल अपने गुरु प्राणनाथ प्रभुकी बात सुनकर उनका चरण-रज लेनेके लिए सिर झुकाए हुए आगे बढ कर प्रभुकी बाँहोंमे सुशोभित हो गये ।

गुरु-शिष्यकी यह प्रेम-पूर्ण भेट देखकर युवराज दलपतिराय और युवराज विमलदेवको भी इस बातका ध्यान हुआ कि हम लोग आकाशकी ज्योति नहीं बल्कि ससारके प्राणी हैं । चद्रमा और सूर्य्यके काम जिस प्रकार इच्छार-हित बुद्धिसे ही होते रहते हैं उस प्रकार हमारे काम नहीं होते, हम लोगोंकी कार्य्य करनेकी इच्छा जाग्रत है और छत्रसालकी तरह हम लोगोंका भी अभि-नंदन होना चाहिए । प्राणनाथ प्रभुने युवराज छत्रसालकी तरह दलपतिरायको भी प्रेमपूर्वक गले लगाया, परतु विमलदेवका उन्होंने दूरसे ही अभिनदन किया । इस शाब्दिक अभिनदनसे ही विमलदेव अत्यत प्रसन्न हो गये, कदाचित् प्रभुसे गले मिलकर उन्हें इतना आनद न होता ।

उस दिन अपने पुत्रका वह उदात्त कृत्य सुनकर चम्पतराय आनदसे फूले न समाते थे । उन्होंने छत्रसालको अपने पास खींच लिया और उनके सिरपर प्रेमसे हाथ फेरते हुए कहा,—

" मेरा बडा पुत्र सारवाहन यवनोंसे युद्ध करते समय मारा गया था । वह बहुत ही शूर था, इस लिए उसके मरनेसे मुझे और तुम्हारी माताको अत्यत दु ख हुआ था । उस समय उसने हम लोगोंको स्वप्नमें यह कह कर ढारस दिया था कि हम तुम्हारे यहाँ फिर जन्म लेकर मुसलमानोंसे बदला लेंगे । इस घटनाके कई महीने बाद ही तुम्हारा जन्म हुआ था । तो भी उस स्वप्नपर मुझे पूरी तरहसे विश्वास नहीं हुआ था । पर आजकी तुम्हारी यह वीरता सुनकर मुझे उसका पूरा पूरा विश्वास हो गया है । अब मुझे यह भरोसा हो गया है कि यदि मैं स्वयं अपना उद्देश्य पूरा न कर सका तो तुम उसे अवश्य पूरा कर दोगे । " इतना कह कर चम्पतरायने छत्रसालको छातीसे लगा लिया । उस समय तक युवराज दलपतिराय अपने पिताके पास जाकर बैठ गये थे । युव-राज विमलदेव भी अपनी माताके पास बैठे हुए थे । विजया अपने हाथमें अपनी माला लिये हुए पास ही खडी हुई थी और उसे देवीको चढा-नेके अवसरका आसरा देख रही थी । इतनेमें प्राणनाथ प्रभुने देवीका पूजन आरभ किया ।

पूजन समाप्त करनेके उपरान्त प्राणनाथ प्रभुने प्रसाद देनेके लिए सब राजा-ओंको मंदिरके भीतर बुलाया। विंध्यवासिनी देवी सोनेके ऊँचे सिंहासन पर विराजमान थीं। उनकी बाईं ओर प्राणनाथ खडे हुए थे और दाहिनी ओर विजया और विमलदेव हाथमें अपनी माला लिये हुए खडे थे। देवीके चरणोंपर अपना मस्तक झुकाये हुए युवराज छत्रसाल भी खड़े थे। प्राणनाथ प्रभुके पास चम्पतराय और शुभकरण खडे थे। हीरादेवी सहित खड़े हुए पहाडसिंह एक कोनेमें कचुकीरायसे बातें कर रहे थे। सब लोगोंको सम्बोधन करके प्राणनाथ प्रभुने कहा,—

" राजा-महाराजाओ! प्रतिवर्षकी तरह आज भी देवीका महोत्सव हम लोगोंने बड़े आनदसे किया। पर अब हम लोगोंको यह सशय होने लगा है कि अगले वर्ष भी हम लोग इसी प्रकार उत्सव कर सकेंगे या नहीं। दिन पर दिन यवनोंकी प्रबलता होती जाती है और हिंदुओंके हिंदुत्वको नष्ट करनेकी उनकी इच्छा भी बढती ही जा रही है। ऐसे विकट अवसर पर हम लोगोंका पारस्परिक विरोध बढना बड़े ही दुर्भाग्यकी बात है। हमारा यह बुंदेलखड भारतभूमिके सौन्दर्यका केंद्रस्थान, सृष्टिसुदरीका विलास-गृह और लक्ष्मीका क्रीडाभवन है। पहले तो बहुत दिनों तक दिल्लीके विलासी और धनलोलुप सुल्तानोंने बुदेलखड पर हाथ बढानेका साहस नहीं किया था। जब तक बुंदेलखडकी आबरू रखनेवाले बुदेले नृपति स्वतंत्रताकी रक्षा, धर्मके पालन और देशकी मर्य्यादा बनाये रखनेके लिए आसपासका वैर विरोध भूल कर रणक्षेत्रमें स्वतत्रताके एक ही झंडेके नीचे खड़े होते थे तब तक बुंदेलखडके सुदर सौन्दर्यकी ओर देखनेमें दिल्लीके बादशाहोंको डर लगता था। राजनीति, सैन्यबल और धार्मिक उदारता आदिके जाल बिछाकर अकबर दूर दूरके जिन लोगोंको फँसा न सका था उन्हींको फँसानेके लिए जहाँगीर और शाहजहाँने उद्योग आरभ किये। सेना और धार्मिक सुविधाओंसे टक्कर लेकर विजयी होनेवाले बुदेलखंडको अकारण परतंत्रताके कीचडमें फँसते देख कर आसपासके देशोंको अवश्य ही बहुत आश्चर्य हुआ होगा। पर बुदेलखडकी आजकी स्थिति देखकर किसीको आश्चर्य न होगा। एकताके सूत्रसे बँधी हुई पुरानी वीर-माला कालका प्रबल धक्का खाकर नष्ट हो गई है। पहलेकी मालामे एकमत होकर रहनेवाले सुगंधित, सतेज और दुर्लभ फूल आज भी बुदेलखडमें बहुत हैं। पर पहले वे जितनी उत्तमतासे गुँथे हुए थे उतनी उत्तमतासे इस समय नहीं गुँथे हैं। पहले वे फूल देवताओं पर

चढाये जानेके योग्य थे, पर अब चम्पतराय सरीखे दो एक पुष्पोंका छोड कर बाकी प्राय सभी फूल असुरोंकी शोभा बढ़ानेके लिए लालायित जान पड़ते हैं। बहुतसे फूल तो जगलके जगलमें ही सूख कर नष्ट हो जाते हैं। शुभकरण ! पहाड़सिंह ! मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह आप लोग सुनते हैं न ? आप लोग असुरोंके पैरोंको सुशोभित करना छोड़ दें। आप लोग एकताके सूत्रमें बद्ध होकर ऐसी सुन्दर माला बनावें जिससे आप लोगोंकी सुगधि एकत्र हो और वह माला अपनी स्वतत्रता देवी विंध्यवासिनीको प्रेमपूर्वक अर्पित करें। विजया ! तुम्हारी मालाके अर्पित होनेका यही समय है। तुम अपनी यह सुदर माला देवीको पहनाओ और देवीसे कहो कि अगले वर्ष सत्पुरुषोंकी एक ऐसी ही माला यहाँ आवेगी।"

प्राणनाथ प्रभुकी आज्ञा पाते ही विजया अपनी माला लिये हुए आगे बढी। उस समय उसे ध्यान हुआ कि जो माला मैंने विमलदेवकी सहायतासे बनाई है वह मै अकेले ही कैसे चढ़ाऊँ। उसने विमलदेवकी ओर देखा। वे भी माला चढानेके लिए आगे बढनेकी चिंतामें ही थे। विजयाने माला चढानेके लिए अपना जो हाथ उठाया था वह उसने क्षणभरके लिए ज्योंका त्यों रक्खा। जब विमलदेव पास आगये तब दोनों समवयस्क मित्रोंने अपने हाथ खूब ऊँचे करके देवीके गलेमें माला पहनानेका प्रयत्न किया। उन्होंने अपनी समझसे अच्छी तरह देवीके गलेमें माला पहना दी, और जो लोग वहाँ उपस्थित थे उनकी समझमें भी वह माला अच्छी तरह ठीक जगह पर बैठ गई। इतनेमें वह माला वहाँसे खिसकी और देवीके पैरोंके पास सिर झुकाकर खड़े हुए छत्रसालके ठीक गलेमें जा पडी। देवीके गलेकी माला युवराज छत्रसालके गलेमें सुशोभित हो गई, यह देख कर सब लोगोंको बहुत आश्चर्य हुआ। छत्रसाल अपने गलेसे वह माला उतारने लगे, पर प्राणनाथ प्रभुने उन्हें रोककर कहा,—

"बाल-वीर ! यह देवीका प्रसाद है। इसका निरादर मत करो। विंध्यवासिनी देवी भी यही समझती है कि युवराज विमलदेव और राजकन्या विजयाकी माला तुम्हारे ही गलेमें अधिक शोभायमान होगी। अपनेको पावन करके श्रेष्ठ बनानेवाली देवीकी तुम्हें ऐसी उत्तमतापूर्वक रक्षा करते देखकर विंध्याचलने यह सुन्दर उपहार तुम्हींको दिया है और स्वयं देवीने अपने गलेकी माला तुम्हें देकर तुम्हारी शूरता और धर्म्मनिष्ठाका अभिनन्दन किया है। जगली फूलोंका यह सुंदर हार विजया और विमलदेव सरीखे नगरवासी पुरुषोंके हाथसे तैयार

हुआ है, विंध्याचलकी अचलता और देवीकी पवित्रतासे उसका स्पर्श होनेके कारण उसकी स्वाभाविक सुगंधि और विमलतामें स्थिरता और पवित्रता भी मिल गई। आज तुम्हारे विजयी होनेके समय विमलदेव और विजयाके हाथोंसे देवीकी मध्यस्थतामें तुम्हें यह पवित्र उपहार मिला है, उसे स्वीकार करो। आगे चलकर तुम्हारे द्वारा स्वतंत्रता देवीकी जो अद्वितीय सेवा होनेवाली है उसका यह बहुत ही शुभ शकुन है। देवीके इस अनुग्रहका तुम तनिक भी अपमान न करो।"

छत्रसालने "प्रभुकी आज्ञा शिरोधार्य्य है" कहते हुए उस मालाको सिर और ऑखोंसे लगा लिया।

उस समय विजयाकी मुद्रा देखने ही योग्य थी। अपनी मालाको छत्रसालके गलेमें सुशोभित देखकर वह सरला बालिका लज्जाका स्वरूप बन गई। उसके कपोलों पर लज्जाकी लाली छा गई। चचलतासे इधर उधर फिरनेवाले उसके नेत्र संकुचित होकर धरतीकी ओर गढ गये। उसकी ऐसी इच्छा होने लगी कि अब मैं किसीको अपना मुँह न दिखलाऊँ। अपने आपको छिपानेके लिए उसने धीरे धीरे मदिरका किवाडा अपनी ओर खींचा। उस समय सब राजे देवीका प्रसाद लेकर अपने अपने स्थानकी ओर बढने लगे। उन्हें देखते ही विजया वहाँसे भागी। सामने ही उसे विमलदेव मिले। उसने उनकी ओर देखा तो उनकी मुद्रा भी वैसी ही बदली हुई थी। विजयाको देखकर विमलदेवने कहा,—

"विजया! हम लोगोंकी बनाई हुई माला अतमें युवराज छत्रसालके गलेमें ही पडी।"

विजया यह कहनेको ही थी कि "तब इसमें बुरा क्या हुआ।" पर उसने अपने मनको रोका। वह कुछ भी नहीं बोली।

सदा उच्छृंखलताका व्यवहार करनेवाली विजयाको अपने जीवनमें उसी दिन पहले पहल आत्मसंयमन करना पडा।

* * * *

दूसरा प्रकरण।

विंध्याचलका स्नान।

विंध्याचल चद्रमाकी विमल चॉदनीमें स्नान कर रहा था। गंगाका गहन प्रवाह देखकर जिस प्रकार विहारप्रिय मस्त हाथीको आनद होता है उसी प्रकार चन्द्रमाके प्रकाशका विमल सागर देखकर विंध्याचल अत्यत आन-

दित जान पडता था । यदि विंध्याचलके अर्द्धवर्तुलाकार भागको हाथीका सूँड मान लिया जाता और उसके उन्नत मस्तकके दोनों ओरकी कानके आकारकी छोटी छोटी टेकडियोंको हिलता हुआ मान लिया जाता तो यही जान पडता कि गगाके शुभ्र प्रवाहमें गजराज आनदसे क्रीडा कर रहा है । विंध्याचल परके सुदर वृक्षों, पहाडके नीचेके विंध्यवासिनी देवीके मदिर और उसके ऊपर प्रकाशित होनेवाले चन्द्रमासे भी यह कल्पना बहुत देरतक नष्ट न होती थी । देवीके मदिरके आसपास पडे हुए खेमों और तबुओंसे भी इस कल्पनाके पुष्ट होनेमें सहायता ही मिलती थी । वे देखनेमें गगाका शुभ्र प्रवाह नहीं बल्कि चन्द्रमाकी शुद्ध ज्योत्स्ना जान पडते थे और उनके बीचमें विंध्यपर्वत गजराजकी तरह दिखलाई पडता था ।

एक बडा कठिन प्रश्न यह हो सकता है कि विंध्याचलको स्नानकी क्या आवश्यकता पडी ? अग्निको विशुद्ध करनेके लिए भट्टीमें डालना, शुद्ध और पवित्र जलको धोकर निर्मल करनेका प्रयत्न करना अथवा दूधकी सफेदी बढानेके लिए कोई उपाय करना जितना व्यर्थ और युक्तिरहित है, पवित्र विंध्याचलको स्नान करानेका प्रयत्न भी उतना ही निरर्थक और भोंड़ा जान पड़ेगा । परतु विंध्याचलने अपने स्नानके लिए ऐसा समय ढूँढ निकाला था जिस समय क्या मनुष्य क्या पशु पक्षी सभी विश्रान्ति-सुखका अनुभव कर रहे थे । विंध्याचलने अपना स्नान उस शान्त समयमें आरंभ किया था जब कि वायु शातिपूर्वक वृक्षोंके पत्तोंपर सुखसे सो रही थी और निरतर गतिमें रहनेवाला जल-प्रवाह भी अग पसार कर थोडी देरके लिए विश्राम कर रहा था । इसी लिए वह अच्छी तरह समझता था कि हमारा यह कृत्य कोई देखता नहीं है ।

विंध्याचलका स्नान शान्तिपूर्वक हो रहा था । चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओंसे विंध्याचल पर अपना अमृत बरसा रहा था । इतनेमें देवीके मन्दिरके पासके एक तबूमेंसे शुभकरण बाहर निकले । उन्होंने पहले तो भयभीत होकर देवीके मदिरकी ओर देखा, फिर जरा क्रुद्ध होकर चन्द्रमापर दृष्टि डाली और अतमें बहुत ही विस्मित होकर विंध्याचलकी ओर देखना आरभ किया । उनकी आँखोंमें नींद नामको भी न थी । हाँ, रातको जागनेके कारण उनका चेहरा कुछ उतरा हुआ अवश्य था और उसपर चिंताकी छाया स्पष्ट दिखलाई पड़ती थी । चन्द्रमाके अमृत बरसाने पर भी उनकी चिंता जरा भी कम नहीं हुई ।

उस समय इतनी मोहिनी शांति थी कि रोगसे जर्जर रोगी भी थोडी देरके लिए विश्राम करता, सम्पत्तिके अभाव अथवा आधिक्यके कारण सदा जागनेवाले लक्ष्मीके भक्त भी थोडी देरके लिए आराम करते और प्रेमी लोग थोडी देरतक विरह सहनेके लिए तैयार हो जाते। पर जिन शुभकरणके शरीरको छूनेका साहस भी कभी किसी रोगको न हो सकता, जिन शुभकरणके वज्रसरीखे हृदयकी स्थिरता सम्पत्तिकी वृद्धि या विनाशसे जरा भी भग्न न हो सकती और जो शुभकरण प्रणयका प्रलय हो जानेपर भी एक क्षणके लिए विचलित न होते, उन्हीं शुभकरणको चिन्तामें पडे हुए देखकर बडा आश्चर्य होता था। कौन कह सकता है कि अपनी प्रतिज्ञा और अपने निश्चयके लिए सुखदुखको लात मारकर शांतिसे जीवन बितानेवाला यह वीर किस प्रकार चिंताके जालमें फॅस गया?

बहुत देरतक शुभकरण टकटकी लगाये हुए विंध्याचलकी ओर देखते रहे। उनके चेहरेपरकी चिंताकी छाया तनिक भी कम न हुई। उलटे वह प्रशान्त वदन चंद्रमाकी तरह और भी फीका पडता जाता था।

विंध्याचल अभीतक चद्रमाके प्रकाशमें डूबा हुआ था। शुभकरणके आ जानेके कारण उसके स्नानमें कोई बाधा नहीं पडी थी। शायद विंध्याचलने यही समझकर स्नान आरंभ किया था कि जब शुभकरण उठकर अपने तंबूसे बाहर आवेंगे तब उन्हें मैं अपना यह स्नान दिखलाऊँगा।

थोड़ी देर बाद शुभकरण विंध्याचलकी ओर देखकर विकट रूपसे हँसे। उनकी उस हॅसीका उत्तर प्रतिध्वनि रूपमें और भी जोरसे मिला। उसे सुनकर शुभकरणने मनमें कहा,—"क्या यह विंध्याचल मूर्ख हो गया है? इतनी पवित्रता और इतनी शुद्धि पाकर भी, अगमें तनिक भी मल न होनेपर भी, यह चंद्रमाके प्रकाशमें व्यर्थ स्नान कर रहा है। स्नान वहीं होता है जहाँ मलिनता होती है। शुद्धि वहीं होती है जहॉ गन्दगी होती है। पर इस पर्वतमें तो जरा भी मलिनता नहीं है, इस पर फूलनेवाले फूल इतने शुद्ध होते हैं कि उनकी उपमा आकाशकी ज्योति और बालकोंके हृदयसे दी जाती है, परमपूज्य देवताओंके मस्तक पर उनकी स्थापना की जाती है, नदीके प्रवाहकी तरह वहनेवाले उसके धर्म्म-प्रवाहको हम लोग इतना पवित्र मानते हैं कि उसके वहिरंग-स्नानसे भी भीतरका मल धुल जाता है। ऐसे पवित्र पर्वतराजका स्नान करना मूर्खता नहीं तो और क्या है?" शुभकरण फिर विकट रूपसे हॅसे।

उनके हास्यकी ध्वनि पहाड़के पत्थरोंसे क्षणभर खेल कर ज्योंकी त्यों लौट आई। पर उस बहुत ही थोड़े समयमें भी शुभकरण अपने कल्पनाराज्यमें बहुत दूर तक चले गये। उन्होंने मनमें सोचा—" निर्मलताके उत्पत्तिस्थान विंध्याचलको भी जब शुद्ध होनेकी आवश्यकता जान पड़ती है तब अपवित्र विचारोंसे भरे हुए, अनेक प्रकारके विकारोंसे पूर्ण और काम क्रोध तथा लोभ आदिके जालमें फँसे हुए हमारे सरीखे मनुष्य भी अपने मनकी शुद्धि क्यों न करें ? विंध्याचलमेंसे जब उनके हास्यकी प्रतिध्वनि निकली तब उन्होंने समझा कि हमें देखकर विंध्याचल विकट रूपसे हँस रहा है। विंध्याचल सरीखे निर्जीव पदार्थको भी अपनी हँसी करते हुए देखकर शुभकरण मन-ही-मन बहुत लज्जित हुए। लज्जासे उनका चेहरा उतर गया। तो भी विंध्याचलका स्नान बराबर हो रहा था।

अब शुभकरणको विंध्याचलका स्नान मूर्खतापूर्ण न जान पड़ता था, उलटे वह उन्हें प्रशंसनीय जान पड़ने लगा। उन्होंने समझ लिया कि विंध्याचल निसर्गतः निर्मल और पवित्र होने पर भी केवल हमारे समान पातकी मनुष्योंको उपदेश देनेके लिए, मूकभावसे हमें यह समझानेका प्रयत्न कर रहा है कि " तुम भी अपने पापी हृदयको शुद्ध करो।" विंध्याचलके उस परोपकारके उपलक्ष्यमें उन्होंने मनहीमन उसे बहुत धन्यवाद दिया। उन्होंने मनमें कहा-" विंध्याचल! तुम धन्य हो। तुममें मलका अंश भी नहीं है, दोष तुम्हें छू भी नहीं गया है, तुममें मूर्तिमती पवित्रता निवास करती है, तुममें परले सिरेकी निर्मलता और पवित्रता है तो भी तुम स्नानकी आवश्यकता समझते हो। जिस प्रकार ज्ञानी लोग दिनरात ज्ञानके पीछे ही लगे रहते हैं, उन्हें अपना ज्ञान कभी पूर्ण नहीं जान पड़ता, ठीक उसी प्रकारकी तुम्हारी भी दशा है। परन्तु मेरी स्थिति इससे बहुत ही भिन्न है। अज्ञानसे पूरी तरह ग्रस्त मनुष्य जिस प्रकार अपने आपको बुद्धिमान् समझ कर वास्तविक ज्ञानको तुच्छ बतलाता है, अथवा व्यसनी मनुष्य एक व्यसन छोड़नेके बहानेसे बहुतसे दूसरे व्यसनोंमें फँस जाता है, अथवा बहुत ही गन्दा और दुर्गन्धयुक्त कुत्ता अपने आपको शुद्ध करनेके लिए कीड़ोंसे भरी हुई कीचड़की गड़हीमें गिरकर और भी अपवित्र हो जाता है, ठीक वैसी ही दशा मेरे विचार, मन और विवेककी भी हो रही है। मेरा विवेक बड़े ही भ्रममें पड़ा हुआ है। मेरा मन मुझे उलटी ओर ले जा रहा है। अपने जिस बंधुकी रक्षाके लिए मेरी तलवार म्यानसे बाहर

निकलनी चाहिए उसी बंधुके रक्तकी वह इस समय प्यासी हो रही है। जिस देशको दासत्वसे बचानेके लिए मुझे अपने प्राण देने चाहिए थे उसी देशके दासत्वका विष-वृक्ष सींचनेमें मुझे अपना जीवन बिताना पडता है। जिस देशके कल्याणमें मुझे अपनी सारी बुद्धि लगानी चाहिए थी उसी देशके अपकारमें मुझे अक्लमन्दी खर्च करनी पड़ती है। बुंदेलखंडके हितके लिए प्राणदेनेवाले लोगोंको मैं अपना शत्रु समझता हूँ, जो लोग यहाँकी प्रजाको सुखी करना चाहते हैं वे मेरे प्रतिद्वन्द्वी हैं। बुंदेलखंडकी स्वतंत्रताके झंडेके नीचे खडे होनेवाले वीर मेरे कट्टर दुश्मन हैं। मेरे मनकी अवस्था इतनी विपरीत हो रही है, मेरे मनकी अपवित्रता और मलिनता इतनी बढ गई है कि मैं गुणको दोष, सत्कृत्यको अपकृत्य और विचारको अविचार समझता हूँ। नित्य मेरे हाथोंसे ऐसे कृत्य होते हैं, जिनसे मेरे मनका मल, हृदयकी अपवित्रता और विचारोंकी मलिनता दूर होनेके बदले दिनपर दिन बढती ही जाती है। मैं कैसी हीन दशामें पहुँच गया हूँ!"

इसके बाद बहुत देर तक शुभकरणके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। वे आँखें बन्द करके अपनी बाल्यावस्थाके सुख-स्वप्नोंका ध्यान कर रहे थे। स्वप्नके काल्पनिक सुखका अनुमान निद्रित मनुष्यके मुख पर जिस प्रकार प्रसन्नताकी बहुत ही स्पष्ट छटा उत्पन्न करता है, उसी प्रकारके आनदकी लहर थोडी देर तक शुभकरणके चिन्तित मुख पर दिखाई दी। पर ज्यों ज्यों उनके विचार बाल्यावस्थासे युवावस्थाकी ओर बढने लगे, त्यों त्यों आनदकी वे लहरें भी कम होने लगीं। उन्हें जान पडने लगा कि कोमल कलियाँ मानो जगह जगहसे झुलस गई हैं। उन्हें मानो निश्चय हो गया कि इस पौधेको मैं सुदर वृक्षके रूपमें फलता फूलता हुआ न देख सकूँगा। थोडी ही देर बाद उन्हें ऐसा मालूम होने लगा कि मेरी बाल्यावस्थाके मनोहर पौधेके आसपास बहुतसे कँटीले पौधे लग गये हैं। धीरे धीरे वे कँटीले पौधे इतने बढ गये कि वह पहलेका सुदर पौधा उनमें छिप गया। अब शुभकरणको अपने अत करणमें उन कँटीले पौधोंके सिवा और कुछ भी दिखलाई न पड़ता था। वे बहुत ही व्यथित हुए। अपने पिछले जीवनपर विचार करना उनके लिए असह्य हो गया। जब उन्होंने अपनी आँखें खोलीं तब उन्हें अपने सामने एक स्त्री दिखलाई दी। वह स्त्री उनकी ओर देख कर हँस रही थी।

शुभकरणकी आँखें खुलतीं देखकर उस स्त्रीने पूछा—" कहिए, इतनी रातको आप क्या विचार कर रहे हैं ? "

शुभ०—रानी हीरादेवी ! दिनभर मेरा यह जड़ शरीर अपना जडत्व भूलकर और मन अपनी स्वाभाविक चचलता त्याग कर बराबर तुम्हारी सेवामें उपस्थित रहता है। मैं अपने विचारोंकी परवा न करके तुम्हारा उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए दिनभर अविचल रूपसे प्रयत्न करता रहता हूँ। मनकी उच्चता, विचारोंकी पवित्रता और व्यवहारकी शुद्धताको लात मारकर निर्जीव यन्त्रकी तरह मैं दिनभर तुम्हारे लिए परिश्रम करता हूँ। इतना होनेपर भी क्या तुम यह बात सहन नहीं कर सकतीं कि रातको विश्रामके समय भी मैं शातिपूर्ण, विशुद्ध और पापरहित विचारों या कार्योंमें लगूँ ? "

शुभकरणकी बात सुनकर हीरादेवी बहुत ही चकित हुई। उसने पूछा—" हैं ! आज आप यह क्या कह रहे हैं ? आप हमारी कौनसी सेवा करते हैं ? हमारे किस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए आपने कौनसे प्रयत्न किये हैं ? निर्जीव यन्त्रकी तरह हमारे लिए आपने कब परिश्रम किया है ? ओडछेके राजा आज तक सदा आपको अपने बराबरका दोस्त समझते आये हैं। हममें और आपमें सेव्य सेवकका भाव तो कभी उत्पन्न नहीं हुआ। "

शुभ०—" हाँ, तुम्हारा कहना ठीक है। जबजब मैं ओड़छेके राजदरबारमें जाता हूँ अथवा तुम लोगोंका अतिथि होता हूँ तबतब तुम लोग मेरा जितना आदर-सत्कार करते हो उसके लिए मैं तुम लोगोंका बहुत ही कृतज्ञ हूँ। पर यदि थोडी देरके लिए इस ऊपरी आव-भगतको छोड दिया जाय और वास्तविक अवस्थापर ध्यान दिया जाय तो जान पड़ेगा कि ओडछेके दरबारमें मुझे जो सम्मान मिलता है वह केवल दिखौआ और ढोंग है। पर नहीं, उन सब बातोंको जाने दो, इस शातिके समय उन हीन विचारों पर ध्यान न देना चाहिए। हीरादेवी ! यदि चम्पतरायके स्वतन्त्र होनेमें बाधा डालनेकी आवश्यकता थी, अथवा उसपर सकटका पहाड गिराना था, अथवा दिल्लीके शाही दरबारमें पहुँच कर उसे दंड दिलवाना था तो इन सब कार्य्योंके लिए कलका सारा दिन पडा हुआ था। इस समय जब कि रातकी दस पाँच घड़ियाँ ही बाकी रह गई हैं वह स्वतन्त्रताके प्रासाद पर अधिकार नहीं किये लेता था, सारे ऐश्वर्यको वह अपने अधीन नहीं किये लेता था। तब फिर तुमने इतनी रातके समय मुझसे यहाँ आकर

भेंट करनेकी जल्दी क्यों की ? मेरी शांति भंग करनेकी तुम्हें क्या आवश्यकता थी ?"

हीरा०—"मैं इस समय यहाँ यह देखनेके लिए आई हूँ कि अपनी मित्र-मंडलीके समक्ष आवेशमें प्रतिज्ञा करनेवाले, एक वार अपने जीवनका कर्त्तव्य निश्चित करके दृढतापूर्वक सदा उसके पालनमें लगे रहनेवाले और अपने मुँहसे निकले हुए शब्दोंका मूल्य अपने प्राणोंसे भी अधिक समझनेवाले शुभकरण रातका समय शांतिपूर्वक क्योंकर बिता रहे हैं।"

शुभकरणने अधिकार जतलानेवाले स्वरमें कहा,—"मैं अपनी रात किस प्रकार बिताता हूँ, यह देखनेका तुमको क्या अधिकार है ? मैंने अपना कर्त्तव्य निश्चित किया है, पर क्या केवल इसी लिए, मैंने अपनी सारी स्वतन्त्रता भी तुम्हारे हाथ बेच दी है ?"

हीरा०—"बडे दुःखकी बात है कि शुभकरणकी स्मरणशक्ति यह नहीं बतला सकती, शुभकरणका मस्तिष्क यह नहीं सोच सकता कि उनकी स्वतन्त्रता बिकी हुई है या नहीं। आपने प्रतिज्ञा करते समय मेरे जिस दाहिने हाथ पर वचन दिया था, मेरे जिन कानोंने प्रतिज्ञाके शब्द सुने थे और मेरे जिन नेत्रोंने आपके चेहरे पर प्रतिज्ञाको प्रत्यक्ष प्रतिबिंबित देखा था, यदि उनमें बोलनेकी शक्ति होती तो इस प्रश्नका पूरा उत्तर मिल जाता। आज शुभकरण अपनी प्रतिज्ञा भूल रहे हैं। कल शायद उन्हें यह भी भ्रम होने लगेगा कि हम मनुष्य हैं या नहीं।"

शुभ०—"रानी! यह बात असम्भव है कि मैं अपनी प्रतिज्ञा भूल जाऊँ। जिस दुष्ट प्रतिज्ञाके कारण मेरी बाल्यावस्थाके समस्त सुंदर विचार नष्ट हो गये हैं, जिस प्रतिज्ञा-राहुने मेरे कर्त्तव्य-सूर्य्यको पूरी तरहसे ग्रस लिया है, जिस प्रतिज्ञाके विषवृक्षकी समीपताके कारण मेरे मनसे सुविचारोंका अङ्कुर निर्मूल हो गया है, उस उग्र और कठोर प्रतिज्ञाको भूलना असम्भव है। मेरे पवित्र कर्त्तव्यपर कालिमा लगानेवाली, मेरे स्वाभिमानका अधःपतन करनेवाली, मुझे स्वतन्त्रताकी ज्योतिसे हटाकर घोर अन्धकारमें डालनेवाली और मेरी बाल्यावस्थाकी बडी और पवित्र आकांक्षाओंको नष्ट करनेवाली वह भयंकर प्रतिज्ञा बराबर मेरे मनको सतप्त करती रहती है। प्राण छूटनेके समय ही उससे पीछा छूटेगा। इससे पहले यह आशा करना मेरे भाग्यमें नहीं बदा है कि क्षण भरके लिए भी उससे मेरा पीछा छूट जायगा।"

हीरा०—" क्या शुभकरणको अपनी प्रतिज्ञाके लिए पश्चात्ताप हो रहा है ?"

शुभ०—" हाँ पूरा पूरा पश्चात्ताप हो रहा है । अब तो मेरा यही काम हो गया है कि मैं दिन भर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए यत्न करूं और रातके समय अपने दिन भरके आचरित पातकोंके लिए पश्चात्ताप करूं । आज दिनके समय प्रत्यक्ष स्वतन्त्रता देवी—विंध्यवासिनी—के सामने जो जो पातक मैंने किये हैं उनके लिए मुझे रातभर पश्चात्ताप करना पड़ा है । तथापि अभी तक मेरे अन्त करणको तनिक भी शांति नहीं मिली । जो समय मुझे सुखपूर्वक विश्राम करनेमें बिताना चाहिए था वही समय यदि मैं अपने मनको शुद्ध करनेमें बिताने लगा तो इसमें कौन सा अन्याय हो गया ?"

हीरादेवीने कुछ क्रुद्ध होकर कहा,—" मैं तो यह बात पहले ही समझ गई थी । आज सबेरे देवीके मंदिरमें ही मैं ताड़ गई थी कि शुभकरण अपनी प्रतिज्ञासे कुछ हटना चाहते हैं ।"

शुभकरणने बड़े आवेशमें आकर कहा,—" बस ! हीरादेवी बस ! अपनी जबान रोको । बहुत कुशल है कि ऐसी बात कहनेवाली जबान एक स्त्रीके मुंहमें है, यदि यह बात किसी पुरुषने कही होती तो मेरी तरवार उसकी जबानके टुकड़े टुकड़े कर डालती । हीरादेवी ! प्रत्येक मनुष्यको कुछ कहनेके समय इस बातका अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि हम किसके विषयमें और क्या कह रहे हैं । जिस मनुष्यने अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए अपने सिद्धान्तों और उच्चाकांक्षाओंका नाश कर दिया, न्याय और अन्यायका जिसने जरा भी विचार न रक्खा, नीतिके पर्वत परसे जिसने अपने आपको अनीतिके गहरे गढ़ेमें गिरा दिया, सुविचारोंके सुंदर उपवनका त्याग करके जिसने कुविचारोंके भीषण वनको स्वीकार किया और स्वतन्त्रता रमणीके प्रिय होनेके बदले जिसने परतन्त्रता रूपी बाजारू वेश्याकी सेवा करनेमें ही सारा सुख माना, उसके विषयमें यह कहना कि वह अपनी प्रतिज्ञासे हट रहा है, मानों सत्यकी हत्या करना है । तुम्हारे सरीखी झूठी स्त्रीके मुँहसे यह बात निकली है, इसी लिए उस पर मेरा विश्वास भी हुआ है । नहीं तो मैं उसे स्वप्नकी बातके बराबर भी न समझता । हीरादेवी ! तुम्हारे इस मिथ्या अनुमानका कारण क्या था ?"

उसी समय शुभकरणके आवेशको देखकर हीरादेवी कुछ भयभीत हुई । शुभकरणके आवेशके सामने उसका क्रोध दब गया । वह अच्छी तरह समझती

थी कि यदि मैं कुछ अधिक बोलूँगी तो शुभकरणका क्रोध बहुत ही भीषणरूप धारण कर लेगा और उस दशामें वे जो अनर्थ न कर डालें सो थोड़ा है। शुभकरणकी तेजस्विताका बलिदान करके अभी उसे उनसे बहुतसे काम लेने थे। इसलिए उसने उस समय कुछ दब जाना ही उत्तम समझा। शुभकरणके प्रश्नका उसने कोई उत्तर न दिया।

परन्तु हीरादेवीका मौन शुभकरणको शांत न कर सका। उन्होंने फिर आवेशसे कहा,—" हीरादेवी! तुमने किस प्रकार यह अनुमान किया कि मैं अपनी प्रतिज्ञासे हट रहा हूँ? बोलो मेरे प्रश्नका उत्तर दो।"

जब हीरादेवीने देखा कि शुभकरणके प्रश्नका उत्तर दिये बिना किसी प्रकार छुटकारा नहीं है तब वह बहुत ही नम्र होकर बोली—"युवराज दलपतिरायने छत्रसालके फेरमें पड़कर आज कितने यवनोंके सिर काटे! दिल्ली दरबारके प्रधान दरबारी और अधिकारी रणदूलहखाँसे लड़कर उन लोगोंने उसकी मुश्कें बाँधीं और उसे कैद कर लिया। ऐसे ऐसे अनर्थ करके जब वे आपके पास आये तब आपने उन्हें जरा भी न डाँटा डपटा, आपने एक शब्द भी बिगड़ कर न कहा। इसी लिए हम लोग बड़े फेरमें पड़ गये। जब प्राणनाथ प्रभु कोमलहृदय युवराजको भविष्यमें सदा ऐसे ही कृत्य करते रहनेके लिए उत्साहित करने लगे तब भी आप चुप रह गये। छत्रसालके कार्य्य पर चम्पतरायने जितना अभिमान प्रकट किया था, युवराज दलपतिरायके कृत्य पर आपको उतना ही असंतोष प्रकट करना चाहिए था। परन्तु आप प्रसन्नतासे युवराजकी तरफ देखते ही रह गये। इतनी रातके समय मैं आपके पास यही जाननेके लिए आई थी कि आपके इस विलक्षण व्यवहारका क्या कारण था। आपके इसी व्यवहारके कारण सहजमें यह अनुमान किया जा सकता है कि आप अपनी प्रतिज्ञासे हट रहे हैं, पर तो भी उसकी सत्यता पर मुझे विश्वास न होता था। अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ रह कर आजतक आपने जितने कार्य और आचरण किये हैं उनके कारण तो हम लोग बड़े ही निश्चिन्त थे; पर आपके आजके व्यवहारसे मेरे मनमें सन्देह उत्पन्न होने लगा। अपना संदेह दूर करनेके लिए ही मैं यहाँ आई हूँ और इसी लिए मुझे अभी तक चैन नहीं पड़ा, मेरी आँख नहीं लगी। मैं आपसे यही जाननेके लिए इतनी रातके समय अपने खेमेसे बाहर निकली थी कि सवेरेके व्यवहारका आप क्या कारण बतलाते हैं। संयोगसे यहाँ आपसे

भेंट हो गई। अब आप अपनी सवेरेकी उदासीनताका कारण बतला कर मेरा संदेह दूर करें।"

हीरादेवीकी बात सुन कर शुभकरण कुछ सोचमें पड गये। धीरे धीरे उनके चिन्तित मुखपर झलककी प्रसन्नता दिखाई पडने लगी। थोड़ी देर बाद ऐसा जान पडा कि वे विचार-तन्द्रासे एकदम जाग्रत हुए हैं। वे कुछ तो अपने आपसे और कुछ हीरादेवीको लक्ष्य करके बोले,—"मेरा आजका व्यवहार अवश्य ही आश्चर्यजनक था। युवराजने आज जो अद्वितीय कार्य्य किया उसके लिए मुझे बहुत कुछ करना चाहिए था, पर तो भी मैं चुप रहा। युवराज अब बडे हुए हैं। आगे चलकर उनके द्वारा इससे भी भयकर और उग्र कार्य्य होंगे। मैं तो इस बातका प्रण कर चुका हूँ कि चम्पतरायका और स्वतन्त्रताके लिए उनके होनेवाले प्रयत्नोंका पूरी तरहसे नाश करूँगा, और मेरा पुत्र बुंदेलखडसे यवनोंकी सत्ता नष्ट करनेके लिए छत्रसालकी सहायता करनेको तैयार है। ऐसे अवसर पर मेरा चुप रहना ठीक नहीं। मुझे इस समय यह निश्चय करना चाहिए कि मैं अबतक जिस प्रकार चम्पतरायसे द्वेष करता आया हूँ, उनके प्रयत्नोको नष्ट करना जिस प्रकार अपना कर्तव्य समझता आया हू और स्वतन्त्रताके लिए उनके उद्योगोंमें जिस प्रकार विघ्न डालता आया हूँ उसी प्रकार मेरे पुत्रको भी सब कार्य करना चाहिए अथवा युवराज छत्रसालसे मित्रताका व्यवहार करके उनकी सहायता करनी चाहिए। आज मुझे इस बातका निर्णय कर लेना चाहिए कि अबतक मैं जिस प्रकार लडता भिड़ता रहा हूँ उसी प्रकार हमलोगोंके पुत्रोंको भी लडना-भिड़ना चाहिए अथवा परस्पर मिलकर बुंदेलखंडको दासत्वसे छुडानेका प्रयत्न करना चाहिए। हीरादेवी! मेरे आजके मौनके कारण जिस प्रकार तुम्हें मेरे सम्बन्धमें शका हुई है, उसी प्रकार कुमार दलपतिरायको भी हुई होगी। उनकी समझमें भी यह बात न आई होगी कि उनका आजका कार्य मुझे पसन्द आया या नहीं। तुम्हारी तरह उनकी शंका भी दूर होनी चाहिए। चलो, युवराज दलपतिरायके पास चलें। वहीं चलकर मैं सब बातोंका स्पष्ट निर्णय करूँगा। विना इसके मेरे मनकी व्याकुलता दूर न होगी।"

यह कहकर शुभकरण बाई ओरके खेमेकी तरफ बढे। उस समय उन्होंने सारी चिन्ताओंसे अपना पीछा छुडा लिया था। आकाशमें चमकनेवाले चन्द्रमाकी तरह उनका मुख प्रफुल्लित जान पड़ता था। रानी हीरादेवी उनके पीछे पीछे चल रही थी। वह अपने मनमें यह समझकर बहुत प्रसन्न हुई थी कि आज

सवेरे युवराज दलपतिरायने जो अनुचित कार्य्य किया है इस समय उन्हें उसका दंड मिलेगा। उन्होंने अच्छीतरह समझ लिया था कि आज रातके प्रयत्नमें मुझे पूरी पूरी सफलता हुआ चाहती है।

शुभकरणने प्रसन्न होकर चन्द्रमाके प्रकाशमें स्नान करनेवाले विंध्याचलकी ओर फिर एक बार देखा। उस समय उनकी दृष्टिमें निश्चय आनन्द और अभिमानकी मिश्रित छाया दिखाई पडती थी। यद्यपि वे मुँहसे कुछ भी न बोले थे, तो भी उनके चेहरेसे प्रकट होता था कि वे मन-ही-मन विंध्याचलसे कह रहे हैं,–"पर्वतराज! तुम्हारा यह कृत्य मुझे पसन्द है।" उनके चेहरेकी कान्तिने उनके भाषणसे भी वढकर काम किया।

शुभकरणके पीछे पीछे चलकर हीरादेवी युवराज दलपतिरायके खेमेके पास पहुँची। शुभकरण बिना उसकी ओर ध्यान दिये सीधे अपने पुत्रके पलंगके पास चले गये।

हीरादेवी इस आशासे खड़ी होकर उन दोनोंकी ओर देखने लगी कि अब शुभकरण बड़े जोरसे अपने पुत्र पर बिगड़ेंगे और उन्हें पलंग परसे नीचे खींच लेंगे। परतु उसे कुछ निराला ही दृश्य दिखलाई दिया। उसकी आशा व्यर्थ हुई, उसका आनन्द नष्ट होगया। वह आश्चर्यसे स्तम्भित हो गई। उसने जो कुछ देखा उस पर उसे विश्वास नहीं हुआ।

अपना सन्देह दूर करनेके लिए उसने फिर दलपतिरायके पलंगकी ओर देखा। उस समय भी उसे यही दिखलाई दिया कि शुभकरण प्रेमभरी दृष्टिसे अपने पुत्रका मुँह निहार रहे हैं।

शुभकरणके निर्णयके सम्बन्धमें क्या हीरादेवीके भाग्यमें यही देखना वदा था।

* - * *

तीसरा प्रकरण।

राजाओंके कलंक।

चंचुकीराय थे तो राजा, पर उनमें योग्यता साधारण मनुष्योंकी भी न थी। वे शरीरसे जितने अशक्त थे, मनसे भी वे उतने ही दुर्बल थे, इस लिए वे एक साधारण कुटुम्ब चलानेके योग्य भी न थे। बुंदेलखंडके एक

वडे प्रातके राजकुलमें उत्पन्न होनेके कारण ही उन्हें अपना पैतृक राज्यासन मिल गया था।

जिस प्रकार अमृत और विपका मेद न जाननेवाले व्यक्तिको भी केवल एक वैद्यराजके लडके होनेके कारण धन्वन्तरिकासा मिजाज रखना पडता है, अथवा किसी निरक्षर भट्टाचार्य्यको किसी महामहोपाध्यायके लडके होनेके कारण शालकी जोडी कधेपर रखकर पडितशिरोमणि वनना पडता है, अथवा अपने स्वरसे गदहेको भी मात करनेवाले व्यक्तिको किसी गवैयेके लडके होनेके कारण तानसेनकासा अभिमान करना पडता है, उसी प्रकार कचुकीरायको भी अपनी राजसी मर्य्यादा रखनी पडती थी। उनके पूर्वज ढॉंडेरके राजा थे, इसी लिए कचुकीरायको भी ढॉंडेरका राजा होना पडा था। शास्त्र और लोकाचारके अनुसार ढॉंडेरके राज्यासनके उत्तराधिकारी होनेके अतिरिक्त उनमें न तो और कोई गुण ही था और न पात्रता ही थी। अपने युवराजकालमें वे कुछ दिनों तक जहाँगीर और शाहजहाँके महलोंमें कचुकीका काम कर चुके थे। इसी लिए शाहजहाँ उन्हें दिल्लगीसे कंचुकीराय कहा करता था, तभीसे उनका यह नाम पड गया था। अन्य भारतवासियोंकी तरह बुदेलखडकी सारी प्रजा भी अपने राजामें ईश्वरका अश मानती थी। टॉंडेरके निवासीभी कचुकीरायको ईश्वरका अश ही समझते थे।

अपनी कुमारावस्थामें उन्होंने यह वात वहुत अच्छी तरह जान ली थी कि मुसलमान वादशाहों और उमराओं आदिकी किस प्रकार सेवा होती है और उन्हें प्रसन्न करनेके कौन कौनसे उपाय होते हैं। यही नहीं बल्कि तभीसे मुसलमानोंके लिए उनके हृदयमें वहुत कुछ आदर और पूज्यभाव उत्पन्न हो गया था। उनके दरवारमें वहुधा मुसलमान अमीर-उमराव आया करते थे और वहाँ उनका अच्छा आदर-सत्कार होता था। वहुतसे मुसलमानोंको उनके राज्यमें ऊँचे ऊँचे पद भी मिल गये थे, जिनपर वे वडे ऐश-आरामसे रहते थे। कचुकीरायको उनके सुभीतेका विशेष ध्यान रहता था। मुसलमानोंके प्रति ऐसी श्रद्धा केवल कचुकीरायमें ही नहीं थी। उन दिनों भारतके भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें और भी अनेक ऐसे छोटे मोटे राजे थे जिनके राजकुमार शाहीदरवारोंमें तरह तरहकी सेवायें किया करते थे और जिनके राज्यमें मुसलमानोंकी खूव खातिर होती थी। ऐसी दशामें कचुकीरायको कोई विशेष दोप देना ठीक नहीं।

विंध्यवासिनीदेवीके मन्दिरमें जब कंचुकीरायको यह मालूम हुआ कि युवराज छत्रसाल और दलपतिरायने रणदूलहखॉ और उनके सिपाहियोंकी बहुत दुर्दशा की है तब उन्हें बहुत दु ख हुआ। उनकी समझसे वे दोनों युवराज दण्डके योग्य थे, पर उनका दु ख बढानेके लिए उलटे उनका गौरव और सम्मान हुआ। छत्रसालको दंड दिलाना तो उनकी शक्तिके बाहर था, पर दलपतिरायको कुछ दण्ड दिलवा देनेकी इच्छा और आशा उन्हें अवश्य थी, क्योंकि वे समझते थे कि शुभकरण आजकल हीरादेवीके हाथकी कठपुतली हो रहे हैं और इसी लिए वे अपने पुत्रको कुछ दण्ड दे सकेंगे। पर स्वय कचुकीरायमें इतना मनोबल ही नहीं था कि हीरादेवी या शुभकरणसे इस विषयमें कुछ कहते। अत. दलपतिरायको भी कुछ दण्ड न मिल सका। मन्दिरसे बाहर निकलते ही उन्होंने देखा कि रणदूलहखॉं सामने एक पेडसे बँधा हुआ है। उसे छुडा सकनेमें असमर्थ होनेके कारण उन्हें और भी दु ख हुआ और वह अपना दु ख साथ ही साथ लिये अपने खेमेमें पहुँचे। उनके विशेष दु खी होनेका यह कारण किसीकी समझमें न आया।

कचुकीरायने किसी प्रकार सोच-विचारमें तो वह सारा दिन बिता दिया, पर सन्ध्याको उन्हें रणदूलहखॉकी विशेष चिन्ता हुई। कोई उपाय सोचने और परामर्श करनेके लिए उन्होंने हीरादेवीको बुलाया। हीरादेवीके आनेपर दोनोंमें बहुत देरतक कानाफूसी होती रही। यह कानाफूसी प्राय आधी रातके समय समाप्त हुई। वहॉसे उठकर हीरादेवी अपने डेरेकी ओर नहीं गई बल्कि उस तरफ गई जिधर शुभकरणका खेमा पड़ा हुआ था।

हीरादेवीके चले जानेके उपरान्त कचुकीराय बहुत देर तक सोचमें पडे रहे। वह कभी बैठते, कभी लेटते और कभी खेमेमें चारों ओर चक्कर लगाते। इसी प्रकार बहुतसा समय चिन्तामें बिताकर उन्होंने एक खिदमतगारको बुलाकर धीरेसे उसके कानमें कुछ कहा। सुनते ही उसने कुछ आश्चर्यभरी दृष्टिसे अपने मालिककी तरफ देखा और तब वह वहॉसे चल दिया। उसे लौटकर आनेमें अधिक विलम्ब नहीं लगा, पर तो भी इसी बीचमें कंचुकीराय अपने बहुतसे कपडे और जेवर उतार चुके थे। खिदमतगारके लाये हुए साधारण कंपड़े उन्होंने पहन लिये और ऊपरसे नकली दाढी मोछ लगा ली। उस समय उनका वेष ऐसा विलक्षण हो गया था कि देखनेमें न तो वे पूरे हिंदू ही जान पड़ते और पूरे मुसलमान। खिदमतगारको भी उनका वह वेष देखकर बहुत

आश्चर्य हुआ। कंचुकीराय उसे साथ लिये लिये एक बडे आइनेके सामने जा खडे हुए। जब वे उस आइनेमें स्वयं अपने आपको न पहचान सके तब उन्हें दृढ विश्वास हो गया कि अब और मुझे कोई नहीं पहचान सकेगा और मेरा काम मजेमें हो जायगा। इस प्रकार निश्चिन्त होकर उन्होंने खिदमतगारसे कहा—" किशुन! महेवाके राजा चम्पतरायने रणदूलहखाँको जिस जगह कैद कर रक्खा है, वहाँ मुझे ले चल।"

कि०—" उनसे तो महाराज साधारण वेषमें भी मिल सकते थे।"

कंचु०—" तुझे इन सब झगडोंसे क्या मतलब! तू आगे आगे रास्ता दिखलाता हुआ चल।"

इस पर किशुन कुछ भी न बोला। वह अपने स्वामीके आगे आगे चलने लगा। थोडी देर तक चुपचाप चलनेके उपरान्त एक स्थान पर किशुन ठहर गया और एक खेमेकी तरफ हाथसे इशारा करके बोला,-" महाराज! इसी खेमेमें रणदूलहखाँ कैद है। पर उस खेमेके बाहर पहरा है। इस लिए मुझे सन्देह है कि महाराजके भीतर जानेमें रुकावट होगी।"

कंचु०—" तू इन सब बातोंकी चिन्ता न कर और लौट जा। (कुछ ठहर कर) और नहीं तो तू यहीं कहीं छिपकर खडा हो जा और मेरा रास्ता देख।"

किशुन एक पेडकी आडमें छिपकर खड़ा हो गया और कंचुकीराय धीरे धीरे दिखलाये हुए खेमेकी ओर बढने लगे। परन्तु उस समय तक उन्होंने खेमेमें प्रवेश करनेका कोई उपाय नहीं सोचा था। वे दूसरे ही विचारोंमें मग्न चले जाते थे। खेमा पास ही था, इस लिए वे शीघ्र ही पहरेदारके पास पहुँच गये। पहरेदारने भी उन्हें पहलेसे आते हुए न देखा था, इस लिए उनके पास पहुँचने पर उसने कुछ कडककर कहा-" कौन।" कंचुकीरायको वह शब्द कुछ परिचितसा जान पडा। उन्होंने दो कदम और आगे बढकर जब गौरसे पहरेदारका मुँह देखा तब उन्हें मालूम हुआ कि वह उनका पुराना नौकर सौभाग्यसिंह है। उन्होंने उसके कन्धेपर हाथ रखकर कहा—" सौभाग्यसिंह! हमें पहचानो, हम हैं राजा कंचुकीराय।"

इस विचित्र वेषमें अपने पुराने स्वामी राजा कंचुकीरायको देखकर पहले तो सौभाग्यसिंहको विश्वास नहीं होता था, पर उनकी आवाजके कारण उसने उन्हें

अच्छी तरह पहचान लिया। उसने झुककर सलाम किया और आश्चर्यसे कहा—
" इतनी रातके समय इस वेषमें महाराज किधर निकले ?"

कंचुकी०—" मुझे एक बहुत आवश्यक कार्य्यके लिए रणदूलहखाँसे मिल-कर कुछ परामर्श करना था। कोई मुझे पहचान न ले, इस लिए मैंने यह विलक्षण वेष बनाया है। सयोगसे यहाँ पहरेपर तुम मिल गये। तुम मेरे पुराने विश्वासपात्र थे, इस लिए मैंने तुम्हें अपना परिचय देनेमें कोई हानि न समझी।"

कंचुकीरायको खेमेमें प्रवेश करनेके लिए उद्यत देखकर सौभाग्यसिंह बडी ही असमजसमें पडा। उसने कहा,—" महाराज ! मैं तो. ...." पर कन्चुकी-रायने उसे बोलने न दिया और बीचमें ही रोककर कहा—" नहीं नहीं, तुम डरो मत। चिन्ताकी कोई बात नहीं है। मैं अभी दो चार बातें करके ही लौट आऊँगा। मुझे कोई विशेष कार्य्य नहीं है। तुम घबराओ मत। मेरा यहाँ आना किसीको कानोंकान भी न मालूम होगा। और अगर तुमपर किसी तर-हकी आँच आवे तो उसका जिम्मेदार मैं हूँ।" इतना कहते हुए—बिना सौभाग्यसिंहके उत्तरकी प्रतीक्षा किये—कंचुकीराय खेमेके अन्दर चले गये। सौभाग्यसिंहको उन्हें रोकनेका साहस नहीं हुआ।

खेमेके भीतर पैर रखते ही कचुकीरायको जो आनन्द हुआ उसका वर्णन नहीं हो सकता। उसके आनन्दका मुख्य कारण यह था कि अब उन्हें रणदूल-हखाँके मुक्त होने और चम्पतराय तथा शुभकरणको दण्ड मिलनेकी पूरी आशा हो गई थी। उन्होंने भीतर घुसते ही देखा कि एक बहुत साधारण खाटपर रणदूलहखाँ पडा हुआ खर्राटे ले रहा था। वह थोडी ही देर पहले सोया था। कंचुकीराय उसके पास खडे होकर उसे जगानेका प्रयत्न करने लगे। उनके दो तीन बार खाँसने-खखारने पर रणदूलहखाँकी नींद खुल गई और उसने सिर उठाकर कर्कश स्वरमें पूछा " कौन है ?"

कंचुकीरायने बड़ी ही नम्रतासे कहा,–"जनाब ! मैं यहाँ इस मौके पर आपकी कुछ मदद करनेके लिए आया हूँ।"

रण०—" माफ करो ! भाई मुझे माफ करो ! मैं तुम्हें नहीं पहचानता और न मैं तुम्हारी मदद चाहता हूँ। तुम तो मुझे इस वक्त खासे शैतान मालूम होते हो ! खुदा इन काफिरोंको गारत करे, ये भी क्या क्या ढोंग रचते हैं।"

कचु०—"हाँ जनाव आपका, कहना बहुत दुरुस्त है । मगर आप कमसे कम मेरा एतवार करें । मैं आपका खैरख्वाह हूँ और मुझसे आपको फायदा पहुँचेगा ।"

लेकिन रणदूलहखाँपर न जाने कहाँका भूत सवार था कि कचुकीराय विलक्षण वेषमें उसे शैतान ही मालूम होते थे । ज्यों ज्यों कचुकीराय नम्रता दिखलाते थे त्यों त्यों वह उनसे और भी डरता जाता था । उसने कुछ डर कर और कुछ खिझलाकर कहा—"न भाई, मुझे तेरी मदद नहीं चाहिए । तू माफ कर और अपना रास्ता ले । मेरी मदद खुदा करेगा, तू मुझे इसी हालतमें रहने दे । अगर मैंने कभी तेरा कोई कसूर किया हो तो उसके लिए तू मुझे माफ कर । मै तेरे पैरों पडता हूँ, मुझे तुझसे डर लगता है ।"

कचुकीरायको इस वातका मन ही मन बहुत दु ख हुआ कि मैंने पहले ही खाँसाहवको अपना परिचय क्यों न दिया और व्यर्थ उन्हें इतना क्यों डरा दिया । इसी लिए शायद उन्होंने मुझे चम्पतरायके पक्षका कोई आदमी समझा । उन्होंने फिर कोमल स्वरमें कहा—"जनाव, मैं शैतान नहीं हूँ वल्कि. "

रण०—"अगर तू शैतान नहीं है तो कमसे कम उसका भाई-विरादर जरूर है ।"

कचु०—"जनाव ! आप एतवार करें, मैं शैतान या भूत-प्रेत नहीं हूँ बल्कि देहलीके शाही दरवारका सच्चा खैरख्वाह और पुराना नमकख्वार ढाँडेरका राजा कचुकीराय हूँ । और . "

पर रणदूलहखाँको इतने पर भी विश्वास न हुआ । वह अपनी पहली वातपर ही अडा रहा । उसने कहा,—"भाई तू मेरा पीछा छोड दे, मुझे तुझसे डर लगता है । किसी दूसरे मौकेपर तू जो कुछ कहेगा मै पूरा कर दूँगा, पर इस वक्त तू मुझे माफ कर ।"

इस प्रकार अपना तिरस्कार होते देखकर कचुकीरायको बहुत ही दु ख हुआ । उन्होंने फिर कहा,—"जनाव, आप मुझसे जरा भी न डरें और मुझे अपना दोस्त समझें । आपने मुझे इस वक्त नहीं पहचाना । पर पहले आप एक वार मेरे दरवारमे आचुके हैं और ढाँडेरमें मेरे मेहमान रह चुके हैं । न जाने आपको इस वक्त क्या खयाल हो गया है जिससे आप इतना डर रहे हैं । आप इतमीनानसे वातें करें । मै आपको इस कैदसे छुडानेका इरादा करके यहाँ आया हूँ ।"

अब रणदूलहखाँके लिए अविश्वास करने अथवा भयभीत होनेका कोई कारण न रह गया। उसने हँसते हुए कहा—"राजा साहब! आपने तो मुझे इस वक्त बिलकुल डरा दिया। आइए, बैठ जाइए।"

कंचुकीराय बड़े अदबसे खाँ साहबके पास बैठ गये। खाँसाहबने उन्हें अच्छी तरह पहचान कर कहा,—"कहिए, आप यहाँ क्योंकर और किस इरादेसे आये हैं?"

कंचु०—"आज सुबह ही जब मैंने मन्दिरसे बाहर निकलते हुए आपको पेडमें बँधे हुए देखा तो मुझे बहुत रंज हुआ। पर क्या करूँ, उस वक्त मैं लाचार था। दिनभर मैं आपको छुडानेकी तदबीरें सोचता रहा, मगर किसीमें मुझे कामयाबीकी सूरत न दिखाई दी। लाचार इस वक्त मैं आपसे ही इसकी कोई तदबीर पूछनेके लिए किसी तरह यहाँ आ पहुँचा।"

रण०—"खैर, आपने बडी मेहरबानी की। इस लिए मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ। खुदाका शुक्र है कि हिन्दुओंमें कुछ राजे ऐसे बहादुर और समझदार भी हैं जो अपना फर्ज अच्छी तरह समझते हैं और मौका पडनेपर उसे पूरा करनेके लिए इतनी तकलीफ उठाते हैं।"

कंचु०—"अजी जनाब! आप यह क्या फरमाते हैं। यह तो मेरा फर्ज था। इसमें मैंने आप पर कोई एहसान नहीं किया। खैर, अब आप बतलावें कि आपने यहाँसे अपने छूटनेकी क्या तदबीर सोची है?"

रण०—"राजासाहब! आप मुझसे क्या तदबीर पूछते हैं? आप खुद ढोंड़ेरके राजा थे। आपके साथ यहाँ सौ दो सौ आदमी भी थे। आपने उन सबको साथ लेकर इस खेमेपर छापा डाला होता और मुझे यहाँसे छुडा लिया होता। चोरोंकी तरह छिपकर रातको यहाँ आनेकी क्या जरूरत थी?"

कंचुकी०—(कुछ लज्जित होकर) "आपका कहना बजा है। मगर बात यह है कि एक तो चम्पतरायके साथ फौज ज्याद है और दूसरे इस जगह मेरा कोई बडा मददगार नहीं है। खैर, अगर आपने अबतक कोई तदबीर सोची हो तो बतलावें, मैं उसके मुताबिक काम करनेके लिए तैयार हूँ।"

रण०—"राजा साहब, जब आप इस जगह मेरी मदद नहीं कर सकते, तब खैर आप किसी तरह मेरे कैद होनेकी खबर बहुत जल्द देहली पहुँचा दें। वहाँसे मेरी मददके लिए काफी फौज आ जायगी। (कमरसे एक कटार निका-

लकर) लीजिए, मैं आपको यह कटार देता हूँ। इसकी मददसे आप देहलीके शाही महलों और दरवारोंमें वहुत ही आसानीसे आ जा सकेंगे, कहीं कोई आपको रोक न सकेगा। (कंचुकीरायको कुछ चकित देखकर) आप इस कदर तअज्जुवमें क्यों आगये ? क्या आपको मेरी वातका यकीन नहीं है ? ”

कचु०—“ भला आपकी वात और उसपर यकीन न हो ! गैरमुमकिन ! मे सिर्फ यही जानना चाहता था कि इस कटारसे मुझे कैसे और क्या काम लेना पडेगा। ”

रण०—“ आप इसे लेकर सीधे देहली चले जाय। दरवार या महलमें जिस जगह जहाँपनाह होंगे उस जगह आप इस कटारको दिखलाते हुए वखूवी जा सकेंगे। वहाँ पहुँचकर शाहशाहसे अर्ज कीजिएगा कि मैं अपने कुछ साथियोंके साथ देवीका मन्दिर ढानेकी तैयारीमें था कि इतनेमें चम्पतरायका शरीर लडका एक वडी फौज लेकर मुझपर चढ आया। हालाँ कि मैंने उसकी ताकत तोडनेमें अपनी तरफसे कोई बात उठा न रक्खी थी, ताहम मेरे १५–२० साथी उसके तीन चार सौ आदमियोंके सामने न ठहर सके। उसी मौके पर चम्पतरायने खुद भी पहुँचकर उसकी मदद की और दोनोंने जहाँपनाहके नमकख्वारोंको कैद कर लिया। अव काफिर चाहते हैं कि अगर उन्हें इस वातका पक्का यकीन दिला दिया जाय कि आइन्द मन्दिर तोडनेकी कोई कोशिश न की जायगी तो वे मुझे छोड देंगे। यह भी कह दीजिएगा कि वे लोग मुझे कैद करके महेवा ले गये हैं और वहींके किलेमें मुझे कैद रखनेका उनका इरादा है। इतनी वातें कहकर आप जहाँपनाहसे मेरी मददके लिए सिफारिश कीजिएगा और उनसे फौज माँगिएगा। और फिर आप खुद समझदार हैं। आपको ज्याद समझानेकी जरूरत नहीं। आप जव जेसा मौका देखेंगे तव वैसा काम खुद कर लेंगे। ”

कचु०—“ म उम्मेद करता हूँ कि इतना होनेपर जरूर आपकी रिहाई हो जायगी। ”

रण०—“ राजासाहव ! यह आप क्या फरमाते हैं ! हुजूरवालाको खुद अपने नमकख्वारोंकी फिक्र होगी। इसके अलाव वे आपके साथ वहुत खातिरसे पेश आवेंगे और ताज्जुव नहीं कि खुश होकर आपका मर्तव और मन्सव भी वढा दें। हाँ, मैं आपको एक वात वतलाना भूल गया। शाहशाहवालाके

दुश्मनोंकी तबियत आजकल बहुत अलील है। उनकी वहन रोशनआरा बेगम उनकी तीमारदारीमें लगी होंगी। महलोंमें सैकड़ों तातारी औरतोंका नंगी तलवारोंका पहरा होगा और उसी पहरेपर यह कटार आपकी मदद करेगी। आप किसी तरह रोशनआरा बेगमके हुजूरमें पहुँच कर उन्हींसे सब बातें अर्ज कीजिएगा, आजकल सलतनतके सब काम वही अंजाम फरमाती है। वे इसका मुनासिब इन्तजाम कर देंगी।"

कचु०—"हाँ जनाब, यह तो बतला... .. " इतनेमे ही कंचुकीरायके कानोंमें चम्पतरायका कर्कश स्वर पडा। वह घबरा गये। उन्होंने आँखें उठाकर देखा, चम्पतराय यह कहते हुए उनकी ओर बढ़ रहे थे—"खबरदार! अगर एक शब्द भी मुँहसे निकला तो अभी टुकडे टुकडे कर डालूँगा। दुष्ट तू कौन है और यह उपद्रव करनेके लिए यहाँ किस प्रकार पहुँच गया?"

कचुकीराय उनकी बातका उत्तर देना चाहते थे पर उनके मुँहसे शब्द न निकलता था। चम्पतरायने यह कहते हुए कि "यह दुष्ट इस प्रकार न मानेगा" अपनी तलवार खींच ली। कचुकीरायने लडखड़ाती हुई जबानसे कहा—"मैं हूँ ढँडेरका राजा कंचुकीराय।"

चम्पतरायको उसकी बात पर बहुत ही आश्चर्य्य हुआ। थोड़ी देरतक वे टक लगाये हुए उनकी ओर देखते रहे। अन्तमें उन्होंने कहा,—"तुम राजा काहेको हो, राजाओंके कलंक हो।"

* * * *

चौथा प्रकरण।

पिता और पुत्र।

पूर्व दिशाकी एक ऊँची टेकरीकी आडमें खड़े होकर भगवान् भास्कर प्रेमपूर्वक अपने असख्य बालकोकी ओर देख रहे थे। अपने पिताका आगमन-काल निकट जानकर वनस्पतिकुल प्रफुल्लित होकर उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। लताओंने प्रफुल्लित होकर, वृक्षोंने नम्र होकर और दूसरी वनस्पतियोंने प्रेम-पूर्वक अपने पिताकी ओर देखा। सामने ही उन्हें निर्मल आकाशमें पिताके दर्शन हुए।

युवराज दलपतिराय उस समय तक जाग उठे थे। उन्होंने आँखें खोलकर देखा—शुभकरण प्रेमपूर्वक उनके पलंगके पास खडे हुए उनकी ओर देख रहे थे और उनसे कुछ हटकर रानी हीरादेवी काठकी पुतलीकी तरह खडी हुई थी। उन्हें आश्चर्य भी हुआ और आनन्द भी। उन्होंने चटपट उठकर पिताजीके चरण छुए। उन्हें उठाकर छातीसे लगाते हुए शुभकरणने गद्गद स्वरसे कहा,—" बेटा, एक बार अच्छी तरह मेरे गलेसे लग जाओ।"

दल०—" पिताजी! मैं बड़ा ही भाग्यवान् हूँ। आज सबेरे ही आपके शुभ दर्शन हुए, मैं धन्य हूँ। विन्ध्यवासिनीके सहस्र दर्शनोंसे भी मुझे जो आनन्द न मिल सकता वह मुझे आपके एक बार दर्शन करनेसे हुआ। मैं समझता हूँ कि आज मेरे पूर्व-जन्मके पुण्य उदय हुए हैं।"

शुभ०—दलपति, तुम्हें अभी तक मेरे हार्दिक विचारोंका पता नहीं लगा। सद्गुणों, सत्कार्य्यों और विवेक आदिका मैंने बहुत ही बुरी तरह निरादर किया है, और इसी लिए उसकी ज्वाला मेरा अन्तःकरण जला रही है, मुझे मनुष्य-कोटिसे निकालकर पिशाच-कोटिमें रख रही है। आज बुन्देलखडमें पहलेका शुभकरण नहीं बल्कि उसका पिशाच घूम रहा है। तुम पवित्र और दैवी गुणोंके अधिकारी हो, व्यर्थ मुझ पिशाचको महत्त्व मत दो।"

बडे ही आश्चर्य्य और दुःखसे युवराजने कहा,—" पिताजी, आप यह क्या कह रहे हैं?"

शुभ०—" जो कुछ मैं कहता हूँ वह बहुत ठीक है। क्या तुम नहीं जानते कि आजतक मैं क्या करता आया हूँ? क्या मेरे कार्य्योंमें तुम्हें कभी तनिक भी मनुष्यत्व दिखाई दिया है? ऐसे ऐसे कार्य्य मेरे दैनिककर्ममें सम्मिलित हो गये हैं जिन्हें देखकर पिशाचोंको भी डर लगता और ग्लानि होती है। चम्पतरायसरीखे वीरशिरोमणि जब बुन्देलखडके ऐहिकस्वर्ग स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए दिनरात प्रयत्न करते हैं, तब उनकी मदद करना तो दूर रहा, शुभकरणसे जडकी तरह चुपचाप बैठा भी नहीं जाता, उलटे शुभकरणका यह पिशाच यथासाध्य उनके कार्योंमें विघ्न डालता है। सारे बुन्देलोंको दासत्वके नरककी ओर ले जाना ही मेरा अन्तिम उद्देश्य हो गया है। ऐसे कार्योंमें जितना अधिक बन्धु-द्रोह, देश-द्रोह और धर्म्म-द्रोह करना पड़ता है उसकी कल्पना भी तुम्हारे सरीखे निष्पाप आचरणवाले युवकको न करनी चाहिए। तुम अपने सद्गुणोंसे

इस लोकको स्वर्ग बनाओ, अपने निष्पाप आचरण और उत्तम कृत्योंसे अपने देशको सब प्रकारसे सुखी करो। तुम्हारे लिए यही उत्तम है कि तुम मेरे सरीखे पातकी और दुष्टकी ओर ध्यान न दो।"

दलपतिरायने काँपते हुए स्वरमें कहा,—"पिताजी! अभी तो आपके सद्गुणोंकी मुझमें छाया भी नहीं आई है। सूर्य्यके सामने किसी बहुत ही छोटे ग्रहकी जो दशा होती है, आपके सद्गुणोंके सामने मेरी भी वही स्थिति है। आप व्यर्थ अपने आपको दोष न लगावें। आपके बहुतसे गुण बड़े ही प्रशसनीय हैं।"

शुभकरणने आवेशमें आकर कहा,—"नहीं तुम्हारा कहना ठीक नहीं है। तुम्हारी ऑखोंके सामने पितृप्रेमका परदा पडा हुआ है। पहले उस परदेको हटा लो और तब मुझे देखो। तुमने शायद यही न कहा था कि मुझमें गुण हैं? यह तुम्हारा भ्रम है। बहुत दिन हुए गुणोंसे मेरा सम्बन्ध टूट चुका है। अपने भाईके साथ द्रोह करनेवाले, उसके अपमान और दु खमें ही अपना सारा सुख समझनेवाले और दिनरात अपने भाईके नाशके प्रयत्नमें लगे रहनेवाले मनुष्यसे सद्गुणोंका क्या सम्बन्ध? जो मनुष्य बिना किसी प्रकार दुखी हुए अपने धर्म्मको अपमानित और पददलित होते देखता है, जो अपने धर्म्मका नाश करनेके लिए विधर्मियोंको सहायता देनेमें ही अपना बड़प्पन समझता है और अपने धर्म्मका ह्रास और देशका नाश देखकर जिसकी आँखोंसे दु खाश्रुके बदले आनन्दाश्रु निकलते हैं वह पातकी सद्गुणोंका मूल्य क्या जाने? मैं किसी समय अवश्य सद्गुणी था। तब देशके लिए मेरी आत्मा बहुत दु खी रहती थी, बुन्देलोंकी स्वतंत्रताकी दिव्यज्योति मुझे निरन्तर दिखलाई पड़ती थी। पर उस समय मैं चम्पतरायका मित्र और साथी था। बुन्देलखण्डकी प्रजा समझने लगी थी कि चम्पतराय और शुभकरण मिलकर राष्ट्रका अन्तिम उद्देश्य सिद्ध कर देंगे, बुन्देलोंको इस लोकका मोक्ष—स्वातंत्र्य—दिलवा देंगे। पर देशके ऐसे भाग्य कहाँ? शीघ्र ही आगे चलकर मुझे चम्पतरायको अपना शत्रु समझना पडा। सामने और पास ही दिखलाई पड़नेवाली स्वतत्रताको छोडकर मुझे अपने प्रयत्नोंकी दिशा बदलनी पडी। स्वतत्रता प्राप्तिके लिए प्रयत्न करनेवाले हाथोंको दासत्व बढानेके उद्योगोंमें लगाना पड़ा। जो नेत्र स्वतंत्रतादेवीका स्वर्गीय सौन्दर्य्य देख रहे थे उन्हें परतंत्रतारूपी राक्ष-

सीकी ओर फेरना पडा। स्वतन्त्रताका कर्ण-मधुर और मनोहर संगीत छोडकर परतन्त्रताका भयकर ओर कर्कश रव सुनना पडा। दलपति! मैं भी किसी समय तुम्हारे समान निष्कलक आचरण करता था, मुझमें अनेक उत्तम उच्चाकाक्षायें थीं और मुझमें अनेक गुण थे ...."

दल०—(बीचमें ही) "तब आपको अपने कार्य्य और व्यवहार बदलनेकी क्या आवश्यकता हुई? चम्पतरायसे मित्र-भाव बनाये रखकर आपने अपने देशको स्वतन्त्र क्यों न किया?"

शुभ०—"वह स्वर्ग-सुख भोगना मेरे भाग्यमें बदा ही न था। जिस समय स्वच्छ आकाशमें स्वतन्त्रताका सुन्दर चन्द्रमा उदित होकर प्रजापर अमृत सींचना ही चाहता था उसी समय बादल दिखलाई दिया। थोडी ही देरमें सारे आकाशमें काली घटायें छागईं। एक ओरसे काले मेघोंने और दूसरी ओरसे दुष्ट राहुने स्वातंत्र्य–चन्द्रमाको ग्रसना आरम्भ किया। चारों ओर दासत्वका घोर अन्धकार छागया। उस अन्धकारमें जितने पिशाच घूम रहे थे मैं उन सबका सरदार बन गया और उस अन्धकारको और भी भीषण करनेका प्रयत्न करने लगा।"

दल०—"पिताजी, उस अन्धकारके नाशका प्रयत्न छोडकर आप उसे बढानेका उद्योग क्यों करने लगे? दासत्वके नाशको ही सर्वोत्तम समझ कर भी आप उसकी वृद्धिमें क्यों लग गये?"

शुभ०—"चम्पतरायसे बदला लेनेके लिए, उनके प्रयत्नोंमें बाधा डालनेके लिए, उनका महत्त्व घटानेके लिए और अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए ही मुझे दासत्वका पक्ष ग्रहण करना पडा। मेरी प्रतिज्ञा है कि मैं स्वय दास बनूँगा, अपने भाइयोंको दास बनाऊँगा, सारे बुन्देलखण्डको दास करके छोडूँगा पर चम्पतराय और उनके प्रयत्नोंको बिना नाश किये न छोडूँगा।"

युवराज दलपतिरायने चकित होकर कहा,—"कैसी अघोर प्रतिज्ञा है! ऐसी अघोर बातको तो प्रतिज्ञा ही नहीं कह सकते। प्रतिज्ञायें देशोद्धार, धर्म्मपालन या अनाथोंकी रक्षाके लिए हुआ करती हैं। देश, धर्म्म और अपने प्रिय बन्धुओंपर शस्त्र उठाना बडा भारी पातक है। उस पातकको प्रतिज्ञाके साथ मिलाना तो और भी बुरा है।"

शुभकरणने गम्भीर होकर कहा,—"मैं यह सब जानता हूँ। प्रतिज्ञाका वह दिन इस समय भी मेरे सामने मूर्तिमान खडा है। हीरादेवी इस समय जिस प्रकार पत्थरकी पुतलीकी तरह खडी है उसी प्रकार यह उस दिन भी खडी हुई थी। क्षणभरमें मैं मनुष्यसे पिशाच बन गया। मेरी बाँहोंमें संचार करनेवाली शूरता, मेरे मनमें अटल रूपसे रहनेवाली धीरता और मेरी बातोंकी दृढता उस समय तक केवल स्वतंत्रतादेवीके लिए ही थी। इन सब बातोंको उस ओरसे हटाकर मुझे परतंत्रता राक्षसीकी ओर लगाना पड़ा। पहलेकी तरह अब भी मेरी तलवार म्यानमें शान्त होकर नहीं रहती, अब भी मेरा बल मुझे चैन नहीं लेने देता, अब भी मेरे मनका निश्चय भीतर-ही-भीतर दबा नहीं रहता, मेरी तलवार, मेरी वीरता और मेरा निश्चय सब कुछ पहलेकी ही तरह है। मेरी तलवार अब भी उतना ही रक्त पीती है जितना पहले पीती थी। मेरी वीरता अब भी पहलेका सा रक्तपात करती है। मेरा निश्चय अब भी पहलेकी तरह खूनकी नदियाँ बहाता है। पर भेद केवल इतना ही है कि अब वह रक्त स्वय मेरे प्रिय बंधुओंका होता है। दलपति! क्या ऐसे पातकी पिताके साथ रहना तुम अच्छा समझते हो? जिस प्रकार मैंने अपने जीवनका नाश किया है, क्या उसी प्रकार तुम भी अपने जीवनका नाश करना चाहते हो? मेरे समान पिशाचके साथ रहनेमें तुम्हें क्या लाभ होगा?"

दल०—"पिताजी, जब आप यह समझते हैं कि प्रतिज्ञाके कारण ही आपको इतने अनाचार और अनर्थ करने पडते हैं तब आप उस प्रतिज्ञाको छोड़ क्यों नहीं देते?"

शुभकरणने कुछ क्रोधमें आकर कहा,—"प्रतिज्ञा छोड दूँ? तुम्हारे मुँहसे ऐसी नामर्दीकी बात नहीं निकलनी चाहिए थी। तुम शुभकरणके पुत्र हो। तुम्हें अपने शब्दों और वचनोंका मूल्य समझना चाहिए। जब हमारे पितरोंको यह मालूम होगा कि शुभकरणने अपनी प्रतिज्ञा छोड़ दी तब उन्हें कितना दु ख होगा?"

दल०—"तो क्या आप समझते हैं कि जब उन्हें यह मालूम होगा कि बुन्देलखण्डकी पराधीनताके आप ही कारण हैं तब क्या उन्हें दु ख न होगा? भला, आपको ऐसी अघोर प्रतिज्ञा करनेकी क्या आवश्यकता पड़ी?"

सभा०—" दलपति, उसका कारण मत पूछो। मैं यह चाहता हूँ कि जिस प्रकार मेरी शूरता, मेरे कर्तृत्व और मेरी उच्चाकांक्षाओंका नाश हुआ, मेरा बल, मेरा उद्देश्य जिस प्रकार नष्ट हुआ, मेरा सांसारिक जीवन जिस प्रकार निष्फल हुआ उसी प्रकार तुम्हारा भी न हो। यदि मैं तुम्हें अपनी प्रतिज्ञाका कारण बतला दूँगा तो तुम्हारा जीवन भी नष्ट हो जायगा, तुम्हारे सुखमें भयंकर बाधा पड़ेगी, तुम एक घड़ी भी शान्तिपूर्वक न बिता सकोगे। अतः मुझे वह कारण गुप्त ही रखना चाहिए। पर दलपति! एक बात मैं तुम्हें और बतला देना चाहता हूँ, चाहे तुम लाख प्रयत्न करो पर मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं छोड़ूँगा। केवल बुन्देलखंड ही क्या यदि सारे संसारका भी नाश हो जायगा तो भी मैं अपनी प्रतिज्ञासे न हटूँगा। मैंने अपना कर्त्तव्य निश्चित कर लिया और अनन्त-शक्ति परमेश्वर भी उस परसे मेरा लक्ष्य नहीं हटा सकता।"

अपने पिताके ऐसे दृढ़ वचन सुनकर दलपतिरायको बहुत ही दुःख हुआ। उसी दुःखके कारण वे बहुत देरतक चुप रहे। अन्तमें निराश होकर उन्होंने कहा,—" पिताजी! यदि आप स्वतन्त्रताके उदात्त कार्य्यमें अपना हाथ डालते तो वह किसी न किसी प्रकार सिद्ध ही हो जाता। हाथ डालना तो दूर रहा, यदि आप केवल चुपचाप बैठे रहते तो भी आज नहीं तो दस दिन बाद वह पूरा हो ही जाता। पर आपका प्रयत्न तो उसके विपरीत है। अब बुन्देलख-डकी प्रजाका यह बेड़ा स्वतन्त्रतादेवीके सुन्दर घाटपर किस प्रकार लगेगा? आप, हीरादेवी तथा अन्य अनेक राजे इस बेड़ेको दासत्वके भीषण भँवरकी ओर ले जानेके लिए यथासाध्य प्रयत्न कर रहे हैं। ऐसी दशामें वे लोग स्वत-न्त्रताके घाटकी ओरकी चढ़ाई किस प्रकार चढ सकेंगे?"

कुछ देर सोचकर शुभकरणने कहा,—" तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। पर मैं अपनी प्रतिज्ञा अवश्य पूरी करूँगा। यह प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए मुझे न जाने कौन कौनसे पातक करने पड़ेंगे। मुझे ऐसे कृत्य करने पड़ेंगे जिन्हें देखकर असुरोंको भी लज्जा मालूम होगी। मुझे न्याय और अन्यायका विचार छोड़ना पड़ेगा, नीतिकी हत्या करनी पड़ेगी, अपने प्रिय बन्धुओं और सम्बन्धियोंके प्राण लेने पड़ेंगे। दलपति! मैं सब प्रकारसे पराधीन हूँ। मुझे प्रतिज्ञारूपी राहुने ग्रस लिया है। वह प्रतिज्ञारूपी मदारी मुझे जो नाच नचावेगा वही मैं नाचूँगा। इसके सिवा मेरे लिए और कोई उपाय नहीं है। कल ही बहुतसे

यवनोंके प्राण लेकर तुमने अपने धर्म्मपरसे एक भारी संकट टाला था। महा-पूजाके दिन तुमने विन्ध्यवासिनी देवीका मन्दिर नष्ट होनेसे बचाया था। तुम्हारी यह अपूर्व धार्मिकता, अतुल पराक्रम और अवर्णनीय धैर्य्य देखकर मुझे अभिमान होना चाहिए था। चम्पतरायने जिस प्रकार अपने पुत्रके कार्य्योंकी प्रशंसा की थी, उसी प्रकार मुझे भी तुम्हारी प्रशंसा करनी चाहिए थी। तुम्हें उत्साहित करके मुझे अपना सन्तोष प्रकट करना चाहिए था। पर क्या करूँ, मैं स्वाधीन नहीं था। मैं प्रतिज्ञाके जालमें फँसा हुआ था इस लिए मुझे मुरदेकी तरह चुपचाप बैठे रहना पडा। पर इस आधी रातके समय हीरादेवी यह जाननेके लिए मेरे पीछे पीछे लगी फिरती है कि तुम्हारे उस प्रशंसनीय कार्य्यके लिए मैंने तुम्हें डाँट-डपट क्यों न बतलाई और वहीं तुमसे क्यों न कह दिया कि मुझे तुम्हारा यह कृत्य बुरा मालूम हुआ। दलपति! अब तो तुम समझ गये न कि मैं कितना पराधीन हूँ। तुम्हारा इस प्रकार, सब तरहसे पराधीन बने हुए मानवी पिशाचके साथ रहकर अपनी श्रेष्ठ विभूतिका नाश करना मुझे अच्छा नहीं मालूम होता। विन्ध्यवासिनीके मन्दिरसे लौट कर अबतक मैं बराबर यही विचार करता हूँ। सोचते सोचते मेरा सिर चकराने लगा। अपने इस उत्तरदायित्वसे मुक्त होनेके लिए मैंने दिनरात विचार किया। पर बेटा! अन्तमें मुझे यही निश्चय करना पड़ा कि हम और तुम पिता-पुत्रका सम्बन्ध भूलकर अपने अपने कर्त्तव्योंके पालनके लिए एक दूसरेसे अलग और दूर रहें।"

गहरी साँस लेते हुए दलपतिरायने कहा,—"पिताजी, आप इस प्रकार मेरा त्याग न करें।"

शुभ०—"नहीं, इसके सिवा और कोई उपाय ही नहीं है। तुम्हारे कर्तव्यका मार्ग अलग है और मेरे कर्तव्यका अलग है। अब हमारी और तुम्हारी भेट न हुआ करेगी। तुम अपने तेजका प्रकाश करनेवाले सूर्य्य बनोगे और मैं तुम्हारे तेजसे द्वेष करनेवाला उल्लू बनूँगा। तुम स्वतंत्रतादेवीके उच्च प्रासादकी ओर बढोगे और मैं दासत्वके गहरे गड्ढेकी तरफ जाऊँगा। तुम धर्म्माभिमान, बन्धु-प्रेम, स्वातन्त्र्य-लालसा आदि अनेक सद्गुण-सुमनोंकी सुगन्धकी बहार लूटोगे, और मैं विश्वासघात, धर्मशून्यता और हत्यारेपनके दुर्गुणोंकी दुर्गन्धमें रहकर अपना जीवन बिताऊँगा। तुम स्वतन्त्रता देवीकी मधुर मुसकानका आनन्द लोगे और मैं दासत्वका कर्णकटु रोना सुनूँगा। दलपति! लोग तुम्हें

'स्वातन्त्र्यदाता' मानकर तुम्हारा स्वागत करेंगे और देशके नाशको तथा बन्धु-द्रोहियोंकी नामावलीमें अन्त तक मेरा नाम सबसे पहले रहेगा। तुममें और मुझमें जमीन आसमानका फरक रहेगा। अगर मैं जमीन पर रहनेवाला उल्लू हूँ तो तुम आकाशमें चमकनेवाले प्रतापशाली सूर्य्य हो। तुम्हारे समान दिव्य पुरुषके लिए बहुत ही उत्तम निवासस्थान उपयुक्त होगा। जिस अन्धेरे और गहरे गड्ढे—सागरके राजमहलमें—मैं रहूँगा, वह तुम्हारे लिए कभी उपयुक्त नहीं हो सकता।"

मारे दुःखके दलपतिरायकी आँखोंसे आँसू बहने लगे। उन्होंने रोते रोते कहा,—"पिताजी! आप ऐसी बातें न करें। आपका वियोग मैं न सह सकूँगा। आपकी सेवा करनेकी मेरी इच्छा मनकी मनमें ही रह जायगी।"

शुभ०—(आश्चर्यसे) "क्या कहा? तुम मेरी सेवा करोगे? पिशाचकी सेवा करनेसे तुम्हें क्या लाभ होगा? पिशाचका प्रसाद भी वैसा ही आसुरी और भयंकर होता है। मैं चाहता हूँ कि वह प्रसाद तुम्हें न मिले, तुम भी मेरे समान पिशाच बनकर देशसेवासे विमुख न हो जाओ। मैं यह नहीं चाहता कि तुम्हारे कर्तृत्वका नाश करके बुन्देलखण्डको एक उत्तम रत्नसे वञ्चित कर दूँ। दलपति! बुन्देलखंडकी स्वतन्त्रता तुम और छत्रसाल दोनोंकी कर्त्तव्यपरायणता पर अवलंबित है। मैं यह नहीं चाहता कि तुम दोनों एक दूसरेके शत्रु बनकर नष्ट हो जाओ। यदि तुम्हें मुझपर दया आती हो, यदि तुम यह चाहते हो कि अपने पुत्रको कुमार्गमें प्रवृत्त करनेके अपराधमें मुझे नरक न भोगना पडे तो सागरका राज्य तुम्हें छोड देना पडेगा। मैं जबतक जीता रहूँगा तबतकके लिए तुम्हें राजकीय अधिकार और विलासका त्याग कर देना चाहिए और मेरा मुँह न देखना चाहिए।"

दलपति रोते हुए केवल "पिताजी!" कहकर रह गये। उनके मुँहसे एक शब्द भी न निकल सका।

थोडी देरतक शोकाकुल दलपतिरायकी ओर देखते रहकर बडे ही व्यथित हृदयसे शुभकरणने कहा,—"मोह बहुत बुरा होता है, पर इस मोहके फेरमें पड़कर मैं कभी अपने पुत्रका अनिष्ट नहीं करूँगा। मुझे इस बातका भी विश्वास नहीं है कि इस समय मुझमें जैसा विवेक है, विचार करनेकी इस समय मुझमें जितनी शक्ति है, इस समय मेरे हृदयमें पापसे जितना डर है, वह कल तक

भी बचा रहेगा या नहीं। इस लिए अपने भले बुरेकी समझके नष्ट होनेसे पहले ही मुझे अपने उत्तरदायित्वसे मुक्त हो जाना चाहिए। दलपति! इसी वास्ते मैंने यह निश्चय किया है कि तुम यहाँसे तुरन्त चले जाओ, क्षणभर भी यहाँ मत ठहरो। चम्पतराय बड़े उदार पुरुष हैं। यद्यपि वे मेरे शत्रु हैं पर मेरे पुत्रके साथ वे शत्रुता न करेंगे। तुम उन्हींके खेमेमें चले जाओ। जो कुछ वे तुम्हें आज्ञा दें उसका बराबर पालन करो अबतक जिस प्रकार तुम मेरी सेवा करते रहे हो उसी प्रकार अब उनकी सेवा करो। अबतक जैसे मेरी बात मानते थे, वैसे ही अबसे उनकी बात मानो। युवराज छत्रसालसे अपनी मित्रता बढाओ और देशको स्वतंत्र करनेके प्रयत्नोंमें उनकी सहायता करके अपने कुलकी कीर्त्तिको उस कलकसे निर्मल कर डालो जो मेरे दुराचारोंके कारण उसपर लगा है। आओ! अन्तिम बार मुझसे गले मिल लो।"

यह कहकर शुभकरणने खूब कसकर अपने पुत्रको गलेसे लगा लिया। उस समय पिता-पुत्र दोनोंकी आँखें आँसुओंसे भर गई थीं। यदि हीरादेवीके अतिरिक्त उस स्थानपर और कोई मनुष्य होता तो वह दशा देखकर उसका हृदय अवश्य ही द्रवित हो जाता। पर हीरादेवी पत्थरकी तरह ज्योंकी त्यों खडी रही।

बहुत देर तक पिता-पुत्र एक दूसरेके गले लगे हुए खडे रहे। अन्तमें शुभकरणने दलपतिरायको छोड़ दिया और गहरी साँस लेकर कहा,—"चलो, हो गया! अब हमारी तुम्हारी अन्तिम भेंट हो चुकी। अब तुम्हें और मुझे पिता-पुत्रका सम्बन्ध भूल जाना चाहिए। अब मैं हूँ और मेरी प्रतिज्ञा है। अब जब कभी मेरी और तुम्हारी भेंट होगी तब मैं तुम्हें चम्पतरायका पक्षपाती और सहायक समझ कर अपने शत्रुकी तरह देखा करूँगा।" धीरे धीरे शुभकरण पर फिर उसी प्रतिज्ञाका भूत सवार होने लगा। उन्होंने कहा,—"जब तक मैं जीता रहूँगा तब तक यही माना जायगा कि सागरके राज्यका कोई युवराज नहीं है। मैं मरनेके समय निपुत्रिक माना जाऊँगा। आजसे मैंने युवराज दलपतिराय और उसके युवराजपदको भुला दिया। अब न तो तुम युवराज रह गये और न मेरे राज्यकी प्रजा ही रहे, तुम्हारे सारे अधिकार नष्ट हो गये। अब तुम चले जाओ। मेरी छावनीमें अब मत ठहरो। अब तुम्हारा यहाँ रहना मुझे असह्य होता जाता है। अब यदि तुम इस छावनीमें कहीं दिखलाई पड़ोगे तो चम्पतरायके दूत समझे जाकर दण्डित होगे।"

इतना कहकर विना अपने पुत्रकी ओर देखे हुए शुभकरण वहाँसे चल दिये। थोडी दूर जाकर उन्होंने हीरादेवीसे कहा,—" क्यों हीरादेवी, अव तो तुम सन्तुष्ट हो गईं न ?"

शुभकरणके शब्दोंकी तीव्रतासे हीरादेवी घवरा गई। वह एक शब्द भी न वोली। जव शुभकरण कुछ दूर निकल गये तव वे कुछ वडवडाते हुए विकट रूपसे हँसने लगे।

थोडी देर वाद युवराज दलपतिरायके खेमेसे एक युवक वाहर निकला। उसकी पोशाक वहुत ही सादी थी। यद्यपि उसके शरीरपर आभूषण आदि नहीं थे तो भी उसके चेहरेपरका राज-तेज छिपता न था। युवराज दलपतिराय अपने युवराजपद और ऐश्वर्यका त्याग करके राष्ट्र-कर्त्तव्यका पालन करनेके लिए निकले थे। भगवान् अंशुमाली भी उस समय तक उदित हो चुके थे। उनकी ओर देखकर दलपतिरायने कहा,—" भगवान्! तुम्हारा प्रकाश सव जगह पडता है, इस लिए तुम पिताजीके हृदयमें पैठकर यदि उनके प्रतिज्ञारूपी अन्धकारको दूर कर दोगे तो एक मैं ही क्या, सारा वुन्देलखण्ड तुम्हारा वहुत ही अनुग्रहीत होगा। विन्ध्यवासिनी देवी! अव मैं जाता हूँ। उद्दिष्ट कार्यमें मुझे यश दो।"

* * *

पाँचवाँ प्रकरण।

जयसागर सरोवर।

जयसागर सरोवरका जल अपनी स्वाभाविक चंचलता छोड कर गम्भीरता-पूर्वक सृष्टि-सुन्दरीका विलास देख रहा था। उस समय सृष्टि-सुन्दरीके मनपर ससुरालकी विनयशीलता और लज्जाका प्रभाव नहीं था और वह अल्हड वालिकाकी तरह स्वच्छन्दतापूर्वक अपने पीहर—वुन्देलखंडमें विलास कर रही थी। सारा वुन्देलखंड सृष्टि-सुन्दरीका पीहर अवश्य था, परन्तु उसमें भी महेवा-प्रदेश और विशेषत उसका जयसागर सरोवर उसे वहुत ही प्रिय था। आज सृष्टि-सुन्दरी अपने वडे भाई वसन्तराजके साथ मिलकर जयसागर-

सरोवरपर विहार कर रही थी। वसन्तराजने अपनी माता प्रकृतिदेवीसे बहुतसे सुन्दर आभूषण लेकर अपनी बहन सृष्टि-सुन्दरीको पहनाये थे। वह कभी इन वृक्षोंकी ओर जाती, कभी उस मैदानकी ओर देखती, कभी जयसागरमें झाँकती और कभी महेवाका चक्कर लगाती थी। अन्तमें या तो थककर और या यह समझकर कि विश्राम करनेके लिए इससे अच्छा स्थान और कहीं न मिलेगा, वह जयसागर सरोवरके किनारे बैठ गई। वसन्त पास ही खडा था।

थक जानेके कारण उसके माथेपर पसीनेकी जो बूँदें आगई थीं उसे अपने सेल्हेके कोनोंसे पोंछते हुए उसने कहा,—" विजया! तुम इतनेमें ही थक गई! अभी तो हम लोगोंको बहुत कुछ देखना और घूमना बाकी है।"

वि०—" विमलदेव! यह स्थान इतना रमणीय है कि इसे छोडकर और कहीं जानेको जी नहीं चाहता। इन्द्रके नन्दनवनमें फलों और फूलोंकी ही शोभा होगी, पर जयसागरकी समीपताके कारण होनेवाली इस स्थानकी शोभा उसे भी न प्राप्त हुई होगी। देखो ये देवलोकके प्रतिनिधि सूर्य्य और चन्द्रमा दिनरात यहाँकी शोभा देखते रहते हैं, पर तो भी इससे उनका सन्तोष होता नहीं जान पडता। जब देखो, तभी वे यहाँकी शोभा देखनेके लिए तैयार खडे रहते हैं। शायद इस जयसागरमें बहुतसे पावन तीर्थ आकर एकत्र हो गये हैं, इसी लिए यहाँ आनेपर मन इतना प्रसन्न होता है। इससे अधिक मनोहर और सुन्दर स्थान शायद ही कहीं देखनेको मिलेगा। इस लिए हम लोगोंको थोड़ी देर तक यहीं बैठना चाहिए।"

विमलदेव भी बिना कुछ कहे सुने पासके एक पत्थरपर बैठ गये। वसन्त और सृष्टि-सुन्दरीकी इन सजीव मूर्त्तियोंके कारण जयसागरकी शोभा और भी बढ गई। उनके चरण-कमलोंके स्पर्शसे अपने आपको पुनीत हुआ समझकर जयसागर आनन्दसे उनकी चरणसेवा करने लगा। जयसागरके प्रेम-पूर्ण स्पर्शसे उनके मन भी आनन्दसागरमें गोते लगाने लगे।

सूर्य्यके साथ दिनभर प्रवास करनेवाली अपनी बहन प्रभाको पाकर सन्ध्या काल उसके साथ आकाशके मेघोंसे खेलने लगा। प्रभाकी गौरवर्ण छटा और सन्ध्या-कालके अधगोरे रंगका मेल इतनी उत्तमतासे हुआ था कि जिन जिन मेघोंपर वे क्षण भरके लिए भी ठहरते थे, उन उन मेघोंपर मानो सोनेका मुलम्मा हो जाता था। प्रभाके साथ मेघोंसे खेलकर अन्तमें सन्ध्याकाल जय-

सागरके पास पहुँचा । एक काले मेघपर बैठकर सन्ध्या-काल और प्रभाने जय-सागर सरोवरकी शोभाका आनन्द लेना आरम्भ किया । उनके बैठनेके कारण उस काले मेघका रंग थोडी ही देरमें बदलकर सुन्दर सोनेका सा हो गया । उसकी ओर देखकर विजयाने कहा,—" विमलदेव ! तुमने इस बादलको देखा ? यद्यपि दिनभर चलनेके कारण सूर्यकी प्रभा बहुत थक गई है तो भी इस प्रदेशके अन्तिम दर्शनोंके लिए अपने भाईके साथ वह इस बादलपर आ बैठी है । दोनों ही जयसागरका सौन्दर्य देखकर कैसे मग्न हो रहे हैं ! पर देखो यह कैसे आश्चर्यकी बात है कि आठ पहर तक एक दूसरेसे अलग रहने पर भी भाई अपनी बहनसे एक शब्द भी नहीं बोल रहा है । "

विमलदेवने गम्भीरता-पूर्वक कहा,—" इसमें आश्चर्यकी कौनसी बात है ? कबसे बसन्त अपनी बहन सृष्टि-सुन्दरीके साथ जयसागरकी शोभा देख रहा है, पर उसने क्या अब तक यहाँकी शान्ति भंग की है ? ऐसे अवसरों पर और इन सब विषयोंकी बातें या तो परस्पर केवल स्त्रियोंमें अथवा केवल मित्रोंमें हुआ करती है । ऐसी दशामें यदि भाई बहनमें कुछ बात चीत न होती हो तो इसमें आश्चर्य्य ही क्या है ? "

विज०—" यह अस्त होनेवाला सूर्य्य और उदय होनेवाला चन्द्रमा दोनों ही जयसागरकी शोभा देख रहे है । पर ये दोनों इसके विषयमें क्यों नहीं बातें करते ?"

विम०—" उसका कारण यह है कि वे दोनों परस्पर मित्र नहीं हैं । उनके काम एक दूसरेसे अलग हैं और उनकी पसन्द भी अलग अलग है । सूर्य्यको शुभ्र-प्रभा अच्छी लगती है, पर चन्द्रमाको काली रात पसन्द है । एक पृथ्वीको सन्तप्त करता है, दूसरा उसे शान्त और शीतल करता है, इसी लिए उन दोनोंमें नहीं बनती ।"

इस पर विजया कुछ न बोली। वह जयसागर सरोवरके जल, सुन्दर कमलों और लहरोंकी ओर टकटकी लगाए देखती रही । परन्तु विमलदेवका ध्यान उस ओर बिलकुल न था । वे कुछ गहन विचारोंमें मग्न जान पडते थे । जयसागरके जलकी तरह उनका विमल मुख जयसागर सरोवरकी तरह गम्भीर जान पडता था । सौन्दर्य्य-जलसे परिपूर्ण उनके मुख-हृदमें दो सुन्दर नेत्र-कमल

सुशोभित थे, और उन सबकी शोभा बढानेके लिए उसमें विचारोंकी लहरें उठती थीं।

थोडी देर बाद विजयाने विमलदेवकी ओर उलटकर देखा। उस समय वे गम्भीर पर शून्य दृष्टिसे उसीकी ओर देख रहे थे। उसने चकित होकर कहा,–
"विमलदेव! क्या सोच रहे हो? बसन्त और सन्ध्याकालकी तरह क्या तुमने भी अपनी बहनके साथ कुछ न बोलना निश्चित कर लिया है? शायद तुम यह बात भूल गये हो कि वसन्त और सन्ध्याकाल दोनोंने ही केवल कल्पनाके कारण दृश्य स्वरूप प्राप्त किया है। नहीं तो तुम इस कल्पित भाईका अनुकरण न करते। जरा इस जयसागर सरोवर और उसकी अनुपम गम्भीरताकी ओर देखो। जरा यहाँके हँसते हुए सुन्दर कमलों और जल-तरंगोंकी ओर ध्यान दो, तब तुम्हें यह ससार भूल जायगा, तुम अपनेको स्वर्गमें विहार करते हुए पाओगे—आनन्दसागरमें लहरें लेने लगोगे।"

विमलदेवने मानो स्वप्नसे जाग्रत होकर कहा,—"पर विजया! आनन्द क्या केवल स्वर्गमें ही है? इस संसारको केवल दु खमय और स्वर्गको सुखमय मानना मानो ईश्वरकी निष्पक्षतामें बट्टा लगाना है। स्वर्ग लोककी प्रभा जिस प्रकार इस मेघ परसे उस मेघपर अठखेलियाँ करती फिरती है उसी प्रकार इस लोककी सृष्टि-सुन्दरी भी क्रीडा कर रही है। क्या इन दोनोंके आनन्दमें जरा भी अन्तर है? सन्ध्या-कालके स्वर्गीय होनेमें सन्देह नहीं, पर वह भी दु खी जान पडता है। दु ख और सुख, पृथ्वी और स्वर्गपर अवलंबित नहीं है बल्कि व्यक्ति-मात्र पर अवलंबित हैं।"

विमलदेवकी ऐसी गम्भीर मुद्रा देखकर और ऐसे गम्भीर विचार सुनकर विजया हँस पडी। पर विमलदेव उसकी ओर देखते हुए अपने विचारोंमें ही मग्न हो गये।

विमलदेवका आजका विलक्षण व्यवहार हँसमुख विजयाको पसन्द न आया। उसने कहा,—

"विमलदेव! यदि यहाँकी शोभा देखकर तुम्हें आनन्द न होता हो तो व्यर्थ यहाँ बैठे रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। चलो किसी दूसरी जगह चलें।" इतना कहकर विजया उठ खडी हुई। पर विमलदेवने बैठे-ही-बैठे उसका हाथ पकडकर उसे फिर बैठा लिया।

विमलदेवने कहा,—" विजया ! जरा ठहरो। इस सन्ध्याने जबरदस्ती पुरुषका रूप धारण कर लिया है और अपना नाम पुरुषवाचक (सन्ध्या-काल) रक्खा है। वसन्त-श्रीने भी उसी प्रकार पुरुषका वेष धारण किया है। यह वसन्त-श्री और सन्ध्या दोनों ही वास्तवमें स्त्रियाँ हैं, पर लोगोंकी आँखोंमें धूल डालने और लोगोंको फँसानेके लिए इन्होंने पुरुषोंकासा वेष बनाया है। यहाँ थोडी देर तक ठहरकर देखो कि इन दोनोंका यह नकली वेष कबतक ठहरता है, दोनों एकान्तमें मिलकर भी अपना यह कपट छोडती हैं या नहीं।"

इतना कहकर विमलदेव फिर अपने विचारोंमें मग्न हो गये। विजया फिर आश्चर्य्यसे विमलदेवकी ओर देखने लगी। विमलदेवकी बातोंका मतलब उसकी समझमें न आया था।

थोडी देरबाद विमलदेवने कहा,-" इस उग्र प्रभाकी अपेक्षा यह सन्ध्या अधिक सुन्दर और शान्त है। उसी प्रकार इस वसन्त-श्रीका सौन्दर्य्य भी सृष्टि-सुन्दरीके सौन्दर्य्यसे बढ़कर है। इतना होनेपर भी स्त्री-स्वभावके अनुसार अपना सौन्दर्य्य दिखलानेकी अपेक्षा वसन्त-श्री और सन्ध्याने पुरुषवेषमें रहना क्यों अधिक उत्तम समझा है ? क्या उन्हें अपने जन्म-सिद्ध वेषका कुछ भी अभिमान नहीं है ? क्या अपनी जनानी पोषाक पहननेकी उनकी जरा भी इच्छा नहीं है ?"

विमलदेवने एक बार विजयाके मनोहर वेषकी ओर देखा। उस समय उनके मनमें न जाने क्या क्या विचार उठ रहे थे। विमलदेवकी विलक्षणता दम पर दम बढती देखकर विजयाने बहुत ही चकित होकर कहा,-" मैं तो सन्ध्या और वसन्त-श्रीको कहीं पुरुष-वेषमें विहार करते हुए नहीं देखती।"

विम०-" क्या सन्ध्या और वसन्त-श्री पुरुष-वेषमें नहीं हैं ? जरा ध्यानसे देखो। अबतक वे दोनों एक दूसरेको धोखा देनेका प्रयत्न कर रही हैं।"

विज०-" छि वसन्त-श्री और सन्ध्या तो दोनों कल्पित पात्र हैं। चाहे उन्हें पुरुष मानकर वसन्त और सन्ध्याकाल कहो और चाहे उन्हें स्त्री मान लो। सारी बात तो कल्पनाकी है ?"

विमलदेवने काँपते हुए स्वरसे कहा,—" विजया ! ऐसी पक्षपातपूर्ण दृष्टिसे न देखो। तुम्हारे लिए सुन्दर जनाने कपड़ोंका ही विधान है, पर इसका यह

अर्थ नहीं है कि प्रत्येक व्यक्तिके लिए वैसा ही विधान है। तुम्हें यहाँ ऐसा कोई दिखलाई नहीं देता जिसने अनुचित रूपसे पुरुषका वेष धारण किया हो ?"

विमलदेवका यह प्रश्न सुनकर विजयाने गूढ दृष्टिसे आकाशकी ओर देखा। वहाँसे दृष्टि उठाकर उसने अपने आसपास चारों ओर देखा, पर विमलदेवका कल्पित मरदाना वेष उसे कहीं दिखाई न दिया।

अन्तमें विजयाने कहा,—"मुझे तो यहाँ मरदाने कपडे पहने हुए कोई नहीं दिखाई देता। विमलदेव! तुम्हारे सिवा तो यहाँ और कोई पुरुष मुझे नजर नहीं आता।"

विमलदेवने शान्त और गम्भीर होकर कहा,—"क्या सचमुच तुम्हें कोई नहीं दिखाई पड़ता ? अच्छा सुनो, जयसागर सरोवरके आसपास घूमना और उसकी अनुपम शोभा निरखना वास्तवमें स्त्रियोंका ही काम है। इस स्थानपर स्त्रियोंको ही विहार करना चाहिए। पुरुषोंको यहाँ कुछ आनन्द नहीं मिल सकता। वह देखो सन्ध्याने अपने अयोग्य सफेद कपड़े उतारकर अपने असली काले कपडे पहनने आरम्भ कर दिये हैं। वसन्तश्रीने भी पुरुष-वेष छोड़कर मनोहर स्त्री-वेष धारण करना आरम्भ कर दिया है। पर मैं, केवल मैं ही अब-तक इसी अयोग्य वेषमें हूँ।"

विजयाने आश्चर्यसे पूछा,—"विमलदेव! क्या तुम्हें अपना वेष अयोग्य जान पड़ता है ? क्या तुम भी स्त्रियोंका सा वेष धारण करना चाहते हो ?"

विम०—"हाँ, सन्ध्याकालने जिस प्रकार स्त्रीवेष धारण किया है और वसन्त जिस प्रकार वसन्त-श्री बन गया है, उसी प्रकार मैं भी थोडी देरके लिए—"

विजया हँसती हुई बीचमें ही बोल उठी,—"उसी प्रकार थोड़ी देरके लिए तुम भी विमलदेवसे विमला बनना चाहते हो ? विमलदेव, अथवा बहन विमला! तुम्हारे लिए जनाने कपड़े मेरे पास तैयार हैं। मैं यहाँ स्नान करनेके विचारसे आई थी और अपने साथ कपड़े भी लाई थी, पर अब स्नानका समय नहीं रहा। तुम इन कपड़ोंको पहन कर विमला बन जाओ। तुम्हारे इस नाजुक बदन और जनानी खूबसूरती पर स्त्रीवेष बहुत शोभा देगा।"

विमलदेवने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। उनकी दृष्टि विजयाके हाथके वस्त्रों-पर लगी हुई थी।

वि०—" बहन विमला! तुम यह कपडे लो और उस पेडकी आडमे जाकर अपना श्रृगार कर आओ।"

विमलदेवने सचमुच विजयाके हाथोंसे कपडे ले लिए और उन्हें पहननेके लिए वे पासके एक पेडकी आडमें चले गये।

विजया उनकी ओर आश्चर्यसे देख और हँस रही थी। उसने अपने मनमें कहा,–विमलदेवकी स्त्रीवेप धारण करनेकी इतनी प्रवल इच्छा क्यों हुई? पर इसका कोई कारण उसकी समझमे न आया।

आकाशकी विजली जिस प्रकार एकाएक अपनी सुन्दर प्रभा फेंकती हुई दिखलाई पडती है, उसी प्रकार जिस ओर विमलदेव गये थे उस ओरसे सुन्दरताकी एक पुतली आती हुई दिखलाई दी। उसकी आँखोंमेंसे विजलीका सा तेज निकल रहा था। उसकी साँसमेंसे नन्दन-वनकी सी सुगन्धि निकल रही थी। उसके दाँत मानो आकाशीय तारों और नक्षत्रोंसे बने हुए थे। इन्द्रधनुपने मानो मेघोंसे कालिमा उधार लेकर उसकी भोंहें बनाई थीं। शुभ्र आकाशगगा उसके मस्तकपर सचार कर रही थी। उषादेवीने अपनी लाली उसके गालों और ओंठोंको दे दी थी, और उसे गति ऐरावतसे मिली थी। स्वर्गीय लावण्यकी उस लताको इस पृथ्वीपर देखकर विजयाको बहुत ही आश्चर्य हुआ। मुस्कराती और गजगतिसे आती हुई उस सुन्दरीकी ओर विजया और आश्चर्यसे देखने लगी। विमलदेवके मरदाने कपडे उतार कर जनाने कपडे पहननेमें, विमलदेवसे विमला बननेमे विजयाको इस प्रकार आकाश–पातालका अन्तर पडनेकी आशा न थी। विजयाको इस वातका विश्वास करनेमें ही वहुतसा समय लग गया कि यह सुन्दरी जनाने कपडे पहने हुए विमलदेव ही हैं।

पर इतनी ही देरमे वह सुन्दरी हँसती हुई आकर विजयाके पास खडी हो गई। उसने एक हाथ विजयाके कन्धेपर रख दिया। उसके दूसरे हाथकी उँगली उसके मुँह पर थी।

जब विजयाका आश्चर्य कुछ कम हुआ तब उसने विमलदेवसे कहा,—"विमलदेव! यद्यपि मै यह वात जानती थी कि तुम स्त्री-वेप धारण करके आनेवाले हो तथापि तुम्हें देखते ही मुझे वहुत आश्चर्य हुआ। अगर मुझे पहलेसे न मालूम होता और तुम स्त्रीवेप धारण करके अचानक मेरे सामने आ जाते तो

मैं तुम्हें स्वर्गीय देवी समझ कर तुम्हारे चरणोंपर गिर पडती, अथवा तुम्हें अप्सरा या नागकन्या समझकर आश्चर्यसे चकित हो जाती।"

विजयाकी बात सुनकर विमलदेवको बहुत आनन्द हुआ। बहुत दिनोंकी इच्छा पूरी होने पर जो समाधान हुआ करता है, विमलदेवके चेहरे पर वही समाधान झलक रहा था। बहुत देर तक चुप रहनेके उपरान्त उन्होंने कहा,—"विजया! यदि मुझे सदा यही वेष धारण किये रहनेकी आज्ञा मिल जाय तो मैं बहुत ही सुखी होऊँगा। मेरी बहुत दिनोंसे यह वेष धारण करनेकी इच्छा थी, आज जाकर मुझे यह अवसर प्राप्त हुआ है।"

विजय०—"विमलदेव! तुम पागलोंकी सी बातें क्यों कर रहे हो?"

विम०—"हाँ, अब तक मैंने जो कुछ किया वह अवश्य पागलपन था। मुझे स्त्रीवेष इतना भला मालूम होता है, पर इतनेपर भी मैं अबतक पुरुष-वेष में रहा, यह मेरा पागलपन ही है। पर यह पागलपन मुझे केवल दूसरेकी इच्छासे ही करना पड़ा था। उसमें मेरा कोई वस नहीं था।"

विज०—"विमलदेव! तुम क्या कह रहे हो? तुम्हारी बातोंका मतलब मेरी समझमें नहीं आता।"

विम०—"आज सब बातें तुम्हारी समझमें आ जायँगी। माताजीकी इच्छासे ही मुझे अबतक पुरुषोंका वेष धारण करना पडा है।" इतना कहकर विमलदेवने एक गहरी साँस ली।

बहुत ही चकित होकर विजयाने पूछा,—"आखिर, इन सब बातोंका मतलब क्या है?"

विम०—"मतलब? मतलब यह कि—" विमलदेव आगे कुछ और भी कहनेको थे, विमलदेवका वास्तविक स्वरूप विजयाको मालूम ही होना चाहता था, यदि विमलदेवको और भी दो शब्द बोलनेका अवसर मिलता तो—पर वह बात ही नहीं हुई। विमलदेव बोलते बोलते बीचमें ही रुक गये। उन्हें थोडी दूर पर एक नाव दिखलाई पड़ी। उस पर एक युवक बैठा हुआ जयसागरकी शोभा देख रहा था। विमलदेवको इस बातका भय था कि यदि मैं कुछ अधिक कहूँगा तो वह भी मेरा रहस्य जान जायगा। इसलिए चुप होगये। उस समय विजयाने कहा,—"विमलदेव! तुम बीचमें ही चुप क्यों हो गये? कहो, क्या कह रहे थे!"

विमलदेवने नावकी तरफ इशारा करके कहा,—"उस नावकी तरफ देखो।"

विज०—" हाँ देख तो लिया। तब क्या हुआ?"

विजयाके प्रश्नका उत्तर विमलदेवके ओठोंपर फिर रहा था। उन्होंने बड़े प्रयत्नसे अपने मनकी घबराहट दबाई और शान्त होकर कहा,—" तब और क्या होता? अगर हम लोग भी इसी तरह एक नाव लेकर जयसागरका आनन्द लेते तो बहुत अच्छा होता।"

विजया उसी समय समझ गई कि विमलदेव अपनी बातोंका रुख पलटना चाहते हैं। लेकिन नावपर चढकर जयसागरमें घूमनेवाली बात उसे इतनी अच्छी लगी कि वह उसे सुनते ही और सब बातें भूल गई। उस अल्हड बालिकाको अब नाव और जल-विहारके सिवा और कुछ याद ही न रहा। वह नाव ढूँड-नेके लिए तुरन्त एक तरफ दौडी।

बुन्देलखण्डमें जयसागरकी तरह बडे बडे बहुतसे सरोवर हैं। उनके कारण बुन्देलखण्डकी वन-श्री बहुत कुछ बढ गई है। नावपर चढकर सरोवरका आनन्द लेना वहाँ-वालोंके लिए बहुत प्रिय और स्वाभाविक है। विजयाको भी नावका बहुत शौक था और वह नाव खेनेमें भी बहुत प्रवीण थी। वह प्राय डाँडेरमें अपने राजमहलके पासवाले सरोवरमें नावपर चढकर इधर उधर घूमा करती थी।

थोड़ी देरमे विजया एक छोटीसी नाव ले आई। विमलदेवको स्वय तो नाव खेना नहीं आता था पर वे यह जानते थे कि विजया अच्छी तरह नाव खे लेती है, इस लिए उन्होंने उस नावपर बैठनेमें कोई हरज न समझा।

विजयाने विमलदेवसे पूछा,—"क्या तुम इसी जनाने भेसमें नावपर बैठोगे?" पर विमलदेवने उसे उत्तर न दिया। वे उछलकर नावपर चढ गये और विज-याके सामने जा बैठे। विजयाने भी समझ लिया कि मेरे प्रश्नका उत्तर मुझे मिल गया। वह हँसती हुई नाव खेने लगी।

नाव धीरे धीरे आगे बढने लगी। उस समय जयसागर-सरोवर नीले आकाश-मडलकी तरह जान पडता था। उसकी लहरोंके कारण निकलनेवाला सफेद फेन तारोंकी तरह और वह नाव चन्द्रमा-सी जान पड़ती थी। ऐसा मालूम होता था कि दो शाप-भ्रष्ट देव-कन्याओंको उनके शापकी अवधि समाप्त हो जाने पर चन्द्रमा इस लोकसे स्वर्गकी ओर ले जा रहा है। जयसागर इस

काममें अपने मित्र चन्द्रमाको जो सहायता दे रहा था उसमें कोई आश्चर्य्यजनक बात नहीं थी।

कई पहरोंके बाद अपने प्राणप्रिय स्वामीको अपनी ओर आते हुए देखकर पश्चिमा सुन्दरीके कपोल लज्जासे लाल हो रहे थे। उसे देखकर विमलदेवने कहा,—

"विजया! तुम्हें उस दिनकी बात याद है न?"

एक हाथका डॉड़ छोडकर और उसी हाथसे अपने माथे परका पसीना पोंछते हुए विजयाने पूछा,—"किस दिनकी बात?"

विम०—"जिस दिन विंध्यवासिनी देवीका वार्षिक शृगार था।"

विज०—"क्यों, भला वह दिन भी याद न रहेगा! अभी तो उसे एक अठवाडा भी नहीं हुआ। अभी वह दिन कैसे भूल जायगा? पर वह दिन जितना अधिक तुम्हें स्मरण है उतना मुझे नहीं है। न जाने उस दिनकी कौनसी बात तुम्हारे मनमें इतनी समाई है कि वह दिन तुम्हें भूलता ही नहीं। मालूम होता है कि जनाना भेस बनानेकी तुम्हारी इच्छा उसी दिन उत्पन्न हुई थी।"

इतना कहकर विमलदेवके सुन्दर स्त्री-वेषकी ओर देखती हुई विजया हँस पड़ी और फिरसे डाँड चलाने लगी।

उसका हाथ पकड कर मलदेवने कहा,—"अगर थोड़ी देर खेना छोड़ दोगी तो कुछ हर्ज न हो जायगा। उस दिन—"

विज०—"फिर वही 'उस दिन'।"

विम०—"उस दिन हम लोगोंने विंध्यवासिनी देवीको जो माला चढाई थी वह गिरकर युवराज छत्रसालके गलेमें जा पडी थी। उस समय तुम्हारे मुँहपर जो छटा थी, वह मुझे अब तक याद है। इस पश्चिमा सुन्दरीका मुँह जिस प्रकार अपने पतिके आनेके कारण लाल हो रहा है, उस दिन तुम्हारा मुँह भी उसी प्रकार बल्कि उससे भी कुछ अधिक लाल हो गया था।"

विज०—"तुम्हारा मुँह भी तो प्राय उतना ही लाल हो गया था, पर इतना होनेपर भी तुम्हारा सारा माथा पसीनेसे भर गया था। मैं तुमसे पूछनेको ही थी। क्या अपनी माताकी तरह तुम भी युवराज छत्रसालसे द्वेष करते हो? छत्रसाल कितने मिलनसार, कितने उदार और कितने सरल हैं। आज प्राणनाथप्रभुने श्रीरामचन्द्रजीके मंदिरमें लव और कुश दोनों भाइयोंकी वीरताका वर्णन किया था। युवराज दलपतिरायने भी उस दिन वैसी ही वीरता

दिखलाई थी। इतने वीर होनेपर भी छत्रसालका स्वभाव कितना सादा और मिलनसार है। अपने सद्गुणोंके कारण वे सभी लोगोंके प्रिय हो रहे हैं, पर हमारे पिताजी न जाने क्यों उनके साथ द्वेष रखते हैं। उनकी बात जाने दो। स्वय तुम्हारे पिता (पहाडसिंह) और तुम्हारी माता (हीरादेवी) का छत्र-सालके साथ कितना निकटका सम्बन्ध है। पर वे भी मनमें छत्रसालसे बहुत बुरा मानते हैं। तुम्हारे पिताको ओडछेके राजसिंहासन पर छत्रसालके पिताने ही बैठाया है। चम्पतरायने ही अपने अद्वितीय पराक्रमसे तुम्हारे पिताको यह राज्य दिलवाया है। नहीं तो सभी लोग कहते हैं, तुम्हारे माता पिताको किसी गाँव देहातमें जाकर अपना सारा जीवन खेती-बारीमें ही बिताना पडता। लेकिन इतना होनेपर भी वे लोग चम्पतराय और उनके घरके लोगोंसे बहुत ही बुरा मानते हैं। विमलदेव! क्या अपने माता पिताके इस व्यवहारको तुम पसन्द करते हो?"

विमलदेवने बहुत दु:खी होकर कहा,—"चाहे मुझे पसन्द हो और चाहे नापसन्द, पर मुझे करना वही पडेगा जो वे आज्ञा देंगे। मेरी सदा यही इच्छा रहती है कि मैं जाकर छत्रसालसे मिला करूँ, उनके साथ मित्रताका व्यवहार रक्खूँ और जहाँतक हो सके उनके कार्य्योंमें सहायता दूँ। पर मेरे चाहने मात्रसे क्या होता है? मेरे हर एक कामपर माताकी कडी नजर रहती है, इसलिए मैं कोई काम उनकी इच्छाके विरुद्ध नहीं कर सकता। मैं यही गनीमत समझता हूँ कि मेरे मन और मेरे विचारों पर उनका कोई वश नहीं है।"

विज०—"उस दिन जब मैंने महाराज प्राणनाथ प्रभुसे युवराज छत्रसालका सन्देसा कहा तब पिताजी मनहीमन मुझसे कितने नाराज हुए थे। दिनभर उनकी वह नाराजगी बनी रही। दूसरे दिन उन्होंने मुझे अपने पास बुलाकर बहुत कुछ बुरा भला कहा। उन्होंने मुझसे यहाँ तक कह दिया कि अब यदि कभी तुम छत्रसालके सामने भी होगी तो याद रखना, मुझसे बुरा कोई न होगा। छत्रसालमें कौनसी ऐसी बुराई है, यह वही जाने। अभी हम लोगोंने मन्दिरमें श्रीरामचन्द्रजीकी जितनी सुन्दर मूर्ति देखी है, युवराज छत्रसाल भी मुझे उतने ही सुदर जान पडते हैं। मेरी तो इच्छा होती है कि पहरों उनके साथ रहूँ। जिस प्रकार रामचद्रजीने लंकाके रावण और उनके अनेक जातिभाई असुरोंका नाश करके लोगोंको कष्टसे मुक्त किया था उसी प्रकार युवराज छत्र-

साल भी दिल्लीके असुरोंका नाश करेंगे। युवराजके प्रयत्नसे शीघ्र ही सारा बुंदेलखण्ड इन असुरोंकी अधीनतासे निकलकर स्वतन्त्र हो जायगा। इतने उत्तम और बडे कार्यमें उनकी सहायता करना तो दूर रहा, पिताजी उलटे और पग-पगपर उसमें अडचनें डालनेकी चिन्तामें रहते हैं।"

विम०—"तुम जानती हो कि तुम्हारे पिताजी कहाँ गये हैं?"

धीरे धीरे नाव खेती हुई विजया बोली,—"नहीं, मैं कुछ नहीं जानती। एकाएक उनके जानेकी सब तैयारियाँ हो गईं। जब विंध्यवासिनीके अन्तिम दर्शन करके हम लोग लौटे तब एकाएक पिताजीने मुझे बुलाकर कहा कि मुझे एक जरूरी कामके लिए बहुत जल्दी कहीं जाना है। तुम रानी हीरादेवीके साथ ओडछे जाओ। वहाँसे मैं तुम्हें ढाँड़ेर बुलवा लूँगा। बस, इतना कहकर वे चलते बने। तभीसे मैं बराबर तुम लोगोंके साथ हूँ। पिताजीने मुझे यह नहीं बतलाया कि हम कहाँ जॉयगे, और मैंने भी उनसे इस सम्बन्धमें कुछ न पूछा। मैं जहाँ तक समझती हूँ, वे ढाँडेर ही गये होंगे। बड़ी बडी मजिलें चलनेमें शायद मुझे तकलीफ हो इसी लिए वे मुझे तुम लोगोंके साथ छोडकर आगे निकल गये हैं।"

बड़े आश्चर्यसे विमलदेवने कहा,—"विजया क्या तुम यह भी नहीं जानती कि तुम्हारे पिताजी कहाँ गये हैं? देखो न उनके मन्सूबे कितने गुप्त होते हैं! वे ढाँडेर नहीं गये।"

विजयाने बहुत चकित होकर पूछा,—"भला अगर वे ढाँडेर नहीं गये, तब फिर कहाँ गये हैं?"

विम०—"वे दिल्ली गये हैं।"

विज०—"दिल्ली?"

विम०—"हाँ हाँ, दिल्ली गये हैं। जानेसे पहले माँके साथ बहुत देर तक वे एकान्तमें बातें करते रहे थे। जब उनकी बातें हो चुकीं तब तुम्हारा खिदमदगार किशुन एक साँडनी ले आया और उसीपर सवार होकर तुम्हारे पिताजी बिना किसीसे कुछ कहे सुने गुप्त रूपसे दिल्ली चले गये।"

विजयाने डाँड छोड दिया और कहा,—"बडे ही आश्चर्यकी बात है। भला, तुम्हें यह भी कुछ मालूम हुआ कि वे दिल्ली क्यों गये हैं?"

वि०—" यदि मैंने यह जाननेका प्रयत्न किया होता तो मुझे सन्देह है कि शायद तुम मुझे इस समय यहाँ देखने भी न पातीं। विजया! मालूम होता है कि अभी तुम मेरी माताका क्रोध नहीं जानतीं। अपना लडका समझकर वह मुझे कभी छोड नहीं सकतीं। जब वहाँसे सब लोगोंके चलनेकी तैयारी हो चुकी तब भी उन लोगोंमें बराबर बात चीत हो रही थी। पिताजीको जब यह मालूम हुआ तब उन्होंने मुझे यह देख आनेके लिए कहा कि माँकी चलनेकी सब तैयारी हो चुकी या नहीं। इस समय जब मैं वहाँ गया तब मेरे कानोंमें तुम्हारे पिताके दिल्ली जानेकी कुछ भनक पड गई। इसके सिवा मैंने और कुछ भी नहीं सुना। मुझे उस समय अपने पास आते देखकर माँने बड़े क्रोधसे आँखें निकालकर मेरी ओर देखा। अगर तुम उस समय उन्हे देखतीं तो मारे डरके थरथर काँपने लगतीं।"

विज०—" विमलदेव, तुम्हारी माताका क्रोध मैं जानती हूँ। कल जब हम लोग यहाँ महेवा पहुँचे थे तब तुम्हारी माताकी दासी गिरिजाने उनसे कहा था कि हर सालकी तरह महेवाके किलेमें रहनेमें क्या हरज है? इतना सुनते ही उन्हें क्रोध चढ आया और उन्होंने तुरन्त ही उस बेचारीको बुरी तरह पिटवा दिया।"

हीरादेवीका स्मरण करके युवराज विमलदेव और विजयाके प्रसन्न मुखों पर भी खिन्नताकी झलक आगई। पर वह झलक थोडी ही देरतक रही। कुछ ही क्षणोंके उपरान्त उनके मुख फिर जयसागर सरोवरके कमलोंकी तरह प्रफुल्लित हो गये। विजया बराबर नाव खेती जाती थी। सरोवरके बीचमें द्वीपकी तरह थोडीसी बहुत ही रमणीक और मनोहर भूमि थी, विजया उसी द्वीपकी ओर जाना चाहती थी।

प्रसन्न होकर विमलदेवने कहा,—" विजया! यदि तुम इतनी तेज नाव चलाओगी तो हम लोग बहुत जल्दी उस द्वीपतक पहुँच जॉयगे। देखो, बडे बड़े वृक्षोंके बीचमें वह मन्दिर कैसा सुशोभित हो रहा है। जिस प्रकार उस मन्दिरके तैयार करनेमें मानवी कौशलकी परमावधि हो गई है उसी प्रकार रंगे बिरंगे पौधों, लताओं और फूलों आदिसे उन्हे सजानेमें प्रकृतिके कौशलकी भी चरम सीमा ही हो गई है। और इन दोनों कौशलोंका एक ही समयमें दर्शन कैसा सुखकर और पावन है। जो लोग दैवी कौशलको अद्वितीय और अलौकिक

बतलाकर यह कहा करते हैं कि मानवी कौशल उसकी बराबरी नहीं कर सकता, उन्हें यह स्थान देखना चाहिए। उसी प्रकार जो लोग दैवी कौशलमें कोई विशेषता न मानते हों उन्हें भी यह स्थान देखना चाहिए। यहाँ आकर उन लोगोंको मालूम हो जायगा कि मानवी और दैवी कौशल किस प्रकार एक दूसरे पर अवलंबित हैं और उन दोनोंका मेल कितना मनोहर होता है। इस द्वीपकी शोभासे हम लोगोंको मानो यह उपदेश मिलता है कि दैवी कौशलके आदर्श सामने रखकर मनुष्यको अपना कौशल भी उतना ही विशद करनेका प्रयत्न करना चाहिए।"

विज०—"श्रीरामचन्द्रजीने सज्जनोंका प्रतिपालन और रक्षण करनेके लिए लंकाके दुष्ट असुरोंका नाश किया था। यह दैवी आदर्श सामने रखकर महेवाके युवराज छत्रसाल मानवी कौशलसे दिल्लीके असुरोंको परास्त करनेके लिए उद्यत हुए हैं। जान पडता है कि उन्होंने इस द्वीपसे मिलनेवाला उपदेश अच्छी तरह समझ लिया है। इसी लिए वे देव और मनुष्य दोनोंके ही प्रिय होंगे।"

क्या विजयाका यह अनुमान ठीक था? क्या विमलदेवका यह सिद्धान्त सत्य था? क्या विजयाके कथनानुसार युवराज छत्रसाल देव और मनुष्य दोनोंके ही प्रेमपात्र थे?

युवराज छत्रसाल यह समझते थे कि इस समय हम मनुष्य और देव दोनोंके ही प्रिय हो रहे हैं। जिस प्रकार विमलदेव और विजयाके नेत्रोंके सामने मानवी और दैवी सौन्दर्य्य विराजमान था उसी प्रकार छत्रसाल भी दोनों सौन्दर्य देख रहे थे। जयसागर सरोवरके बीचवाले द्वीपकी शोभा सदा उनकी आँखोंके सामने नाचा करती थी। पर दिन रात वह शोभा निरखते रहनेके कारण वे उसका कोई विशेष अभिप्राय न निकाल सके थे। उन्हें इस बातका कभी ध्यान भी नहीं हुआ था कि उस स्थान पर मानवी और दैवी दोनों सौन्दर्य्य एकत्र हैं। तथापि इसमें सन्देह नहीं कि वे उन दोनों सौन्दर्य्योंका आनन्द लेते थे।

अब वह द्वीप बहुत पास आ गया था। वह ज्यों ज्यों पास आने लगा त्यों त्यों विमलदेव और विजयाके मन उसकी ओर खिंचने लगे। उस समय उन लोगोंको सृष्टि-सौन्दर्य्यके सिवा और कुछ दिखाई ही न देता था। विमलदेवको इस बातकी तनिक भी चिन्ता न थी कि मैं अपनी माताकी इच्छाके विरुद्ध जनाने

कपडे पहनकर घूम रहा हूँ। वसन्तश्रीके साथ कानाफूसी करनेवाली सृष्टि-सुन्दरी, सन्ध्याके गलेमें बाँह डालकर विचरनेवाली प्रभा, देवी सौन्दर्य्यके हाथमें हाथ देनेवाला मानवी सौन्दर्य्य, दूर तक फैला हुआ पवित्र जलका जयसागर सरोवर, उसकी अनुकरणीय गम्भीरता, उसके तलपर हँसनेवाले कमलों और अपने सामने प्रसन्न वदनसे बैठी हुई विजयाको ही विमलदेव सारा विश्व समझ रहे थे। इन सबके सिवा उन्हें और कुछ दिखलाई ही न पड़ता था। संसारकी और सारी बातोंको वे भूल गये थे। इस समय उन्हें इस बातकी कल्पना भी नहीं थी कि मानवी और दैवी सौन्दर्य्यका आनन्द लेनेके लिए जिस प्रकार हम लोग आगे बढ़ते जा रहे हैं, उसी प्रकार हमारे पीछे पीछे और भी कोई आ रहा है या नहीं।

चारों ओर तरह तरहके असंख्य कमल जयसागर सरोवरके तलकी शोभा बढ़ा रहे थे। कुछ बिलकुल खिले हुए थे, कुछ बँधे रहकर अपनी गम्भीरता प्रकट करना चाहते थे, कुछने अभी मुस्कराना आरम्भ किया था और कुछ ऐसी मुग्धावस्थामें थे जो खिलना जानते ही न थे। इसी प्रकारके अगणित कमल विमलदेव और विजयाका स्वागत करनेके लिए जयसागर सरोवरके तल-पर खड़े थे। विमलदेव प्रसन्न चित्तसे उनकी ओर देख रहे थे। अन्तमें एक बढ़िया कमल लेनेके लिए वे अपने स्थानपरसे उठे। उनका अभिप्राय समझकर विजयाने कहा,—"विमलदेव! क्या तुम कमल लेना चाहते हो? वह यहाँसे तुम्हारे हाथ न आवेगा। जरा ठहरो, मैं नाव उस कमलके पास तक ले चलती हूँ।"

विम०—"विजया, जरा उस कमलकी ओर देखो। उसका दैवी सौन्दर्य्य तुम्हारे मानवी सौन्दर्य्यसे कितना मिलता जुलता है। उसका अधखिलापन तुम्हारी मुस्कराहटसे कितना मिलता हुआ है। हमारे प्राचीन कवियोंने स्त्रीके मुखकी कमलसे जो उपमा दी है वह कितनी ठीक है।"

विज०—"यही क्यों, उन लोगोंकी समझसे स्त्रियोंके हाथ, पैर, नेत्र यहाँ-तक कि प्रायः सभी अंग कमलके ही समान हैं। उन लोगोंने तो मानो यही निश्चय कर लिया है कि स्त्री बहुतसे कमलोंका ढेर है। (कुछ विनोदसे) विम-लदेव! भला बतलाओ तो, तुम वह कमल लेकर क्या करोगे?"

विम०—"तुम्हारे मानवी सौन्दर्य्यसे उस दैवी सौन्दर्य्यकी तुलना करूँगा।"

इतना कहकर विमलदेव वह कमल लेनेके लिए नावके किनारे पर पहुँचकर नीचेकी ओर झुके। विजया भी अपनी स्वाभाविक चचलताके कारण हाथका डाँडा ऊपर उठाकर विमलदेवकी सहायता करनेके लिए उनके पास पहुँची। उसे इस बातकी कल्पना भी नहीं थी कि मेरे इस कृत्यसे हम दोनोंपर कैसा संकट पडनेकी सम्भावना है। इतनेमें किसीके मनमें यह भावना उत्पन्न हुई कि सारा भार नावके एक ही ओर हो जानेके कारण वह उलट जायगी और क्षण भरमें वे दोनों जयसागरमें गोते खाने लगेंगे। इस सकटसे उन दोनोंको बचानेके लिए वह अपनी नाव जल्दी जल्दी खेने लगा। जब विमलदेवके हाथमें वह कमल न आया तब विजया भी नावके किनारे पर विमलदेवके पास पहुँचकर झुकती हुई उस कमलकी ओर हाथ वढाने लगी। इतनेमें वह नाव उलट गई और जयसागर सरोवरके असख्य कमलोंमें गिरकर वे दोनों गोते खाने लगे!

अपनी सुदर बाँहोंसे पानीको चीरती हुई विजया बोली,—"विमलदेव! क्या तुम तैरना नहीं जानते? इस तरह व्यर्थ घवराकर हाथ पैर मत पटको। थोडी देरके लिए हाथ पैर मारना बद कर दो। मैं अभी तुम्हें सहारा देती हूँ।" यह कहकर वह चपल बालिका चपलाकी तरह विमलदेवके पास पहुँच गई। उस समय विमलदेवके मुँहमें पानी भर गया था और वे डूबने लगे थे। एक हाथसे उनका हाथ पकडकर और दूसरे हाथसे पानी चीरते हुए विजयाने कहा,—"घवराओ मत! ऑखें खोलकर देखो। तुम्हारी वहन विजया तुम्हारे पास ही है।"

विमलदेवने ऑखें खोलीं। आसपासकी विपुल जलराशिकी ओर एकवार भयभीत दृष्टिसे देखकर उन्होंने अपने कोमल हाथोंसे सहारा देनेवाली विजयाकी ओर देखा। उनकी आँखोंसे ऑसुओंकी धारा बहने लगी। उन्होंने बडे ही करुणस्वरसे कहा,—"विजया तुम मुझे छोड़ दो। मुझे डूबने दो। मुझे तैरना बिलकुल नहीं आता। तुम मुझे सँभाल न सकोगी, इस लिए मुझे छोड दो और जाओ।

विज०—"नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता, या तो हम और तुम दोनों ही यहीं डूब मरेंगे और या जो कुछ भाग्यमें बदा--" उससे अधिक बोला न गया। वह चुप हो रही।

विम०—"तुम थक गई हो, मुझे छोड दो। दोनोंके मरनेकी अपेक्षा एकका वचना वहुत अच्छा है। मुझे वचानेके लिए तुमने अपने प्राण संकटमें डाले, इसके लिए मैं तुम्हारा ऋणी हूँ। मुझे छोड़ दो। मैं यह ऋण दूसरे जन्ममें चुकाऊँगा।"

विजयाने वडी कठिनतासे कहा,—"नहीं, दोनों ही साथ मरेंगे।"

विजया इस समय वहुत थक गई थी। अब विमलदेवको वचानेके लिए उन्हें सहारा देना इसकी शक्तिसे बाहर हो चला था। तो भी उसने निश्चय कर लिया था कि शरीरमें प्राण रहते तक मैं उनकी रक्षाका प्रयत्न करूँगी।

विजयाका दम फूलने लगा था। जव विमलदेवने देखा कि अब वह भी मरना ही चाहती है तब उन्होंने वडी कठिनतासे कहा,—"विजया वस हो चुका, अब मुझे छोड़ दो।" इतना कहकर उन्होंने अपना हाथ छुडा लिया और कहा,—"तुम्हारा स्नेहांकित हाथ मैंने झटकार दिया इसके लिए मुझे क्षमा करना। तुम्हारे भाग्यमें छत्रसालके गलेमें ही माला डालना था। खैर मुझे भी कभी कभी याद करती रहना। छत्रसालसे कह देना कि वह माला वनानेमें मेरा भी कुछ हिस्सा था और मैं उनका शुभचिन्तक और मित्र था। विजया! जाओ अब दूसरे जन्ममें—"

विमलदेवके मुँहमें पानी भर गया और वे डूबने लगे। उनकी ओर देखती हुई असहाय विजया बोली,—"हा! यदि यहाँ युवराज छत्रसाल होते तो—"

* * *

छट्ठा प्रकरण।

लम्पट दिल्ली।

दिल्ली! ऐश्वर्य मदसे अन्धी दिल्ली! अनाचार, व्यसन और आलस्यमें डूबी हुई दिल्ली! तेरे सरीखी विषय-लम्पट, तेरे सरीखी कुलटा और दुराचारिणी स्त्रीके हाथमें भारतवर्ष सरीखे पवित्र देशके अधिकार-सूत्र हों, तेरे समान दुराचारिणीकी आज्ञा वुन्देलखण्डके क्षात्र-तेजको शिरोधार्य करनी पडे, यह भारतवर्षका दुर्भाग्य ही है। राजतृष्णाकी स्वार्थपूर्ण आकाक्षाओंके कारण तूने

आजतक कितने अनाचार किये। दुर्योधनकी मति भ्रष्ट करके थोडीसी भूमि पर सन्तुष्ट रहनेवाले पाण्डवोंको उससे तूने ही यह उत्तर दिलवाया था कि तुम लोगोंको सूईकी नोकके बराबर भी जमीन न मिलेगी। महाभारतके युद्धका भयकर रक्त-पात तूने ही कराया था। कन्नौजके जयचन्द्र राठौरकी सहायता लेकर शहाबुद्दीन गौरीसे तूने ही अपने वीरशाली पति पृथ्वीराज चौहानका खून कराया था। अपने मस्तकको सुशोभित करनेवाले स्वतन्त्रताके सुन्दर कुकुम-तिलकको अपने हाथसे पोछकर तू ही यवनी बनी थी। यवनी बननेके उपरान्त, यवनोंके रन-वासमें जानेके उपरान्त भी तेरा व्यवहार दिन पर दिन हीन और पातकी ही होता गया। मनुष्य-वध, रक्तपात, और लूट-पाट आदि बातें मानों तेरे मनो-रंजनकी सामग्री हो गई। तूने लोगोंपर ऐसा जादू डाला कि स्वामीने सेवक-भावकी, बन्धुने बन्धुप्रेमकी, पिताने पुत्रवत्सलताकी और पुत्रने पितृधर्मकी हत्या करके तुझे अपनाना चाहा। तूने सेवकोंके मनके विश्वासका नाश करके उनसे अपने स्वामीपर शस्त्र चलवाये। भाई भाईके प्रेमका नाश करके तूने एकसे दूसरेकी हत्या कराई। तूने सबको ऐसा बहकाया कि चचेरे, ममेरे और फुफेरे सम्बन्धी एक दूसरेके कट्टर शत्रु बन गये। इतना ही नहीं, तुझपर अपना अव-र्णनीय प्रेम दिखलानेके लिए तुझे भलीभाँति अलकृत करनेवाला शाहजहाँ जब बुड्ढा हुआ तब तेरा प्रेम उस परसे जाता रहा और तू उसके तरुण पुत्रके ध्यानमें लगी। तेरी प्रवृत्ति सदा अधर्मकी ओर थी, इसी लिए तू कपटी, ढोंगी, स्वार्थी और दगाबाज औरगजेब पर मरने लगी। तूने अपने वृद्ध पति शाहज-हाँको कैद कराया, अपने सब देवरोंका खून कराया और केंचुली छोडकर फिर ज्योंकी त्यों हो जानेवाली नागिनकी तरह सब पर फुफकारा छोडती हुई फिर वैभवका आनन्द लेने लगी। वाहरी तेरी चचलता! वाहरी तेरी अधिकार-लालसा! वाहरी तेरी विषय-पिपासा!

शाहजहाँ बादशाहको छोडकर आलमगीर बादशाहके गलेमें हाथ डाले अभी तुझे देर न हुई, अधिकार-लालसाका पान अभी तूने चबाना भी आरम्भ न किया, अपने नये पतिका स्वरूप भी अभी तक तूने अच्छी तरह न देखा, इतने थोडे समयमें—केवल आठ दस वर्षोंमें ही क्या तुझे अपने नये पति आलमगीर बादशाहसे घृणा हो गई? क्या तेरी नीति-भ्रष्ट चंचलताको उसके साथ अधिक समय तक रहना पसन्द न आया?

औरंगजेब बहुत बीमार होगया, मरनेके किनारे आया, क्या इसी लिए तू उससे मुँह फेरनेके लिए तैयार होगई ?

रोशनआरा बेगम औरंगजेबकी प्रिय बहन थी। शाह्जहाँका भी उस पर बहुत प्रेम था। पर जिस समय यह प्रश्न उठा कि दिल्ली किसे मिले, दिल्लीका जयमाल किसके गलेमें पडे, तब जिस रोशनआराने दारा, शुजा और मुरादके अधिकारोंकी ओर फूटी आँखों भी न देखकर अपने प्रिय भाई औरंगजेबके हाथमें दिल्लीका हाथ दिया, वही रोशनआरा आज दिल्ली और उसके साथ अपने प्यारे भाई औरंगजेबके प्राण लेनेके लिए क्यों तैयार हो गई ? दिल्ली! यह सब तेरी ही अनीतिमत्ता, तेरी ही पातकी चचलताका एक खेल है। तेरा पति बीमार होकर बेहोश पडा है और तू उसकी बीमारी और बेहोशीसे लाभ उठाकर अपने ऊपरसे उसका दबाव नष्ट करने और अपनी मनमानी करनेका अवसर पानेके लिए अपने पति औरंगजेब रूपी काँटेको समूल नष्ट कर देनेकी इच्छा रोशनआरा बेगमके मनमें उत्पन्न कर रही है। अपने पतिकी थोडे दिनोंकी अधीनता भी तुझसे न सही गई! तू भी रोशनआरा बेगमकी तरह स्वच्छन्द और निरकुश होनेकी इच्छा करने लगी! तूने रोशनआराके मनपर क्यों अधिकार जमाया ?

मरदोंकी तरह अकडकर बैठी हुई रोशनआरा बेगमने अपने सामने खडे हुए हकीमसे डपटकर कहा,—“ हकीम साहब! आपका यह खेलवाड कबतक जारी रहेगा ? आपके पास इतनी दवायें हैं और आप कहते हैं कि मेरे पास कोई ऐसी दवा नहीं है जो घटे या दो घटेमें इनका काम तमाम कर सके। यह सब आपकी शरारत है। आप शाही हकीम हैं। आप खूब समझ सकते थे कि न मालूम किस वक्त कैसे कातिल जहरकी जरूरत पडे। देहलीके तख्तके लिए अबतक जो कुछ होता आया है वह सब आप जानते हैं। आप लोग दरबारमें इसी लिए रक्खे जाते हैं कि जरूरतके वक्त काम आवे। आप दो हफ्तेसे दवायें दे रहे हैं मगर कैसे ताज्जुबकी बात है कि किसीका कोई असर नहीं होता!

हकीमने बडी ही दीनतासे कहा,—“ जहाँपनाह, शाहशाह आलमगीर बादशाह —”

रो०—(बिगडकर) “ चुप रहो। आलमगीरके नामके साथ “ शाहशाह बादशाह ” का लकब न लगाओ, नहीं तो अभी तुम्हारी जबान खिंचवा ली

जायगी। मैं तुम्हारी पूरी बात सुनना चाहती हूँ। उससे पहले ही तुम मुझे मजबूर न करो कि मैं तुम्हारा सिर काटनेका हुक्म दूँ।"

हकी०—"जहाँपनाह! क्या मेरी बात खतम होते ही मेरी गरदन मारनेका हुक्म दिया जायगा?"

रो०—"बेशक! आज मैं तुम्हें जिन्दा न रहने दूँगी।"

हकी०—"क्या आज मैं जिन्दा न बचने पाऊँगा?"

रो०—"नहीं नहीं, हरगिज नहीं।"

हकी०—"क्या मैं जान सकता हूँ कि ऐसा क्यों होगा?"

रो०—"इसी लिए कि तुमने हुक्म नहीं माना, मेरी मरजीके खिलाफ काम किया। आज तुम्हारी जिन्दगीका खातमा है।"

हकी०—"जहाँपनाहकी यही मरजी है न कि मैं शाहंशाह आलमगीरको कातिल जहर दूँ?"

रोशनआराने होंठ चबाते हुए हुँकारी भरी।

हकी०—"मैं ऐसा नामुनासिब हुक्म माननेके लिए क्यों लाचार किया जाता हूँ?"

रो०—"इस लिए कि इस वक्त दिल्लीका तख्त और ताज मेरे हाथमें है। मेरे बन्दोंके लिए मेरा हुक्म मानना फर्ज है।"

हकी०—"बेगम साहबा! मुझे माफ किया जाय मेरा खयाल है कि जो हुक्म उस पाकपरवरदिगारके हुक्मके खिलाफ हो, जिसकी तामील अल्लाह-तआलाको नाखुश करनेवाली हो वह हुक्म चाहे शाहंशाह आलमगीर बादशाहका हो, चाहे तख्त वा ताजकी मालिका बेगम साहबाका हो, कभी उसकी तामील न होनी चाहिए।"

रो०—(कड़ककर) "बस! अपनी जबान बन्द करो। मैं अभी तुम्हें इस शेखी और गुस्ताखीका मजा चखाती हूँ।"

उस समय रोशनआराकी आँखोंसे चिनगारियाँ छूट रही थीं। उसने अपने ख्वाजा सरा रहमतखाँको जोरसे आवाज दी।

हकीम साहब अच्छी तरह समझते थे कि रोशनआरा अपनी बातकी पक्की है, वह जो कुछ कहती है, करके छोड़ती है। वे अपने आपको इस दुनियामें थोड़ी देरका मेहमान समझने लगे। पर उनके चेहरे पर चिन्ता या दुखकी

तनिक भी छाया न दिखलाई पडती थी। वे शान्तिपूर्वक और निश्चिन्त होकर सामनेकी ओर देख रहे थे। उनकी घवराहट दूर हो गई थी।

इतनेमें एक परदा हटाता हुआ क्रूर-आकृति रहमतखाँ आता हुआ दिखलाई दिया। उसकी ओर देखकर रोशनआराने कहा,—"इस नावकारको अपने साथ ले जा और ताजी कुत्तोंके सामने छोड दे।"

रहमतखाँने वढकर हकीम साहवका हाथ पकड लिया, पर तो भी उनकी शान्ति नष्ट न हुई। उन्होंने गम्भीर होकर कहा,—

"वेगम साहवा! शायद आप समझती होंगी कि मैं अपनी सजा सुनकर थर थर काँपने लगूँगा, वेहोश हो जाऊँगा या कमसे कम रहमकी दरख्वास्त करूँगा, मगर यह आपकी गलती है। आज नहीं तो दस दिन वाद मुझे खुदाए-तआलाके हुजूरमें जाना ही पडता। अगर वह मौका मुझे आज ही मिलता हो तो मैं नाहक पसोपेश क्यों करूँ? एक खुदसर और खुदपरस्त वेगमके सामने आजिजी क्यों दिखलाऊँ? मैं हमेशा मौतके लिए तैयार रहता हूँ। क्यों कि यकीन है कि मुझे वहिश्त मिलेगा। मैंने आज तक कभी किसीको कोई तकलीफ नहीं पहुँचाई, किसीके साथ दगा फरेब नहीं किया, किसीके साथ सख्तीका वरताव नहीं किया। हमेशा नेकी और रास्तीमें ही अपना वक्त विताया। ऐसी हालतमें खुदाके सामने जानेमें मुझे कोई खौफ नहीं। चलो रहमतखाँ, मैं तुम्हारे साथ चलनेको तैयार हूँ।"

रोशनआराने रहमतखाँको खडे रहनेका इशारा करके हकीम साहवसे कहा,—"तू कहता है कि तूने अपनी जिन्दगी नेकी और रास्तीमें विताई है, मगर यह सरासर झूठ है। तूने अगर जहर देकर वादशाहकी जिन्दगीका खातमा नहीं किया तो भी तूने दवायें देकर अवतक उन्हें वेहोश जरूर रक्खा। क्या तूने वादशाहके साथ नमकहरामी नहीं की? उन्हें सख्त तकलीफ नहीं पहुँचाई? क्या तेरा यह काम गुनाह नहीं है और तुझे दोजखमें भेजनेके लिए काफी नहीं है?"

रोशनआराके प्रश्नका वास्तविक अभिप्राय हकीम साहवकी समझमें न आया। उन्होंने वहुत ही सरलतापूर्वक उत्तर दिया,—

"वादशाहको जहर देनेके लिए वेगम साहव मुझे वार वार हुक्म फरमाती थीं और तरह तरहके लालच देती थीं। मगर मैंने उस हुक्मकी तामील करना

मुनासिब न समझा। मैंने हमेशा ऐसी दवायें दीं जिनसे बादशाहका मर्ज दूर होता था, और अब वे करीब करीब तन्दुरुस्त हो गये हैं। सिर्फ आपकी तसल्लीके लिए मैं बराबर उन्हें बेहोशीकी दवायें देता आया हूँ। अगर मैं अभी वह बेहोशी दूर कर दूँ तो बादशाह फिर सही-सलामत और तन्दुरुस्त हो जॉय।"

रोश०—(बहुत बिगडकर) "ओ दगाबाज! ओ नमकहराम! मैं तेरी यह चालाकी पहले ही समझ गई थी। और इसी लिए आज मैं तेरी जिन्दगीका खातमा कर देना चाहती हूँ। रहमत! इसे साथ ले जा और रोशनआरा बेगमके साथ दगाबाजी करनेका मजा चखा।"

यमराजका दूत रहमत तुरन्त हकीम साहबको लेकर चलता बना। पर रोशनआराके चेहरे पर चिन्ताकी जो झलक आई थी वह अभी कम न हुई थी। उसे यह जानकर बहुत लज्जा हुई कि जिस कामके लिए मैं इतने दिनों तक प्रयत्न करती रही वह पूरा नहीं हुआ। बादशाहके बीमार होते ही उसने जिस प्रकार सब बेगमों और शाहजादियोंसे अलग होकर अपनी सैकडों विश्वस्त तातारी बाँदियोंके पहरेमें बादशाहकी सेवा-शुश्रूषाका भार अपने ऊपर लिया था, और उस सम्बन्धमें उसने जितनीं गुप्त कार्रवाइयाँ की थीं, उन सबका उसे स्मरण हो आया। उसे सन्देह होने लगा कि कहीं मेरी सारी कार्य्य-पटुता, सारी कर्तव्यता और सारी बुद्धिमत्ता मुझे छोडकर चल तो नहीं दी। औरंगजेब अच्छा होकर तख्त-ताऊस पर जा बैठेगा, दिल्लीका ऐश्वर्य भोगने लगेगा आज्ञाओंपर आज्ञायें देने लगेगा। जो अमीर उमरा रोशनआराके इशारेपर जान देते, जो सरदार रोशनआराकी प्रसन्नताके लिए उसके चरणोंकी सेवा करते और जो राजे-महाराजे रोशनआराका आज्ञापालन करनेमें अपने आपको धन्य मानते, वे सब अब फिर औरंगजेबके ध्यानमें लग जायँगे। अब मुझे फिर बेगमें और शाहजादियाँ अपने दिमाग दिखलाएँगी। क्या सुलताना बनने, ऐश्वर्यसे विभूषित होकर हुकूमत करने और सैकड़ों अमीरों और दरबारियोंके सामने तख्त-ताऊसपर बैठनेकी मेरी आशा स्वप्नवत् हो जायगी? बडे बड़े अमीरों, सरदारों और राजाओंसे सेवा करानेकी मेरी इच्छा मनकी मनमें ही रह जायगी और मैं फिर महलमें कैदियोंकी तरह पड़ी रहूँगी? बहुत ही साधारणसे साधारण बल्कि क्षुद्र मनुष्य भी स्वतंत्रतापूर्वक रहते हैं, स्वेच्छापूर्वक घूमते फिरते हैं, मनमाना भोगविलास

करते हैं, यहाँ तक कि जंगलमें घूमनेवाले पशु और आकाशमें उडनेवाले पक्षी भी किसीकी अधीनतामें नहीं जाते। पर बादशाहजादीके भाग्यमें यही जनाना महल, गुसलखाना और झरोखा है। इसीमें कैदियोंकी तरह रहकर अपनी स्वतन्त्रता, अपने जीवन और अपने मनकी उमगोंका नाश करना पड़ता है। हाय रे दुर्भाग्य! औरंगजेबको बीमार देखकर मैंने समझा था कि मेरी कैदके दिन अब समाप्त हो गये। औरगजेबने आठ दस बरसतक तख्तपर बैठकर हुकूमत की, वह बेचारा धर्म्मान्ध फकीर राजविलास और राजसुख क्या जाने! जबसे वह तख्त-ताऊसपर बैठा, तबसे आजतक उसके दरबारमें एक दिन भी तवायफोंका नाच न हुआ, दीवान-ए-आममें एक दिन भी मधुर तानें सुनाई न पड़ीं, शराबका एक घूँट भी किसीके गलेके नीचे न उतरा। दिन रात भोग-विलासमें बितानेवाली रँगीली दिल्ली ऐसे अरसिक, नीरस और मनसे वृद्ध बने हुए फकीरको क्यों चाहने लगी! हमारे दादा जहाँगीरने अपनी विलासेच्छा पूर्ण करनेके लिए शेर अफगानके प्राण लिये थे और नूरजहाँपर अपना अधिकार किया था। क्या उनका सा तेज औरगजेबमें भी है? अमीर उमरा अप्रसन्न हैं, सरदार और राजे मन-ही मन कुढते हैं, दिल्लीकी रगीली प्रजा मन मारकर बैठी हुई है, इन सब बातोंका यही कारण है। जिस दरबारमें नाच-रंग शराब-कबाब और भोग-विलासका नाम भी न हो, उस कबरिस्तानसरीखे दरबारसे लोग रोनी सूरत लेकर घर न जॉय तो और क्या करें? बिना दो एक गिलास शराब पिये कहीं दरबारके कामोंमे मन लगता है? जिन्हें शराब पिये और तवायफोंकी शक्ल देखे बरसों बीत जाते हैं, उनके मुखोंपर प्रसन्नता कहाँ? छि यह कोई अच्छी बात नहीं है। देहली दरबारकी यह गई हुई रौनक फिरसे वापस आनी चाहिए। गजब है, कितनी तवायफोंको अपनी शादियाँ कर लेनी पडीं! शराबके लिए जो कडी मनाही कर दी गई है उसे रद्द करना चाहिए क्योंकि इसके बिना दरबारकी शोभा ही क्या? पर ऐसा होनेसे पहले इस अरसिक और शुष्क-हृदय औरगजेबके जीवनका अन्त होना चाहिए। अगर मैंने यह बहुमूल्य अवसर खो दिया तो फिर मुझे जन्मभर इसी जनानखानेके नरकमें वास करना पडेगा। लेकिन इस तरह केवल विचार करनेसे ही क्या लाभ? अभीतक तो औरंगजेब बेहोश है। उसके होशमें आनेसे पहले ही मुझे उसका जीवन-दीप बुझा देना चाहिए। जबतक मेरे पास विपुल धन है, तबतक एक औरग-

जेव क्या सैकड़ों औरंगजेबोंके प्राण लिए जा सकते हैं। यदि एक मूर्ख हकी-मसे मेरा काम न निकला तो कोई चिन्ता नहीं, स्वय मेरे दरबारमें ही बीसियों हकीम हैं। मैंने बडी भूल की जो इसे विश्वसनीय समझा, पर तो भी मेरा भेद किसी पर प्रकट नहीं हो सकता। हॉ, इस दूसरे हकीमको भी जिससे मेरा काम निकलेगा जीवित न रहने देना चाहिए।

इस अन्तिम विचारके कारण रोशनआराके सुन्दर पर कठोर वदन पर आ-सुरी मुस्कराहट आ गई। इतनी देरतक वह जिस चिन्तित अवस्थामें थी, वह दूर हो गई, अब उसका मन फिर प्रसन्न हो गया। उसने तुरन्त आवाज दी,—
" विजली ! जरा यहाँ आना। "

रोशनआराकी बिजली आकाशकी बिजलीकी तरह चमकती हुई उसके सामने आकर खडी हो गई। उसके आदाव वजा लानेके उपरान्त रोशनआराने उससे कहा,—

" हम लोगोंकी आजतककी कुल कोशिशें बेकार हुईं। "

बिजली—" क्या वादशाहकी जिन्दगीका खातमा न होगा ? "

रो०—"नहीं। जिस हालतमें वह इस वक्त है उसी हालतमें वह शायद एक मुद्दत तक जिन्दा रह सकता है। "

बिज०—" अभी थोड़ी देर पहले जब मै देखनेके लिए आई थी तव तो वे बिलकुल मुरदेकी तरह पडे हुए थे। उस वक्त तो मैंने समझा था कि उन्होंने खुदाके घरका रास्ता ले लिया। "

रो०—" नहीं, यह वात नहीं है। हम लोगोंको बहुत धोखा हुआ। वाद-शाहकी तवीयत दिन पर दिन अच्छी होती जाती है, सिर्फ बेहोशी कायम है।"

इसके वाद रोशनआराने उसे हकीमके सम्बन्धकी सब बातें कह सुनाई। सुनकर बिजलीने रोशनआराकी चातुरीकी प्रशसा की और कहा,—

" बेगम साहबा ! आखिर आपने कोई तदबीर भी सोची ही होगी। "

रोश०—" तदवीर ! तदबीरोंकी तो यहाँ कोई कमी ही नहीं है। जिस रोशनआराने अपनी लियाकतसे सारे महल पर अपना सिक्का जमाया है, जि-सकी तदबीरें सुनकर बडे बडे वजीर और मशीर दग रह जाते हैं, जिसने

अपनी तदवीरोंसे औरंगजेवको देहलीके तख्तका मालिक वनाया है और जिसमें फिर वह तख्त छीन लेनेकी ताकत है उसके लिए तदवीरोंकी क्या कमी? इन शाही हकीमोंसे मेरा काम न निकलेगा। जिस हकीमको मैं अपना सबसे बडा मदद-गार समझती थी, वही जब मेरे काम न आया तब मैं और किसीको यह राज बतलाना नहीं चाहती। तुम शहरमें जाओ और वहाँसे किसी ऐसे हकीमको ले आओ जिसके पास दौलत तो जियाद न हो पर मेरे कामके लिए जिसके पास काफी जहर मौजूद हो। उसीकी मददसे मैं अपने रास्तेका यह काँटा दूर करूँगी। उसे दौलतका लालच देकर, बहुत बडे ओहदेकी उम्मेद दिला कर और मान-मरातिबका सब्ज बाग दिखला कर काम निकाल लिया जायगा। हाँ, इस वातका खयाल रखना कि वह हकीम बहुत ही गरीब न हो। क्योंकि तुम जानती हो गरीब दौलतकी कदर नहीं जानते। उन्हें अक्सर दीन और ईमानका ही खौफ लगा रहता है। किसी ऐसे हकीमको यहाँ लाना जो दौलतको ही खुदा समझता हो। नहीं तो फिर पहलेकी तरह धोखा खाना पडेगा और परेशानी होगी।"

विज०—"बहुत खूब। जब तक मैं वापस न आऊँ तब तक इस कमरे पर सख्त पहरेका इन्तजाम रहना चाहिए। नहीं तो फिर वही कलवाली नौबत होगी।"

रोश०—"नहीं, तुम इसकी फिक्र न करो। आज मैंने यहाँ और भी ज्याद तातारी पहरेवालियोंका इन्तजाम कर दिया है। सबके हाथोंमें नगी तलवारें हैं, और मैंने हुक्म दे दिया है कि अगर मौका पडे तो फौरन उन्हें काममें लाओ। तुम्हारे सिवा बगैर मेरी इजाजतके और कोई यहाँ नहीं पहुँच सकता। अगर कोई कमबख्तीका मारा आ भी जायगा तो जिन्दा न बचने पावेगा। कल आयशा कितनी शेखीसे बातें करती थी। वह अपने आपको वलीअहद (युवराज) की माँ और बादशाहकी चहेती बेगम समझती थी और इसी लिए वह इस कमरेमें बैठ कर बादशाहकी तीमारदारी करना चाहती थी। पर उसकी एक भी न चली और मैंने उसे यहाँसे चलता बनाया। अब मैंने ऐसा इन्तजाम कर दिया है कि अब वह इस महलमें आ ही न सकेगी। मगर यह देखो, सामने कौन आ रहा है?"

विज०—"हुजूर, यह पहरेवालियोंकी सरदार फातिमा है।"

इतनेमें फातिमा आदाब बजा लाकर सामने खड़ी हो गई। बिजलीने उसकी तरफ देखकर पूछा,—" कहो, क्या चाहती हो ? "

फा०—"ख्वाजा फौलादखॉने खबर भेजी है कि दरेदौलतपर एक हिन्दू राजा हाजिर है और बेगम साहबकी मुलाकातका शर्फ हासिल करना चाहता है। "

रोश०—(नाक भौं चढाकर) " अभी इस वक्त किसीसे मुलाकत नहीं हो सकती। वह आइना इधर कर। "

फातिमाने बडे अदबसे वह आइना सामने ला रक्खा। उसमें अपना रूप निरखती हुई रोशनआरा बोली,—" पहले अभी गुस्ल (स्नान) होगा। इसके बाद उसे शीशमहलके बगलवाले कमरेमें ले आना। "

फातिमा आदाब बजा लाकर वहाँ चलने लगी। रोशनआराने उसे फिर बुलाकर कहा,—" तुझे मालूम है कि उस राजाका क्या नाम है और वह कहॉका राजा है ? "

फा०—" हुजूर ! वह ढॉडेरका राजा कचुकीराय—"

रो०—" अरे, वह बुड्ढा कचुकीराय। उसकी बातें सुनकर तो मेरे पेटमें बल पड जाते हैं। अच्छा जा, मैं बगलके कमरेमें जाती हूॅ। उसे वहीं ले आ।"

यह कहकर रोशनआरा बडे अन्दाजसे अठलाती हुई बगलके कमरेमे चली गई और एक बहुमूल्य कालीन पर मसनदके सहारे बैठ गई। दो बॉदियाँ आकर उसके दोनों ओर खडी हो गईं। थोडी देरमें फातिमा अपने साथ वृद्ध कचुकीरायको लिए हुए वहीं आ पहुँची। कंचुकीरायने बडी ही विलक्षणतासे रोशनआराको फरशी सलाम किया। उन्हें देखकर रोशनआराको बहुत हॅसी आई, पर उसने बड़ी कठिनतासे अपनी हॅसी कुछ रोकी, तो भी उसका हॅसना कचुकीरायने देख ही लिया। कंचुकीरायको यह जानकर बहुत ही सन्तोष हुआ कि बेगम साहबा मुझे देखकर बहुत ही प्रसन्न हुई हैं। उस समय उन्होंने अपने आपको धन्य समझा।

* * * *

सातवाँ प्रकरण।

मृदूनि कुसुमादपि।

आजतक जिन जिन नर-रत्नोंने अपने दुर्बल और गरीब भाइयोंको दासत्वके दुर्गन्धिमय नरकसे निकालकर स्वतन्त्रताके शुद्ध और पावन प्रदेशमें ले जानेका प्रयत्न किया है और उसमें सफलता प्राप्त की है, उनके समर-भूमिमें विचरते समय, शत्रुओंसे दो दो हाथ करते समय, स्वतन्त्रताके लिए लडते समय ऐसा जान पड़ता होगा कि उनके हृदय केवल पत्थरके बने हैं। शत्रुसे बातें करते समय उनकी भाषा आसुरी हो जाती होगी, आँखोंमें आसुरी तेज छा जाता होगा और वे असुरोंकी तरह ही रक्तपात करते हुए दिखलाई देते होंगे। जब तक वे अपने प्रयत्नमें यशस्वी नहीं हो जाते होंगे तब तक यही जान पडता होगा कि उनमें प्रेम, भक्ति, वात्सल्य आदि कोमल मनोविकारोंका नाम भी नहीं है। यही नहीं बल्कि स्वतन्त्रताके लिए प्रयत्न करनेवाला मनुष्य किसी निर्दय और भीषण डाकू सा भी मालूम हो सकता है। पर वास्तवमें यह बात ठीक नहीं है। ऐसा समझना प्रमाद ही है। जिस समय उनके विषयमें किसीके मनमें ऐसी कल्पनायें उठें, उस समय एक बार उनके महान् और तेजोमय उद्देश्यकी ओर भी ध्यान देना चाहिए। कहाँ अपने स्वार्थ-साधन पर मरने और विषय-लालसाको शान्त करनेके लिए तरह तरहके पातक करनेवाले नीच डाकू और कहाँ भूत-दयाकी भूमि पर बन्धु-प्रेमका प्रासाद खडा करने और अपने गये हुए राष्ट्रीय जीवनको फिरसे लानेके लिए अपने प्राणों पर खेलनेवाले महात्मा! इन महात्माओंको भी कभी कभी अपने कर्तव्यके पालनके लिए बहुत ही कठोर बनना पडता है, अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिए हाथमें तलवार लेकर बहुतोंको यमराजके पास भेजना और बहुतसा रक्तपात करना पडता है। तो भी उनकी सुन्दरता, कोमलता और महत्तामें किसी प्रकारका अन्तर नहीं पडता, उलटे उनके गुणोंकी और भी वृद्धि होती है। वे अधिक सुन्दर, अधिक कोमल और अधिक सद्गुणी जान पड़ते हैं। निर्दय और पापी लुटेरों तथा डाकुओंको अपना कृत्य करते समय किसी प्रकारकी दया नहीं आती, उनके मनमें कभी प्रेम उत्पन्न नहीं

होता, उनका मन कभी कोमलता धारण नहीं करता, उनके अत करणमें नाम मात्रको भी दया उत्पन्न नहीं होती, लेकिन स्वतंत्रताके लिए लड़नेवाले लोग समय समय पर बडे उदार, दयालु और परोपकारी हो जाते हैं। जिन अवसरों पर अपने प्रशंसनीय उद्देश्यकी सिद्धिके लिए उन्हें बहुत अधिक कठोर होना पडता है उन अवसरों पर भी उनके अन्त करण फूलोसे वढकर कोमल होते हैं।

युवराज छत्रसाल भी ऐसे ही महात्मा थे। विन्ध्यवासिनी देवीके मन्दिरकी रक्षा करनेवाले छत्रसाल और जयसागर सरोवरमें जल-विहार करनेवाले छत्रसाल दोनों एक ही थे। केवल आठ ही दिन पहले रणदूलहखॉ और उनके सिपाहियोंपर चिनगारियॉ छोडनेवाले उनके नेत्र आज अमृतकी वर्षा कर रहे थे। रक्तपातके समय जरा भी विचलित न होनेवाला उनका मन आज वहुत ही कोमल बन गया था। कठोर जान पड़नेवाली उनकी मुद्रा बहुत ही शान्त और प्रसन्न दिखाई पड़ती थी। बहुत देरसे वे मानवी और दैवी सौन्दर्य देखने-में मग्न थे। अच्छी तरह दर्शनका आनन्द लेनेके लिए उन्होंने अपनी नाव विजया और विमलदेवकी नावसे न तो बहुत ही दूर रक्खी थी और न वहुत ही पास रक्खी थी। विजयाको तो उन्होंने उसी समय पहचान लिया था, पर उसके साथ बैठी हुई दूसरी सुन्दरी बालिकाको वे न पहचान सके थे। उन्हें वे एक स्वर्गीय सुन्दरी समझ रहे थे। उस समय यदि कोई उनसे यह भी कह देता कि हीरादेवीके पुत्र युवराज विमलदेव ही जनानी पोशाक पहन कर वैठे हुए हैं तो वे कदापि उसका विश्वास न करते।

जिस समय छत्रसाल दूरसे विजयाके मानवी और विमलदेवके दैवी सौन्दर्य्यका आनन्द ले रहे थे उस समय उनके मनमें आप-ही-आप यह भय उत्पन्न हुआ कि इन दोनोंका कल्याण नहीं है। कदाचित् ये दोनों डूब न जॉय। इस लिए वे अपनी नाव अधिक तेजीसे खेने लगे। उसी समय उन्हें दिखलाई पड़ा कि नाव उलट गई और उनकी आशंका ठीक उतरी। वे यथासाध्य और भी जल्दी डॉडा चलाने लगे। थोड़ी ही देर वाद उन्हें सुनाई पड़ा—" हा! यदि यहॉ छत्रसाल होते तो—" असहाय विजयाके इन शब्दोंने छत्रसालको मानो चुम्ब-ककी तरह खींचना आरम्भ किया। उनसे रहा न गया, वे चटपट पानीमें कूद पडे और जल्दी जल्दी तैरते हुए विमलदेवके पास जा पहुँचे। गोते खाते हुए विमलदेवको पकड़कर उन्होंने अपनी नावकी ओर ले चलना आरम्भ किया।

उस समय विजयाके आनन्दकी सीमा न रही। वह भी जल्दी जल्दी तैरती हुई छत्रसालके पीछे पीछे उनकी नावतक पहुँची। इतनी देरमें छत्रसालने उस दैवी सौन्दर्य्यको नावपर रख दिया था। विजया उस समय मन ही मन यह सोच रही थी कि जिसने ठीक समय पर पहुँचकर विमलदेवके प्राण बचाये हैं उसके उपकारका बदला मैं किस प्रकार चुकाऊँ। विजयाने इस समयतक छत्रसालको पहचाना न था। वह समझती थी कि मैं डाडेरकी राजकुमारी हूँ और विमलदेव ओड़छेके युवराज हैं, इस लिए अपने साथ उपकार करनेवालेका बदला हम लोग सहजमें ही धनसे चुका देंगे। यही सोचती हुई वह छत्रसालकी नावके पास पहुँची। उसे नावपर खींचनेके लिए छत्रसालने अपना हाथ आगे बढाया। विजयाने नावपर खडे हुए छत्रसालके तेज पूर्ण मुखकी ओर देखा। दोनोंकी चार आँखें हुईं। विजयाने समझ लिया कि इस उपकारका बदला धनसे नहीं चुकाया जा सकता। उसने क्षणभर विचार किया और तब बडी प्रसन्नतासे अपना हाथ बढाकर युवराज छत्रसालके हाथमें दे दिया।

छत्रसाल! यह एक कुमारीका हाथ है। यह हाथ जितना सुन्दर और कोमल है, उतना ही पवित्र और मंगलमय भी है। इसे ग्रहण करनेमें तुम्हें जितना सुख मिलेगा उससे अधिक तुम पर उत्तरदायित्व आ पड़ेगा। तुम्हारी जन्मभूमि, जयसागर सरोवरका जल, अभी उदय होनेवाले आकाशीय चन्द्रमामें सूर्यका छिपा हुआ तेज, तुम दोनोंकी ओर सुगन्धि लेकर आनेवाली वायु और सारे विश्वको आच्छादित करनेवाला आकाश, ये पंच-महाभूत इस पाणिग्रहणके अवसर पर तुम्हारे चारों ओर मूर्तिमान् खडे हैं। इस लिए खूब समझ बूझकर विजयाका हाथ पकडो।

उस समय विजयाके मुखपर लज्जाके कारण जो लाली आ गई थी, वह उसके मनका निश्चय प्रकट करती थी।

युवराज छत्रसालके मुखपर क्षणभरके लिए गम्भीरताका तेज झलकने लगा। उन्होंने विजयाका हाथ पकडकर उसे अपनी नावपर चढा लिया। उस समय विमलदेव कुछ होशमें आने लगे थे। विजयाने उनके पास जाकर कहा,—

"विमलदेव! कहो क्या हाल है?"

विमलदेवने अपनी आँखें खोलकर कहा,—

"मैं कहाँ हूँ ? विमलदेव तो जयसागर सरोवरमें डूबकर मर गया। पर मुझे लेकर तुम लोग कहाँ चल रहे हो ? उस चद्रमाकी ओर ? पर वहाँ विजया तो नहीं है। युवराज छत्रसाल भी नहीं हैं। तब मैं वहाँ किस प्रकार रह सकूँगा ? उसे मैं स्वर्ग किस प्रकार मान सकूँगा ? नहीं, मुझे तुम्हारा स्वर्ग नहीं चाहिए। विजया और छत्रसालके सामने मैं तुम्हारे स्वर्गके सारे सुखोंको तुच्छ समझता हूँ। मुझे वहीं ले चलो जहाँ वे दोनों हों।"

विमलदेवके स्वर्गीय सौन्दर्य्यकी ओर छत्रसाल टक लगाए देखते रहे। अतमें उन्होंने विजयासे पूछा,—"विजया! यह स्वर्गीय सुंदरी कौन है ? मैंने तो इसे आज पहले पहल ही देखा है, यह मुझे क्यों कर जानती है ?"

छत्रसालके प्रश्नका उत्तर विजया देना ही चाहती थी, इतनेमें विमलदेवने फिर विजया और छत्रसालकी ओर देखकर प्रलाप आरम्भ किया—

"विजया! क्या तुम भी मेरे साथ स्वर्ग चल रही हो ? वहाँ तुम्हें क्या विशेषता जान पडी जिसके लिए तुमने इतनी जल्दी की ? वहाँ युवराज छत्रसाल तो हैं ही नहीं, तब हम लोगोंको आनद किस प्रकार मिलेगा ? यह मेरी ओर प्रेमपूर्ण दृष्टिसे कौन देख रहा है ?"

छत्र०—"मैं हूँ, छत्रसाल।"

विम०—"छत्रसाल! तुम छत्रसाल हो! महेवाके युवराज छत्रसाल हो! हाँ, ठीक है, वही हो। क्या तुम भी हम लोगोंके साथ चद्रमाकी ओर चल रहे हो ? तब तो हम लोगोंको स्वर्गमें खूब आनद मिलेगा! वहाँ न तो माँ हीरादेवी हैं और न पिता पहाडसिंह! वहाँ किसी तरहका भी रिश्ता नाता नहीं है। द्वेष, मत्सर, क्रोध आदिका वहाँ नाम भी नहीं है। प्रेम, प्रेम और प्रेमके सिवा वहाँ कुछ है ही नहीं। तुम भी हम लोगोंके साथ चल रहे हो न ?

छत्र०—"सुंदरी! इस विश्वमें सम्भवत एक भी मनुष्य ऐसा न मिलेगा जो तुम्हारे दैवी सौन्दर्य्य या विजयाके मानवी सौन्दर्य्यकी उपेक्षा या तिरस्कार करे। तथापि ऐसे अवसर पर जब कि मेरे बुंदेले भाई दासत्वके जालमें फँसे हुए हैं, दुष्काल, दरिद्रता और परसेवा आदि आपत्तियाँ उन्हें दारुण दु ख दे रही हैं, अपने आपको तुम्हारे प्रेम-जालमें फँसाकर ससारका सुख लेना बड़ा भारी स्वार्थी बनना है। इस लिए मैंने प्रण किया है कि जब तक बुन्देलखंड

परसे यह आपत्ति न टल जायगी तब तक मैं किसी प्रकारके सुखकी लालसा न करूँगा । बुन्देलखडके स्वतन्त्र हो जानेके उपरान्त यह छत्रसाल तुम्हारा है । तब चाहे इसे चन्द्र-लोक को ले चलो, चाहे स्वर्गलोकको । "

विजयाने हँसते हुए पूछा,—" छत्रसाल ! तुम किसके साथ बातें कर रहे हो ? "

छत्र०—" इस स्वर्गीय सुन्दरीके साथ । "

विज०—" ये तो सुन्दरी नहीं है । "

छत्र०—" सुन्दरी नहीं है, तब कौन है ? "

विज०—" यह तो युवराज विमलदेव है । "

छत्रसालने बहुत ही चकित होकर पूछा,—" युवराज विमलदेव ? भला इन्होंने स्त्रीका वेप क्यों बनाया ? "

विज०—" हाँ, इसके लिए तुम्हें आश्चर्य हो सकता है । जिस समय ये जनाने कपडे पहनकर मेरे सामने पहले पहल आये थे उस समय मैं भी बडे भ्रममें पड गई थी । इन्हें स्त्री-वेप इतना सुन्दर और उपयुक्त जान पडता है कि इन्हें देखकर किसीको पुरुपकी कल्पना भी नहीं हो सकती । इन्हें शकाकी दृष्टिसे न देखो, ये वास्तवमें युवराज विमलदेव हैं । '

इतनेमें युवराज विमलदेवको कुछ होश होने लगा । उन्हें होशमें आते देखकर विजयाने धीरेसे छत्रसालको समझा दिया कि जब इन्हें होश आ जाय तब इनपर किसी प्रकार यह प्रकट न हो कि तुम इनका वास्तविक स्वरूप जान गये हो, नहीं तो इन्हें बहुत सकोच होगा ।

जब विमलदेवने होशमें आकर देखा तब उन्हें मालूम हुआ कि मैं डूबकर मर नहीं गया, बल्कि जयसागर सरोवरमें एक नावपर लेटा हूँ, विजया मेरे पास बैठी है, और उसके पास ही एक सुन्दर युवक बैठा हुआ नाव चला रहा है । युवक कुछ परिचित सा जान पडता है, कई बारका देखा हुआ है । थोडी देर बाद उन्होंने पहचान लिया कि ये महेवाके युवराज छत्रसाल हैं । उन्हें पहचानकर वे बहुत ही प्रसन्न हुए । उनके मनमें शुद्ध आनन्दकी लहरें उठने लगीं । पर शुद्ध आनन्दकी वे लहरें अधिक समय तक न ठहर सकीं, थोडी ही देर बाद उन्हें अपने वेपका ध्यान करके कुछ लज्जा और कुछ घबराहट जान पड़ने

लगी । धीरे धीरे यह लज्जा और घबराहट इतनी बढ गई कि प्रसन्नतासे हँस-नेवाला उनका मुख सकोच और भयसे नीचा हो गया ।

जयसागर सरोवरके बीचवाले द्वीपमें जानेकी इच्छा विजयाको मन ही मन दबा रखनी पडी । उसने छत्रसालसे नावको किनारेकी ओर उस स्थानपर ले चलनेके लिए कहा जहाँसे वह विमलदेवके साथ अपनी नाव पर पहले सवार हुई थी । नाव जल्दी जल्दी किनारेकी ओर बढने लगी । उस समय जयसागर सरोवरमें चन्द्रमाकी जो छाया पड़ रही थी उसे देखनेसे मानो जान पडता था कि नाव और चन्द्रमामें शर्त्त लगी हुई है । विमलदेवकी वह बेहोशीवाली कल्पना अब न रह गई थी । आकाशके चन्द्रमा, वहाँके स्वर्गीय सुख और छत्रसालकी मित्रता आदिका अब उन्हें ध्यान न रह गया था । वे इस ससार, ओडछेके राजमहल और वहाँके कष्ट, मत्सर और कपट आदिकी बातें सोच रहे थे । उनके जो नेत्र पहले स्वर्ग-सुखकी कल्पनासे चमक रहे थे, वे अब इस ससारके सकटोंका ध्यान करके निस्तेज होते जाते थे । वे सोचने लगे कि यदि मैं सदा अपने इसी कल्पनामय जगत्में रहता तो बहुत अच्छा होता । यदि यह जय-सागर सरोवर मुझे प्रेम-शून्य माताके मायाजालसे बाहर निकाल देता तो बहुत ही उत्तम होता । मैं नित्य अनीति, अन्याय और द्वेष आदिसे पूर्ण घटनायें देख-नेसे तो बच जाता । अब मुझे फिर अपनी माँके अधीन होना पडेगा, उसकी कठोर और अनुचित आज्ञायें माननी पड़ेंगी । हे ईश्वर ! इन झंझटों और कष्टोंसे क्योंकर छुटकारा होगा ?

ज्यों ज्यों विमलदेवकी विचार-शृखला बढने लगी त्यों त्यों जयसागरका किनारा पास आने लगा । अन्तमें नाव किनारेपर लग गई, पर विमलदेव उस समय तक अपने विचारोंमें ही मग्न थे । उन्हें ऊपर आकाशमें, नीचे जय-सागरके जलमें और सामने नावपर केवल चन्द्रमा ही दिखलाई देता था । उस चन्द्रमासे बिछुडनेका ध्यान करके वे बहुत दु खी हुए । छत्रसालके साथ रहनेके लिए वे उस समय ससारके सारे सुखोंको लात मार सकते थे । पर सोचते सोचते उनकी आँखोंमें आँसू भर आये । वे अनजानमें ही विजयाका हाथ पकड़कर नावपरसे नीचे उतर पड़े ।

जब विजया और छत्रसाल नावसे उतर चुके तब छत्रसालने विजयासे कहा,—" विजया ! हमारे देश बुन्देलखण्डपर भयकर आपत्ति आई है । आज

तक दिल्लीके यवनोंने यहाँके पवित्र देवस्थानोंको तोडनेका साहस नहीं किया था। पर अब यह स्थिति अधिक समय तक ठहरती नहीं दिखलाई देती। अभी उस दिन विन्ध्यवासिनी देवीके शृंगारके समय ही रणदूलहखॉं अपने सिपाहियोंको साथ लेकर पहुँच गया था। परन्तु पूर्व-जन्मोंकी पुण्याईसे महोत्सवमें किसी प्रकारका विघ्न न पडा, रणदूलहखाँ कैद हो गया। पिताजी यह बात अच्छी तरह जानते थे कि रणदूलहखॉंको कैद करना मानो दिल्लीपतिको युद्धका निमंत्रण देना है। पर साथ ही वे यह भी समझते थे कि उसे छोड दिया जायगा तो हम लोगोंके तैयार होनेसे पहले ही भारी आपत्ति आ जायगी। इसी लिए उन्होंने रणदूलहखॉंको कैद कर लिया। आज नहीं तो चार दिन बाद यह खबर दिल्ली तक पहुँच ही जायगी और थोडे ही दिनोंमें बुन्देलखण्डमें मुसलमानोंका प्रवेश और उपद्रव आरम्भ हो जायगा। ऐसे विकट अवसरपर राष्ट्रोद्धारके कार्यमें यथासाध्य सहायता देना प्रत्येक बुन्देलेका परम कर्त्तव्य है। बुन्देलखडपर मुसलमानोंकी चढाई होनेके समय भी यदि हम लोग आजकी तरह परस्पर वैर-भाव रक्खेंगे तो बुन्देलखडकी स्वतन्त्रताकी आशा सदाके लिए नष्ट हो जायगी और देश मुसलमानोंकी अधीनतामें चला जायगा। तुम अपने डॅडेरके राज-महलमें चली जाओगी और विमलदेव ओढछेके राजप्रासादमें पहुँच जॉंयगे, पर अपने अपने स्थानपर पहुँचकर तुम लोगोंको भोग-विलास और आनन्द मगलमें न फॅस जाना चाहिए। बहुत बढिया भोजन करनेके समय जरा इस बातका भी ध्यान रखना कि तुम्हारी हजारों बहने दाने दानेके लिए तरस रही हैं। मखमली गद्दोंपर लेटनेके समय अपनी प्रजाकी हीनावस्थाका भी विचार करना। अधिकार जतलानेके समय जरा यह भी सोच लेना कि तुम्हारी प्रजापर और स्वयं तुमपर मुसलमानोंका कितना अधिकार है। इस बातको अच्छी तरह समझ रक्खो कि जिस प्रकार बिना प्राणके शरीर व्यर्थ होता है उसी प्रकार बिना स्वतन्त्रताके राष्ट्र निरर्थक होता है। जहॉं तक हो सके आरजू करके, समझाके बुझाके, जिद करके, यहॉंतक कि बिगडके अपने माता-पिताको देशकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेके लिए उद्यत करो। अच्छा, अब जाओ। विलम्ब हो रहा है। तुम्हारा डेरा यहीं पास ही है।"

इतना कहकर छत्रसाल अपनी नाव फिर खेने लगे। विजया और विमलदेव दोनों जहाँके तहॉं पत्थरकी तरह खडे रह गये। छत्रसाल बीचवाले द्वीपकी

ओर तेजीसे अपनी नाव ले जा रहे थे। जब वे बहुत दूर चले गये तब विमलदेव मानो अपनी विचारतंद्रासे जाग्रत हुए। उन्होंने विजयासे कहा,—

"विजया! छत्रसालने हम लोगोंको जो काम सौंपा है, क्या वह हम लोगोंसे पूरा हो सकेगा?"

विज०—"चाहे पूरा हो और चाहे न हो, पर मैं उसके लिए अपनी शक्ति भर प्रयत्न अवश्य करूँगी। जब जब माताके मनमें स्वदेशाभिमान उत्पन्न होगा तब तब मैं उन्हें और भी बढ़ावा दूँगी। अपने यहाँके प्रधान और दूसरे सरदारोंको इस सुंदर मार्गकी ओर प्रवृत्त करूँगी और अंतमें पिताजीसे भी चम्पतराय और छत्रसालका अनुकरण करनेकी प्रार्थना करूँगी। यदि राष्ट्रोद्धारके कार्यमें वे किसी प्रकारका विघ्न डालेंगे अथवा उसके विरुद्ध कोई प्रयत्न करेंगे तो उन्हें ठीक मार्गपर लाना माताका, मेरा, प्रधानका और सारी प्रजाका प्रधान कर्त्तव्य होगा।"

विम०—"पर विजया! मैं क्या करूँ? चाहे कोई कितनी ही युक्तियाँ क्यों न लडावे, कितनी ही प्रार्थनायें क्यों न करे, कितनी ही धमकियाँ क्यों न दिखलावे पर मेरी माता कभी अपना हठ न छोड़ेंगी, कभी अपने विचार न बदलेंगी। मुझे तो इस बातका तनिक भी विश्वास नहीं है कि जो कार्य युवराज छत्रसालने हम लोगोंको सौंपा है उसका एक अंश भी मुझसे हो सकेगा। मैं क्या करूँ?"

विज०—"तुम? तुम युवराज दलपतिरायका अनुकरण करो। जब तुम्हें यह निश्चय हो जाय कि तुम अपने प्रयत्नमें सफल न होगे तब ओडछेके युवराज-पदका त्याग कर दो और स्वतंत्रता देवीके झंडे-तले जाकर राष्ट्र सेवाके लिए अपना शरीर अर्पण कर दो। ओडछेके राजप्रासादमें भोग-विलास करनेवाला युवराज हाथमें खड्ग लेकर, माता पिताका तिरस्कार कर दे और समरभूमिमें जाकर स्वतंत्रताके लिए लडने लगे। उस समय ओडछेकी सारी प्रजा उसीका साथ देगी। उस समय वह कभी हीरादेवीका दबाव नहीं मानेगी और तुरन्त अपने युवराज, अपने भावी राजाकी सहायता करनेके लिए सब प्रकारसे तैयार हो जायगी।"

विम०—"पर यदि स्त्री-वेष धारण किये हुए तुम्हारे सामने खडा होनेवाला विमलदेव युवराज न हो, वह पुरुष न हो—तब?"

विजया अकचकाकर विमलदेवकी ओर देखने लगी। अन्तमें उसने कहा,—"क्या तुम्हारा यह पुरुष-वेष दिखौआ है? क्या ओडछेके राजाको कोई युवराज नहीं है?"

विमलदेव उत्तर देनेको ही थे कि इतनेमें उन्होंने देखा कि एक नौकर उनको ढूँढता हुआ उसी तरफ आ रहा है। उन्होंने तुरन्त आडमें जाकर अपना वह वेष उतार दिया और पहलेवाला पुरुष-वेष धारण कर लिया।

विजयाकी समझमें यह बात बिलकुल न आई कि यदि विमलदेव वास्तवमें पुरुष नहीं हैं तो वे पुरुषके वेषमें क्यों रहते हैं। रास्तेमें वह बार बार उनके मुँहकी ओर देखती जाती थी, पर विमलदेव उससे एक शब्द भी न बोले।

*

आठवाँ प्रकरण।

वन्धु-द्रोहका फल।

यदि धर्म्मके विचारसे देखा जाय तो परोपकारवृत्ति—जिसके अनुसार मनुष्य दूसरोंके भलेके लिए ही प्रयत्न करता है, दूसरोंको सुखी करनेके उद्योगमें लगा रहता है और अपना तन, मन और धन दूसरोंके लिए ही अर्पित कर देता है—अवश्य ही बहुत साधु-वृत्ति जान पडती है, पर यदि राष्ट्र-हितकी दृष्टिसे देखा जाय तो यह वृत्ति मानो स्वाभिमानकी जडमें लगनेवाला कीडा और मनुष्यके पौरुषको जला देनेवाली आग है। कचुकीराय! तुम्हारा जन्म बुंदेलखंडमें ही हुआ है न? तुम बुन्देलोंके ही वंशज हो न? जिन प्रतापशाली वीरोंने यह समझकर कि बुन्देलखंडकी पवित्रभूमि बुन्देलोंके लिए ही है, वहाँके अन्न और जल पर बुन्देलोंका ही अधिकार है और सर्वसत्ताधारी परमेश्वर या उसके प्रतिनिधिके अतिरिक्त और कोई उस देश पर शासन नहीं कर सकता, समरभूमिमें लहूकी नदियाँ बहाई हैं, तुम्हारा जन्म उन्हींके वंशमें हुआ है न? तुम्हारे शरीरमें बुन्देलोंका खून दौडता है, तुम्हारे नेत्रोंमे बुन्देलोंका तेज झलकता है, तुम्हारे हृदयमें बुन्देलोंका मन उपस्थित है। इतना होने पर भी तुम अपने आपको गीदड़ समझ कर आज क्या काम करनेके लिए तैयार

हुए ? तुमने दिल्लीके शासकों और अधिकारियोंका विलास देखा है, बुन्देल-खंडकी प्रजाकी दीन हीन अवस्था तुम्हारी आँखोंके सामने है। तुमने दिल्लीके सुलतानोंका अधिकार देखा है, अपनी प्रजाकी अनुकम्पनीय पराधीनता तुम्हारी आँखोंके सामने है। आज दिल्लीके यवन राजकर्मचारियों और उनके दूसरे भाइयों पर आनन्द, विलास, ऐश्वर्य और अधिकारकी मानो निरन्तर वर्षा होती है और तुम्हारी वल्कि बुन्देलखडकी सारी प्रजा पर दरिद्रता, दु ख और पराधीनताका पहाड गिर रहा है। ऐसे अवसर पर ढॉड़ेरके राजकुलमें न्यायी परमेश्वरने इस उद्देश्यसे तुम्हे जन्म दिया था कि ऐसी विपत्तिके समय तुम अपनी प्रजाकी रक्षा करोगे, उनके संकट दूर करके उनका वैभव वढाओगे और उन्हें दासत्वके भयकर जालमें न फॅसने दोगे। पर इसके विपरीत तुम बडे ही घातक निकले। प्रत्यक्ष परमेश्वरसे तुमने दगावाजी की। तुम अपने भाई बन्दों और प्रजाका नाश करनेके लिए तैयार हो गये। तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो। अधिकारमदसे अन्धी रोशनआराकी खूव खुशामद करो। स्वाभि-मान, पौरुष आदि गुणोंको लात मार कर रोशनआरासे मनमानी झूठी सच्ची वातें कहो। चम्पतरायके स्वतंत्रता-सम्बन्धी प्रयत्नोंमें खूव विघ्न बाधायें डालो। तुम्हारी इस धोखेबाजीके कारण बुन्देलखंड पर सकटका जो आघात होगा, वही बुन्देलखंडके सोये हुए क्षात्रतेजको जगावेगा और समस्त बुन्देलोंके मनमें प्रत्याघातकी इच्छा उत्पन्न हो आवेगी।

कचुकीरायको रोशनआरा बेगम मन ही मन एक खिलौना और दिल्लगीकी चीज समझ रही थी। कचुकीराय एक ओर घुटने टेक कर चुप चाप वैठे हुए थे ओर बेगमको प्रसन्न करनेके लिए तरह तरहसे नम्रताका भाव दिखलानेका प्रयत्न कर रहे थे। बेगम तो उन्हें एक तमाशा समझ कर मन ही मन प्रसन्न हो रही थी और कुछ मुस्करा भी रही थी, पर कंचुरीराय अपने मनमें यह समझकर फूले न समाते थे कि बेगम हम पर वहुत ही प्रसन्न है और इस समय हमें अपना कार्य्य सिद्ध करनेका वहुत अच्छा अवसर मिलेगा। थोड़ी देर तक कचुकीराय केवल इसी आसरे चुपचाप वैठे रहे कि बेगम स्वयं कुछ वात चीत आरम्भ करें और मैं उनका इशारा पाकर अपनी सारी वातें उन्हें कह सुनाऊँ। उन्हें स्वयं पहले बोलनेका साहस न होता था। थोडी देर तक दोनों ही चुप चाप वैठे रहे। अन्तमें रोशनआराने हॅसते हुए कहा,—

"राजा साहब ! इस बार तो आप बहुत दिनों पर आए । इतने दिनोंमें आपकी सूरत इतनी ज्याद बदल गई है कि आप पहचाने ही नहीं जाते ।"

कचुकी०—"जहाँपनाहका फरमाना बहुत ही बजा है । जबसे मैं यहाँसे गया हूँ, अकसर बीमार रहा करता हूँ । इसके अलावा रियासत और रिआयाकी फिक्र भी रहा करती है । अब वह पहलेकी सी बेफिक्री नहीं रह गई । एक तो फिक्र और दूसरे सिनकी ज्यादती, अगर दोनोंने मेरी सूरत बदल दी हो तो हुजूर-वालिय को ताज्जुब न होना चाहिए ।"

रो०—"राजा साहब ! दरबार-देहलीकी सरपरस्तीमें रह कर भी आप लोगोंको रियासत और रिआयाकी फिक्र लगी ही रही ? उसकी फिक्र तो शाही खानदानको होनी चाहिए । सलतनतका सारा कारोबार और इन्तजाम तो सिर्फ आप ही लोगोंकी सहूलियतके लिए है । आप ही लोगोंकी बेहतरी, तरक्की और हिफाजतके लिए इतनी झंझट और परेशानी उठाई जाती है । मगर फिर भी आप लोग हमेशा फिक्रमन्द रहनेकी शिकायत किया करते हैं ।"

कचु०—"बेगम-आलियाका फरमाना बहुत ही दुरुस्त है । बेशक तख्त-देहलीने मुल्कके कोने कोनेमें अमन कायम करनेमें अपनी तरफसे कोई बात उठा नहीं रक्खी । रिआयाकी हर तरहकी जरूरतें बखूबी पूरी हो चुकी हैं और बाकी पूरी हो रही हैं । राजाओंको भी अब पहलेकी सी दिक्कतें नहीं उठानी पड़तीं । डाकुओं, लुटेरों, बदमाशों और बागियोंसे शाही फौजें उनकी हिफाजत करती हैं । आपसके झगडे बखेड़ोंके लिए उन्हें जगकी जरूरत नहीं पडती, दरे-दौलतसे ही उन सबका फैसला हो जाता है । तमाम मुल्ककी रिआया भी बहुत खुशहाल है । मगर फिर भी रियासतके मुतल्लिक अकसर ऐसी छोटी मोटी बातें हुआ करती हैं जिनका इन्तजाम हम लोगोंको खुद ही करना पडता है । और सबसे बडी फिक्र जो हम लोगोंको दामनगीर रहती है वह सलतनत-देहलीकी खैरख्वाही और बेहबूदीकी है—और जिसे हम लोग अपना सबसे बड़ा फर्ज समझते हैं । (उपयुक्त अवसर देखकर) और इस मौकेपर भी मैं यही फर्ज बजा लानेके लिए दरे-दौलतपर हाजिर हुआ हूँ ।"

रो०—"बेशक, बेशक । राजा साहब ! आप लोगोंकी वफादारी, खैर-ख्वाही और नमक हलालीका तख्ते-देहलीको बहुत बडा भरोसा है । आप लोग जिस खूबी और मुस्तैदीसे अपना फर्ज बजा लाते हैं और सलतनतकी बडी बड़ी

खिदमतें अजाम देते हैं वह काबिल तारीफ है। (कुछ ठहरकर) हाँ, शायद आपने कहा था न कि इस वक्त भी आप एक फर्ज अदा करनेके लिए यहाँ आये हैं ?"

कचुकीराय उस समय फूले अगों न समाते थे। वे समझते थे कि ज्योंही मैं चम्पतराय और छत्रसालके उपद्रवका समाचार बेगमको सुनाऊँगा त्योंही बड़ी भारी सेना यहाँसे चलकर बुन्देलखंड पहुँचेगी और उनका सारा राज्य तहस-नहस कर देगी। उन लोगोंको अपने दुष्कर्मोंका पूरा पूरा दण्ड मिल जायगा और दूसरे विद्रोही राजाओंको भी इसीके साथ दण्ड मिल जायगा और तब बुन्देलखडमें सदाके लिए शान्तिका राज्य हो जायगा। इसके अतिरिक्त उन्हें स्वयं बहुत बडा खिताब या ओहदा मिलनेकी प्रबल आशा थी। इस लिए उन्होंने बडी प्रसन्नतासे सब समाचार बेगमको सुनानेका साहस किया।

कचु०—" बेगम-आलिय पर यह बात बखूबी जाहिर है कि बुन्देलखंडमें जहाँ सलतनत—देहलीके बडे बडे खैरख्वाह और वफादार बाजगुजार राजे हैं वहा कुछ थोड़ेसे सरकश और बागी जमींदार भी हैं जो कभी कभी मौका पाकर लूट पाट करते और रिआयाके अमनमें खलल डालते हैं। इधर बहुत दिनोंसे उन सरकश और बागी जमींदारोंको ठीक रास्ते पर लानेके लिए दरबार-देहलीकी तरफसे कोई इन्तजाम नहीं हुआ है। इसी वजहसे उन लोगोंके हौसले यहाँ तक बढ गये हैं कि अब उनके हमले जहाँपनाहके खास नमकख्वारों और फोजों तक पर होने लगे हैं।"

रो०—" क्या कहा ? जहाँपनाहके खास नमकख्वारों और फौजों तक पर उनके हमले होने लगे हैं ? शायद नमकख्वारोंसे यहाँ आपका मतलब रणदूलहखाँसे तो नहीं है जिन्हें बुन्देलखड पहुँचे अभी ज्याद अरसा नहीं हुआ और जो वहाँके सरकशोंको दबाने और बुतखानोंको ढानेके लिए भेजे गये थे ?"

कंचु०—"बेगम-आलिय का खयाल बहुत ही सही और दुरुस्त है। इस मौके पर मैं उन्हीं रणदूलहखाँ साहबके बारेमें कुछ अर्ज करनेके लिए दरे-दौलत पर हाजिर हुआ हूँ।"

रो०—(कुछ चिन्तित होकर) " हाँ हाँ कहिए, आप क्या कहना चाहते हैं ?"

कंचु—" हुजूर-वालिय को ज्यादह फिक्रमन्द न होना चाहिए। यह मुआमला कुछ ऐसा काबिल-तशवीश नहीं है, ऐसे वाकआत तो अकसर हुआ ही करते हैं। और उनका खातिरख्वाह इन्तजाम भी बहुत मामूली तौर पर हो सकता है।"

रोश०—(कुछ खिझलाकर) " हाँ हाँ, आखिर मालूम भी तो हो कि क्या हुआ।"

कञ्चु०—(थोडी देर तक कुछ सोचकर) " कुछ नहीं, सिर्फ हुआ यह कि रणदूलहखाँको.. .. .. "

रोश०—(जल्दीसे) " क्या रणदूलहखाँको किसीने कैद कर लिया ?"

कंचु०—"बेगम-आलिय का खयाल बहुत ही बजा है। खाँसाहब अपने कुछ बहादुर सिपाहियोंको साथ लेकर चित्रकूटमें विन्ध्यवासिनीका मन्दिर ढानेके इरादेसे जा रहे थे। वहीं एक पहाडी पर बागी चम्पतरायने धोखेसे उन्हें गिरफ्तार कर लिया।"

रोश०—(कुछ क्रुद्ध होकर) " क्या कहा, इतने बहादुर और जगजू सरदारको एक मामूली राजेने कैद कर लिया और आप लोग उसकी कुछ भी मदद न कर सके ?"

कंचु०—(घबराकर) " बेगम-आलिय , वह मौका ही ऐसा था कि खाँ साहब गिरफ्तार हो गये। बात यह हुई कि खाँ साहब अपने तीस चालीस चुने हुए सिपाहियोंको साथ लेकर मन्दिरकी तरफ जा रहे थे। रास्तेमे चम्पतरायका लड़का छत्रसाल अपने साथ दो चार बदमाशोंको लिए हुए मिल गया। बस फिर क्या था। शाही सिपाहियोंको देखकर वह उनके पाछे हो लिया और मौका पाकर पीछेसे उसके साथियोंने दो चार सिपाहियोंपर वार भी किये। लडाई शुरू हो गई। घटों खूब तलवारें चलीं। खाँ साहब और उनके साथियोंने वह वह हाथ दिखलाए कि खुदाकी पनाह। घमसान मच गया। मगर आखिरमें उनके कुछ साथी मारे गये और कुछ अपने दूसरे साथियोंको बुलानेके लिए पासहीकी छावनीमें चले गये। बस, मौका पाकर छत्रसालने खाँ साहबको गिरफ्तार कर लिया।"

रोशनआरा बहुत चकराई। उसकी समझमें यह बात बिलकुल न आई कि छत्रसाल और उसके दो चार बदमाश साथियोंने रणदूलहखाँके तीस-चालीस साथियोंको क्योंकर मार भगाया और उन्हें किस तरह गिरफ्तार कर लिया। उसने बडे आश्चर्यसे कहा,—

" कैसे ताज्जुबकी बात है कि छत्रसालके दो चार बदमाश साथी तीस चालीस शाही सिपाहियों पर गालिब आए ! "

अब कचुकीरायको खॉ साहबवाली बात याद आई । उन्होंने अपनी बातकी मरम्मत करनेके लिए कहा,—

" मैं यह अर्ज करना तो बिलकुल भूल ही गया कि इसी मौके पर खुद चम्पतराय भी एक बडी फौज लेकर वहॉ पहुँच गया । यह सारा फसाद तो उसीका खड़ा किया हुआ है । "

पर रोशनआराने कच्ची गोलियॉ नहीं खेली थीं । वह कंचुकीरायकी घबराहटसे समझ गई थी कि दालमें कुछ काला है । जब उन्होंने अपनी बातकी मरम्मत की तब उसका सन्देह और भी बढ़ गया । उसने समझा कि कचुकीरायकी बातें परस्पर विरोधी हैं । तो भी रोशनआराने पूछा, " तब फिर क्या हुआ ?"

कंचु०—" चम्पतरायने उन्हें अपने डेरेमें ले जाकर कैद कर दिया । बडी दिक्कतोंसे आधी रातके वक्त भेस बदलकर मैंने खॉसाहबसे मुलाकात की । उन्होंने मुझे देहली जाकर सारा माजरा बेगम-आलियाकी खिदमतमें अर्ज करनेकी सलाह दी । चलते वक्त उन्होंने मुझे निशानीके तौर पर वह कटार भी .... . "

रोश०—(बात काटकर) " कटार कैसी ? "

कचु०—" वही हाथी दॉतके दस्तेवाली कटार जिस पर हुजूर-वालिय की तस्वीर बनी हुई है और जिसे मैं कई बार . "

रोश०—(जल्दीसे) " कहॉ है वह कटार ? "

अब कंचुकीराय बड़ी विपत्तिमें पडे । उनके मुँहसे एक शब्द भी न निकला । वह कटार कहॉसे दिखलाते ? कटार तो छत्रसालने वहीं खेमेमें उनसे छीन ली थी । बेगमकी बातोंके रग ढगसे वे समझ गये थे कि उसे मेरी बातोंका विश्वास नही है । अब यदि कटारके विषयमें भी मैं सच्ची सच्ची बात कह दूँगा तो बेगमका अविश्वास और भी बढ जायगा । इस लिए वे बहुत ही चिन्तित हुए । उन्हें विपत्तिका पहाड सामने दिखलाई देने लगा । उन्हें चुप देखकर रोशनआराको कुछ क्रोध आया, उसने कर्कश स्वरमें कहा,—

" राजा साहब ! आप कहते थे न कि रणदूलहखॉने वह कटार आपको दी थी ? वह कटार कहॉ है ? दिखलाइए । "

कचु०—"जिस वक्त मैं खेमेसे निकलने लगा उस वक्त छत्रसालने आकर वह कटार मुझसे छीन ली। इसी लिए तो मैं—"

रोश०—"क्या खूब! एक छोटासा लडका और आपसे कटार छीन ले! अजी हजरत! कहीं चम्पतरायके साथ आपकी दुश्मनी तो नहीं है जिसका बदला चुकानेके लिए आप यह जाल बिछाना चाहते हैं?"

कचु०—"हम लोग तो दरबार-देहलीके पुराने नमकख्वार और—"

रोश०—"खैर! ये सब बातें होती रहेंगी। फिलहाल आप दो माहतक देहलीमें ही कयाम करें। इस अरसेमें बुन्देलखंडसे सही-सही खबरें आ जायँगी।"

कचु—"हुजूर"

पर रोशनआरा इस समय अधिक ठहरना न चाहती थी। उसने एक लौंडीको इशारा किया। लौंडीने उनसे कहा,—"राजा साहब! अब आप तशरीफ ले चलें। ये सब बातें दोबारा कदम-बोसी हासिल करने पर कीजिएगा।"

लाचार कचुकीरायको मनकी बातें मनमें ही दबा रखनी पडीं। उनके यहाँसे सटकर चले जानेपर रोशनआराने अपनी लौंडीको हुक्म दिया कि शाहीमहलके किसी कमरेमें कचुकीरायके ठहरनेका इन्तजाम कर दिया जाय और दरवाजेपर सख्त पहरा बैठा दिया जाय।

कचुकीराय दो महीनेके लिए देहलीमें नजरबन्द हो गये।

* * * *

नवाँ प्रकरण।
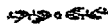
मृतकका शृंगार।

खजुवेके मैदानके जिस घनघोर युद्धमें शाहजहाँ बादशाहके प्रियपुत्र दाराकी फौजके धुर्रे उड़ गये थे और जिसमें विजय प्राप्त करनेके कारण औरंगजेबके लिए दिल्लीके तख्तका मार्ग बिलकुल निष्कंटक हो गया था, उस युद्धको समाप्त हुए आज प्रायः छ वर्ष हो चुके थे। तख्तके रास्तेमें पडनेवाले भाईरूपी काँटोंको निर्मूल करनेके उपरान्त अपना मायावी फकीरी बाना उतार-

कर आलमगीरने उसके अन्दर छिपा हुआ अपना राज-तृष्णाका रक्तवर्ण वेष दीवान-ए-आममें बैठकर लोगोंको दिखलाना आरम्भ कर दिया था। इस संसारकी असारताका उपदेश करनेवाली उनकी जीभ अब ऐहिक सारसर्वस्वके गीत गाने लगी थी। सब लोग धीरे धीरे समझने लग गये थे कि मक्के जाकर खुदाकी यादमें अपना शेष जीवन बितानेका उसका विचार केवल ढोंग और दिखौआ था। जो मुल्ला और काजी उसे भाईकी हत्या करनेवाला समझकर उसे कुरान-सम्मत बादशाह माननेके लिए तैयार न थे, उसे अभी उन सबका समाधान करना बाकी था। अपने राजसिंहासनको सदाके लिए स्थायी और दृढ बनानेके अभिप्रायसे अमीरों, सरदारों और राजाओं आदिपर उपाधियों और पदवियोंकी वर्षा करनेका उसका विचार अभी तक पूरा न हुआ था। जो लोग यह समझते थे कि औरंगजेबने हत्या और रक्तपात, बन्धुद्रोह और पितृद्रोह, अभिलाष और अमानुषता आदिकी सहायतासे दिल्लीके राज्यासनपर अधिकार किया है, उन लोगोंको अभी उसे अपनी मुट्ठीमें लाना और उनका मुँह बन्द करना था। दिल्लीका तख्त पानेमें चम्पतराय आदि जिन राजाओंने उसे सहायता दी थी अभी उनकी खातिर बाकी थी। विकट प्रसगोंपर जिन लोगोंको उसने वचन दिये थे वे लोग उसकी पूर्तिका समय निकट समझ रहे थे। वह स्वय भी लोगोंको सन्तुष्ट और वशीभूत करनेके लिए उन वचनोंकी थोडी बहुत पूर्ति करना चाहता था। यही नहीं बल्कि राज्य पा चुकनेपर उसने इन सब कामोंके लिए एक दिन भी निश्चित कर दिया था। सारे राज्यमें यह घोषणा हो चुकी थी कि रमजान महीनेकी पचीसवीं तारीखको देहलीमें एक बहुत बड़ा शाही दरबार होगा और उस दरबारमें उपस्थित होनेके लिए बडे बडे सरदारों और राजाओंके पास निमंत्रण भी पहुँच चुके थे। यह ठीक है कि स्वयं औरंगजेबको भोग-विलास या नाच-रग बिलकुल ही पसन्द न था, पर देहली दरबारके ऐश्वर्यसे दर्शकोंकी आँखें चौंधिया देनेके लिए और अशात दिल्लीकी प्रजाको प्रसन्न करनेके लिए औरगजेबने सब लोगोंपर अपनी यह इच्छा प्रकट कर दी थी कि रमजान मासके अन्तिम सप्ताहमें दिल्लीकी सारी प्रजा खूब उत्सव करे, सारे शहरमें नाच-रंग और रोशनी हो, दरबारमें आनेवाले मेहमानोंका तरह तरहसे स्वागत किया जाय और इन सब कामोंके लिए सरकारी खजानेसे खर्च लिया जाय। इस समारम्भका एक अग और था। शहरके उत्तर ओर जमुना-किनारे बड़े मैदानमें चार

दिनोंतक जनाना मेला—मीना वाजार लगनेको था, जिसमें सारे नगरकी स्त्रियाँ एकत्र होनेको थीं। वादशाहने शाहीमहलकी वेगमों, शाहजादियों, मुगलानियों, पहरेवालियों आदि सभी स्त्रियोंको स्वच्छन्दतापूर्वक उस मेलेमें जानेकी आज्ञा दे दी थी। दिल्लीकी अमीर और गरीव सभी स्त्रियाँ वडी उत्कंठासे उस दिनकी प्रतीक्षा कर रही थीं। विशेषत वडे घरोंकी और परदेमें रहनेवाली स्त्रियाँ तो उसके लिए और भी अधिक चिन्तित थीं,—कव रमजानकी चौवीसवीं तारीख आवेगी, कव हम लोगोंको इस कैदखानेसे छुट्टी मिलेगी, कव हम लोग खुले मैदानमें घूम सकेंगी, इन पिंजरोंसे निकलकर खुली हवामें फिरनेका दिन कव आवेगा ?

दिल्लीके निवासी नाचरंग और सैर तमाशेका मजा लेनेके लिए, सरदार और अमीर खिताव और सनदे पानेके लिए, वजीर और मशीर अपनी अपनी शान और मरतवा दिखलानेके लिए और शाही महलोंकी स्त्रियाँ वाहरकी हवा खानेके लिए वडी ही उत्कण्ठासे रमजानकी चौवीसवीं तारीखकी प्रतीक्षा कर रही थीं। स्वयं औरंगजेवको भी कई वार रमजानके उस अन्तिम सप्ताहका ध्यान हो चुका था। वह प्राय वैठा वैठा कभी तो ध्यान करता था कि मैं अपनी सारी प्रजाकी राजनिष्ठाका पात्र हो गया हूँ, कभी समझता कि काजियों और मुल्लाओंका मैं समाधान कर चुका हूँ और वे प्रसन्न होकर मुझे दुआयें दे रहे हैं, कभी खयाल करता था कि मैं अपने दरवारमें वैठा हुआ हूँ और अमीर वजीर आपसमें धीरे धीरे एक दूसरेसे कह रहे हैं कि सचमुच आलमगीर वादशाह पैगम्वर है, कभी समझता कि मैं दीवान–ए–आममें ऊँचे तख्त-ताऊस पर वैठकर लोगोंको खिताव देता और इस प्रकार अपने राज्यकी नीव दृढ करता हूँ—आदि आदि अनेक प्रकारके विचार उसके मनमें उठा करते थे।

धीरे धीरे शअवानका महीना समाप्त होने लगा। दिल्लीकी उत्सव-प्रिय प्रजाकी उत्कण्ठा भी वरावर वढने लगी। सव लोग समझने और कहने लगे कि पाँच दिन वाद रमजान शुरू हो जायगा। सव लोग इसी प्रतीक्षामें प्रसन्न हो रहे थे कि शीघ्र ही स्वच्छ आकाशमें रमजानका वाल-चन्द्र प्रकाशित होने लगेगा। पर वीचमे ही लोगोंको आकाशमें वादल छाते हुए दिखलाई पडे। एकाएक सारे नगरमें यह समाचार फैल गया कि वादशाह सलामत वहुत सख्त वीमार हो गये हैं। सव लोग कहने लगे कि अव कहाँका दरवार और कहाँका नाच

तमाशा। भावी उत्सवकी आशासे सारे नगरनिवासियोंको जो आनन्द हो रहा था उसमें बड़ा भारी विघ्न आ पडा। शाहीमहलोंकी स्त्रियाँ यह समझकर बहुत दुखी हुई कि हम लोगोंको चार दिनोंकी जो स्वतन्त्रता मिलनेको थी अब वह भी न मिलेगी। पर तो भी राजकर्मचारियोंने दरबारकी तैयारियाँ करनेमें कोई कसर नहीं की, सब काम बराबर जारी रहे।

दरबारके लिए जो दिन मुकर्रर हुआ था वह धीरे धीरे नजदीक आने लगा। रमजानके बाल-चन्द्रका भी जन्म हो गया, वह धीरे धीरे बढ़ने लगा। पर तो भी किसीको इस बातका पता न लगता था कि बादशाह सलामतकी तबीयत कैसी है, वे दिन पर दिन अच्छे हो रहे हैं या उनके दुश्मनोंका मर्ज बढता जाता है। सब लोग अपना अपना अनुमान लगाने लगे और सुनी-सुनाई या अपनी अनुमित बातोंपर वादविवाद करने लगे। साधारण प्रजा तो दूर रही, स्वय वजीरों और दरबारियोंको भी बादशाहकी तबीयतका हाल न मालूम होता था। यहाँतक कि शाही खानदानके लोगों, बेगमों, शाहजादियों और शाहजादों तकको भी कुछ पता न चलता था। तरह तरहकी अफवाहोंमें यह बात भी मिलकर फैल गई थी कि सैकड़ों सशस्त्र तातारी स्त्रियोंके पहरेमें रोशनआरा बेगम बादशाहकी सेवा-शुश्रूषामें लगी हुई हैं और नित्य ऐसे शाहीफर्मान जारी होते हैं जिनपर शाहीमोहर लगी होती है। स्वय रोशनआरा बेगमको इस बातकी बहुत बडी चिन्ता थी कि कहींसे किसीको कोई बात न मालूम हो।

दिल्लीके निवासियोंको अब इस बातकी बहुत ही चिन्ता होने लगी थी कि रमजानकी पचीसवीं तारीखको दीवान-ए-आममें शाही दरबार होगा या नहीं और उससे एक दिन पहलेसे आरम्भ होनेवाले उत्सव किए जॉयगे या नहीं। वजीर और दरबारी भी इस विषयमें कुछ नहीं कह सकते थे। पर हॉ, वे लोग दरबारकी सब तैयारियॉ अवश्य कर रहे थे। आनेवाले राजाओं, जागीरदारों और सरदारोंके ठहरने और मेहमानदारी आदिका सब प्रबन्ध शीघ्रतासे हो रहा था। ऐसी अवस्थामें प्रजा भी दुबिधामें पडी रहनेपर भी, बराबर तैया रियॉ करती जाती थी, उसके लिए और कोई उपाय ही न था।

राजा जयसिंह दिल्ली-दरबारके और विशेषत स्वयं औरगजेबके बडे विश्वस-नीय और प्रेमपात्र थे। यद्यपि औरगजेब अच्छी तरह समझता था कि हिन्दू काफिर हैं, बागी हैं, दगाबाज हैं, मुल्कका इन्तजाम और हुकूमत करनेकी लिया-

कत उनमें जरा भी नहीं है, वे लोग बिलकुल नालायक होते है, तथापि वह राजा जयसिंहको हिन्दुओंमें अपवाद-स्वरूप समझता था और उन्हें वडे वडे काम सौंपता था। पर जयसिंहको भी, इस वातका निश्चय नहीं था कि दरवार होगा या नहीं।

रमजानका तेईसवाँ चाँद भी वीत गया। चन्द्रमाके अमृतमय तुषारमें नहाई हुई दिल्ली भगवान् सहस्ररश्मिके दिए हुए सुवर्णवस्त्र पहनने लगी। उसके सारे अग आभूषणों और पुष्पमालाओंसे लद रहे थे। उसके चारों ओर हरी हरी घासके वढिया गालीचे विछ रहे थे। उन्हीं गालीचों पर पडी पडी वह स्वच्छ आकाशके दर्पणमें अपना स्वरूप देखनेमें मग्न थी। उसके सौन्दर्य पर मोहित होकर अमूर्तिक वायु भी उसकी खूव सेवा कर रही थी। वायुके साथ आनेवाली सुगन्धिका आनन्द लेती हुई और तरह तरहके मनोहर गीत गुनगुनाती हुई आनन्दसे वह अपना श्रृगार कर रही थी। राजा जयसिंहने शाहजहाँ वादशाहके समयका दिल्लीका सौन्दर्य देखा था। तो भी उन्हें दिल्लीका आजका श्रृगार अवर्णनीय जान पडता था। यमुना किनारेवाले अपने सुन्दर महलकी छत पर वैठकर वे दिल्लीका श्रृगार देख रहे थे। दिल्लीने इतनी आनन्दपूर्ण और गम्भीर वृत्ति धारण की थी पर तो भी जयसिंहके मुखपर विषाद और खिन्नता दिखलाई पडती थी। वे हिन्दू थे। उन्हें दिल्लीका मुसलमानी श्रृगार, मुसलमानी आनन्द पसन्द न आता था। वे यह सोचकर दुःखी हो रहे थे कि अपने पतिके वीमार होते हुए भी, उसके जीते या मरे होनेमें शका होने पर भी, दिल्ली तरह तरहके आभूषण पहनकर आनन्दसे वैठी हस रही है, औरगजेवके सकट-कालमें भी उसे यह उत्सव इतना पसन्द आ रहा है ! कुलटा दिल्लीका श्रृगार देखकर उन्हें आनन्द न होता था। इस लिए वे उधरसे अपनी दृष्टि हटाकर यमुनाके विमल और सुन्दर प्रवाहको देखने लगे। पर उसमें भी उन्हें, दिल्लीके ससर्गके कारण चचलता और कुटिलता जान पडने लगी। अन्तमें उन्होंने उस वडे मैदानकी ओर दृष्टि डाली जिसमें मीना वाजार लगनेको था और जो इन्द्रभुवनकी तरह सजाया गया था। उन्होंने देखा कि सारे मैदानमें हरियालीका मखमली फर्श विछा हुआ है और उसपर वने हुए रास्ते आदि वेल वूटे और चारखानेके से जान पडते हैं। रास्तेके दोनों तरफ खूव सजी सजाई दूकानें लगी हैं। जगह जगह सुगन्धित फूलोंसे सजावट हो रही है,

गुलाव और केवडेके जलके हौज भरे हुए हैं। इन्तजाम और पहरेके लिए इधर उधर घूमनेवाली सुन्दर तुर्की स्त्रियोंके सिवा उस समय वहॉ और कोई दिखाई न पडता था। जगह जगह पर वहुतसे सुन्दर चौक वने थे जिनके चारों ओर वढिया रास्ते थे। सभी रास्तों पर दूकानें लगीं थीं और दो रास्तोंके वीचके स्थानमें वढिया चमन लगे हुए थे। वीचमें गानेवालियोंके वैठनेके लिए चौकियॉ वनी हुई थीं। वहॉका मनोरम दृश्य देखकर राजा जयसिंह कुछ शान्त और सन्तुष्ट हुए। जिस समय वे वहॉंकी शोभा देखनेमें इतने मग्न थे उसी समय एक सेवकने आकर उन्हें राजा चम्पतरायके आनेका समाचार दिया। जयसिंहने वडी प्रसन्नतासे उसे चम्पतरायको वहीं लानेकी आज्ञा दी। सेवकके चले जाने पर वे स्वयं उठकर खड़े हो गये और चम्पतरायकी प्रतीक्षा करने लगे। थोडी ही देरमें राजा चम्पतराय वहॉ पहुॅच गये। दोनों वडे प्रेमसे गले मिले और कुशल मंगल आदि पूछनेके उपरान्त वैठकर वातें करने लगे। राजा जयसिंह अपने जिन पहले विचारोंमें मग्न थे, उन्हींकी चर्चा भी उन्होंने आरम्भ कर दी। जव चम्पतरायको यह मालूम हुआ कि राजा जयसिंह अभी यही शोभा निरखनेमें मग्न थे तव उन्होंने कुछ दु खी होकर कहा,—

"आपका आधेसे अधिक जन्म यही देखते देखते वीता है कि आपके देश-भाइयोंका धन वलपूर्वक कर-स्वरूप अथवा दण्डके रूपमे लिया जाता है और उसी धनसे इतना भोग-विलास और आनन्द मगल होता है; तो भी न जाने किस प्रकार आपका मन मृतकका शृगार, मृतककी शोभा देखनेमें लगता है। कौरव पाण्डवके समयसे लेकर पृथ्वीराज चौहानके समयतक धीरे धीरे इन्द्रप्रस्थनगरी वरावर दुर्वल ही होती गई और अन्तमें जयचन्द्र राठौरके हाथका जहरका प्याला पीकर तो मानो वह मर ही गई। उसी मरी हुई इन्द्रप्रस्थ नगरीका नाम दिल्ली रखकर यवन वादशाहोंने नए शिरसे उसका शृंगार आरम्भ किया। रक्तपात, हिंसा, सहधर्म्म नाश और अनीति आदिके धव्वोंसे कलकित आभूषण पहनाकर उन लोगोंने इसे विभूषित किया। पर तो भी क्या हुआ ? मृतक तो मृतक ही है।"

जय०—" आपका कहना वहुत ठीक है। पर आप जानते हैं, हम लोग सख्यामें दिन पर दिन छीजते हैं, वलमें लगातार घटते जाते हैं और मानवी गुणोंसे वरावर रहित होते जाते हैं। दासत्वकी ओर हम लोगोंकी प्रवृत्ति वढ़ती

जाती है और हम लोग स्वय अपने पैरोंमे कुल्हाडी मारते हैं । आप सरीखे दो चार नर-रत्न देशके उद्धारके लिए जो प्रयत्न करते है उसमें विघ्न बाधायें डालने और उसका विरोध करनेवालोंकी संख्या बराबर बढ रही है। ऐसी दशामें देशका कल्याण कहाँ ? खैर, यह सब बातें तो होती ही रहेंगी, कहिए आप तो कदाचित् कलके दरबारके लिए ही यहाँ पधारे होंगे ?"

चम्प०—" इधर बहुत दिनोंसे आपके दर्शन नहीं हुए थे । दरबारका निमन्त्रण भी मुझे पहले ही पहुँच चुका था । इसके अतिरिक्त प्राणनाथ प्रभुका बहुत दिनोंसे आग्रह था कि कुमार छत्रसालको दिल्लीके शाहीदरबारका सब रग ढग दिखला दिया जाय । इन सब कारणोंसे मैंने यही निश्चय किया कि चलो दिल्ली हो आऊँ ।"

जय०—" चलिए, अच्छा ही हुआ । युवराज छत्रसाल भी आपके साथ ही हैं न ?"

चम्प०—" हाँ युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय दोनों मेरे साथ हैं ।"

जय०—" युवराज दलपतिराय कौन ?"

चम्प०—" सागरके युवराज ।"

जय०—" सागरके युवराज ? शुभकरणके पुत्र ?"

चम्प०—" हां ।"

जय०—" वे आपके साथ किस प्रकार आये ? "

चम्प०—" अपने बन्धुद्रोहके कामोंमें किसी प्रकारकी बाधा न पड़े इसी लिए शुभकरणने अपने पुत्रको अपने राज्यसे निकाल दिया है । दलपतिरायकी कुमार छत्रसालके साथ मित्रता है, इसी लिए वे आजकल हमारे ही यहाँ रहते हैं और हम लोगोंके साथ ही यहाँ आये हैं ।"

इसके उपरान्त थोडी देरतक इधर उधरकी बातें होती रहीं । अन्तमें चम्पतराय और जयसिंह छतपरसे उतर कर नीचे आये । नीचे आकर जयसिंहने देखा कि उनके पुत्र रामसिंहने चम्पतराय और उनके साथ आये हुए लोगोंके आतिथ्य-सत्कार और रहने आदिका बहुत उत्तम प्रबन्ध किया है । अपने पुत्रकी कार्य्य-कुशलता देखकर जयसिंह बहुत सन्तुष्ट हुए ।

* * *

दसवाँ प्रकरण ।

रमजानका चौबीसवाँ चाँद ।

रमजानके चौवीसवें चाँदको प्रकाशसे सहायता देनेके लिए परोपकारी भगवान् अंशुमाली पश्चिम दिशामें धीरे धीरे चमकने लगे । अपने परोपकारी पतिका श्रम दूर करनेके लिए पश्चिमा सुन्दरी विश्रान्ति गृहके द्वार पर सलज्ज खडी थी । पशु पक्षी आदि अपनी अपनी भाषाओंमें अपने उपकार-कर्त्ता महराजका गुणानुवाद गाने और उनसे फिर जल्दी ही लौट आनेके लिए प्रार्थना करने लगे । अनेक पुरुषोंने अपने जीवनदाताको जाते हुए देखकर दु खसे अपने शरीर भूमिपर गिरा दिये । सूर्य-विकासी कमल शोकमें मग्न जान पडने लगे । किसी योग्य राजाके मरनेके किनारे होने पर सारी प्रजाको अपने भावी राजाको अयोग्य देखकर जो निराशा होती है वही निराशा उस समय भी चारों ओर फैली हुई दिखाई देती थी । पर दिल्लीका उस समयका ठाठ कुछ निराला ही था । तरह तरहके लोगोंसे भरा हुआ चाँदनी चौक, वहाँके उत्सवप्रिय लोगोंकी उत्सवसम्वन्धी योजना और अनेक जातियोंके, अनेक वेषोंके और अनेक भाषा-भाषी लोगोंको देखकर यही ज्ञान होता था कि हम इस ससारका साधारण नगर नहीं वल्कि परमेश्वरकी अनन्त रचना-शक्तिका एक बहुत बडा उदाहरण देख रहे हैं । भगवान् अंशुमालीका वियोग-काल समीप जानकर सारा वनस्पति-कुल, समस्त पशुपक्षी-वर्ग और मनुष्य-जातिका एक बहुत बडा भाग मानो निराशाके समुद्रमें गोते खा रहा था । इतना होने पर भी अकेली दिल्लीको उत्सव, आनन्द और सुखमें मग्न देखकर यदि उसे इस विश्वसे बाहरका नगर मान लिया जाय तो इसमें आश्चर्य या हानि ही क्या है ? वहाँके आनन्दपूर्ण उत्तेजित स्वर, हँसी-दिल्लगी और ठहाके आदि सुनकर मानो यही जान पड़ता था कि लोग अस्त होनेवाले सूर्य्यसे कह रहे थे कि तुम्हारा वियोग हम लोगोंके लिए सुखदायक ही होगा ।

पर, तुम कौन हो ? यह तुम क्या कर रही हो ? जरा अपने चारों ओर देखो तो सही । इस मेलेमें इतनी स्त्रियाँ एकत्र हैं, पर इनमेंसे एक स्त्री भी तो तुम्हारे

समान निराश और दु खी नहीं जान पड़ती । वे कैसे आनन्द और सुखमें हँस बोल रही हैं । पर वे तुम्हें दिखलाई ही क्यों पडने लगीं ? तुम्हारी ऑखें तो ऑसुओंसे भरी हुई हैं । सूर्यके भावी वियोगके कारण तो तुम्हें दु ख नहीं हो रहा है ? पर तुम तो दिल्लीमें हो । उस विश्वसे वाहर हो जिसमें लोग सूर्यके वियोगसे दु खी होते हैं । तव फिर तुम्हें दु ख किस वातका है ? अरे, यह तो वेचारी फूट फूट कर रोने लगी । इसके रग ढग और कपडों आदिसे तो मालूम होता है कि यह शाही महलकी रहनेवाली और वहुत प्रतिष्ठित है । शाही महलोंसे भी आज क्या अद्भुत स्वरूप निकले हैं । वादशाहने अपने महलकी वेगमों आदिको चार दिनों तक विना रोक टोक वाहर निकल कर मीना वाजारमें जानेकी आज्ञा दे दी है । ऐसी दशामें स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करना छोडकर तुम यह क्या करने लगीं ? स्वतन्त्रताके इन चार दिनोंके वीत जाने पर तुम्हें फिर उसी शाही महलकी दीवारोंके अन्दर शोक और दु खमे अपना जन्म विताना पड़ेगा । जरा चौककी तरफ चलो । वहाँ वडे वडे सरदारों और अमीरोंकी लडकियाँ वडे ठाठवाटसे अपनी अपनी दूकानें लगाकर वैठी हुई हैं । तुम्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि उनका सौन्दर्य्य जितना अधिक है, उनकी दूकानकी चीजोंका दाम भी उतना ही वडा चढा है । देखो, वातकी वातमें उस सुन्दरीने चीनीका बना हुआ नकली हीरा उस युवक अमीरजादेके हाथ सवा लाख रुपयेको वेच डाला । यह सवा लाख रुपये उस नकली हीरेका दाम नहीं हैं वल्कि उस सुन्दरीके प्रेमका मूल्य है । पर तुम तो उस ओर ध्यान ही नहीं देतीं । अगर वह चौक तुम्हें अच्छा न जान पड़ता हो तो तुम उस वगलवाले दूसरे चौकमें चलो । वहाँ जरूर तुम्हारा मन वहल जायगा । उधर स्त्रियों और पुरुषोंके झुण्डके झुण्ड जा रहे हैं । वहॉकी शोभा अवर्णनीय है । वहाँ शाही खानदानकी वहुतसी युवतियॉ अपनी छटा दिखला रही हैं । वह सौन्दर्य्यशालिनी राजकुमारी वदरुन्निसा आज राजपूत-रमणीका वेप धारण करके वैठी है । उसके सौन्दर्यके सामने आसपासकी अनगिनत युवतियोंका सौन्दर्य फीका पड रहा है । क्या ऐसी स्वर्गीया सुन्दरीका दर्शन भी तुम्हारे लिए सुखदायक नहीं होता ? तुम्हारी निराशा तो और भी वढती जा रही है । तुम इधर कहाँ चलीं ? इतनी चहल पहल और इतनी रौनककी जगह छोडकर तुम यमुना-किनारेकी तरफ क्यों चलीं ? मनुष्योंसे तुम इतनी उदासीन क्यों हो गई ? यमुनाका निर्जन तीर तो

सुखाभासके पीछे पडे हुए योगियों और तपस्वियो अथवा लुक-छिप कर आनन्द लेनेवाली प्रणयी युगुल-जोडियोंके लिए है। तुम्हारा तो इन सवसे कोई मतलव नहीं जान पड़ता। तुम्हारे हृदयसे प्रणयकी इच्छा तो वहुत दिनों पहले निकल चुकी है और तुम्हारे मनमें विरक्तिकी लहरें उत्पन्न होनेमें अभी वहुत समय बाकी है। तव फिर तुम यमुनाके निर्जन तीरकी ओर क्यों जा रही हो?

वह कहाँ और क्यों जा रही है, यह वात वह स्वयं भी नहीं जानती थी। वह सोचने लगी,—रातके दु खदायी स्वप्नसे जवसे परोपकारी सहस्ररश्मिने अपने कोमल हाथोंसे मेरा छुटकारा कराया तवसे मैं वरावर सारे दिल्ली नगर और उसके आसपासके मैदानों और खण्डहरोंमें घूम रही हूँ, तव भी मुझे अपने कार्य्यके सिद्ध होनेका जरा भी लक्षण दिखाई नहीं देता। आजकी आशाका अन्तिम सूर्य्य भी अस्त हो चला। अव मुझे फिर सदाके लिए दु ख, चिन्ता, सकट और पराधीनताके घनघोर अन्धकारमें पड़ना पड़ेगा। इन विचारोंसे उसका मन मानो विदीर्ण हो गया। वह वार वार अस्त होनेवाले सूर्य्यकी ओर देखती थी और अधिकाधिक शोकाकुल होकर व्यथित हृदयसे आगे पैर रखती थी। कदम कदम पर उसे यही मालूम होता था कि मेरे आगेकी जमीन मेरे आँसुओंसे भीगी हुई है।

सूर्य्यके भावी वियोगसे व्याकुल वह प्रौढा धीरे धीरे चलती हुई यमुना-किनारे पहुँची और पत्थरकी एक चट्टान पर बैठ गई। वह समझती थी कि मेरी तरह सारा ससार दु ख-सागरमें डूवा हुआ है। उसकी कल्पनाने जो चित्र उसकी आँखोंके सामने खींचा था उसमें उसने देखा,—यमुना अपनी निसर्ग-सिद्ध चंचलता छोड़कर गम्भीर हो गई है पशु पक्षी दु खपूर्ण स्वरसे रो रहे हैं, वायु गहरी साँस ले रही है और अखिल वनस्पतिकुल दु खी होकर अपने जीवनदाताकी ओर देख रहा है। उसने समझा कि सृष्टिके आरम्भसे, मानव-जातिकी वाल्यावस्थासे, मानव-जातिकी उन्नतिके लिए सूर्य्य भगवान्ने निरन्तर प्रयत्न किया है, सव प्राणियोंसे वढकर अलभ्य ज्ञान मनुष्यको दिया है। तो भी लोगोंमें दिनपर दिन द्रोह, नीचता, दुष्टता, और विश्वासघात आदिको वढते देखकर भगवान् अंशुमाली वहुत ही सन्तप्त हुए हैं और पश्चिमी समुद्रमें कूद पड़नेके लिए तैयार हैं।

उस शोकमग्न स्त्रीने क्षितिज पर स्थिर सूर्य्यको देखकर आप ही आप कहा,— "वेचारे सूर्य्यकी अब बहुत ही थोडी आयु वच गई है। दो एक क्षणमें ही अब वह अस्त हो जायगा। और तब? चारों तरफ अन्धेरा ही अन्धेरा हो जायगा।" कुछ ठहर कर उसने फिर आपही आप कहा, "अंशुमाली! तुम्हारी और प्राणनाथकी दशा विलकुल एक ही सी है। दोनों ही अपने वैभव-कालमें सम्पूर्ण तेजसे प्रकाशित होते थे। उस समय किसीमें इतनी शक्ति नहीं थी कि तुम लोगोंके तेजपूर्ण मुखकी ओर देखे। पर अब दोनोंका ही तेज नष्ट हो चला है। इसी लिए जो छोटे छोटे तारे अब तक आकाशमें छिपे हुए थे वे भी तुम्हारी ओर मत्सरपूर्ण दृष्टिसे देखकर हँस रहे हैं। अन्धकारसे प्रीति गाँठनेकी इच्छा रखनेवाली पश्चिमा, तुममें नये तेजका संस्कार होनेसे पहले, स्वर्लोकसे तुम्हें वाहर निकाल देनेके लिए कितना प्रयत्न कर रही है! पश्चिमा! सचमुच तू रोशनआराकी तरह दुष्ट और धोखेवाज है। रोशनआराकी तरह तुझमें भी हृदय नहीं है। रोशनआराकी तरह तुझे भी अपने आरामके सिवा और कुछ दिखलाई नहीं देता। अधिकार-लालसा और विषय-पिपासाकी आगने रोशन-आराकी कोमल-मनोवृत्तियोंकी तरह तेरी कोमल मनोवृत्तियोंको भी जलाकर राख कर दिया है। प्रत्यक्ष अंशुमालीके नाशका प्रयत्न, अंशुमालीके साथ विश्वास-घात, यह तेरा कितना अघोर साहस है! और तब भी तू मुस्कराती हुई वह साहस कर रही है! पर तेरी यह मुस्कराहट, तेरी यह हँसी—लज्जा और विन-यसे मिली हुई हँसी—रोशनआराके चेहरेपर कभी दिखलाई नहीं देती। तव क्या तू रोशनआरा नहीं है? क्या तू अपने भाई वादशाहको मार डालनेके लिए विष देनेवाली रोशनआरा नहीं है? और यह सूर्य वादशाहकी तरह मरनेके किनारे नहीं है? नहीं, यह सूर्य पश्चिम समुद्रमें कूदना नहीं चाहता। दिन भर परिश्रम करनेके कारण यह थक गया है और अब अपनी प्रिय, सहधर्मिणी पश्चिमा सुन्दरीके साथ अपने अन्तःपुरमें प्रवेश कर रहा है। रात भर विश्राम करनेके उपरान्त सवेरे यह फिर नई आशासे, नये तेजसे, पूर्व क्षितिजपर चम-कने लगेगा। पर प्राणनाथ! मुझ अभागिनीके भाग्यमें तुम्हारी किस अवस्थाको देखना वदा है? यह सूर्य्य, आकाश-गंगामें सचार करनेवाला यह सूर्य्य, कल फिर नये तेजसे चमकने लगेगा, पर वह सूर्य्य, रोशनआराके चंगुलमें फँसा हुआ दिल्लीका सूर्य्य कल इस संसारमें... .. ।"

"दयामय प्रभो! आजतक मैंने तुमसे जितनी प्रार्थनायें की हैं, क्या उन सबका यही फल होगा? भगवती विन्ध्यवासिनी, मैं अनन्य भावसे तुम्हारी शरणमें आई हूँ, तो भी तुम्हे मुझपर दया नहीं आती। मैं अवतक यवनके घरमें रहकर भी जीती रही! भगवती इस अनाथ अभागिनीके पातकोंकी राशि क्या तुम्हारी दयाको अलध्य जान पडती है? शुद्ध प्रेम और पवित्र कर्त्तव्यका ध्यान रखकर ही मुझे यवनी वनना पड़ा था, पर क्या केवल इसी लिए मैं तुम्हारे अतर्क्य प्रेम और दयासे वन्चित हो जाऊँगी? नहीं! नहीं! भगवती! इस अनाथ अवलाका परित्याग न करो।"

विन्ध्यवासिनीसे इस प्रकार करुण-स्वरमें प्रार्थना करते समय उसकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा वरावर निकल रही थी। इस लिए वहुत देरतक उसका ध्यान उस मनुष्यकी ओर नहीं गया जिसे विन्ध्यवासिनीने कृपाकर उसकी सहायताके वास्ते भेजा था। वह फिर पहलेहीकी तरह अपने आपसे कहने लगी,—

" विन्ध्यवासिनी देवी! मैं आजतक यही समझती थी कि तुम्हारे हाथोंके आयुध जितने भीषण और क्रूरता-दर्शक हैं तुम्हारा अन्त.करण उतना ही सरल और दयापूर्ण होगा। पर अव मुझे विश्वास हो गया कि तुम्हारा मन उन अस्त्रोंसे जरा भी कम उग्र और क्रूर नहीं है। तुम्हारी एक वालिका अपने परिवारके लोगोंसे अलग होकर, अपनी जाति और धर्मसे भ्रष्ट होकर, परायों और विधर्मियोंके हाथमें पड गई है, और इस समय वह तुमसे इतनी विनीत होकर प्रार्थना कर रही है। लेकिन तो भी तुम्हारा हृदय नहीं पसीजता। जान पडता है कि तुममें करुणा और दया वहुत ही थोडी है। तुम कैसी पतित-पावनी हो?"

" शान्त हो! शान्त हो! व्यर्थ भगवती विंध्यवासिनीको दोष मत दो। अपने दोषोंका फल भोगते समय देवी देवताओं पर दोषारोपण मत करो।"

ये अपरिचित शब्द सुनते ही वह स्त्री कुछ सजग हुई। उसने बड़ी कठिनतासे अपनी आँखोंके आँसू पोंछकर सामने देखा। एक युवक शान्त और गम्भीर होकर खड़ा हुआ उसकी ओर देख रहा था।

स्त्रीने पूछा,—" तुम मुझे क्या समझते हो?"

यु०—" यही कि तुम अनीति मार्गपर चलनेवाली हो।"

स्त्री—" नहीं, कभी नहीं। तुम मुझे अनीति पथपर चलनेवाली वतलाकर मेराही अपमान नहीं कर रहे हो वल्कि सत्य, न्याय और धर्म्मका अपमान करते

हो। शायद तुम यह समझते होगे कि विषय-वासनामें पडकर मैं अपनी जाति और अपने धर्म्मसे भ्रष्ट हुई हूँ, पर तुम्हारा यह समझना भूल है। तुम मुझे अनीतिके जालमें जैसी फँसी हुई समझते हो, मैं वैसी नहीं हूँ।''

यु०—" तब फिर तुम्हारा ऐसा वेष क्यों है ? तुम तो जातिकी हिन्दू जान पडती हो। नहीं तो तुम विंध्यवासिनी देवीसे सहायताकी प्रार्थना न करतीं।"

स्त्री—" यद्यपि मैं शरीरसे यवनी हो गई हूँ तथापि मनसे अभी तक हिन्दू ही हूँ। अपने हिन्दू भाइयोंके कल्याणकी इच्छा करने, हिन्दू धर्म्म पर आस्था रखने और हिन्दू देवताओंकी भक्ति करनेमें क्या हानि है ?"

यु०—"तुम मनसे तो हिन्दू और शरीरसे यवनी हो। ऐसी विषम दशामें नीतिकी रक्षा कैसे हो सकती है ? शरीरसे यवनी बनना, दूसरेकी विषय-वासनाके लिए अपना शरीर अर्पण कर देना, मानो नीति और धर्म्मके बन्धनोंको तड़ातड तोड देना है।''

स्त्री—" ऐसी दशामें जब कि अपनी अयोग्यता और अकर्मण्यता आदिके कारण अथवा अधिकार, पद और उपाधि आदि पानेकी लालसासे लोग अपनी बहनों और बेटियोंको अपनी इच्छासे, अथवा विवश होकर ही सही, शाहीमहलोंमें भेज देते है, तब फिर उनपर इस प्रकार क्रोध क्यों करते है ? उन्हें इतनी घृणाकी दृष्टिसे क्यों देखते हैं ? साहस करके इस अन्यायको दूर करनेका प्रयत्न छोड़कर मुझ अनाथ और अपरिचित स्त्रीपर शब्दोंकी वृथा वर्षा करनेमें ही तुम अपनी बहादुरी क्यो समझते हो ? जिन्हें नीतिका इतना घमण्ड हो उन्हे पहले यह देख लेना चाहिए कि स्वय हममे कितनी नीति है और तब दूसरोंकी नीति परखनी चाहिए।"

यु०—(गरम होकर) " यवनसत्ताका तेज देखकर जो मनुष्य गीदड़ोंकी तरह छिप जाता हो वही नामर्द शान्त होकर तुम्हारी ऐसी बातें सुन सकता है। पर अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए समरभूमिमे अपना लहू बहानेवाला बुन्देला नीतिकी इस प्रकार हत्या होते हुए नहीं देख सकता। आँखें खोलकर जरा अच्छी तरह देखो। महेवाका कुमार छत्रसाल तुम्हारे सामने खडा है। तब तुम्हें मालूम होगा कि मुझे दूसरोंकी अनीति परखनेका अधिकार है या नहीं ?"

अन्न जलके अभावके कारण मरते हुए दुष्कालग्रस्तके सामने अच्छे अच्छे पकवानोंसे भरी हुई थालियाँ रखनेपर उसे जितना आनन्द होता है, अथवा

बिलकुल मुरझाई हुई लतापर पानी पडनेसे वह जिस प्रकार हरी होने लगती है, ठीक उसी तरह उस स्त्रीका मलिन मुख भी छत्रसालकी बातें सुनकर प्रफुल्लित हो गया। अब तक उसका जो अपमान हुआ था उसे एकदम भूलकर वह स्त्री एकाग्र दृष्टिसे छत्रसालकी ओर देखती हुई बोली,—"कुमार, तुम चम्पतरायके पुत्र हो न ? महेवाके कुमार हो न ?"

क्षणभरमें ही उस स्त्रीमें इतना विलक्षण फेरफार देखकर छत्रसालको बडा ही आश्चर्य हुआ, उन्होंने सिर हिलाकर कहा,—" हाँ ।"

स्त्री—" तब तो अवश्य ही मेरी प्रार्थना दिल्लीकी सीमाको पार करके भगवती विन्ध्यवासिनीके कानोतक पहुँच गई। मातेश्वरी विन्ध्यवासिनी ! इस अभागिनीने उद्वेग और आवेशके कारण तुम्हारी अवहेलना की है, इसके लिए इसे क्षमा करना। तुम पतितोंकी पावन करनेवाली हो, तुम्हारी दयाका अपात्र कोई नहीं है। इस बालिकाकी प्रार्थना पर ध्यान देकर तुमने ससारको अपनी अनन्त दयाका परिचय दिया है। भगवती ! मैं समझती हूँ कि इस विकट समयमे तुमने युवराज छत्रसालको स्वय अपना प्रतिनिधि बनाकर मेरी सहायताके लिए यहाँ भेजा है। कुमार, अपना दाहिना हाथ आगे बढाओ। मैं उसमें यह राखी बाँधूगी। मैंने सुना था कि कलवाले दरबारमें चम्पतरायजी आनेवाले हैं। उसी समय मैंने समझ लिया था इस विपत्तिके समय केवल वेही मेरी सहायता कर सकेंगे। आज प्रात कालसे मैं बराबर उन्हींको ढूँढने और उन्हें यह राखी बॉधनेके लिए इधर उधर मारी मारी फिर रही हूँ। अन्तमें निराश होकर मैं यहाँ आई। पर यहाँ भाग्यवश तुमसे भेंट हो गई। अब मुझे चम्पतरायजीको ढूंढनेकी आवश्यकता नहीं है। अब मुझे विश्वास हो गया है कि तुम मेरे सहायक बनकर इस आपत्तिसे मेरी रक्षा करोगे। इस राखीको स्वीकार करके तुम मेरे रक्षक भाई बनो।"

इतना कहकर वह स्त्री युवराज छत्रसालके हाथमें राखी बॉधनेके लिए आगे बढी। पर युवराज छत्रसाल बिना अपना हाथ बढाये उत्तरोत्तर प्रसन्न होते जानेवाले उसके मुखकी ओर देखते हुए चुपचाप खडे रहे। इस पर वह स्त्री कुछ दु खी होकर बोली,—

" छत्रसाल ! क्या तुम्हें मेरे भाई बननेमे कुछ अपमान या सकोच जान पडता है ? मैं यवनी होकर यवनके महलोंमें रहने लगी, क्या इतनेसे ही तुमने

समझ लिया कि मैं नीतिपथसे हट गई ? तुम यह ध्यान छोड दो और मुझे अनाथ और असहाय समझ कर मेरी सहायताके लिए तैयार हो जाओ। यदि तुम यह राखी न बँधवाओगे, बन्धुत्वके इस चिह्नकी अवज्ञा करोगे और केवल एक कल्पित कारणसे मेरे सहायक न बनोगे तो आर्य्य स्त्रियाँ तुम्हें दया-रहित समझ कर तुम्हारा मुँह देखनेमें भी असगल समझेंगी। जब यह राखी तुम्हारे हाथमें बँधेगी तब तुम्हारे मनमें सच्चे बन्धुत्वका सचार होगा और जिस स्त्रीको तुम अब तक नीतिभ्रष्ट समझते रहे हो उसीको तुम अपनी बहन समझने लगोगे।"

छत्रसालने गम्भीर होकर अपना हाथ आगे किया। स्त्रीने पहले उनके वीर-श्री-युक्त मुखकमलकी ओर, फिर उनकी आगे बढ़ी हुई बलिष्ठ कलाईकी ओर और अन्तमें अपने हाथकी राखीकी ओर समाधानपूर्वक देखा। ज्यों ही वह उनके हाथमें राखी बॉधना चाहती थी त्यों ही उसे उनके हाथमें कुछ दिखलाई दिया। वह मारे आनन्दके राखी बाँधना भूल गई। छत्रसाल और भी चकित होकर कुछ कहना ही चाहते थे कि इतनेमें बहुत प्रसन्न हो कर वह स्वय ही बोल उठी,—

"बहुत ठीक, अब मेरा काम अवश्य ही पूरा हो जायगा! देवी विन्ध्य-वासिनी! तुम्हारी इस अनन्त कृपाके लिए मैं अगले वर्ष तुम्हारे वार्षिकमहोत्स-वके समय हीरों और मोतियोंका थाल चढाऊँगी। पर युवराज! तुम्हारा ऋण मैं किस प्रकार चुकाऊँगी ?"

छत्र०—(आश्चर्यसे) "मेरा कैसा ऋण ? मैंने तुम्हारा कौनसा उपकार किया है ?"

स्त्री—"तुमने अभी तो मुझ पर कोई उपकार नहीं किया है, पर शीघ्र ही मुझपर उपकार करनेका तुम्हें अवसर मिलेगा।"

थोडी देरतक बडे ही ध्यानसे छत्रसालके हाथकी कटारकी ओर देखते हुए उसने पूछा,—"यह कटार तुम्हें कहाँसे मिली ?"

छत्र०—"यह कटार मैंने ढॉडेरके राजा कचुकीरायके हाथसे छीन ली थी।"

स्त्री—"इसके दस्तेपर जो तस्वीर बनी हुई है, कभी उसपर भी तुम्हारा ध्यान गया था ?"

छत्र०—" हॉ, यह तस्वीर मैंने कई वार देखी है। कंचुकीराय वहुत दिनों-तक दिल्लीके शाहीमहलोंमें रहे थे। मैं समझता हूँ कि वहीं कभी किसी शाह-जादीने उन्हें यह कटार इनाममें दी होगी।"

स्त्री—" कुमार! इस कटारने अपनी मालकिनके हाथमें रहकर अनेक अमानुषी कृत्य किये हैं। पर जान पड़ता है कि तुम्हारे पुण्यशील हाथोंमें पहुँचकर यह अपनी सारी क्रूरता भूल गई है। न्याय और अन्यायका जरा भी विचार न करके चुपचाप रक्तपात करना ही इसका काम है। तथापि तुम्हारे हाथमें रहकर कल यह अपनी दयाका एक वहुत ही उज्ज्वल प्रमाण देगी।"

छत्रसालने और भी चकित होकर कहा,—"मैं तुम्हारी वातोंका मतलब नहीं समझा। तुम्हारा क्या अभिप्राय है?"

स्त्री—पहले मुझे अपने हाथमें यह राखी वॉधकर वन्धुप्रेमका वन्धन दृढ कर लेने दो तब मैं तुम्हें सव वातें समझा दूँगी।"

इतना कहकर पहले तो उसने वड़े प्रेमसे छत्रसालके हाथमें राखी वॉधी और तव सन्तुष्ट होकर कहा,—" छत्रसाल! आजसे तुम मेरे भाई हुए। अव मुझे सब तरहकी आपत्तियोंसे वचाना तुम्हारा काम है। मेरी रक्षा करना अव तुम्हारा परम कर्त्तव्य हो गया। मातापिताके रक्तसे वने हुए भाई वहनके नातेसे भी वढकर वन्धुत्वका यह वन्धन है, इस लिए मेरे प्रति तुम्हारे कर्त्तव्य वहुत अधिक हैं।"

छत्रसालने गम्भीर होकर कहा,—" यह सब मैं अच्छी तरह समझता हूँ। तुम्हारी रक्षाके लिए अपने प्राणोंकी भी परवा न करना अव मेरा कर्त्तव्य हो गया है। मेरे पिता अपनी वातके कितने पक्के हैं, यह तुम अच्छी तरह जानती होगी। मैं उनका पुत्र हूँ। सच्चे बुंदेले वीरके लिए उसकी वातोंका मूल्य प्राणोंसे भी अधिक होता है। अव तुम मुझे अपना काम बतलाओ। तुमपर जो आपत्ति आई हो उसका पूरा विवरण मुझे सुनाओ। इसके वाद तुम्हें मालूम होगा कि मानवी धैर्य्य, मानवी शौर्य्य और मानवी कर्त्तव्यकी चरम सीमा किसे कहते हैं।"

छत्रसालकी करारी वातें सुनकर वह स्त्री और भी उत्तेजित हो उठी और अधिक गम्भीर जान पडने लगी। यद्यपि उसके चेहरे परसे प्रसन्नताकी छटा तनिक भी कम नहीं हुई थी तो भी उसके मनके गम्भीर विचारोंका प्रतिविंब उसके चेहरेपर बिना पड़े न रहा। कुछ देर ठहरकर वह वोली,—

"छत्रसाल! तुम जानते हो कि दिल्लीके शाहशाह इस समय कैसे घोर संकटमें पड़े हुए हैं?"

छत्र०—"हाँ, मैं यह जानता हूँ कि वे बहुत ही बीमार हैं, और अभी यह भी निश्चय नहीं है कि कल वे दरबारमें आवेंगे या नहीं?"

स्त्री—"उनकी बीमारीका हाल सुनकर बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताके लिए लड़नेवाले तुम लोग तो बहुत प्रसन्न हुए होगे न? शत्रुको आपही-आप नष्ट होते देखकर तुम लोग आनन्द मनाओगे न?"

छत्रसालने कुछ तो चकित होकर और कुछ आवेशमें आकर कहा,—"आनन्द! हमारा शत्रु रोगी होकर मरे और हम लोग आनन्द मनावें? शत्रुके मरने पर हम लोगोंको आनन्द अवश्य होता है। पर वह कब? जब हम अपने पराक्रमसे लड़कर समर-भूमिमें स्वयं उसके प्राण लें, तब! जब रोग, दुर्घटना अथवा अन्य किसी कारणसे शत्रु मरता है तब तो हम लोगोंको उतना ही दुःख होता है जितना अपने किसी सम्बन्धीके मरनेका।"

स्त्री—"बहुत ठीक। पर यह तो बतलाओ कि यदि कल ही बादशाह नीरोग होकर उठ बैठें और बुन्देलखण्डकी बची खुची स्वतन्त्रता भी नष्ट कर देनेके लिए तैयार हो जाँय, तब?"

छत्र०—"तब क्या? तब तो हमें और भी अधिक आनन्द होगा। जब स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका अवसर इतना निकट आ जायगा तब तो हम लोग और भी प्रसन्न होंगे और रण-भूमिमें उनसे दो दो हाथ लड़कर स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेंगे।"

स्त्री—"छत्रसाल! तुम्हारे ऐसे उदार और दृढ़ वचन सुनकर मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई। मुझे आपत्तिसे बचानेके लिए देवी विन्ध्यवासिनीने अपना बहुत ही योग्य प्रतिनिधि भेजा है। सुनो, मैं तुम्हें बतलाती हूँ कि तुम्हें क्या करना होगा। दिल्लीके जो शाहशाह हिन्दू धर्म्मका नाश करना और इस्लाम धर्म्मका प्रचार करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं, हिन्दुओं और हिन्दुस्थानकी स्वतन्त्रताके जो परम शत्रु हैं, तुम्हारे उद्देश्योंकी सिद्धिके मार्गमें जो सबसे बड़े कंटक हैं, अपनी विपत्तियोंको बढ़ाने और अपना मार्ग कंटकाकीर्ण करनेके लिए तुम्हें उन्हींके प्राणोंकी रक्षा करनी होगी, उन्हें मृत्युसे बचाना होगा।"

छत्रसालने चकित होकर कहा,—"बादशाह तो बहुत बीमार हैं, मैं उनकी रक्षा किस प्रकार कर सकता हूँ? मैं कोई वैद्य या हकीम नहीं हूँ। मुझसे किसी रोगीका क्या उपकार हो सकेगा? इसके लिए तो किसी अच्छे हकीमकी जरूरत है।"

स्त्री—"नहीं, यह बात नहीं है। बादशाहको वैद्य या हकीम, बल्कि प्रत्यक्ष धन्वन्तरी भी नहीं बचा सकते। यह बात बिलकुल ही झूठ है कि अब तक वे बीमार हैं। अपना दुष्ट उद्देश्य सिद्ध करने, अपना निन्दनीय काम पूरा करनेके लिए चारों तरफ यह झूठी खबर फैलाई जाती है कि बादशाह बीमार हैं। वे जबरदस्ती, दवायें आदि देकर केवल बेहोश कर दिये गये हैं। पर उनकी वह बेहोशी बहुत ही थोड़ी देरमें दूर की जा सकती है।"

छत्र०—"तब मुझे उसमें क्या करना होगा?"

स्त्री—"कल सूर्य्योदयके दो घड़ी बाद शाहंशाहको विष दिया जायगा। सब तैयारियाँ हो चुकी हैं और यह इन्तजाम किया गया है कि भरे दरबारमें बादशाहकी मृत्युका समाचार सुनाया जाय। यदि विष पिलानेसे उनके प्राण न निकलेंगे तो उनका सिर काट लिया जायगा। उन्हें इस संकटसे बचाना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है।"

छत्र०—"हे ईश्वर! नीचता, क्रूरता और अनीतिकी हद हो गई। यदि जहरसे दिल्लीपतिके प्राण न निकले तो उनका सिर काट लिया जायगा! जिसने ये सब प्रपञ्च रचे हैं उसके सारे अंग पत्थरके ही होंगे। ऐसे पैशाचिक कार्य्योंको रोकनेके लिए इस राखीकी क्या आवश्यकता थी? जिसके मनमें नाम मात्रको भी दया होगी वह इस बातको सुनते ही अपने प्राणोंकी परवा न करके बादशाहकी सहायताके लिए दौड पडेगा। आलमगीर बादशाह केवल बुंदेलखण्डका शत्रु नहीं है। वह हिन्दू मात्रका शत्रु है। तो भी उसे ऐसे विश्वासघात और षड्यंत्रसे बचानेके लिए हिन्दुस्थानका प्रत्येक मनुष्य तैयार होगा। राष्ट्रके हित और अहितकी दृष्टिसे वह अवश्य ही हमारा शत्रु है। लेकिन उससे अपना बैर निकालनेके लिए समरक्षेत्र खुला पड़ा है। एक साधारण मनुष्यके नातेसे औरंगजेब हमारा विश्वबन्धु है। ऐसे संकटके समय उसकी सहायता करना प्रत्येक मनुष्यका कर्त्तव्य है। मुझे उस नीच, पापी और अधमका नाम बतलाओ जिसने यह षड्यत्र रचा है। कल सूर्य्योदयसे पहले ही मैं उसे उसके दुष्कर्म्मोंका फल चखा

दूँगा। बादशाहको जहर देनेवाला अथवा उससे काम न निकलने पर उसकी गरदन काटनेवाला कौन है ?"

स्त्री—" कुमार! वह एक बहुत ही कोमलांगी स्त्री है।"

छत्र०—(बहुत आश्चर्यसे) " हैं! एक स्त्री औरंगजेबकी हत्या करना चाहती है ? ऐसी पिशाचिनी स्त्री कौन है ?"

स्त्री—" वही जिसकी तसवीर तुम्हारी कटारके दस्ते पर बनी हुई है।"

अनेक बार देखी हुई उस तसवीरको फिर एक बार ध्यानपूर्वक देखकर छत्र-सालने कहा,—" यह तो एक रूपवती यवनी युवती है।"

स्त्री—" हाँ, यही रूपवती स्त्री बादशाहके प्राण लेने पर उतारू हुई है।"

छत्र०—" आखिर यह युवती है कौन ?"

स्त्री—" शाहजहाँन बादशाहकी प्यारी कन्या रोशनआरा बेगम! मुमताजके पेटसे जनमी हुई औरंगजेबकी सगी बहन!"

छत्र०—" और वह अपने भाईको ही जाहर देना चाहती है!"

स्त्री—" केवल जहर ही देना नहीं चाहती, बल्कि यदि उससे काम न निकले तो उनका सिर तक कटवा लेना चाहती है।"

छत्र०—" बहनका भाईके साथ यह व्यवहार! हे ईश्वर! ऐसे नीच और पातकियोंको तू घोर नरकमें क्यों नहीं भेज देता ? इस संसारमें उन्हें क्यों रहने देता है ? भला यह तो बतलाओ कि रोशनआरा बेगम अपने भाईका वध क्यों करना चाहती है ?"

स्त्री—" शाहजहानखाँ नामक एक सरदारकी कन्याका बादशाहसे विवाह हुआ है, उसके साथ रोशनआराका बहुत मेल है। उसका छह बरसका एक लड़का है। रोशनआरा अपने भाईके प्राण लेकर दिल्लीके सिंहासन पर उसी लड़-केको बैठाना चाहती है। उस समय रोशनआराको शासन-सुख भोगने और मनमाना आनन्द करनेका अवसर मिलेगा। अपने भाईकी हत्या करनेमें बेगमका नीच हेतु यही है।"

छत्र०—" और शाहजादा मुअज्जमका वह क्या प्रबन्ध करेगी ?"

स्त्री—" वह अच्छी तरह समझती है कि जब कभी आवश्यकता होगी तब तलवारके एक हाथसे उसका भी अन्त करके अपना मार्ग निष्कंटक कर लूँगी। मैंने जो काम तुम्हारे सपुर्द किया है उसमें शाहजादा मुअज्जमसे बहुत सहा-

यता मिलेगी। पर सबसे बडी बात तो यह है कि जब तक यह कटार तुम्हारे पास है तब तक तुम्हें किसी प्रकारकी सहायताकी आवश्यकता ही नहीं है। इसकी सहायतासे तुम सैकडों तातारी स्त्रियोंके पहरेमेंसे होते हुए बेखटके बादशाह सलामतके कमरेके भीतर तक पहुँच जाओगे। शाहीमहलमें यह कटार तुम्हारी प्रत्येक इच्छा और आवश्यकताकी पूर्ति कर देगी। तात्पर्य्य यह कि जब तक यह कटार तुम्हारे पास रहेगी तब तक महलकी सारी तातारी स्त्रियाँ तुम्हारी सब आज्ञाओंका पालन करेंगी और तुम्हारे किसी कार्य्यमें बाधक न होंगी। इस समय पहले तुम मेरे साथ शाहीमहल तक चलो। वहाँ चलकर कलके लिए कर्त्तव्य निश्चित होंगे। अब मेरा मन गवाही देने लगा है कि बादशाह सलामत दुष्टा रोशनआराके चगुलसे बच जायँगे। कलके दरबारकी शोभा वे अवश्य बढावेंगे। अब रोशनआराकी कोई कार्रवाई न चलेगी। चलो, जब तक वह कृत्या मेलेमें घूमती है तब तक हम लोग महलमें पहुँचकर अपना इन्तजाम कर लें। नहीं तो फिर हम लोगोंका एक भी उपाय न चलेगा और सबेरे शाहंशाह आलमके दुश्मनोंके प्राण . ।"

इसके आगे वह स्त्री और कुछ न कह सकी और जल्दी जल्दी एक ओर बढने लगी। छत्रसाल भी उसके पीछे हो लिये। थोडी दूर चलनेके उपरान्त उन्होंने कहा,—

"पर मुझे अभी तक यह तो मालूम ही नहीं हुआ कि तुम कौन हो। बादशाहके प्राणोंकी रक्षाके लिए तुम्हारे इतने प्रयत्न करनेका क्या कारण है ?"

छत्रसालके गम्भीर मुखकी ओर देखते हुए उसने कहा,—"इसका कारण यही है कि मेरे वे सर्वस्व हैं और मैं उनके चरणोंकी दासी हूँ। उन्हें मैं अपने प्राणोंसे भी बढकर समझती हूँ।"

छत्र०—"तुम्हारा नाम क्या है, तुम किसकी कन्या हो और शाहीमहलमें किस प्रकार पहुँची ?"

स्त्री—"मैं कौन हूँ और किस प्रकार महलमें पहुँची यह तो मैं नहीं बतलाऊँगी। पर हाँ महलमें लोग मुझे आयशा बेगम कहते हैं।"

छत्र०—"तब तो तुम शाहजादा मुअज्जमकी माँ हो !"

स्त्री—"हाँ।"

* * * *

ग्यारहवाँ प्रकरण।

दीवान-ए-आम।

तरह तरहके अलंकारोंसे अलङ्कृत रूप-यौवनसम्पन्ना स्त्रीकी शोभा जिस प्रकार कुंकुम-तिलकके अभावके कारण अपूर्ण रहती है अथवा अमावास्याका स्वच्छ आकाश-मंडल असंख्य तारोंके रहते हुए भी जिस प्रकार चन्द्रमाके विना निस्तेज जान पडता है, उसी तरह आज दीवान-ए-आम भी शोभाहीन और फीका जान पडता था। इस लोकका स्वर्ग कहे जानेवाले दीवान-ए-आमको सजानेके लिए आर्थिक व्यय या शारीरिक परिश्रम करनेमें किसी प्रकारकी कमी नहीं की गई थी। वडे वडे वजीर, मशीर, अमीर, सरदार, माडलिक राजे, नवाब, जागीरदार और शाही खानदानके लोग वडे अदव-कायदेसे अपने अपने स्थानपर वैठे हुए थे। उनके वढिया वढिया कपडे, तरह तरहके वहुमूल्य जडाऊ गहने, एकसे एक वढकर अलग अलग ठाठ और स्वरूप आदि देखकर जान पडता था कि वे परमेश्वरकी मानवी-रचनाओंकी एक अच्छी खासी प्रदर्शिनी है। दरवारियोंकी शान-शौकतमें किसी तरहकी कमी नहीं थी। सारा दरवार सुगन्धित फूलों और इत्रोंकी मनोहर महकसे भरा हुआ था। वहुत दूर पर चारों ओर चार नक्कारखानोंमें मधुर शहनाइयाँ वज रही थीं। सब लोग शान्त होकर मूर्तियोंकी तरह वैठे हुए दरवारकी शोभा वढा रहे थे। पर वह शोभा थी कि वढना जानती ही न थी। विना सौभाग्यालंकारके, दूसरे सैंकडों गहने रहते हुए भी, क्या कभी किसी वालाके मुखकी शोभा वढ सकती है? विना चन्द्रमाके क्या आकाश सुशोभित हो सकता है? तव फिर दरवार-ए-आमके सौभाग्यतिलकके विना, दीवान-ए-आमके चन्द्रमाके विना दरवारकी शोभा क्योंकर वढ सकती थी?

वादशाह आलमगीरका तख्त-ताऊस अभी तक ज्योंका त्यों खाली था। अधिकांश लोग तो वादशाहके आनेकी प्रतीक्षामें ही थे, पर कुछ थोडेसे चुने हुए वजीरों और सरदारोंको मन-ही-मन इस विषयमें कुछ शंका थी। वादशाह सलामत वहुत दिनोंसे वीमार थे और उनके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें किसीको ठीक ठीक समाचार न मिलता था। शाही फरमानोंका पालन करनेके लिए दरवारमें

प्राय सभी माण्डलिक राजे और सरदार आदि आ पहुँचे थे। तख्त-ताऊसके दोनों ओर दो राजकुमार बडी सजधजसे खड़े थे और आगेकी ओर कुछ दूर हटकर बहुमूल्य वस्त्र और अलकार पहने हुए दो और राजकुमार खडे थे। राजाओंमें चम्पतराय भी थे, पर वे इस लिए कुछ चिन्तित जान पडते थे कि युवराज छत्रसाल थोड़ी ही देर पहले उठकर न जाने कहाँ चले गये थे। राजा जयसिंह कभी उन्हें धीरज दिलाते और कभी चिन्तित होकर इधर उधर देखते थे। अधिकाश लोग तो प्रसन्नतापूर्वक बादशाहके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। पर कुछ इने गिने बडे बड़े वजीरों और सरदारोंके मुखपर वह प्रसन्नता नहीं थी। उनके चेहरोंपर गम्भीरता, उत्कठा और जिज्ञासाकी मिश्रित छाया थी। इस छायाका एक विशेष और गूढ कारण था।

दरबारसे पहलेवाली रातको शाही महलके एक कमरेमें रोशनआरा बेगमने उन्हीं चुने चुने वजीरों और सरदारोंका एक छोटासा गुप्त दरबार किया था, जिनके चेहरोंपर दरबारके समय गम्भीरता, उत्कण्ठा और जिज्ञासाकी छाया दिखलाई पडती थी। उस दरबारमे रोशनआराने इन लोगोंसे कहा था कि शाहशाह आलमकी तबीयत दिन पर दिन बिगडती जाती है, और इस समय तो उनकी जो शोचनीय दशा हो गई है वह बडी ही निराशाजनक है। दरबारकी सब तैयारियाँ हो चुकी हैं, पर ईश्वर न करे कि कहीं इस खुशीके मौके पर मातमकी नौबत आवे। इस दरबारमें बेगमने अपनी सेवा-शुश्रूषा और परिश्रम आदिका वर्णन खूब लम्बे चौड़े वाक्योंमें और बहुत देरतक किया था और यह कहा था कि मैंने शाहशाहकी चिकित्सा करनेमें कोई बात उठा नहीं रक्खी है। पर हाँ, ईश्वरेच्छा पर किसीका वश नहीं, और भावी बहुत बलवती है। उनमेंसे कुछ खुर्रांट भीतर-ही-भीतर बेगमका वास्तविक आशय भी भली भाँति समझते थे—क्यों कि वे भी अनेक प्रकारसे बेगमके षड्यन्त्रमें सहायक थे—तथापि और लोगोंको दिखलानेके लिए वे भी बेगमकी तारीफें करते जाते और उसकी हाँ में हाँ मिलाते जाते थे। बहुत देर तक इसी तरहकी बातोंका बाजार गरम रहा। अन्तमें बेगमने सिंहासनके उत्तराधिकारका प्रश्न उठाकर अपनी राजनीतिज्ञताका परिचय देनेके लिए एक छोटा मोटा व्याख्यान दे डाला और अनेक पुरानी घटनाओका वर्णन करके यह सिद्ध कर दिया—अथवा सिद्ध करनेका प्रयत्न किया—कि शाहजहानखाँकी कन्या ही औरगजेबकी एक मात्र विवाहिता और कुरान-

सम्मत पत्नी है, बाकी बेगमे बर पकडकर लाई गई हैं और यों हरमसरामें दाखिल कर ली गई हैं। अत आयशा (नव्वाब बाई) या ईसाई बेगम उदै- पुरीकी सन्तानें राजसिंहासनकी उत्तराधिकारी नहीं हो सकतीं, रखेलियोंके लडके राज्य नहीं पा सकते। तख्तका असली वारिस शाहजादा आजम ही है, दूसरा कोई नहीं। खुदानख्वास्त अगर बादशाहके दुश्मनोंकी जानको कल तक कुछ हो जाय तो कलके ही दरबारमें इस बातकी घोषणा हो जानी चाहिए कि तख्तका वारिस आजम है और जब तक शाहजादा बालिग न हो तब तक सलतनतका कुल इन्तजाम आप लोगोंकी मददसे मैं करती रहूँगी। बस इतनी ही छोटी और सीधीसी बातके लिए लोगोंको आधी रात तक तक- लीफ दी गई थी। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि किसी वजीर या सरदारने इसमे कोई आपत्ति नहीं की, क्योंकि आपत्तिकारक जीवोंकी तो उस दरबारमें रसाई भी न हो सकती थी। यही कारण था कि कुछ लोगोंके मुखोंपर गम्भी- रता, उत्कण्ठा और जिज्ञासाकी मिश्रित छाया दिखलाई पडती थी। हाँ, आधी रात तक जागनेके कारण उन लोगोंमेसे कुछ कभी कभी थोडा बहुत ऊँघने भी लग जाते थे।

सब अमीर, उमरा, सरदार और दरबारी आदि अपने अपने स्थानपर बैठ चुके थे। दरबारका मुहूर्त्त भी आ पहुँचा था, पर तख्त-ताऊस अभी तक ज्योंका त्यों खाली पडा था। थोडी देर बाद जब लोगोंने सुना कि शाहशाहकी सवारी महलसे चल चुकी है तब सबके मुँह कमलकी तरह खिल गये, पर उनकी उत्कठा और भी बढ गई। सब लोग आँखें फाड फाड कर उस रास्तेकी ओर देखने लगे जिधरसे बादशाहकी सवारी आनेवाली थी। नगाडोंके ढम ढमके साथ नफीरियोंके मधुर स्वर सुनाई पडने लगे, हाथियों पर फहराते हुए झण्डे और निशान दिखलाई देने लगे। धीरे धीरे सवारी दीवान-ए-आम तक आ पहुँची। दरबारके सब लोग उठ कर खडे हो गये। बहुतसे राजकुमारों और शाहजादोंने अर्द्धचद्राकार-पक्तिमें खडे होकर तख्त-ताऊसको पीछेकी ओरसे घेर लिया। शाही खानदानके कुछ लोगों और चुने हुए सरदारोंके पीछे पीछे शाह- शाह औरगजेब एक हाथ शाहजादा मुअज्जमके कन्धेपर और दूसरा हाथ युव- राज छत्रसालके कन्धेपर रक्खे हुए धीरे धीरे चलकर तख्त-ताऊस पर बैठ गया। तख्त पर बैठकर बादशाहने एक ओरके आसनपर छत्रसालको और

दूसरी ओरके आसन पर मुअज्जमको बैठनेका इशारा किया। दरवारकी रस्में अदा होने लगीं। मुजरे हुए, नजरें गुजारीं, दुआयें पढी गईं, आशीर्वाद दिये गये, खिताव बँटे, लोग सम्मानित हुए, मुवारकवादियोंके गीत गाये गये, इत्यादि इत्यादि अनेक कृत्य हुए। जव सब कृत्य हो चुके तव औरंगजेवने युवराज छत्रसालको खडे होनेका इशारा किया। तदनुसार युवराज उठकर तख्तके वहुत पास आकर खडे हो गये। समस्त दरवारियोंको सम्वोधित करके थोडे शब्दोंमें वादशाहने छत्रसालका परिचय दिया और उनकी वहुत प्रशंसा करते हुए कहा कि हमारे प्राणोंकी रक्षा इन्हींने की है। दरवारियों, सरदारों, राजाओं और रिआयाको इन्हींका शुक्रगुजार होना चाहिए। ये सव वातें वादशाहने थोडे शब्दोंमें कही थीं, क्योकि वे कुछ तो कमजोर थे और कुछ कम-सखुन वन गये थे। छत्रसालकी प्रशंसा करने और उन्हें अनेक धन्यवाद देनेके उपरान्त उन्होंने राजा जयसिंहको आज्ञा दी कि वे राजा चम्पतरायको लेकर तख्त-ताऊसके समीप आ वैठे। जयसिंहने तुरन्त उनकी आज्ञाका पालन किया। जयसिंह और चम्पतरायके तख्तके पास वैठ जानेपर वादशाहने कहा,—

"आज इस मुवारक मौके पर सलतनतके अराकीन (आधार स्तम्भ) और वफादार मददगारोंकी मौजूदगीसे ईजानिवको जो खुशी हासिल हुई वह वयानसे वाहर है। मगर इससे भी ज्याद खुशीकी वात यह है कि खुदाए-तआलाने सलतनत और रिआयाकी हिफाजत और सरपरस्ती करनेवाले तख्त व ताजके मालिक अपने बन्देको इस वातका मौका दिया है कि वह अभी और कुछ दिनोतक इस जहानमें रहकर उसके हुक्मोंकी तामील करे और पैगम्वर-अलय-उस्सलामके दिखलाए हुए रास्ते पर पाक परवरदिगारके वन्दोंको चलनेके लिए तैयार करे। इस मौके पर आप लोगोंको उस शख्सका सवसे ज्याद शुक्रगुजार और एहसानमन्द होना चाहिए जिसकी मददसे आज आप लोगोंको वन्दए दरगाहकी जियारत नसीव हुई है। वह शख्स महेवाके राजा चम्पतरायका साहवजादा छत्रसाल है। जो काम वडे वडे नमकख्वार सरदारों, अमीरों और यहाँ तक कि खानदाने-शाहीके लोगोंसे भी न हो सकता वह काम वडी ही खूवीके साथ आज छत्रसालने अजाम दिया है। छत्रसालको इजाजत दी जाती है कि वह अपनी इस कारगुजारीके सिलेमें जो कुछ माँगना चाहे, माँगे।"

छत्रसाल कुछ वोलनेके लिए एक कदम और आगे वढे, सव लोगोंका ध्यान उन्हींकी ओर खिंच गया। वे सोचने लगे कि इस वहुमूल्य अवसरका छत्र-

साल कैसा उपयोग करते हैं और बादशाहसे क्या माँगते हैं। स्वयं बादशा-हका खयाल था कि वे कोई बड़ा खिताब या ऊँचा ओहदा ही माँगेंगे, पर यह बात नहीं हुई। उन्हें निराश करते हुए छत्रसालने इस प्रकार कहना आरम्भ किया,—

"शाहंशाह-आलम! मैं बन्दः परवरका इस लिए बहुत ही शुकगुजार हूँ कि एक नाचीजकी छोटीसी खिदमतका हजरत सलामतने इतना खयाल फरमाया और उसे कोई मुराद माँगनेका मौका बख्शा। मगर इस हालतमें मैं यह अर्ज कर देना चाहता हूँ कि मुझे खुद अपने लिए किसी चीजकी जरूरत नहीं है। इस वक्त मेरे पास जो कुछ मौजूद है, मैं उसीपर कनायत करता हूँ और उसीको काफी समझता हूँ। मुझे अपने उन बुन्देले भाईयोंकी बहुत ज्याद फिक्र है जो दिन पर दिन गुलामीमें बुरी तरह जकड़े जा रहे हैं। गुलामीका कायदा है कि वह जिन लोगोंको अपने जालमें फँसाती है उन्हें गरीब, बेकस, ऐयाश और खुदप-रस्त बना देती है और जिस मुल्क पर उसका सिक्का जमता है, कहतसाली और दूसरी तरह तरहकी मुसीबतें उसे अपना घर कर लेती हैं। तख्ते-देहलीकी हवा बुन्देलखडकी आजादीका चिराग बुझाना चाहती है। वहाँके जिन गौहरोंको ताजमें जगह मिलना चाहिए थी वे अब पैरोंमें रौंदे जाने लगे हैं। इस बातकी कोशिश हो रही है कि उनकी आजादी कायम न रहने दी जाय,—उन्हें इन्सा-नियतके दायरेसे बाहर निकाल दिया जाय। अगर बादशाह सलामत बुन्देलख-डको हर तरहसे आजादी बख्शें और बुन्देलोंका इतमीनान फरमाएँ कि आइन्दा कभी उनकी हक-तलफी न होगी तो मैं समझ लूँगा कि मुझे मेरी खिदमतोंका पूरा सिला मिल गया।"

औरंगजेबका चेहरा कुछ उतर गया। क्या कहा जाय, यह उसकी समझमें न आया। छत्रसालकी इच्छा पूरी करना मानो उसे अभीष्ट नहीं था।

छत्रसालकी बातें सुनकर चम्पतराय बहुत प्रसन्न हुए थे। जब उन्होंने देखा कि बादशाह चुप हैं तो वे उठ कर खड़े हो गये और कहने लगे,—

"बादशाह सलामत! छत्रसालकी इल्तजा पर कुछ इरशाद नहीं हुआ। शायद उसकी कारगुजारीकी कीमत उतनी ज्याद नहीं है जितनी कि उसकी दरख्वास्तके पूरे होनेकी है। अगर सिर्फ छत्रसालकी कारगुजारी इस दरख्वा-स्तको पूरा करनेके लिए काफी न समझी गई हो तो मैं अपनी कुछ पुरानी

कारगुजारियोंकी याद दिलाया चाहता हूँ । सोमगढकी लडाईमें किसने खूनकी नदियाँ वहाकर अपनी वहादुरीसे दुश्मनोंपर फतह पाई थी ? इस तख्तके पानेमें शाहशाह आलमको सवसे ज्याद मदद किसने दी थी ? तख्ते-ताऊसके रास्तेके काँटे किसने साफ किये थे ?"

औरंगजेवने कुछ शान्त होकर कहा,—"राजा साहव ! आपका फरमाना वहुत ही वजा है । वेशक आपकी कारगुजारियाँ वहुत ज्याद और वेशकीमत हैं।"

चम्प०—"मैंने अपनी जिन्दगीकी जरा भी परवा न करके सोमगढकी लड़ाईमें फतह पाई और ऑजनावके लिए तख्ते-ताऊस खाली कराया । आज छत्रसालने हजरतके दुश्मनोंकी जानका खातमा होनेसे वचाया । ऐसी हालतमें हम दोनोंकी इन कारगुजारियोंका—जो हजरतकी जिन्दगी और इकवालका सवव हैं—पूरा पूरा खयाल रक्खा जाना वहुत ही जरूरी है । छत्रसालने जो कुछ इल्तजा की है वह इन कारगुजारियोंके मुकावलेमें कुछ भी नहीं है । उम्मीद है कि हजरतको इस मौकेपर सलतनतके एक छोटेसे हिस्सेको आजादी वख्शनेमें किसी तरहका पसोपेश न होगा ।"

इतने पर भी औरंगजेवने कोई उत्तर न दिया । उसके चेहरेसे जान पडता था कि वह किसी गूढ विचारमें पड़ा हुआ है । उसे वहुत देरतक चुप देखकर छत्रसालने कहा,—

"खैर, मालूम हो गया कि मेरी इल्तजा पूरी नहीं हुई । उसका पूरा न होना ही मुनासिव और अच्छा है । इस तरह भीख माँगकर आजादीकी उम्मीद रखना भी वेवकूफी ही है । हजरत सलामत नाहक ज्याद गौर व फिक्रमें न पडें । हम लोग इसके लिए यहाँ अडे नहीं वैठे हैं । (कुछ ठहर कर) अव हम लोगोंको इजाजत मिलनी चाहिए ।"

इतना कह कर छत्रसाल चलनेके लिए तैयार हुए । उनके पिता चम्पतरायजी भी कुछ कम तेजस्वी और मानी न थे । उन्होंने भी अपना आसन छोड दिया । उन्हें उठते देख कर औरंगजेवने कहा,—

"चम्पतरायजी ! वेशक आप लोगोंकी कारगुजारीके मुकावलेमें वुन्देल-खण्डकी आजादी कोई चीज नहीं है, मगर काफिरोंको आजाद रहने देना और उन्हें खुदसर वनाना उस पाक परवरदिगारकी मरजीके खिलाफ है । पाक पैग-वरका हुक्म है कि वालिए-मुल्क कुल जहानमें इसलामका डंका वजाएँ, अपनी

तमाम रिआयाको मुसलमान बनाएँ । पहले मुल्कों पर कब्जा करना और वादमें वहाँकी रिआयाको वगैरे मुसलमान बनाये आजाद कर देना बडा भारी गुनाह है । इस लिए वेहतर हो कि आप लोग कोई और दरख्वास्त करें । ”

चम्प०—“ हम लोगोंको किसी तरहके ओहदे या खिताव वगैरहकी ख्वाहिश नहीं है और न हम लोग कोई दूसरी दरख्वास्त करना चाहते हैं । वल्कि हम लोग अपनी पहिली दरख्वास्त भी वापस लेते है, क्योंकि बुन्देलखण्ड खुद बुन्देलोंका है और उसे आजाद करना भी उन्हींके हाथ है । ”

इतना कह कर चम्पतराय अपने साथ छत्रसालको लेकर वहाँसे चल दिये । उन्होंने वहाँ अधिक ठहरना उचित न समझा ।

बारहवाँ प्रकरण ।

उषासुन्दरी और अरुण ।

स्वच्छ नीले आकाशमे उषासुन्दरी सलज्ज हँसती हुई आकाश-गंगाके किनारे खडी थी । अनन्त तारकाओंको सारे आकाशमें विहार करते देख उस नव वालाको बहुत आश्चर्य हो रहा था । ज्यों ज्यों तारानाथ क्षीणवल होते जाते थे त्यों त्यों तारका उन्हें छोडकर गगन-मडपसे निकलती जाती थी। तारकापतिको तारकाओंके इस प्रकार चले जानेसे बहुत दु ख हो रहा था । वह मानो यह समझकर पश्चात्ताप कर रहे थे कि यदि मैं इन तारकाओंको इतनी स्वतत्रतासे विचरनेकी आज्ञा न देता तो वे इस प्रकार मेरा परित्यागन करतीं। तारकानाथकी गृहस्थीको इस प्रकार खडमडल होते देखकर उषासुन्दरीको बहुत दु ख हुआ । वह सोचने लगी कि क्या पातिव्रत, शील और सद्गुणोंकी रक्षा विना स्त्रियोंको परदेमें रक्खे नहीं हो सकती ? वह स्वय परदेमेंसे निकलकर आकाश-गगाके किनारे आ खडी हुई थी, इस लिए उसका प्रसन्न वदन कुछ गम्भीर हो गया । उस स्वर्गीय सुन्दरीको भय होने लगा कि कहीं मेरे

शील और सद्गुणोंका भी तो नाश न हो जायगा। परमेश्वरकी अगाध रचना-चातुरी और आकाश-गंगाकी अनुपम सुन्दरताको निरखना छोडकर अपने शीलकी रक्षाके लिए वह फिर अपने परदेमे जानेके लिए तैयार हो गई। उस वेचारीको संसारका कोई अनुभव नहीं था, इस लिए एक तारानाथका उदाहरण देखकर ही वह डर गई। यदि उस अनजान उषाको यह मालूम होता कि परदेसे बाहर निकलकर चमकनेवाली चंचल चपला अपने पति मेघके साथ कितनी एकनिष्ठताका व्यवहार करती है, कभी परदेमें न रहनेवाली प्रभा अपने पति भगवान् अंशुमालीके साथ दिन भर घूमती हुई उनका कितना सच्चा साथ देती है अथवा परदेकी जरा भी परवा न करनेवाली सन्ध्या अपने पति अन्धकारकी कितनी आज्ञाकारिणी है तो वह कभी फिर आडमें हो जानेकी इच्छा न करती। उसे इस बातका बहुत ही दुःख हुआ कि मेरा प्राण-प्रिय अरुण मुझे ढूँढता हुआ आकाशमें आवेगा और मैं उसे वहाँ न मिलूँगी। कहाँ तो अरुणके साथ आकाशकी अवर्णनीय शोभा देखना, परमेश्वरकी अतर्क्य लीलाका गुण गाना और पवित्रताका सुख लूटना, और कहाँ कुछ दुष्टा स्त्रियोंकी दशासे डरकर कैदमें विरहका दुःख सहना! एकमें मिलनेवाले स्वर्गीय सुख, अद्वितीय आनन्द और अलौकिक सन्तोष और दूसरेमें होनेवाले असह्य दुःख, चिन्ता और मनस्तापके परस्परविरोधी चित्रकी ओर उषासुन्दरी मानसचक्षुसे देखने लगी। जिस चन्द्रमाने उसे स्वर्गीय सुखसे वंचित करके दुःखी किया था, उसपर उसे बहुत क्रोध आया। अतिशय क्रोधके कारण उसका मुँह लाल हो आया। वह मन-ही-मन कुड़बुडाती हुई आकाशके परदेमें छिपने लगी। उस समय उसका ध्यान उस रोहिणीकी ओर गया जो चन्द्रमाके पास ही खडी हुई उसकी सेवा कर रही थी। उसे देखकर उषाको फिर कुछ साहस हुआ और वह परदेमेंसे फिर बाहर निकलने लगी। धीरे धीरे उसकी यह धारणा नष्ट होने लगी कि केवल परदेसे ही स्त्रियोंके शील और पातिव्रतकी रक्षा होती है। चंचल और नीतिभ्रष्ट स्त्रियोंको चाहे परदेमें छिपाकर रक्खा जाय और चाहे सातवें पातालमें ले जाकर दबा दिया जाय, पर वे अपना चरित्र प्रकट करनेमें कहीं आगा पीछा न करेंगी। लेकिन सुशील स्त्रियाँ खूब स्वतन्त्रतापूर्वक विचरनेका अवसर पाकर भी अपना शील कभी नष्ट न करेंगी। यही सोचकर वह स्वर्गीय बाला फिर प्रसन्नतासे मुस्कराने लगी। उसने यह भी सोचा कि आकाश वास्तवमें परदा नहीं है, यह

तो परदेका आभास मात्र है। अब वह फिर अपने प्रिय अरुणकी प्रतीक्षा करने लगी। केवल सौन्दर्य और सद्गुणोंमे ही नहीं बल्कि आतरिक विचारोंमे भी आकाश-गगाके किनारे खडी हुई उषाकी बराबरी करनेवाली एक मानवी उषा गगाकी बहन यमुनाके किनारेपर खडी हुई मुस्करा रही थी। उषाके स्वर्गीय विचारोंका प्रतिबिंब उसके हृदयपर ज्यों का त्यों पडता था। उषा स्वर्गीय ज्योति थी और बदरुन्निसा ऐहिक ज्योति थी। उषा अपने सौन्दर्यतेजसे स्वर्लोकको प्रकाशित करती थी और बदरुन्निसा अपनी लावण्यप्रभासे मृत्युलोकको दीप्त कर रही थी। उषाने आज जिस प्रकार अपना आकाशका परदा हटा दिया था, बदरुन्निसाने उसी प्रकार आज अपने पिताका शाही महल छोड दिया था। उषाने यह अपने लिए आकाश-गगाका तीर पसन्द किया था और बदरुन्निसा यमुनाके किनारे खडी थी। बदरुन्निसा यह जाननेके लिए टक लगा कर उषाकी ओर देखने लगी कि क्या जिस उद्देश्यसे मैं यमुनाके किनारे आई हूँ, उसी उद्देश्यसे यह भी आकाश-गगाके किनारे अपने विचारोंमें मग्न खडी है। उस समय बदरुन्निसाको ऐसा जान पडने लगा कि उषा भी मेरी ही तरह अभिसारिकाके वेषमें है, उसका मुँह मेरी ही तरह लज्जासे लाल हो रहा है और उसके नेत्र भी मेरे ही नेत्रोंकी तरह उत्सुक है। क्या यह स्वर्गीय देवी भी प्रेमको पूज्य समझती है? क्या प्रेम मानवी विकार नहीं बल्कि दैवी सद्गुण है? क्या प्रेम इतना पवित्र है कि उसके लिए उषाके समान स्वर्गीय देवी भी सत्ताधारी ईश्वरके परदेसे बाहर निकल आवे? अवश्य ही प्रेम बहुत पवित्र होगा। अवश्य ही वह दैवी सद्गुण होगा। प्रेमकी पूजा स्वर्गीय देवियाँ भी करती होंगी। यदि ऐसा न होता तो मेरे समान पिताकी आज्ञाकारिणी उसके प्रपचमे क्यों पडती? सचमुच प्रेममे विलक्षण माधुरी भरी हुई है, उसमें अद्भुत सुगन्ध है, इसी लिए वह स्वर्गीय सुख छोड कर आकाश-गगाके किनारे आई है। इस ससारके बहुतसे लोग उसी स्वर्गीय सुखको पानेके लिए इस ससारके समस्त सुखों पर लात मारते हैं। जब उस स्वर्गीय सुखको छोड कर उषा आकाश-गगा तक चली आई है तब यदि मैंने शाही महल छोड दिया तो क्या बुरा किया? बदरुन्निसा उस समय यमुनाके प्रवाहमें पडनेवाला उषाका प्रतिबिम्ब देखने लगी। इतनेमें उसे उषाके प्रतिबिम्बके पास ही उसके प्रेमी अरुणका प्रतिबिम्ब दिखलाई पडा। वह मन-ही-मन यह सोचती हुई आकाशकी ओर देखने लगी कि अरुणका उदय कब

हुआ ? उसने देखा कि अरुण प्रेमपूर्वक उषासे धीरे धीरे बातें कर रहा है। वह सोचने लगी कि क्या ऐसी ही प्रेम भरी बातें सुननेका मुझे भी अवसर मिलेगा? इतनेमें ही उसके कानोंमें स्वर्गीय मनोहर स्वर पडा।

" सुन्दरी! तुम वह स्वर्लोक छोड कर यहाँ क्यों आई ? तुम्हारे बिना वहाँ कोलाहल मचा हुआ है। तुम्हारे बिना बिजली, इन्द्रधनुष और ताराओंने अपने अपने काम छोड दिये। तुम यहाँ क्यों आई ?"

वदरुन्निसाने समझा कि आकाशमें यह बातें अरुण अपनी प्रिया उषासे कह रहा है। उषाका उत्तर सुननेके लिए वह और भी एकाग्र चित्त होकर उसकी ओर देखने लगी। इतनेमें उसे फिर वही स्वर्गीय मनोहर स्वर सुनाई पडा—

" सुन्दरी! तुम आसमानकी तरफ क्या देख रही हो ? उसकी सारी खूबसूरती तो तुम जीत चुकी हो, अब उसकी तरफ देखनेसे क्या फायदा ? अब तो आसमान तुम्हारे पैरों पर लोट रहा है, उससे जो कुछ तुमने लिया हो वह अब उसे लौटा दो।"

वदरुन्निसाने नीचेकी ओर देखा, सारे आकाशका प्रतिबिम्ब यमुनाके निर्मल प्रवाहमें पड रहा था, और उस प्रतिबिम्ब सहित यमुनाकी लहरें उसके पैरोंसे खेल रही थीं। उषा और अरुणको आपसमें बातचीत करनेका अवसर देकर उसने सामने देखा। जिसके दर्शनोंके लिए वह अपने महलसे निकल कर आई थी, वह युवक उसे सामने खडा हुआ दिखलाई पड़ा। अरुणके दर्शन करके उषाको जितना आनन्द हुआ था उस युवकके दर्शन करनेसे वदरुन्निसाको भी उतना ही आनन्द हुआ। उस आनन्दमें लज्जाके मिल जानेके कारण उसके मुखपर और भी माधुरी आ गई थी। उसी माधुरीको निरखता हुआ वह युवक कहने लगा,—

" बिजली, आकाशगंगा और तारोंकी सारी खूबसूरती छीनकर भी तुम्हारा जी नहीं भरा ? अब क्या तुम आसमानमें कुछ भी न रहने दोगी ?"

वद०—" माफ कीजिए, शायद आपको यहाँ आए बहुत देर हुई। मैं किसी सोचमें डूबी हुई थी, मेरा ध्यान दूसरी तरफ था।"

वदरुन्निसाका कोमल और मधुर स्वर सुनकर वह युवक बहुत ही आनन्दित हुआ। उसने गद्गद होकर कहा—

" आज मैं तुम्हें नहीं, वल्कि परमेश्वरकी कारीगरीका सवसे अच्छा नमूना देख रहा हूँ। आज मैं तुम्हें देखकर अपने आपको धन्य समझता हूँ।"

वदरुन्निसाने आश्चर्यसे पूछा,—" क्या आज आप मुझे पहले पहल देख रहे हैं ?"

यु०—" इसमें क्या शक है ? जो एक वार परमेश्वरकी यह कारीगरी—रूपकी यह पुतली देख लेगा, वह इसे जिन्दगी भर न भूलेगा।"

वद०—"लेकिन आप तो दो दिनोंसे मेरी आँखोंके सामने फिर रहे हैं।"

यु०—" नहीं, यह कभी नहीं हो सकता। अगर यही वात होती तो अवसे वहुत पहले मेरा दिल टुकडे टुकडे हो गया होता, मेरी आँखें चोंधियाई हुई होतीं। मैंने तो आजसे पहले ऐसा रूप कभी देखा ही नहीं !"

वद०—"वडे ताज्जुवकी वात है। भला अगर आपने मुझे कभी नहीं देखा था तो फिर आज आप यहाँ कैसे आये ?"

यु०—" कल राजा जयसिंहकी लड़की जयाने मुझसे कहा था कि कल तडके यमुना किनारे कोई तुमसे मिलना चाहता है। उसीके कहने पर आज मैं यहाँ आया हूँ और तुम्हें देख रहा हूँ।'

वदरुन्निसाको उस युवककी वातें सुनकर वहुत आश्चर्य्य हुआ। उसने सोचा,—मैं इसी वेषमें मीना वाजारमे अपनी दूकान पर वैठी थी, उस वक्त इन्होंने मेरे सामने न जाने कितने फेरे लगाये थे ! जिस तरह इन्होंने मेरे दिलमें जगह कर ली थी उसी तरह मैं समझती थी कि इन्हें मेरा भी कुछ ध्यान हुआ होगा। इसी लिये मैंने जयासे इन्हें सन्देशा कहलाया और आज मैं इनसे मिलनेके लिए यहाँ आई। इस अन्तिम विचारसे वदरुन्निसा कुछ लज्जित भी हो गई। टक लगाकर उसकी ओर देखनेवाले युवकको वड़ा ही आश्चर्य्य हुआ। वह सोचने लगा कि यह पहले तो वहुत प्रसन्न जान पडती थी, पीछे इसे कुछ आश्चर्य हुआ और अव यह कुछ दुखी हो गई है। उसने कहा,—

" मैं इतनी देर तक टक लगाकर तुम्हारी तरफ देखता रहा, इसके लिए मैं तुमसे माफी माँगता हूँ। मैंने शायद तुम्हें दुखी कर दिया है, इसका मुझे वहुत अफसोस है। पर इसमें खाली मेरा ही कुसूर नहीं है, वल्कि तुम्हारी खूवसूरतीका भी कुछ कुसूर है जो मेरी आँखोंको अवतक अपनी तरफ खींच रही है।"

वद०—" नहीं, मुझे रज तो किसी वातका नहीं है पर इस वातका ताज्जुव जरूर है कि आप कहते हैं कि आपने आजसे पहले मुझे कभी देखा ही नहीं।"

यु०—" तो क्या अब तक तुम यही समझती हो कि मैंने पहले भी तुम्हें कहीं देखा है ?"

बद०—" आप दो दिनों तक वरावर मेरे सामने फेरे लगाया करते थे।"

युवकने वहुत चकित होकर पूछा,—कहाँ ? तुमने मुझे कव और कहाँ देखा ?"

बद०—" मीना वाजारमें।"

वदरुन्निसाकी वात सुनकर उस युवकका आश्चर्य्य जाता रहा। वह हँसता हुआ वोला,—

" हाँ हाँ, तुम्हारा कहना वहुत ठीक है। कुमार रामसिंहके वहुत कहनेपर मैंने उस बाजारमें कई चक्कर लगाये थे। उस वक्त मेरा ध्यान दूसरी तरफ था। छत्रसालका साथ छूट गया था और मुझे उन्हींकी फिक्र थी। मेरा मन किसी तरफ देखनेमें न लगता था। शायद इसी लिए मैं तुम्हें वहाँ न देख सका था। जिन लोगोंको सदा तलवारसे ही काम पडता हो अगर उनका ध्यान ऐसी वातोंकी तरफ कम जाय तो इसमें तुम्हें ताज्जुव न होना चाहिए। छत्रसाल तो इसी लिए जान वूझकर हम लोगोंसे अलग हो गये थे और यमुना-किनारे कहीं जा बैठे थे। पर मुझे जवरदस्ती रामसिंहके कहने पर वाजारमें घूमना पडा था।"

अब वदरुन्निसाका सन्देह दूर हुआ। उसने मानो कुछ याद करके पूछा,—

" यह छत्रसाल कौन हैं ? यह वही शाहशाह आलमकी जान वचानेवाले छत्रसाल तो नहीं हैं ?"

यु०—" हाँ, वही छत्रसाल।"

बद०—" वे आपके कौन होते हैं ?"

यु०—" मेरे पिताजीके जानी दुश्मनके लडके—"

वद०—(बीचमें ही) " तब तो वे आपके भी भारी दुश्मन हुए न ?"

यु०—" हाँ, अगर मैंने पिताजीवाली दुश्मनीका खयाल किया होता तो जरूर मेरा उनका भारी बैर होता पर मेरी और उनकी वह वात नहीं है।"

बद०—" तव आखिर आपका उनके साथ कैसा वरताव है ?"

यु०—" बिलकुल दोस्तोंकासा, बल्कि उससे भी कुछ वढकर। उनके लिए मैं अपने सुखदु खको कुछ भी नहीं समझता। यहाँ तक कि मैं अपनी जानकी

भी परवा नहीं करता। वह देखो अरुण और सूर्य्यका कैसा साथ है? तुम मुझे अरुण और छत्रसालको सूर्य्य समझो।"

वदरुन्निसाने आकाशस्थ अरुणकी ओर देखा। उस समय अरुण स्वर्गीय उषाकी ओर प्रेमपूर्वक देख रहा था। जिस प्रेमको अवतक उसने अपने हृदयमें दवा रक्खा था, वह अब उसके अंग प्रत्यंगमें नाचने लगा। प्रेमका उसपर पूरा पूरा अधिकार हो गया। उसी दशामें उसने पूछा,—

"आप अरुण हैं न?"

युवकने निष्कपट भावसे कहा,—"हाँ, छत्रसाल सरीखे सूर्य्यके सामने मैं अरुण ही हूँ।"

वद०—"अब जरा उस उषाकी तरफ भी देखिए। अरुणको अपने पास देखकर वह कैसी सुखी हो रही है। कोई ऐसी स्त्री न होगी जिसे उषाको देखकर ईर्ष्या न होती हो।"

यु०—"लेकिन तुम्हारी इस खूबसूरतीके सामने उस उषाकी खूबसूरती क्या चीज है? जिसे तुम्हारे साथ होनेका सौभाग्य हो वह उस अरुणसे लाख दर्जे अच्छा है। तब फिर तुम्हें उषाको देखकर ईर्ष्या क्यों हुई?"

वद०—"जिस वक्त वह उषा आकाश-गंगाके किनारे आई थी, उसी वक्त मैं भी यमुना किनारे आई थी। उस वक्त दोनोंके मनमें एक ही विचार थे पर इस वक्त वह अकेली आनन्द कर रही है और मैं—"

वदरुन्निसासे और कुछ कहा न गया और वह टक लगाकर युवककी ओर देखने लगी।

यु०—"क्या इस उषाको भी कोई भाग्यवान् अरुण मिलनेवाला है?"

वदरुन्निसाने युवकके इस प्रश्नका कोई उत्तर नहीं दिया। वह नीचे मुँह करके यमुनामें पड़नेवाली उषाकी छाया देखने लगी। युवकने फिर कहा,—

"जिस प्रकार वह उषा आकाशकी शोभा है उसी प्रकार यह उषा इस पृथ्वीकी शोभा है।"

यमुनाके तलमें पड़नेवाले युवकके प्रतिबिंबकी ओर देखते हुए वदरुन्निसाने पूछा,—

"आप यह माननेके लिए तैयार हैं न कि मैं इस पृथ्वीकी उषा हूँ?"

यु०—“ हाँ, तुम उषा हो—इस पृथ्वीका सुन्दर शृंगार हो । ”

वद०—“ जिस तरह वह स्वर्गीय अरुण अपनी उषाको प्रेमपूर्वक स्वीकार करता है, क्या उसी प्रकार इस पृथ्वीकी उषाको भी इस पृथ्वीका अरुण स्वीकार न करेगा ? क्या उस उषाकी तरह यह उषा भी धन्य न होगी ? ”

अब वह युवक प्रेमकी ये सारी पहेलियाँ समझ गया । पर उसे यह जान- नेमें बहुत सा समय लग गया कि जो अमृतमय वचन मैंने अभी सुने हैं वे वास्तवमें सत्य हैं या स्वप्नके । अन्तमें उसने हर्ष-कम्पित स्वरमें कहा,—

“ क्या यह उषा मुझे ही अरुण समझती है ? क्या मैं अपने आपको इतना भाग्यवान् समझ सकता हूँ ? पर—” इतना कहते कहते वह युवक और गम्भीर हो गया ।—“ क्या मैं ऐसी सुन्दरीको ग्रहण करनेका पात्र हूँ ? उस स्वर्गीय अरुणने प्रेमान्ध होकर जिस प्रकार उषाको अपने जालमें फँसाया है, उस प्रकार मैं इस मानवी उषाको फँसाकर उसके भावी सुखका नाश नहीं कर सकता । यह अरुण बडा धोखेबाज है । उसे अपना सारा जीवन सूर्य्यकी सेवामें बिताना है । वह अच्छी तरह जानता है कि जिस उषासे मैं आज प्रेमपूर्वक घुल-घुलकर बातें कर रहा हूँ, आजके बाद अपने सारे जीवनमें मुझे फिर कभी इस उषाकी ओर देखनेका भी अवसर न मिलेगा, पर तो भी वह सीधी सादी उषाको अपने प्रेमके जालमें खींच रहा है । यह बडा भारी अपराध है, बडा भारी अन्याय है । तुम किसी ऐसे रँगीले शाहजादे या अमीरजादेको अपना अरुण बनाओ जो अपनी सारी जिन्दगी तुम्हारे साथ सुखसे बिता सके, तुम्हें प्रेमके रगमें अच्छी तरह रँग सके और जिसके पास बहुतसी दौलत और बहु- तसी फुरसत हो । मेरे सरीखा अभागा तुम्हें कुछ भी सुख न पहुँचा सकेगा।”

वद०—“ यह आप मेरा अपमान कर रहे हैं । आप यह जतलाकर कि मैं सम्पत्ति, सुख और सन्मानकी लालसासे प्रेम करना चाहती हूँ, मेरे विमल प्रेम- पर कलंक लगा रहे हैं । जो प्रेम सम्पत्ति, ऐश्वर्य, मान-मर्यादा, या इसी प्रका- रके किसी और पदार्थके लिए किया जाता है, वह बाजारमें बिकने और खरीदे जानेवाले प्रेमसे तनिक भी श्रेष्ठ नहीं है । मेरी आपसे केवल यही प्रार्थना है कि आप मेरे साथ प्रेम करके मुझे धन्य करें । आपकी दौलत और इज्जतका तो मैंने नाम भी नहीं लिया था । शुद्ध और विमल प्रेम निर्व्याज होता है, उसमें किसी दूसरी चीजकी जरूरत नहीं होती । ”

युवकने अधिक गम्भीर होकर कहा,—" तुमने मेरा मतलब नहीं समझा, इसी लिए मेरी बातसे तुम्हें कुछ रज हुआ । बात यह है कि तुमसे प्रेम-सम्बन्ध करनेपर मुझपर बहुतसी जवाबदारियाँ भी आ पडेंगीं । पर तो भी मैंने उन जवाबदारियोंसे डरकर यह बात नहीं कही है । मुझे तुम्हारे सुखोंका—"

बदरुन्निसाने बीचमें ही बात काटकर कहा,—" आप मेरे सुखोंका ध्यान छोड दें । जब मैंने आपको अपने हृदयमें स्थान दिया था तभी मैं हमेशाके लिए आपके साथ सुख और दु ख भोगनेके लिए तैयार हो गई थी । तब फिर सुखका जिक्र ही क्या ? मेरे सब सुख पूरे हो गये । मैंने ऐसे ऐसे सुख भोगे हैं जो औरोंके ध्यानमें भी नहीं आ सकते । सब सुख, सब आराम मानो हमेशा मेरे सामने हाथ जोडे खडे रहते हैं । पर अब उन सुखोंको तरफ मेरा मन नहीं जाता । अब तो मैं उस सुखकी भूखी हूँ जो धनदौलतसे नहीं खरीदा जा सकता, जिसके सामने सारी दुनियाके सुख हेच हैं । (आँचल पसारकर) आपसे मैं उसी सुखकी भिक्षा माँगती हूँ । "

युवक मनही मन सोचने लगा,—" हे ईश्वर अब मैं इस स्त्रीको क्या उत्तर दूँ ? ऐसी सुन्दरीका त्याग करके एकनिष्ठासे देशसेवाका व्रत करूँ या वह व्रत छोडकर इस सुन्दरीके प्रेम-जालमें फँसूँ ? वह अरुण जिस तरह उस उषाके प्रेममें फँसकर अपना कर्तव्य भूल गया है, क्या मैं भी उसीकासा हो जाऊँ ? पर नहीं । थोडी देरमें वह अपने सब सुखोंको भूल कर प्रतापशाली सहस्ररश्मिकी सहायता करनेके लिए चल पडेगा और मैं नामरदोंकी तरह यहीं बैठा हुआ औरतोंसे बातें करता रहूँगा । छत्रसालके साथ धोखेबाजी ! स्वतन्त्रतादेवी विन्ध्यवासिनीसे छल ! अपनी प्रतिज्ञाका नाश ! नहीं, यह घोर पातक है । इसकी अपेक्षा अपने भावी सुखका नाश करना ही अच्छा है । जब अपने लाखों बुन्देले भाइयोंके सुखके लिए मैं अपने सुखकी आहुति दे दूँगा तब मैं धन्य हो जाऊँगा । देशसेवा और विषयसुखाभासमेंसे प्रखर तेजयुक्त देशसेवाको पसन्द करना ही अच्छा है । "

अन्तमें उसने बदरुन्निसासे कहा,—" सुन्दरी ! तुम्हें पानेके लिए देवता भी स्वर्ग छोडकर इस ससारमें रहना स्वीकार करेंगे । तुम्हारा प्रेम इतना पवित्र और पावन है कि इसके लिए अच्छे अच्छे तपस्वी अपना तप छोडनेके लिए भी तैयार हो जायँगे । लेकिन क्या करूँ, मेरे सामने एक ऐसा कर्तव्य रक्खा

हुआ है जो उन देवताओं और तपस्वियोंके कर्त्तव्योंसे भी कहीं बढा चढा है। मेरा मन अवश्य ही सब तरहसे तुम्हारे प्रेमके वशमें हो गया है, पर तुम मुझे आज्ञा दो कि मैं उसे रोक कर अपने कर्त्तव्यकी ओर लगाऊं।"

बदरुन्निसाने बहुत ही प्रसन्न होकर कहा,—"आपने मुझे और मेरे प्रेमको धन्य किया। जाइए, आप खुशीसे अपना काम कीजिए। मैं इस काममें रुकावट डालना नहीं चाहती। लेकिन उस कामके पूरे हो जाने पर तो इस दासीका खयाल रहना चाहिए।"

यु०—"अगर वह काम इतनी जल्दी पूरा हो जानेवाला होता तो मैं आज ही तुम्हें स्वीकार कर लेता! वह काम बहुत ही मुश्किल है, उसका जल्दी पूरा होना मुमकिन नहीं। मुझे शक है कि अगर मेरी सारी जिन्दगी खतम हो जायगी तब भी वह काम पूरा होगा या नहीं।"

बदरुन्निसाके प्रसन्न चेहरेपर फिर निराशाकी झलक आ गई। वह दु खी होकर बोली,—

"भला वह कौनसा काम है जो सारी उमरमें भी पूरा नहीं हो सकता?"

यु०—"गुलामीके गड्ढेमें पडे हुए बुन्देलखण्डको आजाद करना।"

बद०—"मैंने आपका मतलब नहीं समझा।"

यु०—"बुन्देलखड आजकल शाहंशाह देहलीके कब्जेमे है इस लिए वहाँके लोगोंकी हालत हर तरहसे बहुत ही बुरी है। वहाँकी सारी दौलत निकालकर शाही खजानेमें भरी जा रही है, लोगोंकी हर तरहसे बेइज्जती की जाती है, मन्दिर ढाए जाते हैं और लोगोंको सैकडों तरहकी तकलीफें पहुँचाई जाती हैं, वहाँके लोगोंको सब बातोंमें शाहशाहका हुक्म मानना पड़ता है। अपने उन्हीं भाइयोंको इन सब तकलीफोंसे बचाने और उन्हें फिरसे आजाद करनेके लिए मुझे अपनी सारी जिन्दगी बिता देनी पडेगी।"

बद०—"और अगर आपका वह काम जल्दी ही पूरा हो जाय तब?"

यु०—"बुन्देलखड जिस दिन बादशाही हुकूमतसे निकलकर आजाद हो जायगा, उसी दिन मैं भी तुम्हारा हो जाऊँगा।"

बद०—"बहुत ठीक! चाहे जिस तरहसे हो, बुन्देलखण्डके आजाद हो जाने पर तो फिर आपको कुछ आगा पीछा न रह जायगा न?"

यु०—" नहीं, बिलकुल नहीं। चन्द्रमामें छिपे हुए सूर्यके तेज, यमुनामें छिपी हुई गंगाकी पवित्रता और अपने मनमें छिपे हुए तुम्हारे सच्चे प्रेमकी सौगन्ध खाकर मैं कहता हूँ कि जिस दिन बुन्देलखंडसे बादशाही अमल उठ जायगा उसी दिन मैं अपने आपको तुम्हारी नजर कर दूँगा। सुन्दरी! मैं सागरके सत्यप्रतिज्ञ राजा शुभकरणका पुत्र हूँ। मैं अपनी बातका कितना पक्का हूँ, यह तुम्हें आगे चलकर मालूम हो जायगा।"

अब बदरुन्निसा प्रसन्नताके मारे फूली न समाती थी। जो तलवार वह अबतक छिपाये हुए थी उसे हाथमें निकालकर वह कहने लगी,—

" मैंने यह तलवार मीना बाजारमें बेचनेके लिए रक्खी थी। मेरी बहुतसी सहेलियोंने अपनी बहुतेरी चीजें मेलेमें हजारों मोहरों पर बेची थीं। पर बादमें मैंने इसे ऐसे आदमीको नजर करना चाहा जो मेरे दिलपर कबजा कर लेता। इसी लिए वह अबतक मेरे पास ही रही अब मैं यह तलवार आपको नजर करती हूँ।"

इतना कहकर बदरुन्निसाने मुस्कराते हुए वह तलवार उस युवकको दे दी। कुछ ठहरकर उसने कहा,—"क्या मैं अपने मेहरबानका नाम जान सकती हूँ?"

यु०—" मेरा नाम दलपतिराय है।"

बद०—" यह तलवार आपके पास उसी वक्त तक रहेगी जब तक आपका काम पूरा न हो जायगा। काम हो जानेपर इसे आपको मुझे लौटा देना होगा।"

दलपतिरायने ठण्ढी साँस लेकर कहा,—"पर वह दिन अभी बहुत दूर है।"

बद०—" अगर वह दिन दूर है तो मैं उसे पास ले आऊँगी। जो शाहशाह आपके बुन्देलखण्ड पर हुकूमत करता है, उसके दिलपर मैं हुकूमत करती हूँ। इस लिए बुन्देलखण्डके आजाद होनेमें ज्यादा देर न लगेगी।"

दलपतिरायने चकित होकर पूछा,—" आखिर तुम हो कौन, जिसकी हुकूमत शाहशाहके दिल पर चलती है?"

बद०—"मैं उसी शाहशाहकी लडकी हूँ। मेरा नाम बदरुन्निसा है। बादशाह पर बदरुन्निसाका कितना जोर है, यह सब लोग जानते हैं।"

दल०—(आश्चर्यसे) " तब तो तुम मुसलमानी हो, हमारे जानी दुश्मनकी लडकी हो।"

वदरुन्निसाने कोई उत्तर नहीं दिया।

थोडी देरमें अरुणको आकाश-गंगाके किनारे छोड कर उषासुन्दरी आकाशके परदेमें चली गई। वदरुन्निसाने भी दलपतिरायको यमुना किनारे उसी आश्चर्य-चकित अवस्थामें छोड शाही महलोंका रास्ता लिया।

* * * *

तेरहवाँ प्रकरण।

गुप्त मंत्रणा।

वीरसिंहदेव अवश्य ही वहुत वडे वीर थे। उन्होंने अपने पराक्रमसे मुगल-साम्राज्यमें उपद्रव मचा रक्खा था। स्वतत्रताके प्रेमी वुन्देले समझने लगे थे कि वे अकवरकी राजनीतिज्ञताको भी हवा वतावेंगे और अपने दादा रुद्रप्रतापकी वुन्देलखण्डको स्वतत्र करनेकी अन्तिम इच्छा पूरी करके ही छोडेंगे। उनके बडे भाई राज रामचन्द्रशाहका उन पर वहुत अधिक प्रेम था। अगर उन दोनों भाइयोंमें वह प्रेमभाव सदा वना रहता तो देशमें मुसलमानोंका उपद्रव कहीं रहने न पाता। परन्तु वुन्देलखडके पुराने आनुवशिक रोगने वीर-सिंहदेवका भी पीछा न छोडा। उन्हें यह वात वहुत ही खटकने लगी कि मैं तो समरभूमिमें लडता भिड़ता और अपना पराक्रम दिखलाता फिरूँ और रामचन्द्र-शाह ओडछेके राजसिंहासन पर बैठ कर मेरे परिश्रमका फल भोगें। गृह–कलह आरम्भ हुआ। ओडछेका जो अलकार–वीरसिंहदेव–स्वतन्त्रतादेवीके गलेमें सुशोभित होनेके योग्य था वह अब शाहजादा सलीमके अगमें जा पडा। अबुलफजल सरीखे विद्वान्की निर्दयतासे हत्या करके उन्होंने शाहजादा सली-मको अपने ऊपर प्रसन्न किया और ओडछेमें गुलामीकी नीव डाली। थोडे ही दिनोंमें राजा रामचन्द्रशाहको गद्दीसे उतार कर वीरसिंहदेव ओडछेके राजा वन वैठे। राज्य पानेके उपरान्त उन्होंने अपने ऊपर लगा माडलिकताका और अपने राज्य पर लगा हुआ दासताका कलक धो डालनेके लिए अनेक प्रयत्न किये पर उनका कोई फल नहीं हुआ। उलटे वुन्देलखण्डके जो दो चार राजे स्वतन्त्र थे उनकी स्वतन्त्रता भी जाती रही। वीरसिंहदेवने जो विष-वृक्ष लगाया था उसके कडुए फल समस्त वुन्देलखण्डको चखने पडे।

पहाडसिंह राजा वीरसिंहदेवके इकलौते पुत्र थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि गृह-कलहके कारण ओडछेका राजकीय वैभव धीरे धीरे किस प्रकार नष्ट होता गया और अन्तमें शाहजहाँके समय वे स्वयं ओडछेसे किस प्रकार निकाल दिए गये थे, तथापि जिन चम्पतरायकी सहायतासे उन्हें ओडछेका राज्य फिरसे मिला था, उन्हींके साथ द्वेष और मत्सर करना उन्हें अपना कर्त्तव्य जान पडने लगा। उनकी स्त्री रानी हीरादेवी भी वडी ही विकट स्त्री थी। यदि उसने अपनी उग्रता, दृढनिश्चय और साहसका उपयोग न्यायमार्गमें किया होता और अपने पति राजा पहाडसिंहको चम्पतरायके स्वतन्त्रता सम्बन्धी प्रयत्नोंमें सहायता करनेके लिए उत्साहित किया होता तो वह समस्त बुन्देलखण्डकी पूज्य हो जाती। परन्तु ओडछेका राज्य पानेके कुछ ही दिनों वाद पहाडसिंह और हीरा देवीको गृह-कलहके रोगने आ घेरा। शुक्ल पक्षकी चन्द्रकलाकी तरह चम्पतरायकी वढती हुई कीर्ति वे लोग शीतल हृदयसे न देख सके। उन दिनों बुन्देलोंमें यह उदारता नाममात्रको भी न थी कि वे पराएका उत्कर्ष देख सकते, इसी लिए राजा पहाडसिंह और हीरादेवीका पक्ष धीरे धीरे वढने लगा। रानी हीरादेवी अपनी उत्कट बुद्धिमत्ताका उपयोग अपना पक्ष वढानेमें करने लगी। बुन्देलखण्डके सभी छोटे वडे राजे अपनी कायरता और ईर्ष्या आदिके कारण अथवा हीरादेवीके कपट-नाटकके कारण ओडछेके राजमहलमें एकत्र होकर चम्पतराय और उनके प्रयत्नोंके विरुद्ध षड्यन्त्र रचने और गुप्त मन्त्रणायें करने लगे। तथापि हीरादेवी यह वात अच्छी तरह समझती थी कि सागरके प्रतापशाली राजा शुभकरण जवतक चम्पतरायके पक्षमें रहकर उनकी सहायता करेंगे तवतक हम लोगोंका पक्ष कमजोर ही रहेगा, इसी लिए अन्तमें हीरादेवीने शुभकरणको भी अपने जालमें फँसा लिया और उन्हें अपने पक्षमें कर लिया। तवसे चम्पतराय अकेले स्वतन्त्रताके लिए लडने लगे। हीरादेवी और उनके पक्षके राजे चुपचाप तटस्थ रहकर चम्पतरायके नाशकी प्रतीक्षा करने लगे।

जहाँगीर वादशाहसे भेंट करनेके लिए वीरसिंहने जो सुन्दर प्रासाद वनवाकर ओडछेकी स्वतन्त्रता पर परतन्त्रताका सिक्का जमाया था वह प्रासाद आज लोगोंसे खूब भरा हुआ था। रानी हीरादेवी उस प्रासादके मुख्य द्वार पर खडी होकर आनेवाले लोगोंका स्वागत कर रही थी। राजा पहाडसिंह भी यह काम वहुत अच्छी तरहसे कर सकते थे, पर स्वागतके वहाने जो कार्य्य सिद्ध करना

था, हीरादेवीने उसे दूसरेको सौंपना ठीक न समझा। इस लिए वह स्वय प्रासादके द्वारपर मुसकराती हुई खडी थी और प्रत्येक व्यक्तिको वडी ही तीव्र दृष्टिसे देख रही थी। वहुतसे निमन्त्रित लोग आ गये थे, पर इस वातका उसे रह रह कर वहुत ही आश्चर्य होता था कि शुभकरण अभी तक क्यों नहीं आए। उनके पास आदमी भेजनेका वह विचार कर रही थी कि इतनेमे शुभकरण वहाँ पहुँच गये। बड़े ही आदर-सत्कारसे उनका स्वागत करके रानी हीरादेवी उन्हें दीवानखानेकी तरफ ले चली। इसके बाद ही प्रासादका मुख्य द्वार वन्द करा दिया गया और लोगोंके भीतर आनेकी मनाही हो गई।

दीवानखाना आज वहुत ही अच्छी तरह सजाया गया था। व्यासपीठ पर राजा पहाडसिंह वैठे थे और उनके पासके दो आसन खाली पडे हुए थे। वाकी सारा कमरा अनेक छोटे मोटे राजों, जागीरदारों, सरदारों और वीरोंसे भरा हुआ था। सरक्षण अधिकार और न्याय आदिके रूपमें प्रजाको तनिक भी प्रतिफल न देकर उनकी गाढी कमाईसे वनवाए हुए वढिया वढिया अलकार और आभूषण सब लोग पहने हुए वडे ठाठसे वैठे हुए थे। इतना वडा दीवानखाना इतने आदमियोंसे भरा हुआ था पर तो भी वहाँकी शान्ति श्मशानकी शान्तिको मात करती थी। मालूम होता था कि ये लोग राजे और सरदार नहीं हैं वल्कि मिट्टीके पुतले हैं। जो लोग अपना कर्त्तव्य पालन न करते हों, जिनमें क्षात्रतेजका नाम भी न हो और जिनका चैतन्य प्राय शून्यत्व तक पहुँच गया हो उन्हें चलते फिरते मिट्टीके पुतले कहनेमें हर्ज ही क्या है।

शुभकरण और हीरादेवीके आनेपर प्राय सभी राजे और सरदार आदि उठकर खडे हो गये और उनकी आव-भगतमें लग गये। थोडी देर बाद उन लोगोंके अपने अपने आसनोंपर बैठ जाने पर गडवड़ी शान्त हो गई और पहलेकी तरह फिर स्तब्धता छा गई। उस समय रानी हीरादेवीने एक वार अपने पति राजा पहाडसिंहकी ओर देखा और तव अपने स्थान पर वैठे वैठे इस प्रकार कहना आरम्भ किया,—

"राजाओ तथा सरदारो! आज इस स्थान पर हम लोग जिस प्रश्नपर विचार करनेके लिए इकट्ठे हुए हैं वह वडे ही महत्त्वका है, इसी लिए मैंने इस बातका पूरा पूरा प्रवन्ध कर लिया है कि जो लोग हमारी इस गुप्त मंडलीमें सम्मिलित नहीं हुए हैं वे यहाँ न आने पावें। तो भी संभव है कि मुझसे कहीं

भूल हो गई हो और इतने बडे जमावडेमें कोई बाहरी भी हम लोगोंका भेद लेनेके लिए किसी प्रकार यहाँ पहुँच गया हो। इस लिए आप लोग अपने आस-पासके लोगोंको अच्छी तरह देख ले, और तब उसके उपरान्त आजका कार्य्य आरम्भ किया जायगा।''

इतना कह कर हीरादेवी थोडी देरतक चुप रही और जब किसी तरफसे कोई आवाज न आई तब वह उन लोगोंकी ओर देखकर बहुत प्रसन्न हुई और मनहीमन अपने प्रबन्धकी प्रशसा करने लगी। उसे इस बातका भी बहुत अभिमान हो रहा था कि मैंने अपनी विलक्षण चतुरता और योग्यतासे अपना पक्ष इतना प्रबल और विस्तृत कर लिया है। उसी अभिमान और आनन्दसे पुलकित होकर वह फिर कहने लगी,—

"अच्छा मालूम हो गया कि हम लोगोंमें कोई अजनबी या भेदिया नहीं है। अब आप लोग सावधान होकर मेरी बातें सुनें। आप लोगोंको इस स्थानपर एकत्र हुए प्राय सोलह वर्ष हो गये। आजसे सोलह वर्ष पहले जिस दिन माग-रके महान् प्रतापशाली राजा शुभकरण दृढ प्रतिज्ञा करके हम लोगोंकी मडलीमें सम्मिलित हुए थे उसी दिन हम सब लोग यहाँ एकत्र हुए थे। कालके प्रभा-वसे इन सोलह वर्षोंमें बहुतसे हेर फेर हो गये। कालने हम लोगोंसे बहुतेरे नररत्न छीन लिये और उनमेंसे बहुतोंके स्थानापन्न उनके पुत्र हुए। इस परि-वर्त्तनके कारण हम लोगोंको ससारका अनुभव और ज्ञान ही हुआ है, हमारी कोई हानि नहीं हुई। हमारा पक्ष पहलेकी अपेक्षा अधिक सबल और विस्तृत है। परतु इन सोलह वर्षोंमें अनेक दृष्टियोंसे हमारे शत्रु-पक्षकी भी बहुत कुछ उन्नति और वृद्धि हुई है। उसने अपनी राजतृष्णाके स्वतन्त्रता, दास्य-विमोचन और परोपकार आदि सुन्दर और मधुर नाम रखकर बुन्देलखडमें बहुत कुछ लोकमान्यता प्राप्त की है। प्राणनाथ प्रभुने जगलमें एकान्तवास करना छोडकर महेवाके राजमहलमें डेरा डाला है। इससे चम्पतरायका पक्ष और भी प्रबल हो गया है। हम लोगोंकी प्रजाके मनसे यह कल्पना नष्ट होती जाती है कि हमारा राजा परमेश्वरका अवतार है, और सब लोगोंका ध्यान चम्पतराय और उनके उद्देश्यकी ओर लग गया है। हम लोगोंकी प्रजामें यह अराजक भावना उत्पन्न होने लगी है कि वह हम लोगोंकी आज्ञा क्यों माने? अब सब लोगोंकी प्रवृत्ति चम्पतरायकी आज्ञा माननेकी ओर हो रही है। यदि यही दशा और कुछ दिनों

तक वनी रही तो चम्पतरायकी राजतृष्णा पूरी करनेके लिए हम लोगोंकी प्रजा हमें राजभ्रष्ट करनेमें आगा पीछा न करेगी। अपने ऊपर आनेवाली इस भावी आपत्तिको हम लोगोंने पहले ही सोच लिया था और उसीसे वचनेके लिए हमें ऐसे ऐसे कार्योंके लिए एक गुप्त मंडली वनानी पडी। आप लोग अभीसे यह बात अच्छी तरह समझने लग गये होंगे कि इस मंडलीमें सम्मिलित होकर आप लोगोंने कैसी दूरदर्शिता और देशोपकारका काम किया है। उस दिन विन्ध्यवासिनी देवीके महोत्सवके समय चम्पतरायने दिल्ली दरवारके प्रतिष्ठित सरदार रणदूलहखॉको कैद कर लिया। अव जव शाही फौजके आक्रमणकी आशंका हुई तब उन्होंने अपनी सहायताके लिए बुन्देलखडके राजाओं और सरदारोंके नाम एक प्रार्थनापत्र निकाला है। पहले आप लोग एक वार उस प्रार्थनापत्रको सुन लें।"

हीरादेवीका रुख पाकर वेचारे पहाडसिंह उठ खडे हुए और लोगोंको प्रार्थनापत्र पढकर सुनाने लगे,—

प्रार्थनापत्र।

"बुन्देलखण्डके राजाओ, सरदारो तथा सपूतो! आप सव लोग जानते हैं कि बुन्देलखडमें मुसलमानोंका अधिकार दिन पर दिन वढता जाता है और यह नहीं कहा जा सकता कि अव वह अधिकार कहाँतक वढ जायगा। इस लिए लोगोंको अपना वैर-भाव छोड़कर एकमें मिल जाना चाहिए और स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए प्रयत्न करना चाहिए। धर्मगुरु महाराज प्राणनाथ प्रभुने आज्ञा दी है कि सब लोग मिलकर अपने देश और धर्म्मकी रक्षा करें। विना स्वतन्त्रताके देश और धर्मकी रक्षा नहीं हो सकती। इस लिए मैं बुन्देलखडके प्रत्येक धर्म्मवीर और देशसेवीसे प्रार्थना करता हूँ कि वह युद्धके लिये तैयार होकर महेवा आनेकी कृपा करे।

सारे बुन्देलखंडको स्वतन्त्र करनेके लिए मैं हर तरहसे प्रयत्न करनेको तैयार हूँ। ऐसे उदात्त कार्यमें सहायता करना प्रत्येक बुन्देले राजे और प्रत्येक बुन्देले वीरका कर्त्तव्य है। इस लिए समस्त बुन्देले राजाओं और सरदारोंसे प्रार्थना की जाती है कि इस प्रार्थनापत्रके पानेके एक महीनेके अन्दर सव लोग अपने अपने मित्रों, सहायकों और सैनिकों सहित महेवा पहुँच जायँ और स्वतन्त्रताके झडेके नीचे खडे हों। जो लोग ऐसा न करेंगे वे देशद्रोही और शत्रु समझे जायँगे और उन्हें उचित दड देना हम लोगोंका प्रधान कर्त्तव्य होगा। ह० चम्पतराय।"

पहाडसिंह प्रार्थनापत्र सुनाकर फिर अपने स्थान पर बैठ गये ।

उनके बैठ जाने पर रानी हीरादेवीने फिर कहना आरम्भ किया,—

" आप लोगोंने अपना यह अपमानकारक प्रार्थनापत्र सुन लिया । इसी प्रार्थनापत्रसे चम्पतराय मानो आप लोगोंको नहेवा पहुँचनेकी आज्ञा दे रहे हैं । और अगर आप लोग उनकी आज्ञा न मानेंगे तो देशद्रोही समझे जायँगे ! उस दशामें चम्पतराय आपको अपना शत्रु समझेंगे और आपको राज्यसे उतार कर दण्ड देंगे ! और जिस पत्रमें इतनी बातें हैं उसका नाम है प्रार्थनापत्र ! शाही फरमानोंमें भी जो अभिमान नहीं झलकता, वह अभिमान इस प्रार्थनापत्रके प्रत्येक शब्दमें कूट कूट कर भरा हुआ है । अब तो आप लोगोंकी आँखें खुलीं न ? अब तो आप लोगोंको होश हुआ न ? स्वधर्म और स्वदेशकी रक्षा और स्वतन्त्रताप्राप्ति आदिके परदेमें छिपी हुई चम्पतरायकी राक्षसी राजतृष्णाका पता अब तो आप लोगोंको लग गया न ? चम्पतराय यह भी अच्छी तरह समझते हैं कि इस प्रार्थनापत्रवाली उनकी आज्ञा बुन्देलखडका कोई आत्माभिमानी राजा न मानेगा । इसी लिए वे समझे बैठे हैं कि एक महीनेमें जो राजा हमारे पक्षमें आकर न मिल जायगा उसे हम अपना शत्रु समझ लेंगे और उसका राज्य हडपनेके उद्योगमें लग जायँगे । यदि इस समय हम सब लोग एक होकर चम्पतरायका मुकावला करनेके लिए तैयार न हो गये तो बहुत जल्दी हम लोगोंको चम्पतरायका गुलाम हो जाना पडेगा । इस गुलामीसे वचनेके लिए और इस आपत्तिसे रक्षित रहनेके लिए हम लोगोंको अपनी तटस्थवृत्ति और आलस्य छोडकर अपने हाथोंमें शस्त्र लेना चाहिए । यह बात आप लोग भूल न जाइएगा कि इस वार चम्पतरायसे मुठभेड होगी । साथ ही इस वातका भी ध्यान रखिएगा कि इस काममें आप लोगोंके साथ शाहशाह देहलीकी पूरी सहानुभूति है और इसी लिए आप लोग उनसे वहुत कुछ सहायता पानेकी भी आशा रख सकते हैं । मुझे जो कुछ कहना था सो मैं कह चुकी । अब यदि आप लोगोंको इस सम्बन्धमें कुछ कहना हो तो कहें । "

हीरादेवी वडी ही तीव्र दृष्टिसे देखने लगी कि मेरी वातोंका सुननेवालों पर क्या प्रभाव पडा । इतनेमें कालिंजरके वृद्ध राजा उठ कर खडे हुए और कहने लगे,—

"स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए चम्पतराय जो इतना प्रयत्न कर रहे हैं, मेरी समझमें नहीं आता कि उसका अर्थ क्या है ? हम लोगोंको अभी कौनसी पराधीनता है ? हम लोग स्वच्छन्दतासे खाते पीते और आनन्दसे भोग-विलास करते हैं। हमारे कामोंमें तो कोई विघ्न डालने नहीं आता। अपने राज्यका प्रवन्ध करनेमें भी हम लोगोंको पूरी स्वाधीनता है। अगर हमारे राज्यका प्रवन्ध ठीक न हो तो उसके लिए कोई हमसे कैफियत नहीं मॉगता, अगर हमारी प्रजा दु खी हो तो उसकी ओरसे कोई हमें धमकाने नहीं आता और यदि हम उसे सव तरहसे सुखी भी रक्खें तो कोई हमारी कदर नहीं करता।

शाही खजानेमें हम लोग जो खिराज भेजते हैं उसके वदलेमें शत्रुओंसे हमारी रक्षा हो जाती है, हम लोग बहुतसी झझटोंसे वचे रहते हैं। ऐसे उत्तम अवसरको तो और भी धन्य समझना चाहिए। चम्पतरायने कभी जीवनभर राजकीय सुख तो भोगा ही नहीं, फिर वे उसकी कदर क्योंकर जान सकते हैं ? राज्यमें जहॉ इतने खर्च होते है वहॉ एक शाहीखिराज भी सही। सिर्फ उसीके लिए शस्त्र उठाने और लडने-भिडनेका विचार चम्पतरायके मनमे कहॉसे आ समाया ? खिराजके रुपये तो प्रजासे वसूल किये और शाहीखजानेमें भेज दिए, वस छुट्टी हुई। इतने वडे साम्राज्यको छोड़ कर उलटे उससे लडनेके लिए तैयार होना नाव परसे अथाह जलमें कूद पडना नहीं है तो और क्या है ? वैठे बैठाए आफतको न्योता देना कहॉकी समझदारी है ? मैंने तो उन्हें पहले ही कहला दिया कि भाई, न तो हमे तुम्हारी स्वतन्त्रता चाहिए और न हम अकारण वडोंसे बैर कर सकते हैं। हॉ अगर हम लोगोंमेंसे किसी पर कोई वात आवेगी, तव देखा जायगा।"

कालिंजरके वृद्ध राजा साहव अपना भाषण समाप्त करके बैठना ही चाहते थे कि इतनेमें अजयगढके राजा साहब उठ खडे हुए और कहने लगे,—

"स्वतन्त्रताके सम्बन्धमें जो कुछ कहना था वह तो कालिंजरके राजा साहव कह ही चुके। पर प्राणनाथ प्रभु और उनके शिष्योंने जो यह वहाना निकाल रक्खा है कि मुसलमानोंकी सत्ताके कारण हम लोगोंके धर्म्मका ह्रास हो रहा है, उसके विषयमें भी—"

बीचमें ही शुभकरणके गगनभेदी स्वरसे सारा दीवानखाना गूँजने लगा। "यहॉ आप लोगोंकी सलाहकी जरूरत नहीं है। आप लोग शान्त होकर वैठे

रहिए। यह समय इस वातके विचारका नहीं है कि चम्पतराय स्वतत्रताके लिए जो प्रयत्न कर रहे हैं वह प्रशसनीय है या नहीं, उनके प्रयत्नोंको आड़में राज-तृष्णा छिपी हुई है या नहीं, अथवा यवनोंकी सत्ताके कारण हमारे धर्म्मका नाश होता है या नहीं। उस समयको वीते आज सोलह वर्ष हो गये। अव तो हम लोगोंका यही कर्त्तव्य है कि हम लोगोंने जो प्रतिज्ञा की है उसे पूर्ण करनेका प्रयत्न करें। चाहे चम्पतरायका प्रयत्न न्यायसम्मत जान पडे और चाहे विना उनकी सहायता किये देश और धर्म्म डूव जाय, हम लोगोंको तो अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनी चाहिए। अव तक हम लोग इसी आशापर चुपचाप वैठे हुए थे कि चम्पत-रायको मुगल-सम्राट्के यहाँसे दण्ड मिलेगा। पर अव इसी आशापर चुपचाप तटस्थ होकर वैठे रहना मानो अपनी प्रतिज्ञामें वट्टा लगाना है। मुसलमानोंसे चाहे हमें सहायता मिले और चाहे न मिले, हम लोगोंको अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए हाथमें तलवार लेकर चम्पतरायसे भिड़ जाना चाहिए।"

शुभकरणकी ओर कृतज्ञताभरी दृष्टिसे देखकर हीरादेवी कहने लगी,—

"यह तो आप लोग अच्छी तरह समझ ही चुके हैं कि आज आप लोगोंके यहाँ एकत्र होनेका मुख्य उद्देश्य क्या है। चम्पतराय वहाना ढूँढकर अपनी राज-तृष्णा पूरी करना चाहते हैं। एक महीनेका समय वहुत जल्दी ही वीत जायगा। पर इससे पहले ही हम लोगोंको चम्पतरायके मुकावलेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। अव तक तो इस सम्वन्धमें जितने काम होते थे वे सव मैं करती थी। पर अव लडाई-भिडाईका काम आरम्भ होनेवाला है, अव समर-भूमिमें घोर सग्राम करना ही आप लोगोंका मुख्य कर्त्तव्य रह गया है, इस लिए मैं चाहती हूँ कि आगे इस सम्वन्धमें जो कुछ काम हो वह सव सागरके प्रता-पशाली राजा शुभकरणके आज्ञानुसार हो। सव राजाओंकी सेनाके प्रधान सचा-लक अव वही होंगे। इस लिए आप लोग अपनी सारी सेनायें उन्हींकी अधीन-तामें छोड दें और जहाँतक हो सके सव प्रकारसे उनकी सहायता करें। एक वात मैं आप लोगोंको और वतलादेना चाहती हूँ। उसे सुनकर आप लोग अच्छी तरह समझ लेंगे कि जीत आपके ही पक्षकी और अवश्य होगी। आज इस स्थान पर ढॉडेरके राजा कंचुकीरायको न देखकर वहुतसे लोगोंको आश्चर्य हुआ होगा। कुछ लोग शायद यह भी सन्देह करने लगे होंगे कि वे हम लो-गोंकी मण्डलीसे अलग हो गये, पर हम लोग यहाँ वैठ कर जितना काम कर

रहे हैं, उससे भी अधिक और महत्त्वपूर्ण काम करनेके लिए वे बादशाहकी सेवामें दिल्ली गये हैं। वहाँ पहुँच कर वे बादशाहसे निवेदन करेंगे कि रणदूलह-खाँको चम्पतरायने कैद कर लिया है। कचुकीराय स्वय चम्पतरायके खेमेमें रणदूलहखाँसे मिले थे, खाँसाहबने बादशाह सलामतके लिए उन्हें जो सन्देशा दिया था, वही सन्देशा लेकर वे दिल्ली गये हैं। आप लोगोंको यह वतलानेकी जरूरत नहीं कि बादशाहको अपनी और अपने सरदारोंकी मान-मर्य्यादाकी रक्षाका कितना ध्यान रहता है। कचुकीरायके मुँहसे जब बादशाह सब बातें सुनेंगे तब आगबबूला हो जायँगे और आकाश-पाताल एक कर डालेंगे। दिल्लीके साम्राज्यमें लगे हुए चम्पतरायरूपी कलंकको धो डालनेके लिए शाही फौज समुद्रकी तरह महेवाकी तरफ चल पडेगी। उस समयका आनन्द देखते ही बन पडेगा। वह सब दशा चाहे मैं स्वय न देख सकूँ पर तो भी उसका समाचार सुनकर ही मुझे जो आनन्द होगा उसका मैं वर्णन नहीं कर सकती। कंचुकीरा-यको अपना काम करके तो दो दिन पहले ही यहाँ आ जाना चाहिए था, पर न जाने क्यों वे अभी तक नहीं आये। उनके न आनेको भी मैं एक शुभ शकुन ही समझती हूँ। उन्हें शायद इसी लिए देर हुई है कि उन्होंने शाही-फौजके साथ ही आना निश्चित किया होगा। अब देखना यही है कि चम्पतराय और उनके लडके छत्रसाल अपनी कौनसी बहादुरी दिखलाते हैं।"

हीरादेवीकी बातें सुनकर सब लोग और भी प्रसन्न हुए, पर कालिंजरके राजाको जरा भी प्रसन्नता न हुई। उलटे वे कुछ घबरायेसे जान पडने लगे। वे बहुत साहस करके उठे और उसी घबराहटमें कहने लगे,—

"अगर दिल्लीसे आनेवाली शाही फौज महेबा न जाकर हम ही लोगों पर टूट पड़े तो?"

हीरादेवीने कुछ बिगड कर कहा,—"आप भी कैसी बाते करते हैं? हम पर बादशाहकी नाराजगी क्यों होने लगी?"

रा०—"हम पर अगर बादशाह न नाराज हों तो भी वे चम्पतराय पर खुश हो सकते हैं। और तब फिर वह प्रचण्ड सेना बुन्देलखडमें आकर क्या करेगी?"

हीरादेवीने और भी बिगड कर कहा,—"आप भी बड़े ही कायर जान पड़ते हैं। व्यर्थ अमंगलकी बातें न करके आप अपने मनको ही कुछ ढारस दे लो

कुछ हरज है? क्या कहूँ, कञ्चुकीरायका कोई सन्देशा या उनका नौकर किशुन भी अभी तक नहीं आया, नहीं तो मैं आपका पूरा पूरा सन्तोष करा देती।"

इतनेमें ही हीरादेवीकी दासी गिरिजाने वहाँ पहुँच कर अपनी मालकिनसे कहा,—"सरकार! किशुन दिल्लीसे लौट आया है और हाजिर होना चाहता है।"

हीरा०—"अरे! किशुन लौट आया?"

गि०—"हाँ सरकार!"

हीरा०—"जाओ, और उसे जल्दी यहाँ ले आओ। वह कञ्चुकीरायका कोई जरूरी सन्देशा लाया होगा।"

थोडी ही देर बाद हीरादेवीने देखा कि थका-माँदा पसीनेसे लथपथ और धूलसे भरा हुआ किशुन चला आ रहा है। उसका चेहरा भी उस समय बहुत उदास जान पडता था। उसके चेहरेपरकी उदासी, निराशा और निरुत्साह देख-कर हीरादेवीका चेहरा भी उतर गया। वह समझ गई कि किशुन कोई बुरी खबर लाया है और शायद हम ही लोगोंपर कोई आफत आनेवाली है। किशुन कुछ देर तक चुपचाप उसके सामने खडा रहा, पर उसी सोच-विचारमें पडे रह-नेके कारण हीरादेवीने उससे कुछ भी न पूछा। अन्तमें किशुनने स्वय ही कहा,—

"सरकार! वहाँ तो बहुत ही बुरा हुआ।"

हीरा०—"क्या हुआ? क्या हुआ? जल्दी कहो। (किशुनको चुप देख-कर कुछ क्रोधसे) तुम वक्त बेवक्त कुछ भी नहीं समझते। जो बात हो चटपट कहो।"

किशु०—"सरकार हम लोग चित्रकूटसे चलकर आठ दिनमें दिल्ली पहुँचे। वहाँ पहुँचते ही राजा साहब पहले रोशनआरा बेगमसे मिलनेके लिए शाही महलमें गये। मैं दिन भर ड्योढी पर बैठा बैठा उनका आसरा देखता रहा, पर वे नहीं आये। दूसरे दिन भी जब सारा दिन बीत गया और वे नहीं लौटे तब मुझे बहुत शक हुआ।"

पहाडसिहने बीचमें ही पूछा,—"पर वे बादशाह सलामतके दरबारमें न जाकर पहले महलमें रोशनआराके पास क्यों गये?"

हीरा०—"बादशाह सलामत बहुत बीमार थे, इस लिए आजकल सब कारबार रोशनआरा बेगम ही करती थीं। इसी वास्ते वे पहले बेगम साहबसे मिलने गये थे। (किशुनसे) हाँ तब फिर तुमने क्या किया?"

किशु०—"मैं दो दिनतक बराबर उनका पता लगानेके लिए इधर उधर घूमता था और सब लोगोंसे पूछता फिरता था, पर कहीं कुछ पता न—"

हीरा०—(अधीर होकर) "शायद यही खबर सुनानेके लिए तुम यहां आये हो ?"

किशु०—"सरकार, पहले सुनिए तो सही ! तीसरे दिन सवेरे मैं शाही-महलमें जानेका उपाय सोचने लगा, उस दिन रमजानकी पचीसवीं तारीख थी। उस दिन दीवान-ए-आममें बड़ा भारी शाही दरबार होनेको था, पर मेरा ध्यान पहरेवालोंकी तरफ लगा था। मैं यही सोच रहा था कि उन लोगोंसे किसी तरह मिल-मिलाकर महलमें जाऊँ। थोड़ी देरमें बहुतसी तातारी स्त्रियाँ अन्दरसे निकलीं। मैंने उनसे राजा साहबका हाल पूछा, पर किसीने जवाब तक न दिया। अन्तमें मैंने उनमेंसे एकको कुछ अशरफियोंका लालच दिया तब उसने मुझे सब बातें बतलाई। उसकी बातोंसे मालूम हुआ कि रोशनआरा बेगमको उनकी बातोंका विश्वास नहीं हुआ, इस लिए वे महलमें ही नजरबन्द कर लिये गये। अब जब बेगम साहबको इस बातका पूरा पूरा विश्वास हो जायगा कि चम्पतरायने रणदूलहखाँको कैद कर लिया है और राजा साहबकी सब बातें ठीक हैं, तब उनका छुटकारा होगा। फिर और भी दो एक आदमियोंसे मुझे यही बात मालूम हुई। तब लाचार उसी दिन सन्ध्याको मैं वहाँसे चल पड़ा और पहले यहीं आया।"

कुछ देरतक चुप रहनेके उपरान्त ही हीरादेवीने कहा,—"अगर राजा साहबकी बातोंका बेगम साहबको विश्वास नहीं हुआ तो इसमे कोई आश्चर्य्य नहीं है। बेगम साहबको विश्वास दिलानेके लिए ही तो रणदूलहखाँने राजा साहबको निशानीवाली कटार दी थी, पर वह कटार तो उन्होंने छत्रसालको दे दी। नहीं तो यह नौबत क्यों आती ? खैर, इसमें दुखी या निराश होनेकी कोई बात नहीं है। इससे यह न समझना चाहिए कि शाहीदरबारसे हम लोगोंको मदद न मिलेगी। आज नहीं तो दो दिन बाद रणदूलहखाँका पूरा पूरा हाल बेगम साहबको मालूम हो जायगा। बस फिर जो कुछ होना होगा वह आप ही हो जायगा। चाहे जो हो, पर अब चम्पतराय किसी तरह बच नहीं सकते।"

हीरादेवीकी बात सुनकर किशुनको मानों कुछ याद हो आया। उसने कहा—"सरकार! मैंने तो दिल्लीमें सुना कि राजा चम्पतराय और छत्रसालपर बाद-

शाह बहुत खुश हैं। उन्हें उसी दिनके दरबारमें बारह-हजारी मन्सब मिला—वे शाही दरबारके अमीर बनाये गये और वहाँ उनकी खूब इज्जत खातिर हुई। उस दिन सारे शहरमें इसी बातका शोर था।"

हीरा०—(बड़े ही आश्चर्यसे) "किशुन, तुम्हें क्या हो गया है? चम्पतरायको मन्सब क्यों मिलने लगा? तुम पागल तो नहीं हो गये हो जो ऐसी बातें बक रहे हो? कचुकीरायकी जो खबर तुमने बताई वह भी तो इसी तरह ऊट-पटाँग नहीं है? तुम्हें सब बातें अच्छी तरह याद तो हैं न?"

किशुनने खूब दृढ होकर कहा,—"सरकार! यह आप क्या कहती हैं? मैंने जो जो बातें वहाँ देखीं सुनीं वही सब आपसे कही हैं। और फिर दो चार दिनमें चम्पतराय खूब धूमधामसे आते ही होंगे। उस वक्त आप ही मेरी बातकी सचाई खुल जायगी।"

हीरा०—"चम्पतराय यहाँसे होकर कहाँ जायँगे?"

किशु०—"वे महेवा लौट जायँगे।"

हीरा०—"तुम्हें मालूम है, वे महेवासे चले कब थे?"

किशु०—"नहीं सरकार, यह तो मुझे नहीं मालूम। पर हाँ, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि दरबारके दिन वे, युवराज छत्रसाल और युवराज दलपति-राय वहीं थे। मैंने भी उन लोगोंको दो तीन बार देखा था।"

शुभ०—"क्या चम्पतराय शाही दरबारमें हाजिर हुए थे? स्वतन्त्रताकी डींग हाँकनेवाले चम्पतराय दरबारी बने? बारह हजारकी मन्सबदारी उन्हें स्वतन्त्रता देवीके प्रसादसे अच्छी जान पड़ी? आजतक स्वतन्त्रताके लिए उन्होंने जो कुछ किया, वह सब क्या केवल ढोंग था? क्या हीरादेवीका कहना ही ठीक है कि उनके मनमें राजतृष्णा दबी हुई है? विन्ध्यवासिनीकी भक्ति, प्राणनाथ प्रभुकी प्रतिष्ठा और प्रजाके कल्याणकी चिन्ता दिखलाने भरको ही थी? किशुन! भरे दरबारमें चम्पतरायने मन्सबदारी स्वीकार की थी न?"

किशु०—"नहीं सरकार, मैंने तो सुना कि जो मन्सबदारी उन्हें दी गई थी, उसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया। उन्होंने भरे दरबारमें कह दिया था कि बाद-शाह बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र कर दें, और नहीं तो इसके सिवा मैं और कुछ नहीं चाहता। वहाँके लोग इस बातके लिए उनकी बहुत तारीफ करते थे कि भरे दरबारमें, हजारों राजों, महाराजों, अमीरों और सरदारोंके सामने उन्होंने बे-

वडक होकर ऐसी वात कही, और अपने आदर-सत्कारका ध्यान छोड़कर केवल अपने देशका ध्यान रक्खा।"

शुभ०—"तव फिर उन्होंने वारह हजारकी मन्सवदारी कैसे स्वीकार की?"

किशु०—" चम्पतराय दिल्लीमें राजा जयसिंहके यहा ठहरे थे। वादशाहने उन्हींकी मारफत चम्पतरायसे मन्सवदारी मजूर करनेके लिए कहलाया था। राजा जयसिंहके वहुत कहने सुनने पर उन्हें उनकी वात माननी पडी। यह सव मैं सुनी हुई वातें कहता हूँ। पर हॉ, इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने भरे दरवारमें वादशाहके अनुग्रहका तिरस्कार किया था। पर मुझे यह नहीं मालूम कि पीछेसे उन्होंने मन्सवदारी कैसे मंजूर कर ली।"

कुछ देरतक सोचकर और शान्त होकर शुभकरणने कहा,—"ठीक है उसका मतलव तुम नहीं समझ सकते। उसकी तहमें अवश्य कोई वात है।"

वादशाही दरवारमें चम्पतरायके आदर-सत्कारकी वात सुनकर शुभकरण जितने चकित हुए थे, हीरादेवी उतनी ही दुखी हुई थी। किशुनकी वातोंसे शुभकरणका आश्चर्य तो दूर हो गया, पर हीरादेवीका दु ख दूर न हुआ, उलटे वह और भी वढ गया। वादशाही दरवारमें उसके दुश्मनकी वहुत प्रतिष्ठा हुई, यह वात उसे वहुत ही असह्य हुई। चम्पतरायपर तो वह वादशाहकी क्रोधाग्निकी वर्षा कराना चाहती थी, उलटे वे उसके कृपापात्र वन गये। यही सव सोचकर हीरादेवीको चैन न पडता था। उसने सोचा कि पहले शान्त होकर इस नये सकटका विचार कर लेना चाहिए और तव आगेका कर्तव्य निश्चित करना चाहिए। इसी लिए उसने तुरन्त उस दिनकी वैठकका काम समाप्त कर दिया। राजे और सरदार आदि और कुछ दिनों तक पहाडसिंहके अतिथि वने रहे।

सारी रात हीरादेवीको सोचते विचारते ही वीती। उसे नाम मात्रको भी नींद न आई। दूसरे दिन सवेरे जव गिरिजा उसके पास आई तव उसने देखा कि रानीके चेहरे पर आसुरी आनन्द छाया हुआ है। उसे कुछ भय भी मालूम हुआ, इस लिए उसके पैर कुछ ढीले पड गये। हीरादेवीने कुछ कडककर उससे कहा,—जाओ, राजा शुभकरणजीसे कहो कि "रानी साहवने आपको याद किया है।"

थोड़ी देर वाद शुभकरण वहाँ पहुँच गये। वडी ही प्रसन्नतासे हीरादेवीने उनके कानमें कुछ वातें कहीं। सुनते ही शुभकरणका चेहरा काले ठीकरेसा हो गया। उनके मुखपरका तेज जाता रहा और उसके स्थानपर भय, पश्चात्ताप

और आत्मनिन्दाके चिह्न चित्रित होने लगे। वे भयभीत दृष्टिसे हीरादेवीकी ओर देखते हुए वहाँसे चले गये।

थोड़ी देर बाद हीरादेवीने देखा कि कुम्हलाये हुए फूलकी तरह विजया उसके पास खड़ी हुई है। जान पड़ता था कि उसके हृदयपर बड़ी भारी चोट पहुँची है।

हीरादेवीने उससे कुछ उपेक्षा जतलाते हुए पूछा,—" तुम यहाँ कैसे आई ?"

भयभीत दृष्टिसे हीरादेवीकी ओर देखकर उसने कहा,—" मैं यही जाननेके लिए यहाँ आई थी कि पिताजीको छुड़ानेके लिए आप लोगोंने क्या उपाय सोचा है ?"

हीरादेवीने विकट रूपसे हँसते हुए कहा,—" बड़ी आई है पिताजीकी दुलारी ! हम लोग उनके लिए क्या उपाय सोचेंगे और हम लोगोंके उपायोंसे हो ही क्या सकता है ? अब महेवा और ओड़छेके राजघरानोंमें मेल होनेवाला है। राजा चम्पतराय और छत्रसाल दिल्लीसे लौटकर आते होंगे। यहाँ हम लोग उनका आदर-सत्कार करेंगे और हो सकेगा तो उन्हींसे कोई उपाय भी कराया जायगा। पर अभी उनके बारेमें कुछ नहीं हो सकता।"

बालिका विजया तुरन्त वहाँसे चली गई। उसकी पहलेवाली बेकली अब दूर हो गई थी। उसने बड़ी ही तुच्छतापूर्ण दृष्टिसे एक बार रानी हीरादेवीकी ओर देखा और तब वह वहाँसे बड़ी ही तेजीसे, हवाकी तरह, चल दी।

उसके चले जाने पर हीरादेवी फिर एक बार विकट रूपसे हँसी।

चौदहवाँ प्रकरण।

हृदये तु हलाहलम् ।

प्रचण्ड ज्वालामुखीके फटनेके कारण जिस प्रकार उसके आसपासकी स्थिति बदल जाती है, भूकम्पके धक्केसे जिस प्रकार किसी लम्बे चौड़े मैदानमें सुन्दर सरोवर उत्पन्न हो जाता है, अथवा जादूकी छड़ी जिस प्रकार पलक मार-नेमें बिलकुल ही नया दृश्य सामने उपस्थित कर देती है, ओड़छेकी प्रजाने

देखा कि ठीक उसी प्रकार रानी हीरादेवीके मनकी स्थिति भी बदल गई है। सिंहको अपना क्रूर स्वभाव त्याग कर दयामय बनते देखकर जितना आश्चर्य हो सकता है, चरती हुई गौओंको देखकर प्रसन्न होनेवाले बाघके देखनेसे जो आनन्द हो सकता है और सॉपको अपनी दुष्टता छोडकर सज्जनताका व्यवहार करते देखकर जो समाधान सम्भव है, ओडछेकी प्रजाको आज वही आश्चर्य, वही आनन्द और वही समाधान हो रहा था। दीवानखानेमें बैठकर महेवाके राजकुल पर जहर उगलनेवाली नागिनको आज इतना शान्त और निरुपद्रवी देखकर स्वय राजा पहाडसिंहको भी रहरहकर आश्चर्य होता था। आकाशमें सुन्दर और सुगधित फूल लगनेकी बात सुनकर लोगोंको जितना आश्चर्य हो सकता, उतना ही बल्कि उससे भी कुछ अधिक आश्चर्य लोगोंको हीरादेवीके व्यवहारसे होने लगा था। ओडछेमें राजा चम्पतरायके स्वागतकी तैयारी बड़ी धूमधामसे हो रही थी। नगरके पश्चिमका बडा प्रवेश-द्वार तरह तरहके फूलोंकी मालाओंसे सजाया जा रहा था। जिस रास्तेसे राजा चम्पतरायकी सवारी राज-प्रासादकी ओर जानेको थी उसके दोनों ओर वन्दनवार और तरह तरहकी झण्डियॉ लगाई गई थीं। विशेषत चतुर्भुजका मन्दिर और भी उत्तमतासे सजाया गया था। यदि उस मन्दिरकी सजावटको छोडकर बाकी सजावट पर ध्यान दिया जाता तो कहा जा सकता था कि यह वही सजावट है जो वीरसिंहदेवके समयमें शाहजादा सलीमके आनेपर की गई थी।

नगरके पश्चिम द्वारपर युवराज विमलदेव बहुतसे सरदारोंको साथ लिये हुए घोडे पर सवार खडे थे। उन सरदारोंके चेहरोंसे आनन्द भी प्रकट होता था और आश्चर्य भी। उन्हे आनन्द तो नगरकी सजावट देखकर होता था और आश्चर्य उसका कारण समझकर। यदि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र कौरवोंके साथ सन्धि कराने में सफल हो जाते तो उनके चेहरे पर आनन्द, विजय और लोकहितकी जो पवित्र प्रभा दिखलाई पड़ती, उससे कहीं अधिक प्रभा उस दिन विमलदेवके चेहरे पर दिखलाई पड़ती थी। उन्हें स्वप्नमें भी कभी इस बातका ध्यान नहीं हुआ था कि जयसागर सरोवरके किनारे युवराज छत्रसालने जो काम हमारे सपुर्द किया था वह इतनी जल्दी और इतनी उत्तमतासे हो जायगा—ओडछे और महेबाके राज-घरानोंमें मेल हो जायगा। पर उसी बातको जाग्रत अवस्थामें और प्रत्यक्ष देखकर विमलदेवको जो आनन्द हो रहा था, उसके कारण वे फूले अगों

न समाते थे। राजा चम्पतराय और युवराज छत्रसालकी अब तक उन्होंने जो तरफदारी की थी, उसका उन्हें और भी अधिक अभिमान होने लगा। दो ही दिन पहले दीवानखानेमें हीरादेवीने जो कुछ कहा और उसके दूसरे दिन शुभ-करणके कानमें उसने जो कुछ कहा था, उसकी उन्हें कल्पना भी नहीं थी। यदि उन्हें इस बातका तनिक भी सन्देह हो जाता कि मेरी माता हीरादेवीने गौका जो निरुपद्रवी रूप धारण किया है, उसके अन्दर बाघिनकी क्रूर आत्मा छिपी हुई है तो न जाने भय और शोकसे उनकी क्या गति होती।

ज्यों ज्यों स्वागतका समय पास आने लगा त्यों त्यों विमलदेवकी उत्सुकता और भी बढने लगी। वे घडी घडी सूर्य्यकी ओर देखकर सोच रहे थे कि कब यह अस्त होगा और कब मुझे राजा चम्पतराय और युवराज छत्रसालका स्वागत करनेका अवसर मिलेगा। अन्तमें सूर्य्य आकाशपरसे पश्चिमी क्षितिजपर उतरा। विमलदेवको यह आशा होने लगी कि अब क्षणभरमें वह अस्त हो जायगा। सूर्य्य अस्त हो गया। पर तो भी उन्हें राजा और युवराजको सवारी दिल्लीके रास्तेसे आती हुई न दिखलाई दी। थोडी देर बाद उन्हें पश्चिम दिशामें कुछ मेघसे जान पडने लगे। उन्होंने फिर पश्चिमकी ओर देखा तो उन्हें ऐसा जान पडा कि सूर्य्य अभी पहलेकी तरह ही प्रकाशित हो रहा है। उन्होंने समझा कि अभी तक सूर्य्य अस्त नहीं हुआ, वह खाली मेघोंकी आडमें छिप गया था। उनकी उत्सुकता और भी बढने लगी, अब उन्हें ऐसा जान पडने लगा कि पश्चिम दिशामें चमकनेवाला सूर्य्य धीरे धीरे बढता हुआ मेरी ही ओर आ रहा है। वे बडी ही आश्चर्य्य भरी दृष्टिसे अपनी ओर आनेवाले बुन्देलखण्डके सू-र्य्यकी ओर देखने लगे।

छत्रसालके गम्भीरतापूर्ण आनन्द और विमलदेवके स्नेहाङ्कित दर्शनमें ही स्वागतके सारे काम हो गये। चम्पतरायके इस विचारके सामने उनके और सब विचार भूल गये कि जो स्थान प्रतापशाली रुद्रप्रतापके चरणरजसे पवित्र हो चुका है, उसी स्थानपर थोडी देरमें मैं भी पहुँच जाऊंगा। रास्तेमें उन पर जो पुष्प-वृष्टि होती थी वह तो उन्हें दिखलाई न पडती थी, हाँ उसके स्थानपर उन्हें रुद्रप्रतापके प्रशंसनीय अमूर्त्तिक कार्य्योंके दर्शन होते थे। अपने नामकी जयध्वनि तो उन्हे सुनाई न पडती थी, पर रुद्रप्रतापके यशकी दुन्दुभी वे अवश्य सुनते थे। फूलों और इत्रोंकी सुगन्धि तो उन्हे कुछ भी न जान पडती थी

लेकिन रुद्रप्रतापकी कीर्त्तिके परिमलसे उन्हें दसों दिशायें भरी हुई मालूम होती थीं। ओडछेमें इस प्रकार आदर-सत्कार ग्रहण करते हुए चम्पतराय चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर बढ रहे थे।

जिस समय राजा पहाडसिंहके बहुत आग्रह करने पर राजा चम्पतरायने उनका निमंत्रण स्वीकार किया था उस समय उन्होंने अपनी यह इच्छा भी प्रकट की थी कि मैं पहले चतुर्भुजके दर्शन करके तब राजमहलमें जाऊँगा। इसी लिए चतुर्भुजका मन्दिर बडी ही उत्तमतासे सजाया गया था। नगरके द्वार पर तो उनके स्वागतके लिए युवराज विमलदेव भेजे गये थे और चतुर्भुजके मन्दिरमें राजा पहाडसिंह अपने बहुतसे सरदारोंके साथ बैठे हुए थे। राजा पहाडसिंहको हीरादेवीने मानो इस बातकी कड़ी आज्ञा दे दी थी कि चम्पतराय, छत्रसाल या उनके किसी साथीकी ओर जरा भी तिरस्कारकी दृष्टिसे न देखना, उनके दर्शनोंसे बहुत ही आनन्द और सन्तोष प्रकट करना, उनके साथ बहुत ही प्रेम और विनयसे बात करना, अपनी बातों और कार्य्योंसे उन्हे इस बातका पूरा पूरा विश्वास दिला देना कि अब हममें मत्सर और द्वेषका नाम भी नहीं रह गया है, यहाँ तक कि उन्हें अपना परम परोपकार-कर्त्ता मानकर उनके साथ प्रेम, आदर और कृतज्ञताका व्यवहार करना। राजा पहाडसिंहने अपनी रानीकी इस आज्ञाका पालन भी बड़ी ही सुन्दरता और दक्षतासे किया था। चम्पतरायको अपने साथियोंके साथ मन्दिरमें प्रवेश करते देखकर पहाडसिंह अपनी मायावी कृतज्ञताके परदेमें अपना मत्सर छिपानेके लिए बडे ही आदरसे उठकर खड़े हो गये। शिष्टाचार, आदर-सत्कार और कृतज्ञताकी जजीरोंमें जकडी हुई उनकी जबान मर्य्यादित क्षेत्रमें खूब काम करने लगी। उनके चचल नेत्रोंने द्वेषके भावको खूब अच्छी तरह दबाकर अतिशय आनन्द प्रकट करना आरम्भ किया। अपनी स्त्रीसे पढे हुए पाठोंको पहाड़सिंहने इतनी उत्तमतासे राजा चम्पतरायके आगे दोहराया कि चम्पतरायको उनका वह मायावी प्रेम और कपटपूर्ण व्यवहार बिलकुल ही सत्य और वास्तविक जान पडने लगा। उन्होंने यह समझकर पहाड़सिंहको अपने हृदयमें स्थान दिया और उनका अपराध क्षमा किया कि इन्हें अपने पुराने अनुचित कृत्यों पर बहुत ही पश्चात्ताप हुआ है।

युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिरायको भी यह जान कर बहुत ही आनन्द और सन्तोष हुआ कि महेवा और ओड़छेके राज-घरानोंमें अब किसी

प्रकारका विरोध नहीं रह गया और पूरा पूरा मेल हो गया है । इस प्रशसनीय कार्यके लिए वे युवराज विमलदेवकी प्रशसा करने लगे । चतुर्भुज देवालयसे चलनेके उपरान्त राजमहलके द्वार पर पहुँचने तक रास्ते भर दलपतिराय और विमलदेवको युवराज छत्रसाल यही समझाते रहे कि विमलदेवकी इस विमल कीर्ति और मेलके परिणामस्वरूप बुन्देलखड किस प्रकार स्वतत्र हो जायगा ।

राजप्रासादके सजे सजाए द्वार पर रानी हीरादेवी अपनी बहुतसी सहेलियोंको साथ लिये राजा चम्पतराय और युवराज छत्रसालकी मगल-आरती उतारनेके लिए तैयार खडी थी । उसका ऐसा स्वागत देखकर चम्पतरायको बहुत आनन्द हुआ । उन्होंने दो एक बार लोगोंको यह भी सुना दिया कि यह स्वागत मेरा नहीं बल्कि हम लोगोंमे सचार करनेवाली स्वतंत्रताका हो रहा है । थोडी देरमें चम्पतरायकी आरती उतारनेके लिए एक प्रौढा हँसती हुई गजगतिसे आगे बढी । चम्पतरायको ऐसा जान पडने लगा कि बन्धुप्रेम, पितृनिष्ठा और गुरुभक्ति मानो एक प्रतिमामे ही अवतरित होकर हमारे सामने खडी है । वे मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुए । अपना इतना आदर-सत्कार करने और आरती उतारनेवाली प्रौढाकी ओर उन्होंने जब दोबारा देखा तब उन्हें मालूम हुआ कि वह और कोई नहीं स्वय पहाडसिंहकी स्त्री रानी हीरादेवी है । पहाडसिंहका व्यवहार देखकर जो चम्पतराय आज आश्चर्य-चकित हुए थे, हीरादेवीका व्यवहार देखकर वे और भी स्तम्भित हो गये । चम्पतराय बहुत अच्छी तरह जानते थे कि हीरादेवी बडी ही भयकर राक्षसी है, वह नागिन और बाघिनसे भी बढकर है । इसी लिए जब उन्होंने देखा कि आज हीरादेवी मुझे गालियाँ देना छोडकर मेरी आरती करनेमे अपने आपको धन्य मानती है, तब उनके आश्चर्यकी सीमा न रही ।

चम्पतरायने बडे ही आश्चर्यसे कहा,—" हीरादेवी ! आज पहाडसिंहने और तुमने मिलकर अपने व्यवहारमें आकाश-पातालका जो अन्तर दिखलाया है, उससे स्वय परमेश्वरको भी बड़ा ही आश्चर्य होगा । बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताके मार्गको विकट और कण्टकाकीर्ण करने तथा बुन्देलोंके स्वातन्त्र्य-प्रेमका नाश करनेके लिए ही ईश्वरने तुम्हारी रचना की थी । पर स्वतन्त्रताके लिए दिनरात झगडनेवाले मेरे सरीखे आदमीकी तुम्हे इस प्रकार पूजा करते देख शायद ईश्वरको भी इस बातका दु ख होगा कि उसने तुम्हारी रचनामें बडी चूक की ।

लेकिन हमारी विन्ध्यवासिनी–हमारी स्वतन्त्रता देवी—ओडछेके रुद्रप्रतापके वंशजको अपनी भक्ति करनेका पात्र देखकर बहुत ही प्रसन्न और सन्तुष्ट हुई होगी। हीरादेवी ! दिल्लीमें बादशाह तक अभी यह समाचार नहीं पहुँचा है कि मैंने रणदूलहखॉको पकडकर कैद कर लिया है। पर हॉ, दो चार या दस दिनोंमें यह बात उनके कानों तक अवश्य पहुँच जायगी। उस समय वह कट्टर और धर्मान्ध बादशाह अपनी सारी शक्ति एकत्र करके बुन्देलखण्डको पीस डालनेका प्रयत्न करेगा। बुन्देलखण्डपर शीघ्र ही ऐसा विकट प्रसग आनेवाला है। इस लिए पहले ही सचेत हो जानेके अभिप्रायसे मैंने इस आशयका प्रार्थनापत्र सारे बुन्देलखण्डमें बॉटा है कि समस्त वीर आकर बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताके झडेतले एकत्र हों, बुन्देलखण्डकी सारी शक्ति इकट्ठी हो जाय। आज तुम लोग इस प्रार्थनापत्रका सत्कार, स्वतन्त्रताके उच्च ध्येयका आदर, कर रहे हो। ओडछेका राजघराना रुद्रप्रतापके रक्तसे बना है। राजा पहाडसिंहके रोम रोममें रुद्रप्रतापका तेज खेल रहा है। इसी लिए जिस प्रकार बहुत दिनों तक गीदडकी मॉंदमें रह चुकनेवाला शेरका बच्चा उचित अवसरपर अपना तेज दिखाये बिना नहीं रहता, उसी प्रकार राजा पहाड़सिंह भी—जो शेरके बच्चे हैं—उचित समयपर गीदडका साथ छोडकर स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए अपना तेज दिखला रहे हैं और योग्य मार्गका अवलम्बन कर रहे हैं। ईश्वर करे, तुम लोगोंका उद्देश्य पूर्ण और मनोरथ सफल हो।''

हीरादेवीको अब अच्छी तरह विश्वास हो गया कि मेरा उद्देश्य निर्विवाद सिद्ध हो जायगा। उस उद्देश्य और मनोरथका आसुरी प्रतिबिंब उसके हास्यमें दिखलाई पडने लगा। यदि उस समय चम्पतरायने उसकी ओर ध्यानपूर्वक देखा होता तो वे राजप्रासादमें कभी प्रवेश न करते। वे अपने सामने भावी स्वतन्त्रताके सुन्दर और मनोरम चित्र खींचते हुए राजप्रासादकी सीढियॉं चढ रहे थे।

आधी रात बीत गई। निशापति काली निशाके सहवाससे ऊब कर थोड़ी ही देर पहले अमृत पान करनेके लिए स्वर्गकी ओर चल दिये थे। तारकासुन्दरियोंने स्वच्छन्दतापूर्वक आकाशमें नृत्य करना आरम्भ कर दिया था। बेतवा नदीका निर्मल जल ओड़छेके राजाप्रसादको छूता हुआ बडे ही शान्त भावसे बह रहा था। शान्तिदेवी चारों ओर निष्कण्टक राज्य कर रही थी। परन्तु चम्पतरायका स्वतन्त्रतावाला मनोरम चित्र अब तक बराबर उनकी ऑंखोंके सामने खिंच रहा

था। स्वतन्त्रता देवीका वह चित्र खींचते समय उसमें उन्होंने वेतवाके निर्मल जलका भी उपयोग किया, पर तो भी वह जैसा सुन्दर बनना चाहिए था, वैसा न बना। स्वतन्त्रता देवीके मनमें प्रजाके कल्याणकी जो ज्योति जलती रहती है, चम्पतराय अपने चित्रमें वह ज्योति खूबीके साथ न ला सकते थे। प्रजाके कल्याणमें अनेक परस्परविरोधी सुखसाधनों, परस्परविरोधी अधिकारों, परस्परविरोधी मनोभावों और परस्परविरोधी उद्देश्योंका समावेश होनेके कारण चम्पतराय यह निश्चित न कर सकते थे कि स्वतन्त्रता सुन्दरीके चेहरे परका तेज कितना शान्त अथवा कितना उग्र हो, कितना सुन्दर अथवा कितना भयावना हो, कितना दयापूर्ण अथवा कितना कठोर हो। उन्होंने एक वार उस देवीके मुखपर प्रेमका लाल रंग दिया, उस समय उन्हें ऐसा जान पड़ने लगा कि उसमें स्वतन्त्रताके शत्रु यवनोंका कल्याण भी प्रतिबिंबित हो रहा है और पराएके कल्याणके लिए धीरे धीरे उनके भाइयोंके कल्याणका भी बलिदान हो रहा है। यवनोंका कल्याण रोकनेके लिए जब उन्होंने उसका मुख रंग-बरंगा करना चाहा तब उनके मानसचक्षुको दिखलाई देने लगा कि इसमें हमारे भाइयोंकी भी हानि हो रही है। यवनोंके ह्रास और बुन्देलोंके उदयको स्वतन्त्रता देवीके मुखपर चित्रित करनेके लिए उन्होंने मिश्र मनोभावोंकी छाया झलकानी चाही, तो उन्हें इस बातका सन्देह होने लगा कि उन्नत मनोविकार यवनोंकी ओर चले जायँगे और नीच मनोविकार बुन्देलोंके हिस्सेमें रह जायँगे, जिनके कारण वे गुलामीमें ही अपनेको धन्य समझेंगे। इसी लिए अब तक चम्पतराय स्वतन्त्रतादेवीका ठीक ठीक चित्र खींचनेमें समर्थ न हो सके थे। चम्पतरायको यह सोचकर कुछ दुःख हुआ कि इतना प्रयत्न करनेपर भी जिस स्वतन्त्रता देवीका चित्र हमसे नहीं खिंच सकता, उसकी प्राप्ति किस प्रकार होगी और उससे हमारा काम किस प्रकार चलेगा। वे सोचने लगे,—यदि हम लोग स्वतन्त्रता सुन्दरीको प्राप्त नहीं कर सके हैं तो भी उस देवीके मन्दिरके मार्गमें आगे बढ़ रहे हैं, मन्दिरकी अधिष्ठात्री देवी यदि हमें स्पष्ट रूपसे नहीं दिखलाई पड़ती तो भी उस मन्दिरके ऊँचे शिखर हमें साफ दिखलाई देते हैं। आयुष्यकी क्षणभंगुरता, बुद्धिकी अल्पता अथवा मार्गदर्शकके अभावके कारण यदि हम लोगोंको स्वतन्त्रता देवीके दर्शन न हों तो भी उसके मन्दिर तक हम अवश्य जा पहुँचेंगे। तब उस देवीके दर्शन, उस देवीकी प्राप्ति हमारे बाद

युवराज छत्रसाल अवश्य कर लेंगे। यह बात विचार करके चम्पतराय सोनेके लिए अपने पलंगकी ओर जाने लगे। इतनेमें उन्हें ऐसा जान पडा कि जिस स्वतन्त्रता देवीकी मुझसे कल्पना भी न हो सकी थी वही देवी सोये हुए छत्रसालके पास खड़ी हुई उनकी ओर प्रसन्नतापूर्वक देख रही है। उन्हें ऐसा मालूम होने लगा कि वह देवी छत्रसालके गलेमें माला डालना चाहती है। वे बहुत ही प्रसन्न होकर बोल उठे —

" स्वतंत्रता सुन्दरी! तुम मेरे पुत्रको धन्य करना चाहती हो। तुम्हारे कारण सारा बुन्देलखड पावन होना चाहता है। बुन्देलखडके सुख और कल्याणका मार्ग तुम प्रकाशित करना चाहती हो। "

सुन्दरी मानो अपने सुखस्वप्नसे अचानक जाग उठी और चम्पतरायकी ओर देखकर बोली,–

" महाराज, मैं विजया हूँ। "

चम्प०—" तुम विजया हो? तब बिना तुम्हारे स्वतन्त्रता देवीके मन्दिरका द्वार छत्रसाल कैसे खोल सकेंगे? "

विजयाने पुन मनोहर स्वरमे कहा,–" महाराज मैं ढोंढेरकी राजकुमारी विजया हूँ। "

चम्प०—" तुम कचुकीरायकी कन्या विजया हो? तुम्हारे ही द्वारा विन्ध्यवासिनीने छत्रसालके गलेमें माला डलवाई थी न? तुम इतनी रातको यहाँ क्या करने आई? "

वि०—" रानी हीरादेवीके आदर-सत्कारका वास्तविक स्वरूप आप लोगोंको समझानेके लिए ही मैं यहाँ आई हूँ। आप मुझे यहाँ दिखलाई न पड़े इस लिए मैं युवराज छत्रसालको जगानेका विचार करने लगी। इतनेमें आप आ ही गये। महाराज! राजा पहाड़सिंह और रानी हीरादेवीने आप लोगोंका जैसा अच्छा आदर-सत्कार किया है उससे आप लोग बहुत सन्तुष्ट जान पड़ते हैं। "

चम्पतरायने आश्चर्यसे विजयाकी ओर देखते हुए कहा,—" भला ऐसे प्रेमपूर्ण सत्कारसे कौन सन्तुष्ट न होगा? पहाडसिंह और हीरादेवी दोनों अभी पश्चात्तापकी अग्निमेंसे तपकर और शुद्ध होकर निकले हैं। उनके पुराने दुष्ट मनोविकार नष्ट हो गये हैं, स्वतन्त्रताका सुन्दर प्रकाश उनके मनमें फैलने लगा है, वे समझ गये हैं कि हम लोगोंपर महेवाके राजकुलका कितना उपकार है

और अपनी वातोंसे उन्होंने यह झलका दिया है कि उस राजकुलको वे अपनेसे अधिक उच्च और प्रतिष्ठित स्थानपर देखना चाहते है । वे लोग ज्योंही स्वतंत्रताके उचित मार्गसे हटे थे त्यों ही मैंने समझ लिया था कि वे लोग मेरे इस समारसे उठ गये । अव वे लोग मुझे फिरसे मिले हैं । आजकी हीरादेवी वास्तवमे देवी होनेके योग्य है । ऐसे प्रिय भाई और ऐसी सद्गुणी देवीके आदर-सत्कारसे भला मैं क्यों न सन्तुष्ट होऊँ ?"

विजयाने वहुत ही नम्रतापूर्वक कहा,—" महाराज ! आपका वह सारा आदर-सत्कार केवल वनावटी और दिखौआ था । वह विलकुल मृग-जल था । मृग-जलमें जिस प्रकार जलका आभास तो पूरा पूरा होता है पर जल एक वूँद भी नहीं रहता, उसी प्रकार आजका आदर-सत्कार भी विलकुल मायावी था, उसमें सच्चा प्रेम नाममात्रको भी न था ।"

चम्प०—" तुम्हारा ऐसा कहना मानो सत्यका अपमान करना है । आज तक दूसरोंकी वातोंपर विश्वास करनेके कारण ही ओडछे और महेवाके राजघरानोमे वैर इतना वढ़ता गया है । अव आगेसे मिलकर स्वतन्त्रताकी प्राप्तिका प्रयत्न करना छोडकर तुम्हारे समान अल्पवुद्धि वालिकाकी वातोंका विश्वास करना मैं ठीक नहीं समझता । अगर तुम किसीके कहने सुननेसे मुझे वहकानेके लिए यहाँ आई हो तो मैं तुम्हारी वात नहीं मान सकता ।"

वि०—" महाराज ! यह आप क्योंकर समझते हैं कि मैं आपको वहकाने और आप लोगोंमे वैर करानेके लिए यहाँ आई हूँ ? क्या कारण है कि रानी हीरादेवी तो आपको सत्यताकी पुतली जान पडती है और यह विजया असत्यताकी पुतली ? आजतक हीरादेवीने आपके साथ जैसे व्यवहार किये हैं, पहले एक वार उनका ध्यान कीजिए और इस वातका विचार कीजिए कि वैसे मत्सर, वैसी नीच मनोवृत्ति और वैसे कपट-पूर्ण व्यवहारोंमें सात्विक प्रेमकी उत्पत्ति किस प्रकार हो सकती है । जवसे हीरादेवीने यह सुना है कि दिल्लीमे आपको वारह हजार सवारोंकी मन्सवदारी मिली है और आप अमीर वनाये गये हैं, तभीसे हीरादेवीने यह मायावी रूप धारण किया है । आपके प्रार्थनापत्र पर आपके विरुद्ध गुप्तमन्त्रणा करनेवाली और दो ही दिन पहले दीवानखानेमें आपके विरुद्ध लोगोंके भडकानेके लिए गरजनेवाली हीरादेवी एकाएक किस प्रकार नम्र, सीधी और सच्ची वन गई ! जो कोमल मनोविकार हीरादेवीको कभीके छोड चुके हैं,

जो आदर सत्कारकी भावना हीरादेवीको वरसोंसे छू नहीं गई है, जिस मेलकी कल्पनाको हीरादेवीने आजतक कभी अपने पास फटकने भी नहीं दिया, जिस स्वतन्त्रता-प्रेमकी हीरादेवीने मत्सरकी आगमें आहुति दी, क्या वह कोमल मनो-विकार, वह आदर-सत्कारकी भावना, वह मेलकी कल्पना और वह स्वतन्त्रता-प्रेम विना किसी प्रकारके अनुभवके अथवा विना किसी अन्य प्रवल कारणके आप-ही-आप जाग्रत हो सकता है ? विना किसी भीतरी या वाहरी कारणके ही केवल दो दिनोंमें द्वेषसे प्रेम, मत्सरसे आदर, शत्रुसे मित्र और कृत्यासे देवी वनना किस प्रकार सम्भव है ? क्या इतने कारण इस वातका विश्वास करनेके लिए यथेष्ट नहीं हैं कि हीरादेवीका आजका व्यवहार विलकुल कपटसे भरा हुआ और मायावी है ?"

विजयाकी वातें सुनकर चम्पतराय वहुत ही चकराये। वे हीरादेवीके पुराने और आजके व्यवहारोंकी तुलना करने लगे।

विजयाने और अधिक आवेशमें आकर कहा,—"यदि इतने कारण यथेष्ट न हों तो हीरादेवीकी नीचताका मैं आपको एक और प्रमाण दे सकती हूँ। महेवाके राजघरानेका समूल नाश करानेके लिए उसने मेरे पिताजीको इस लिए दिल्ली भेजा था कि वे वहाँ जाकर वादशाहसे आपके रणदूलहखाँको कैद कर लेनेका सारा हाल कहें। पिताजीकी वातोंपर रोशनआरा वेगमको विश्वास नहीं हुआ, इस लिए वे तो वहाँ नजरवन्द कर लिये गये सो अलग। अगर रोशन-आरा बेगमने पिताजीकी वातोंपर विश्वास कर लिया होता तो आज ही महेवाके राजकुलपर कैसी भारी विपत्ति आ पडती ? महाराज ! वही हीरादेवी आपसे इतनी मित्रताका व्यवहार करती है न, जो दिल्लीके वादशाहसे आपका समूल नाश करा देना चाहती थी ?"

चम्प०—"हीरादेवीकी पहली वातें मुझे याद हैं। लेकिन यह कैसे कहा जा सकता है कि उसका आजका व्यवहार विलकुल मायावी है ?"

वि०—"महाराज ! हीरादेवी पहले कृत्या थी और अव राक्षसी वन गई है। हीरादेवीके जो व्यवहार पहले नीच थे वे अब अघोर होते जा रहे हैं। पहले हीरादेवीका उद्देश्य अमानुषी था, पर अव वह आसुरी होता जा रहा है। हीरादेवी बुन्देलखडकी मायावी शूर्पणखा है। उसके पुराने और आजके व्यव-हारोंमें अन्तर भले ही पड गया हो पर उसमें सद्गुण कभी नहीं आ सकते।

व्यसनी मनुष्य एक व्यसन तो छोड देता है पर साथ ही पहलेवाले व्यसनसे भी बढ़कर दूसरे व्यसनमें फँस जाता है। इसी प्रकार हीरादेवीने अपनी पहली नीचता तो छोड दी है पर साथ ही उसने नया आसुरी स्वभाव ग्रहण किया है।"

चम्प०—"यह माना जा सकता है कि हीरादेवीमें सद्गुण न आये हों, तो भी यह क्योंकर माना जा सकता है कि उसका स्वभाव आसुरी हो गया है? तुम यह क्योंकर कहती हो कि हीरादेवीका स्वागत बिलकुल मायावी है?"

विजयाके चेहरेपर झलकनेवाली सत्यतापर चम्पतरायकी दृष्टि गड चली थी।

वि०—"मैंने जो कुछ प्रत्यक्ष देखा या सुना है उसीके आधार पर मैं यह बात कह सकती हूँ।"

चम्प०—"तुमने क्या देखा और क्या सुना है?"

वि०—"मैंने उसके चेहरेपर ही उसके मनमें छिपे हुए आसुरी भावकी झलक देखी है। इसके सिवा मैंने स्वयं अपने कानोंसे सुना है कि आजके स्वागतका ढोंग रचकर वह कौनसा आसुरी कृत्य करना चाहती है।"

चम्पतरायने चकित होकर पूछा,—"भला बतलाओ तो, वह कौनसा आसुरी कृत्य है?"

वि०—"महाराज! हीरादेवीके उस निन्दनीय कार्य, उस नीच उद्देश्यको मुँहसे कहना भी पातक जान पडता है। उस बातको कहनेसे घंटे दो घंटे पहले ही हीरादेवीका मुख बडा ही भयावना हो गया था, उसे सुनकर शुभकरण सरीखे आपके कट्टर शत्रु भी भयभीत हो गये थे और मुझे तो वह बात सुनकर मानो प्राणान्तक कष्ट हुआ था। वही बात मुझे इस समय कहनी पड़ेगी, लेकिन बिना उसके कहे बनेगा भी नहीं। महाराज! हीरादेवी कलके भोजनमें विष मिलाकर आपके प्राण लेना चाहती है।"

चम्प०—"क्या हीरादेवी मुझे जहर देना चाहती है? नहीं नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। तुम झूठ बोलती हो।"

वि०—"नहीं महाराज, मैं कभी झूठ नहीं बोलती। आप विश्वास कीजिए, मैं आपसे सत्य कहती हूँ। विन्ध्यवासिनी देवीको साक्षी करके कहती हूँ कि मैं कभी झूठ बोलना जानती ही नहीं!"

चम्प०—"तो क्या यह बात बिलकुल सच है कि हीरादेवी मुझे जहर देना चाहती है?"

वि०—हाँ महाराज ! बिलकुल सच है । विजया सदा सच ही बोलती है । आप चाहे मेरा विश्वास करें और चाहे न करें, पर मैं एक वार फिर आपसे कहे देती हूँ कि कलके भोजनमें विष मिलाया जायगा । यदि आप पहलेसे ही कोई उपाय न सोच लेंगे तो आपको पछताना पड़ेगा । आपसरीखे रत्नके उठ जानेसे बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रता-प्रेमी आत्माये शोकमग्न हो जायँगी और यह अभागी विजया अपने आपको ही दोषी समझकर पश्चात्तापसे जल मरेगी । महाराज ! आप मेरी बातोंका अविश्वास करके हीरादेवीके जालमें न फँसें और बैठे बैठाये अपने नाशके कारण न बनें ।"

चम्प०—"विजया ! तुम्हारा कहना सच हो सकता है, पर मुझे अभी तक उसपर विश्वास नहीं हो रहा है । तुम्हारी बातोंपर विश्वास करके यदि कोई काम कर बैठा और पीछेसे तुम्हारी बात ठीक न निकली तो व्यर्थ जगमें मेरा उपहास होगा ।"

चम्पतरायकी बात सुनकर विजयाको बहुत ही दु ख हुआ । उसने एक बार सोचा कि अब मैं बिना उनसे कुछ कहे सुने यहाँसे चल दूँ, जब वे मेरी बातों पर विश्वास ही नहीं करते, तब फिर जो कुछ होना होगा सो हुआ करेगा । पर ज्योंही उसे यह ध्यान हुआ कि यह विचार मैं किसके लिए कर रही हूँ—अपने प्राणप्रिय छत्रसालके पिताके लिए कर रही हूँ—तो उसने यह विचार छोड दिया । सब तरहका अपमान सहकर भी यथासाध्य प्रयत्न करके चम्पतरायको विष-प्रयोगसे बचाना उसने अपना प्रधान कर्तव्य समझ लिया । वह बहुत ही नम्रतासे बोली,—

"महाराज ! मैं कौनसा उपाय करूँ जिसके कारण आपको मेरी बात पर विश्वास हो ? मेरी बातोंकी सत्यता आप पर किस प्रकार प्रमाणित हो सकती है ?"

चम्प०—"यदि तुम अपनी बातकी सत्यताका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण दो तो मुझे विश्वास हो सकता है ।"

उसी समय चम्पतरायको एक भव्य मूर्ति गम्भीरतापूर्वक अपनी ओर आती हुई दिखलाई दी । वे कुछ कहना ही चाहते थे कि इतनेमें वह मूर्ति स्वयं बोल उठी,—

"चम्पतराय ! तुमने मुझे पहचाना ?"

चम्प०—" हाँ ।"

मू०—" तुम यह बात अच्छी तरह जानते हो न कि झूठसे मुझे बडी भारी चिढ है ?"

चम्प०—" हाँ ।"

मू०—" मेरी बातका तुम्हे अब भी विश्वास होगा ?"

बहुत देर तक सोच विचारकर चम्पतरायने फिर वही पहलेवाला उत्तर दिया। उसे सुनकर वह भव्य-मूर्ति प्रसन्न होकर कहने लगी,—

" चम्पतराय इस लडकीकी बातका अविश्वास न करो । यह सत्यताकी पुतली है । इसने जो कुछ तुमसे कहा है, वह सब सच है ।"

चम्पतराय कुछ भी न बोले ।

मू०—" हीरादेवीके व्यवहारोंकी टीका करनेका मुझे अधिकार नहीं है । तो भी तुमसे बदला लेनेके लिए उसने जो उपाय सोचा है वह मुझे पसन्द नहीं है । तुमसे बदला लेनेके लिए, तुम्हारे प्राण लेनेके लिए मैं हीरादेवीसे अधिक उत्सुक हूँ, तुम्हें इस ससारसे उठा देनेकी ही मेरी दृढ प्रतिज्ञा है । पर तो भी मैं हीरादेवीके आसुरी मार्गका अवलबन नहीं कर सकता । चम्पतराय ! यदि तुम समरक्षेत्रमें मुझसे दो दो हाथ लड कर मरना चाहते हो तो विजयाकी बातों पर पूरा पूरा विश्वास करो और कलके सकटसे अपनी रक्षाका उपाय करो । अपनी प्रतिज्ञाका ध्यान रखते हुए मैं यह सहन नहीं कर सकता कि मेरा शत्रु किसी दूसरेके हाथसे, और वह भी इतनी बुरी तरहसे, मारा जाय ।"

चम्पतराय बहुत ही क्षुब्ध हुए । वे अपनी तलवारकी मूठ पर हाथ रखकर सामनेवाले व्यक्तिकी ओर देखने लगे । उस समय उसने फिर बडे शान्त भावसे कहा,—

" नहीं, शस्त्र चलानेका यह समय नहीं है । अपनी कोमल मनोवृत्तिकी प्रेरणासे अभी मैं तुम्हें केवल हीरादेवीके अघोर कृत्यसे बचाना चाहता हूँ । तुम्हारे ऊपर आनेवाले सकटसे मैंने तुम्हें पहले ही सूचित करनेका प्रयत्न किया, इससे शायद तुम्हारा मन भी कुछ पसीज गया होगा। ऐसे अवसर पर हम लोगोंके शस्त्र पूरा पूरा काम न करेंगे । हम लोगोंके शस्त्र ऐसे अवसरपर चलने चाहिए जब कि सूर्य्य इस पृथ्वीको खूब तपा रहा हो और वैराग्नि भडकानेवाले हम लोगोंके मस्तकोंको भी खूब सन्तप्त कर रहा हो, सामने लाशोंके ढेर पडे हों

खूनकी नदियाँ वहती हों और उसी खूनमें हम और तुम दोनों लथपथ हों। ऐसी प्रशान्त रातमें शयनागारमें कभी किसी वीरकी मरने या मारनेकी इच्छा नहीं हो सकती।"

चम्पतरायको उसकी बात पसन्द आई। उन्होंने तलवार परसे अपना हाथ हटा लिया।

मू०—" चम्पतराय! विजयाने मेरा काम कर दिया है। अब मैं जाता हूँ। तुम इसकी बात पर विश्वास रक्खोगे न?"

चम्प०—" हाँ।"

थोडी ही देरमें वह भव्य-मूर्ति अदृश्य हो गई।

विजयाने पूछा,—" महाराज! अब तो आपको मेरी बातका विश्वास हुआ न?"

चम्प०—" भला शुभकरणकी बातका कौन विश्वास न करेगा? शुभकरण मेरे शत्रु हैं, स्वतन्त्रताके शत्रु हैं और अनेक सद्गुणोंके शत्रु हैं, पर मैं स्वप्नमें भी यह बात नहीं मान सकता कि वे कभी सत्यसे हटेंगे। विजया! अब मुझे पूरा पूरा विश्वास हो गया कि हीरादेवीका आदर सम्मान बिलकुल मायावी है। वह चाहती है कि मैं उसके भुलावेमें पडकर कल मारा जाऊँ। अब तुम्हीं मुझे यह भी बतलाओ कि कल उससे बचनेके लिए कौनसा उपाय किया जाय?"

विजयाने बहुत प्रसन्न होकर कहा,—" महाराज! आपने बड़ी कृपा की जो मेरी बात मान ली और मुझे अपने प्रयत्नमें सफल होनेका अवसर दिया। कल भोजनके समय आपके सामने जो थाल आवे, कृपया उसे स्वीकार न करें और कोई दोष निकाल कर उसे हटा दे। इसके अतिरिक्त जिस चीजके लिए हीरा-देवी विशेष आग्रह करे उसे आप कदापि न खायें। बस, फिर हीरादेवीकी कोई कला न लगेगी। कल सवेरे मैं पहले गिरिजासे मिलूँगी और सब हालचाल पूछूँगी। अगर कोई विशेष बात मालूम हुई तो मैं तुरन्त आपसे मिलकर कह दूँगी। पर यदि भोजनके समय तक मैं आपसे न मिलूँ तो जैसा मैंने अभी बत-लाया है, आप वैसा ही कीजियेगा।"

चम्पतरायने शान्त भावसे कहा,—" ठीक है मैं सब समझ गया। जैसा तुमने कहा है मैं वैसा ही करूँगा। पर तुम्हें हीरादेवीके सम्बन्धकी बातें बतलाने-वाली यह गिरिजा कौन है?"

वि०—" वह हीरादेवीकी एक दासी है जिसपर उसका बहुत विश्वास है । पर गिरिजा उसके कठोर और अनुचित व्यवहारोंसे बहुत दु खी रहती है । उस दीवानखानेकी गुप्त मन्त्रणाका समाचार उसीने मुझसे कहा था ।"

चम्प०—" इस समय यहाँ जितने राजे और सरदार हैं, क्या उस दिनकी मन्त्रणामे ये सब सम्मिलित थे ?"

वि०—" जी हाँ, और तभीसे ये सब लोग यहाँ ठहरे हुए हैं ।"

चम्प०—"मेरे प्रार्थनापत्रका अपमान करने, उसके विरुद्ध लोगोंको भडकाने, स्वतंत्रताके प्रयत्नोंमें बाधा डालने और मुझे विपत्तिमें डालनेके लिए ही उस दिन मन्त्रणा हुई थी न ? स्वधर्मका नाश करने, बुन्देलोंका बुन्देलापन नष्ट करने और देशको पराधीन बनानेके लिए ही उस दिन ये सब लोग एकत्र हुए थे न ? बुन्देलखडकी सघशक्ति और एकताका नाश करना ही उन लोगोंका मुख्य उद्देश्य था न ? हे परमेश्वर ! ऐसे नीच कर्म तुझसे कैसे देखे जाते हैं ? ऐसे हृदय-शून्य पिशाच तेरे न्यायी राज्यमें मनुष्योंके साथ मिल जुलकर कैसे रहने पाते हैं ? चलो, यह भी हो गया, बुन्देलखडके राजे-रजवाडोंसे मैंने अपने प्रार्थनापत्रका उत्तर पा लिया । अब मैं समझ गया कि बुन्देलखडकी स्वतन्त्रताके झडेके नीचे आकर एक भी राजा खडा न होगा । अब उन लोगोंकी मित्रता और शत्रुताका निर्णय हो गया । इस लिए पहले घरके इन भेदियोंका ही नाश करना चाहिए । अच्छा विजया, अब तुम जाओ । जब तुम डँडेर पहुँचो तब अपनी माता सुफलादेवीसे मेरा एक सन्देशा कह देना । मेरी तरफसे तुम उनसे कहना कि महेवाके चम्पतराय तुम्हारी कन्याके अमूल्य सद्गुणोंको देखकर बहुत ही सन्तुष्ट हुए हैं, यदि बुन्देलखडमे सुफलादेवी सरीखी ही मातायें हों तो उसकी उन्नति और स्वतन्त्रतामें तनिक भी विलम्ब न समझना चाहिए । उनसे यह बात कह कर मेरी ओरसे यह भी प्रार्थना कर देना कि जहाँ तक हो सके वह कन्चुकीरायको ठीक मार्गपर लानेका प्रयत्न करें ।"

वि०—(कुछ दु खी होकर) " महाराज अभी पिताजीको ठीक मार्गपर लानेका प्रयत्न कहाँ ! अभी तो वे दिल्लीमें नजरबन्द हैं ।"

चम्प०—" हाँ मुझे उनका पूरा पूरा हाल नहीं माळूम हुआ । तुम जो कुछ जानती हो सो कहो ।"

इस पर विजयाने कंचुकीरायके हीरादेवीसे मिलने, गुप्त परामर्श करने, तद्नुसार दिल्ली जाने और वहाँ जाकर नजरवन्द होनेका पूरा पूरा हाल उन्हें कह सुनाया उसे। सुनकर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा,—"अब रोशनआराके दिन भी पूरे हो चुके हैं, तथापि वह बड़ी ही दुष्ट और क्रूर है। कचुकीरायको अपने यहाँ नजरवन्द रखकर वह जो न करे सो थोडा है। इस लिए मैं बहुत जल्दी रणदूलहखाँको अपने यहाँसे छोड दूँगा। क्योंकि बिना उसे छोडे कचुकी-रायका छुटकारा न होगा। (कुछ देर ठहर और सोचकर) यदि दूसरा कोई जाकर रोशनआरासे रणदूलहखाँके कैद हो जानेका हाल कहेगा तो भी उसे विश्वास न होगा। इस लिए जब स्वय रणदूलहखाँ वहाँ पहुँचकर अपनी दुर्दशाका हाल सुनावेगा तब स्वय रोशनआरा उन्हें आदरपूर्वक छोड़ देगी।"

वि०—"लेकिन तब तो आपपर बडी भारी आपत्ति आ जायगी न? जब बादशाहको यह मालूम होगा कि आपने रणदूलहखाँको कैद कर रक्खा था तब उसकी फौज आपके राज्यपर चढ आवेगी। लेकिन यह तो आप अच्छी तरह समझते होंगे कि अभी बादशाहसे वैर करनेका समय नहीं है।"

चम्प०—"आखिर किसी न किसी तरह तो बादशाहको यह मालूम ही हो जायगा कि मैंने रणदूलहखाँको कैद किया है। ऐसी दशामें इससे पहले ही रण-दूलहखाँको छोड देना मेरी समझमे बहुत अच्छा है। दिल्लीमें दरबारके समय बादशाहने हम लोगोंके साथ जैसा अच्छा बरताव किया था उसका बदला चुका-नेके लिए रणदूलहखाँको छोड देना बहुत अच्छा है। इससे यदि और कुछ न होगा तो कमसे कम इतना तो अवश्य होगा कि लोकलाजके कारण ही बादशाह कुछ समय तक उपद्रव न कर सकेगा। उसी समयमें मैं घरके इन भेदियोंका नाश कर डालूँगा। जिस गूढ नीतिसे मैंने दरबारकी अमीरी और मन्सबदारी स्वीकार की है, रणदूलहखाँको कैदमें रक्खे रहनेसे उसका कोई फल न होगा। राजा जयसिंहकी यह सम्मति बहुत ही ठीक है कि जब तक सारा बुन्देलखंड अच्छी तरहसे तैयार न हो जाय और यहाँके देशद्रोही अच्छी तरह नष्ट न हो जायँ, तब तक बादशाहसे खुलेआम वैर न करना चाहिए और उसे धोखेमें रखना चाहिए। इस बीचमें उससे द्वेष करना बुन्देलखडके लिए हानिकारक है। रणदूलहखाँको छोड़ देनेसे मेरी कोई हानि न होगी। तुमने मुझपर जो उपकार किया है, यद्यपि उसका पूरा पूरा बदला किसी प्रकार नहीं चुकाया जा सकता

तो भी मैं तुम्हारे पिताको अवश्य और बहुत शीघ्र मुक्त करा दूँगा । कल सवेरे ही मैं किसीको महेवा भेज दूँगा जो रणदूलहखाँको जाकर दिल्ली पहुँचा आवेगा । अब तुम जाओ और किसी वातका भय या चिन्ता न करो । तुम्हारे पिता बहुत जल्दी छूटकर आ जायँगे । ”

विजया वहाँसे चलने लगी । उस समय उसकी आँखोंमें कृतज्ञताके आँसू भर आये थे । चलते समय उसने रुद्ध कण्ठसे कहा,—“ महाराज ! आपने हम लोगों पर बड़ा ही उपकार किया । डाँडेरका राजकुल इसके लिए सदा आपका कृतज्ञ रहेगा । यदि ईश्वर चाहेगा तो स्वतन्त्रता प्राप्त करनेमें आपको सबसे पहले टाँडेरसे ही सहायता मिलेगी । ”

चम्पतरायके शयनागारसे निकल कर विजया चली गई ।

* * * *

दूसरे दिन सवेरेसे ही भोजनकी तैयारियाँ खूब ठाठवाटसे होने लगीं । शुभकरणके अतिरिक्त बुन्देलखडके प्राय और सभी राजे उस दिनके भोजनमें सम्मिलित थे । राजा पहाड़सिंहका आसन राजा चम्पतरायके बहुत ही पास, बिलकुल बगलमें था और वे उन्हें सब प्रकारसे प्रसन्न करनेके लिए बीच बीचमें बहुत सत्कारका व्यवहार करते जाते थे । रानी हीरादेवी बड़ी ही तत्परतासे परोसने आदिका प्रबन्ध करा रही थी । छत्रसाल यह देखकर मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हो रहे थे कि इतने राजे मिलकर एक हो गये हैं और ये सब स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए युद्ध करेंगे । अपने पिता राजा चम्पतरायको कुछ गूढ विचारोंमें मग्न देखकर उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ । हीरादेवी समझती थी कि अब मेरे सब मनोरथ सफल हुआ चाहते हैं । भोजनकी सब तैयारियाँ हो गई । हीरादेवीके मनमें प्रसन्नताकी लहरें उठने लगीं । वह इस डरसे थोड़ी देरके लिए वहाँसे हट गई कि कहीं ऐसा न हो कि मेरे चेहरेसे ही लोगोंको मेरे आन्तरिक भावोंका पता लग जाय । जब भोजन आरम्भ करनेका समय हुआ तब चम्पतराय विचारतन्द्रासे एकदम जाग्रत हो उठे । पकवानोंसे भरे और अपने सामने रक्खे हुए सोनेके थालको देखकर उन्होंने कहा,—

“ मैं सोनेके थालमें भोजन नहीं करता, इस लिए कृपा कर मेरे लिए दूसरा थाल मँगवाइये । ”

राजा पहाड़सिंह समझते थे कि रानी हीरादेवी, आज जैसे हो चम्पतरायको खूब प्रसन्न करना चाहती है। उसकी उसी इच्छाको पूरा करनेके लिए उन्होंने हँसते हुए कहा,—

“नहीं दूसरे थालकी कोई जरूरत नहीं है। मेरा थाल चाँदीका है। आइए, आज हमारा और आपका थाल बदल जाय, जिसमें यह प्रेमपूर्ण व्यवहार हम लोगोंको सदा स्मरण रहे।”

पास ही खड़े हुए रसोइयेने पहाड़सिंहकी आज्ञाका तुरन्त पालन किया। जब पहाड़सिंह बड़े आनन्दसे उस सोनेवाले थालमेंके पदार्थ खाने लगे तब चम्पतरायको एक बार फिर सन्देह हुआ कि विजयाने जो कहा था वह ठीक नहीं था। इतनेमे हीरादेवी फिर वहाँ पहुँच गई। थालोंको बदला हुआ देखकर वह बड़े ही व्यथित हृदयसे बोली,—

“यह क्या हुआ? थाल किसने बदल दिये? अब क्या होगा? यह तो इसमेंसे आधे पदार्थ खा भी चुके!”

हीरादेवीकी घबराहट देखकर पहाड़सिंहने हँसते हुए कहा,—“लोग मित्रता दृढ़ करनेके लिए आपसमें पगड़ियाँ बदला करते हैं, हम लोगोंने अपने थाल बदले हैं। इसमें आश्चर्य करने या घबरानेकी कौनसी बात है?”

उस समय चम्पतराय गम्भीर पर तीव्र दृष्टिसे हीरादेवीकी ओर देख रहे थे। उसे अपना भवितव्य स्पष्ट दिखलाई पड़ने लगा था। वह समझ गई कि अब मेरा सौभाग्य घण्टे दो घण्टेसे अधिक नहीं ठहर सकता। यह देखकर उसे बहुत ही अधिक दुःख हुआ कि शत्रुके नाशके लिए जो उपाय किया गया था उससे स्वयं अपना ही नाश हो गया। उसी दुःखमें वह बिना कुछ कहे सुने अपने शयनागारकी ओर चली गई।

चम्पतराय इतनी देरतक गम्भीरतापूर्वक हीरादेवीके मन और भावोंकी परीक्षा कर रहे थे। उसके जाते ही उन्होंने पहाड़सिंहका हाथ पकड़कर कहा,—“इस सोनेके थालवाले पदार्थोंमे जहर मिला हुआ है। आप इसमेंसे एक कौर भी न खायँ।”

यद्यपि चम्पतरायने पहाड़सिंहको आधे भोजन परसे ही उठा दिया था, पर तो भी उसका कोई फल न हुआ। उसके घण्टे भर बाद ही उनपर विषका प्रभाव होने लगा। तरह तरहकी दवायें दी गईं, ओड़छेके बड़े बड़े राजवैद्योंने

अनेक उपाय किये, पर हीरादेवीका मिलाया हुआ जहर इतना तेज था कि उसका प्रभाव किसी चीजसे भी कम न हो सका। पहाडसिंहकी तबीयत बराबर बिगडती ही गई । राजवैद्योंने जवाब दे दिया, कहा, अब महाराज घडी दो घडीके ही मेहमान है । सब उपस्थित राजे आदि बहुत ही निराश और दु खी हुए । विमलदेवका रोना तो और भी बढने लगा । अन्तमे पहाडसिंहने बडे कष्टसे कहा,—" मेरे लिए कोई शोक न करे, कोई दु ख न करे । मैंने अपने जीवनमे कोई ऐसा अच्छा काम नहीं किया है जिसका स्मरण करके लोग मेरे लिए दु खी हों । बेटा विमल ! आज मै तुम्हे मानो बन्धनोंसे मुक्त कर देता हूँ । अब तुम उस पापिनी हीरादेवीके साथ न रहना । ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे ।"

पहाडसिंह बहुत कुछ कहना चाहते थे, पर उनकी वेदना बराबर बढती ही जाती थी, इससे वे कुछ भी न बोल सके । कुछ देर तक ठहर कर उन्होंने फिर धीरे धीरे कहा,—

" चम्पतरायजी, आज तक मैंने आपके साथ जो अनुचित और निन्दनीय व्यवहार किया है उसके लिए मै आपसे क्षमा मॉगता हूँ । आप कहिये कि आपने मुझे क्षमा कर दिया ।"

चम्पतरायने रुद्धकण्ठसे कहा—" यह आप किस प्रकार समझ सकते हैं कि मैंने आपको क्षमा किया या नहीं ? यदि आप किसी प्रकार ईश्वरकी कृपासे इस विपत्तिसे बच जाते तो अवश्य आपको मालूम हो जाता कि मैंने कहाँ तक आपको क्षमा किया ।"

पहा०—" अब मेरे बचनेकी आशा करना बिलकुल व्यर्थ है । आज तक मैंने जितने निन्दनीय कार्य किये है उनके कारण मुझे जो नरक-यातना भोगनी पडेगी वह तो पडेगी ही, पर उसका बहुत कुछ आभास मुझे इसी विषकी वेदनासे होने लग गया है । अब मेरे बचनेकी आशा करना व्यर्थ है, मृत्यु मुझे बहुत ही समीप दिखाई पडती है ।"

इसके बाद पहाडसिंह सुस्तानेके लिए थोडी देर ठहर गये । कुछ ठहर कर बडे ही क्षीण स्वरसे वे फिर बोले—

" वह कृत्या तो यहाँ नहीं है न ? "

जब उन्हें मालूम हो गया कि हीरादेवी यहाँ नहीं है तब वे फिर उसी क्षीण होते हुए स्वरमें बोले,—

"चलो अच्छा हुआ, यह भी बडे भाग्यकी बात है कि अन्त समयमें मुझे उस पापिनी स्त्रीके दर्शन नहीं हो रहे हैं। चम्पतरायजी! जरा और पास आ जाइए। जबतक मेरा जी हलका न होगा तबतक मैं सुखसे न मर सकूँगा। इस समय यहाँ जितने राजे एकत्र हैं उन सबको साक्षी करके मैं ओड़छेका राज्य आपको देता हूँ। आप यहाँके राज-सिंहासनपर युवराज छत्रसालको बैठाइएगा।"

चम्प०—"नहीं, मैं आपकी यह इच्छा पूरी न कर सकूगा। ओड़छेके राज-सिंहासनके उत्तराधिकारी युवराज विमलदेव ही हैं, इस लिए छत्रसाल कभी उसे स्पर्श भी न करेंगे। हाँ, युवराज विमलदेवको सिंहासनपर बैठाकर उनपर देखरेख करना मेरा कर्त्तव्य होगा।"

पहाडसिंहने मानो बडे ही आश्चर्यसे कहा,—"क्या विमलदेव सिंहासनपर बैठेगा? चम्पतरायजी! विमलदेव राजसिंहासनपर बैठनेके कदापि योग्य नहीं है। वह न तो मेरा पुत्र है और न शास्त्रानुसार मेरा उत्तराधिकारी। मेरे वास्तविक उत्तराधिकारी आप ही है। इसी लिए मैं ओडछेका राज्य आपको देता हूँ। मैं चाहता हूँ कि ओडछेके सिंहासनपर छत्रसाल बैठे और विमल उनके साथ रहकर सुखसे अपना समय बितावे। विन्ध्यवासिनीने भी महोत्सवके समय अपनी यही इच्छा प्रकट की थी। विमल! तुम मुझे यह बतला दो कि तुम कौन हो, तब मैं भयानक नरकको जानेके लिए तैयार हो जाऊँगा।"

उसी समय हीरादेवी बडे ही कर्कश स्वरसे चिल्लाती हुई उस कमरेमें घुस आई। उसने कहा,—"चाहे नरकमें जाओ चाहे घोर नरकमें जाओ, पर विमलके सम्बन्धमें एक शब्द भी न बोलना। तुम बेहोशीमें बडबड़ाते होगे। इस लिए मैं तुमसे और यहाँके सब राजाओंसे कहे देती हूँ कि विमलदेव ही ओडछेका युवराज है और उसीको सिंहासन मिलेगा। इसके विरुद्ध किसी दूसरेको सिंहासनपर बैठानेका कोई प्रयत्न न करे।"

यह सुनकर पहाडसिंहको बहुत अधिक क्रोध चढ आया। लोगोंको भय होने लगा कि कहीं इस क्रोधके कारण ही इनकी मृत्यु और पहले न हो जाय। वे उठकर खडे होनेके लिए तडफडाने लगे। जब वे खडे न हो सके तब उन्होंने उठकर बैठनेका ही प्रयत्न किया। जब वे बैठ भी न सके तब उन्होंने बडे ही क्रोधसे हीरादेवीकी ओर देखना आरम्भ किया।

इतनेमें हीरादेवी उनके पास आकर खड़ी हो गई और अपने सौभाग्यके अलकारोंको उतारकर फेंकती और माथेका तिलक पोंछती हुई बोली,–" हीरादेवी तुम्हारी स्त्री नहीं है । ओडछेकी राजमातापर क्रोध दिखलानेका तुम्हें कोई अधिकार नहीं है । "

पहाडसिंहका क्रोध चरम सीमाको पहुँच गया, अपने शरीरकी सारी शेष शक्ति एकत्र करके उन्होंने कहा,—

" चल हट ! कृत्या, चाण्डालिनी, पातकिनी, हत्यारी, अधमा—"

उस समय उनमें अधिक बोलनेकी शक्ति नहीं रह गई थी । आँखें फाड फाडकर बड़े ही क्रोधसे हीरादेवीकी ओर देखते हुए उन्होंने प्राण छोड़ दिये ।

* * * *

पन्द्रहवाँ प्रकरण ।
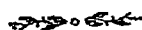
कार्य-सिद्धिमें विघ्न ।

वनराज केसरी चाहे पशु-मात्रका भयकर काल क्यों न हो, पर अपने बच्चेपर उसका अत्यधिक प्रेम रहता है । भगवान् सहस्ररश्मि अपने तेजसे भले ही विश्वको तपा डालते हों पर आकाशोद्यानमें खेलनेवाली अपनी अल्हड कन्या (शशि) की ओर वे शीतल दृष्टिसे देखना ही पसन्द करते हैं । चन्द्र और सूर्य्य सरीखे तेजस्वी वीरोंको लुप्त-प्राय करके गर्वसे गरजने और सारे आकाशमें धमाचौकड़ी मचा देनेवाला मेघ पृथ्वीपर अपनी सन्तानोंपर बडे ही आनन्दसे अपनी कृपाकी वर्षा करता है । उसी प्रकार दिल्लीका जो धर्मान्ध बादशाह तख्त-ताऊस पर बैठकर लोगोंपर तरह तरहके अत्याचार करता था, शाही महलमें पहुँचकर वह भी बहुधा सन्ततिसुखमें मग्न हो जाता था । उस समय धर्मान्धता, राजतृष्णा, अधिकार-मद और इसी प्रकारके दूसरे दुर्गुणोंसे मुक्त होकर वह अपत्य-प्रेमका मानों पुतला बन जाता था । वह बहुत दिनोंसे यह बात अच्छी तरह जानता था कि नमाज पढनेमें मनको जो शान्ति नहीं मिलती, मुल्लाओंसे धर्मचर्चा करनेमें जो सुख नहीं मिलता और कुरान पढनेमें जो आनन्द नहीं होता, वह शान्ति, वह सुख और वह आनन्द अपनी प्यारी कन्या बदरुन्निसाको देखनेसे सहजमें ही होता है । औरगजेबको सदा यह भयप्रद आशका बनी रहती थी कि शाह-

जादोंमें स्वय ही मेरी तरह उच्चाकाक्षाये होगी और उनकी सिद्धिके लिए वे मुझे राज्य-भ्रष्ट करनेमें आगा पीछा न करेंगे, इसी लिए वह जहाँतक हो सकता था, सब शाहजादोंसे दूर रहा करता था। शाहजादी जेबुन्निसा शाही महलकी दूसरी बेगमोंकी तरह अपनी सखियों सहेलियोंके साथ रहती और महलके आवश्यक कार्य्योंकी देखरेखमें ही लगी रहती थी, इस लिए उसकी ओर भी बादशाहका विशेष ध्यान नहीं जाता था। लेकिन बदरुन्निसा एक तो हँसमुख, निष्कपट, सरल और बुद्धिमती थी और दूसरे बाल्यावस्थासे ही बहुधा उसपर उसके पिता औरगजेबका बहुत प्रेम था। जब जब राजकीय उलझनोंसे उसका जी घबराता था, तब तब वह दीवान-ए-खाससे बाहर निकलते ही शाहजादी बदरुन्निसाके महलकी तरफ चल पडता था।

आज दीवान-ए-खासमें बहुत देरतक देवगढके किलेका मामला पेश था, इस लिए बादशाहकी तबीयत कुछ घबरा गई थी। बहादुरखॉ कोका बहुत दिनोंसे देवगढका किला घेर कर बैठा हुआ था, पर तो भी वह किले पर अधिकार न कर सका था। देवगढसे बहादुरखॉका इस आशयका एक पत्र भी आया था कि यदि शीघ्र ही सहायताके लिए भारी सेना न पहुँची तो घेरा उठा लिया जायगा। उसी पत्र पर विचार करनेके लिए आज दीवान-ए-खासमें बहुत देर तक बादशाहको अपने चुने हुए मुसाहिबोंके साथ बैठना पडा था। अन्तमें राजा जयसिंहने कहा कि साम्राज्यमें इधर उधर बिखरी हुई सेनामेंसे कुछ सेना मैं एक मासमें बुलवा लूँगा और उसे देवगढ भेज दूँगा। यही निश्चय करके बादशाह दीवान-ए-खाससे निकला था। तथापि उसका मन शान्त नहीं हुआ था, इस लिए उसे बदरुन्निसाके महलकी ओर जानेकी आवश्यकता पड़ी थी।

बादशाहकी परम प्रिय और प्रधान पत्नी आयशा बेगमके महलके पास ही शाहजादी बदरुन्निसाका स्वर्गतुल्य निवास-स्थान था। उसके पिछवाडेकी तरफ यमुनाकी पवित्र धारा बहती थी। सामनेकी ओर बहुत बढ़िया नजरबाग था, जिसमें फौवारे छूट रहे थे। बाईं ओर उसकी माता आयशाबेगमका और दाहिनी ओर उसके भाई युवराज मुअज्जमका निवासस्थान था। इस प्रकारकी पवित्रताओंसे परिवेष्टित वह स्थान बदरुन्निसाके स्वर्गीय सौन्दर्यसे प्रकाशमान रहता था।

बहुतसे महलोको पार करता हुआ और विलासके अनेक स्थानों, आसपासके सुन्दर दृश्यों और महलोंमें सुनाई पडनेवाले मधुर सगीतोंकी ओर बिलकुल

ध्यान न देता हुआ बादशाह आलमगीर बदरुन्निसाके निवास-स्थान तक पहुँचा। उस समय बदरुन्निसा यमुना नदीके प्रवाहकी ओर देखती हुई सचिन्त बैठी थी। पिताके आनेका समाचार सुनते ही वह स्वागतके लिए बाहर निकल आई। यद्यपि बादशाहने उसे बहुत ही प्रसन्नवदन पाया था पर बहुत देरसे वह जिस चिन्तामें मग्न बैठी थी, उसके कारण उसके मुखपर गम्भीरता और स्तब्धताकी कुछ झलक अवश्य दिखाई पडती थी। तो भी वह अपनी स्वाभाविक सरलताके कारण स्वर्गकी देवी जान पडती थी। उसे देखते ही औरंगजेबको अतीव आनन्द और सन्तोष हुआ और वह अपनी सारी चिन्तायें भूल गया। बदरुन्निसा उसे अपने साथ लेकर बीचवाले बडे कमरेमें आई। बादशाहके बैठ चुकने पर पहले तो इधर उधरकी बातें आरम्भ हुईं, पर जब उसकी पहली वाली चिन्ताने उसको कुछ कुछ गम्भीर बनाये रक्खा और पूर्ण रूपसे प्रसन्न न होने दिया तब बादशाहको उसके चिन्तित होनेका कारण पूछना पडा। बादशाहको प्रसन्न देखकर उसने उस अवसरको अपने कार्यकी सिद्धिके लिए बहुत ही उपयुक्त समझा और अपनी भूमिका इस प्रकार आरम्भ कर दी,—

"किबलए आलम! आसमानके ये तारे बराबर इसी तरह खेला करते हैं, पर अपने इस खेलसे उनका कभी जी नहीं घबराता। जमनाकी धार दिनरात बराबर बहती ही रहती है, पर उसका जी कभी अपने इस कामसे नहीं ऊबता। कमल हमेश पैदा होते, खिलते और कुम्हलाते या तोड लिये जाते हैं, पर तो भी वे हमेश खुश ही रहते हैं। उन्हें कभी तकलीफ या रंजसे कोई मतलब ही नहीं रहता। लेकिन आदमीकी हालतपर गौर फरमाइये। उसके ऐश-आरामके लिए इतने सामान मौजूद रहते हैं पर तो भी वह अक्सर रंजीद ही रहता है, खुशीके मौके उसके लिए बहुत ही कम होते हैं। जिस तरह चिडियां जब उडती उडती थक जाती हैं तब दम लेनेके लिए वे कभी इस पेडपर और कभी उस पेडपर जा बैठती हैं, उसी तरह आदमी भी जब अपने कामोंसे थक जाता है तब तरह तरहके आरामोंकी तरफ ढूँडता फिरता है। लेकिन इस तरह खूब ढूँडनेपर भी उसे कहीं पूरा पूरा आराम नहीं मिलता। मैं अभी यहाँ बैठी बैठी यही सोच रही थी कि आरामके इतने ज्याद सामान मौजूद रहते हुए भी इन्सान हमेश रंज और तकलीफमें क्यों रहता है?"

अपनी कन्याके गम्भीर मुखकी ओर देखते हुए औरंगजेबने बहुत ही गम्भीरतासे कहना आरम्भ किया,—"बेटी! शायद तुम्हें यह मालूम नहीं है कि

इन्सानका खयाल हमेश आगेकी तरफ ही दौड़ा करता है। उसका यह कायदा है कि जो चीज उसे मिल जाती है, उस परसे आहिस्त आहिस्त उसकी तबीयत हटती जाती है और उसकी नजर किसी ऐसी दूसरी चीजपर जा जमती है जिसका मिलना उसके लिए बहुत ही मुश्किल होता है। उसके रज और तकलीफकी वजह यही होती है। लेकिन अगर दूसरे पहलूसे इसे देखा जाय तो इससे इन्सानकी बहुत कुछ बेहतरी भी होती है। इससे उसके खयालात ऊँचे होते हैं और उसे अपनी तरक्कीका बहुत अच्छा मौका मिलता है। एक मामूली सिपाही सरदार बननेकी कोशिश करता है, मामूली सरदार वजीर होनेका इरादा रखता है और वजीर तख्त पानेका ख्वाहिशमन्द होता है। इसी तरह हर एक शख्स ऊँचे मरतबे और दरजेकी ताकमें रहता है जिसका नतीजा यह होता है कि एक मामूली सिपाही भी मौका पाकर तख्त और ताजका मालिक बन बैठता है। एक मुल्क पर कब्जा करनेके बाद आसपासके मुल्कों पर उसकी निगाह दौड़ना बहुत ही मामूली बात है। उसके पास ऐश-आरामका जितना सामान मौजूद होता है उसे वह काफी नहीं समझता और इसी लिए उसके दिलमें दूसरोंकी चीजों पर कब्जा करनेकी हवस पैदा होती है। इसी हवसने बाबरको समरकन्दकी छोटीसी रियासतमें चुपचाप न बैठने दिया और उसने आकर हिन्दोस्तान पर कब्जा कर लिया। अकबरने तख्त पर बैठनेके वक्त जितना मुल्क पाया था उतनेसे उसकी तसल्ली न हुई और उसने अपनी सारी जिन्दगी हिन्दोस्तानके मुखतलिफ सूबोंको फतह करनेमें बिता दी। बगाल और बिहारको वह अपने कब्जेमें ले आया, राजपूतानेकी बहुतसी रियासतोंको उसने अपनी सलतनतमें शामिल कर लिया, गुजरात पर अपना सिक्का जमाया और बुन्देलखडकी आजादीका खातमा कर दिया। अगरचे हिन्दोस्तानके एक बहुत बड़े हिस्से पर मुगलोंका कब्जा हो चुका था पर उसका जनूबी (दक्षिणी) हिस्सा अभी तक सलतनतमें शामिल नहीं हुआ था। उसे कब्जेमें लानेके लिए मेरी कोशिशें हो रही हैं और ये सब बातें इन्सानकी उसी बुलन्द-खयाली या हौसलामन्दीका नतीजा है।"

बद०—" लेकिन जिन लोगोंने अपनी बुलन्दखयालीकी वजहसे सिर्फ अपने और अपनी औलादके आरामके लिए इतनी बडी सलतनत खडी की है क्या उन्होंने कभी यह समझनेकी भी कोशिश की है कि हमारी यह बुलन्दखयाली

और हवस कितने इन्सानोंकी आरजूओंका खून करती है, कितनोंको हदसे ज्याद तकलीफ पहुँचाती है और कितनोंको दाने दानेके लिए मुहताज कर देती है? इस कदर दौलत जमा करनेमें कितने आदमी मुफलिस बनाये गये हैं, ऐश-आरामका इतना सामान मुहैया करनेमें कितनोंको अपना आराम खोना पड़ा है और मुलकोंको फतह करनेमें कितनी औरतें बेवा हुई हैं और कितने बच्चे यतीम हुए हैं? इतनी बडी सलतनत कायम करनेमें कितने बेगुनाहोंके खून हुए हैं, खुदा-वन्द मुझे मुआफ फरमावें, क्या अल्लाह-तआला ऐसे जुल्मोंको कभी पसन्द करता है? आखिर वे बेचारे भी तो उसी खुदाके बन्दे हैं।"

औरंगजेबने कुछ ओजसे कहा,—"उस परवर्दिगारकी मरजी सब लोग नहीं समझ सकते, उसके कानून जानना आसान काम नहीं है। पर इसमें शक नहीं कि उसकी निगाहमें सारा आलम बराबर है।"

बद०—" जो खुदा सारे आलमको एक निगाहसे देखता और कुल इन्सानोंको अपना बन्दा समझता है वह ऐसी जबरदस्तियाँ क्योंकर पसन्द कर सकता है? किसी एक शख्सके ऐश-आरामके लिए लाखों आदमियोंका मरना और करोडोंका मुफलिस होना उसे क्योंकर पसन्द आता है?"

बादशाहको अपनी कन्याकी आजकी बातोंपर बहुत आश्चर्य हुआ। उसने पूछा,—" बेटी बदरुन्निसा! आज तुम्हें क्या हो गया है जो तुम ऐसी बहकी बहकी बातें कर रही हो? तुम्हारे खानदानका इतनी बडी सलतनतपर कब्जा है, क्या इसे तुम उस खुदाका फजल नहीं समझती? जिसने तुम्हें इस मरतब पर पहुँचाया है, उसकी शुक्रगुजार नहीं होतीं? इसके अलावा हमारी ये सब बातें खुदाको पसन्द न होतीं तो क्या काजी और मुल्ला इन्हें रसूल और पैगम्बरके हुक्मके खिलाफ न बतलाते?"

बद०—" खुदाका फजल उसी हालतमें समझना चाहिए जब कि हमारी वजहसे उसके किसी बन्देको तकलीफ न हो। रही शुक्रगुजार होनेकी बात, सो खुदा अपने बन्देको जिस हालतमें रक्खे, उसी हालतमें उसे उसका शुक्रगुजार होना चाहिए। मुल्लाओं और काजियोंका तो जिक्र ही क्या? उन्हें दरे-दौलतसे अपने गुजारेके लिए काफी वजीफा मिलता है। अगर मजलूम रिआया भी किसी काजी या मुल्लाको अपनी तरफ मिला ले और उसे सजा पानेका खौफ न रह जाय तो वह उसके बरखिलाफ भी फतवा दे सकता है। ऐसी हालतमें हर

शख्सको खुद यह सोचना चाहिए कि मेरा कौनसा काम खुदाकी मरजीके मुताबिक और कौनसा उसके खिलाफ है। खुदाकी कुदरत हमें खुद बतला सकती है कि हमें क्या करना चाहिए और क्या न करना चाहिए।"

औरं०—"खुदाकी कुदरत! उसे देखना और समझना तो हमारी ताकतके बाहर है।"

बद०—"खुदावन्दे आलम! उसकी कुदरत तो ऐसी खूबियोंसे भरी हुई है कि उसके समझनेमें एक मामूली इन्सानको भी कोई दिक्कत नहीं होती। कभी जहाँपनाह आसमानकी तरफ गौर फरमायें। वहाँ अलग अलग लाखों तारे, हजारों सैयारे नजर आयेंगे। मगर उनमेंसे कभी कोई अपनी हदसे बाहर निकलनेकी कोशिश नहीं करता। अपनी रोशनी बढानेके लिए कभी कोई तारा किसी दूसरे तारेकी रोशनी पर कब्जा करनेकी कोशिश नहीं करता। कानून कुदरतने उसे जिस हालतमें रक्खा है वह हमेशा उसीमें खुश रहता है। वह जो फर्ज अदा करनेके लिए बनाया गया है, उसीको वह पूरा करता रहता है। उसमें कोई नई हवस पैदा नहीं होती। और इसलिए वह कभी कोई गैरवाजिब या नामुनासिब काम नहीं करता। ये तारे भी तो उसी खुदाकी कुदरत हैं न? उनका अपने अपने दायरेमें घूमना और अपनी अपनी रोशनीसे चमकना खुदाकी ही मर्जीसे ही होता है न? ऐसी हालतमें हमें सबसे पहले उन्हीके कामोंसे नतीजा निकालना चाहिए। सब लोग अपने अपने मुल्क पर ही कनायत क्यों न करें और बेवजह दूसरोंके मुल्कोंपर क्यों कब्जा करें? समरकन्दके मुगलोंको इस बातका क्या हक हासिल है कि वे हिन्दोस्तानको अपने कब्जेमें लाएँ और हिन्दुओंकी आजादी छीन कर उन्हें अपना गुलाम बनाएँ?"

औरं०—"बेटी! अभी तुम नादान हो। तुम्हें अभी दुनियाका पूरा पूरा तजरुबा नहीं है। कानूने कुदरत हमें यह भी सिखलाता है कि जो ज्याद ताकतवर या अक्लमन्द होता है वह हमेशा दूसरोंकी कमजोरी और बेवकूफीसे फायदा उठाता है। अगर इन तारोंमें इतनी ताकत या लियाकत होती तो तुम देखती कि ये भी हमेशा जग-जदल किया करते।"

बद०—"किबलए-आलम! ये सब बातें जालिम अक्लमन्दोंने सिर्फ अपने बचावके लिए बना रक्खी हैं। वरना पाक परवर्दिगारकी कभी यह मरजी नहीं है कि हर एक ताकतवर अपनेसे कमजोरको जिन्द न रहने दे। इसमें

शक नहीं कि अक्सर जानवरों और चिड़ियों वगैरहमें यह बात देखी जाती है कि वे अपनेसे कमजोर पर हमला करके उसकी जिन्दगीका खातमा कर देते हैं, लेकिन कोई वजह नहीं है कि इन्सान जो अपने आपको "अशरफ-उल-मखलूकात" (प्राणियोंमें सर्वश्रेष्ठ) कहता है अपनी जालिमाना हरकतोंको वजा बतलानेके लिए इस तरहके उज्र पेश करे। खुदाने इन्सानको अक्ल दी है, उसके दिलमें मुहब्बत और हमदरदी पैदा की है, उसे नेक और बदकी पहचानकी ताकत दी है, ऐसी हालतमें हर एक शख्सका फर्ज है कि वह दूसरोंको आराम पहुँचाए और उनकी बेहतरी और तरक्कीमें मदद दे। बुन्देलखंडके सिपाहियों और लड़ाकोंकी तादाद शाही फौजके मुकाबलेमें बहुत ही कम है, लेकिन सिर्फ यही इस बातके लिए काफी वजह नहीं है कि वह फौज बुन्देलखंडमें जाकर वहाँकी रिआयाको तबाह कर दे, उसपर तरह तरहके जुल्म करे और उसे मुफलिस और गुलाम बनाए।"

ठीक उसी समय बादशाहके आनेका समाचार पाकर बदरुन्निसाकी माता और औरंगजेबकी चहेती बेगम आयशा भी वहाँ आ पहुँची थी और बड़े ही अदब कायदेसे एक स्थानपर बैठ चुकी थी। उसने इस अवसरको और भी अधिक उपयुक्त समझा। अपनी कन्या बदरुन्निसाका पक्ष लेकर उसने कहा,—"खुदाबन्देआलम! बुन्देलखंडकी हालत तो जरूर ऐसी है कि उसके साथ पूरा पूरा इन्साफ फरमाया जाय। छत्रसालने जिस तरह इन्सानी हमदरदीके खयालसे उस दिन इतना बड़ा काम कर दिखलाया था, उसका पूरा पूरा बदला तभी हो सकता था जब कि उनकी दरख्वास्त कबूल फरमाई जाती। इसके अलावा खुद शाहंशाह आलमने ही उन्हें कोई मुराद माँगनेकी इजाजत दी थी। इस बन्दीको और किसी बातका खयाल नहीं है। खयाल सिर्फ इसी बातका है कि जो इल्तजा हजरतसलामतकी मरजीसे की गई हो, वह इल्तजा जरूर पूरी होनी चाहिए।"

औरं०—"ये सलतनतकी बातें इतनी पेचीद हुआ करती हैं कि आम तौर पर इन्हें सब लोग नहीं समझ सकते। छत्रसालको मुराद माँगनेकी इजाजत दी गई और वह मुराद पूरी नहीं की गई, इसमें भी मसलहत थी। मुमकिन है कि लोग इसे वाद खिलाफी समझ बैठें, मगर जिन लोगोंको सलतनतके काम चलाने पड़ते हैं वे इस तरहकी वाद खिलाफीको कोई चीज नहीं समझते।

मुनासिव मौका देखकर वादे किए जाते हैं और जरूरत पडने पर उनके खिलाफ काम भी होते हैं। अगर ऐसा न किया जाय तो मुल्कमें कभी अमन-अमान कायम नहीं रह सकता। आज ही अगर बुन्देलोंसे कुछ शर्तें कर ली जाय और उनका मुल्क आजाद कर दिया जाय तो कल ही वे उन शर्तोंका खयाल छोडकर तरह तरहकी वदमाशियाँ करने लगेंगे। उनकी आजादी सलतनत-देहलीके लिए खतरेका बाइस (कारण) होगी। फँसे हुए शेरको पिंजडेसे निकाल कर खुद खतरेमें पड़ना और अपनी हिफाजतकी तदवीरें सोचते फिरना अक्लमन्दी नहीं है।"

वादशाहकी इन वातोंसे आयशा वेगमको कुछ भी आश्चर्य न हुआ। वह जानती थी कि औरंगजेवने वचन-भंग कर करके ही इतना वड़ा साम्राज्य स्थापित किया है। जिसने मुराद और शुजाको दिए हुए वचनोंका ध्यान छोड दिया, जिसने मीर जुमला सरीखे स्वामिनिष्ठ सेवकको दिए हुए वचनोंकी परवा न की और यहाँ तक कि जिसने एक वार अपना सारा जीवन ईश्वराराधनमें वितानेका दृढ संकल्प करके भी उसका ध्यान छोड दिया, वह एक साधारण राजकुमारके सामने अपना वचन पूरा करनेकी क्या आवश्यकता समझ सकता था? लेकिन बुन्देलोंकी सत्यतापर वादशाहने जो आक्षेप किया था, वह आयशाको सह्य नहीं हुआ। उसने नम्रतापूर्वक कहा,—

"खुदावन्दे-आलम! ये हिन्दू कभी वाद खिलाफी करना जानते ही नहीं। तवारीखें इस वातकी गवाह हैं कि दूसरोंके धोखेमें आकर ये खुद वरवाद हो गये, मगर किसीको वरवाद करनेके लिए इन्होंने कभी धोखा नहीं दिया, वे अपने कौलकी कीमत अपनी जानसे भी ज्याद समझते हैं। उनसे कभी यह उम्मीद न रखनी चाहिए कि जिन शर्तों पर वे आजादी हासिल करेंगे उन्हीं शर्तोंको मौका पाकर तोड़ देंगे और मुल्कके इन्तजाममें किसी तरहका खलल डालेंगे।"

और०—"खैर! इस वक्त इन सव वातोंको जाने दो। इसके वारेमें किसी वक्त वजीरों और मशीरोंसे मशविरा होगा।"

इसके वाद कुछ देरतक इधर उधरकी वातें होती रहीं। थोडी देर वाद औरंगजेव वहाँसे उठकर रोशनआरा वेगमके महलकी तरफ चल दिया। उस दिन आयशा और वदरुन्निसाको इस वातकी आशा हो गई थी कि बुन्देलखण्डको अब स्वतंत्रता मिल जायगी।

रोशनआरा बेगमके महलमें पहुँचने पर भी औरंगजेबकी वैसी ही आव-भगत हुई जैसी बदरुन्निसाके महलमें हुई थी। वहाँ पहुँचकर रोशनआराके पूछने पर औरंगजेबने संक्षेपमें उसे वे सब बातें कह सुनाईं जो थोडी देर पहले बदरुन्निसाके महलमें हुई थीं। उन्हें सुनकर वह मन-ही-मन बहुत कुढी। बातों ही बातोंमें जब उसे मालूम हो गया कि आयशा और बदरुन्निसाने बादशाह पर बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र कर देनेके लिए बहुत दवाव डाला है, और बादशाहकी मरजी उसे स्वतन्त्र करनेकी नहीं है तब उसने बादशाहके कान भरनेके लिए यह अवसर और भी अधिक उपयुक्त समझा। उस समय तक चम्पतरायकी कैदसे छूटकर रणदूलहखाँ दिल्ली पहुँच चुके थे। चम्पतरायके आदमी आकर उन्हें दिल्ली तक पहुँचा गये थे। रणदूलहखाँ उसी दिन सवेरे दिल्ली आए थे और सबसे पहले उन्होंने रोशनआरा बेगमसे मिलकर उन्हें अपना सारा हाल सुना दिया था और चम्पतरायकी खूब शिकायत की थी। उस अवसर पर रोशनआरा बेगमने वे सब बातें संक्षेपमें, पर अपनी तरफसे भी कुछ नमक मिर्च लगाकर, बादशाहसे कह दीं। बादशाह पर यह बात उसने भली भाँति प्रमाणित कर दी कि चम्पतराय बडा ही सरकश, बागी और सलतनत देहलीका कट्टर दुश्मन है और वह इस वक्त बुन्देलोंको भी शाहंशाहके खिलाफ उभाड़ रहा है। सब बुन्देले राजे भी भीतर-ही-भीतर चम्पतरायसे मिल गये हैं और स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए उन्हींको अपना पथदर्शक मान चुके हैं। ऐसी दशामें उन्हें स्वतन्त्रता देना मानो इन्द्रके हाथमें वज्र देना है। इस लिए बैठे बैठाए आफत मोल लेना ठीक नहीं। बल्कि मुनासिब तो यह है कि देवगटका किला फतह होते ही तुरन्त सारी सेना बुन्देलखण्डपर आक्रमण करनेके लिए भेज दी जाय, क्यों कि चम्पतरायने इतने दिनोंतक रणदूलहखाँको अपने यहाँ कैदमें रखकर शाहंशाहका बहुत बडा अपमान किया है। और जब बुन्देलखण्डमें शाही फौजका मुकाबला करनेकी कुछ तैयारियाँ हो चुकी हैं, तब रणदूलहखाँ वहाँसे छोडे गये हैं।

दूसरे दिन रोशनआरा बेगमकी कृपासे रणदूलहखाँ और राजा कंचुकीराय दीवान-ए-खासमें औरंगजेबके सामने पेश किए गये। दोनों ही चम्पतरायसे जले भुने तो थे ही, उनकी शिकायतमें उन लोगोंसे जो कुछ कहते बना वह सब उन्होंने कह डाला। औरंगजेबके कान पहले ही रोशनआरा बेगमने भर दिए थे। रणदूलहखाँ और कंचुकीरायकी बातें सुनकर वह और भी आग-

वबूला हो गया। उसी समय उसने आज्ञा दी, कि बुन्देलखण्डको और विशेषतः महेवाको तहस-नहस करनेके लिए जहाँ तक जल्दी हो सके, बड़ी भारी सेना भेजी जाय।

थोड़ी देर बाद खूब मुस्कराते हुए कचुकीराय दीवान-ए खाससे धीरे धीरे बाहर निकलते हुए दिखलाई दिये। उस समय उनके आनन्दकी सीमा न रह गई थी। अपनी कारगुजारी पर वे मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हो रहे थे और रानी हीरादेवी, शुभकरण तथा पहाड़सिंहसे कहनेके लिए तरह तरहकी डींग भरी बातें सोच रहे थे। मारे खुशीके जमीनपर उनके पैर न पड़ते थे। क्योंकि उन्होंने अपनी तरफसे बाजी मार ली थी। अब उनके यशस्वी होनेमें कोई सन्देह न रह गया था। उसी दिन उन्होंने वहाँसे बुन्देलखण्डकी ओर प्रस्थान किया।

इन सब बातोंकी खबर आयशा बेगम और बदरुन्निसाको भी उसी दिन लग गई। वे दोनों मन-ही-मन बहुत दु खी हुई। आयशा बहुत देरतक बदरुन्निसाको समझाती बुझाती और ढारस देती रही, पर उसका कुछ फल न हुआ। बदरुन्निसाका दु ख ज्योंका त्यों बना रहा।

दूसरे दिन प्रात काल सारे महलमें पुकार मच गई कि बदरुन्निसा अपने महलसे गायब हो गई।

* * *

सोलहवाँ प्रकरण।

भ्रम-निवारण।

राजा पहाड़सिंहने मरनेके समय जो जो बातें कहीं थीं, उन्हें रानी हीरादेवीने बेहोशी और पागलपनकी बकवाद बतलाया और युवराज विमलदेवसे उनकी सब अन्त्येष्टि-क्रिया कराई। पहाड़सिंहके मृत-शरीरका जब अग्नि-सस्कार हो चुका, तब राजा चम्पतरायने युवराज छत्रसाल, युवराज दलपतिराय और अपने नौकर चाकरोंको साथ लेकर वहाँसे महेवाकी ओर प्रस्थान कर दिया। विमलदेवके राज्यारोहणके अवसर पर आनेका वचन देकर और सब

राजे आदि भी अपने अपने स्थान पर चले गये। भोजनवाले दिन ही शुभकरण जो गायब हुए सो फिर वे कभी हीरादेवीको दिखाई न दिये। वे वहाँसे चलकर सीधे सागरके किलेमें पहुँचे और ओडछेसे आनेवाले समाचारकी प्रतीक्षा करने लगे। वहीं उन्हे यह बात मालूम हुई कि भोजनमें मिलाये हुए विषके कारण राजा पहाड़सिंहकी मृत्यु हुई। उस समय उन्हें यह आशा होने लगी कि इस आपत्तिके कारण हीरादेवी अब अपना पुराना नीच व्यवहार छोड देगी और अच्छे मार्गपर आ जायगी। लेकिन उसी अवसर पर उन्होंने यह भी सुना कि इस कुसमयमें भी वह चम्पतरायका अच्छी तरह नाश करनेके लिए बडी तत्परतासे सेना एकत्र कर रही है। इतनेमें उनके पास हीरादेवीका इस आशयका निमन्त्रण आ पहुचा कि उस दिन दीवानखानेकी गुप्त-मन्त्रणामें जितने राजे सम्मिलित हुए थे, उन सबकी सेनायें आ पहुँची हैं, आप आकर उनकी नायकता स्वीकार कीजिए। प्रतिज्ञारूपी पिशाचके वशमें पडे हुए बेचारे शुभकरण तुरन्त ओडछेकी ओर चल पडे।

ओडछेके राजमहलमें पहुँचने पर सबसे पहले कंचुकीरायसे उनकी भेट हुई। कंचुकीरायने उनके सामने अपनी बहादुरीकी खूब डींगें हाँकीं और कहा कि मैंने बेगमको यों समझाया और बादशाहको यों बुझाया। उनकी बातें सुनकर चम्पतरायपर बादशाह जितने नाराज हुए थे उसका वर्णन करते हुए उन्होंने कहा,—

"शुभकरणजी! रोशनआरा बेगमकी बुद्धिमत्ता और योग्यताकी जितनी प्रशंसा की जाय वह सब थोडी है। सब बातोंमें वह रानी हीरादेवीसे ही मिलती जुलती है। रणदूलहखाँके वहाँ पहुँचनेपर अगर बेगमसाहब जरा भी देर करतीं तो शायद दिल्लीके बादशाहकी छत्र-छायासे ही बुन्देलखण्ड निकाल दिया जाता। न जाने किसने बादशाहपर इस बातका बहुत ही जोर दिया था कि बुन्देलखण्ड स्वतन्त्र कर दिया जाय। पर यह कहिए कि आप लोगोंके भाग्य अच्छे थे जो मुझे उसी समय सूझ गई और मैंने बेगमसे जाकर कह दिया कि अब जरा भी देर न होनी चाहिए। मैं खाली बेगमसे ही कहकर चुप नहीं बैठ रहा। उधर तो मैंने बेगमसे बादशाहके कान भरवाये और इधर खुद बादशाहके दरबारमें पहुँचा। बस फिर क्या था? महेवाको तहस नहस करनेकी आज्ञा दिलवा कर ही वहाँसे हटा। चलते समय बादशाहने मुझे भी साम्राज्य-निष्ठाकी एक सनद दी है।"

कचुकीरायकी ओर तिरस्कार भरी दृष्टिसे देखते हुए शुभकरण उनकी सब बातें सुनते रहे। वे कुछ उत्तर देना ही चाहते थे कि इतनेमें रानी हीरादेवी वहाँ पहुँच गई। उस समय उसके चेहरेपर कुछ तो दिखौआ दुःख और कुछ वास्तविक आनन्दकी मिली जुली झलक दिखाई पड़ रही थी। शुभकरणको देखकर उसका आनन्द कुछ और बढ गया था। उस समय आनन्दको छिपाना भी उसने उचित न समझा। उसने प्रसन्नतासे कहा,—

"अहा! आप आगये! आपने तो सुना ही होगा कि शाहशाहने आपको चम्पतरायका राज्य विध्वंस करनेके लिए नियुक्त किया है। दिल्लीसे इस आशयका शाही-फरमान निकला है कि आप बुन्देलखंडके सब माण्डलिक राज्योंकी सेनायें एकत्र करके महेवापर आक्रमण करें। इसके अतिरिक्त आपकी सहायताके लिए दिल्लीसे भी बड़ी भारी सेना आ रही है और यदि हो सका तो बादशाह सलामत स्वयं भी आवेंगे। उस दिन दीवानखानेमें हम लोगोंने जो विचार किया था, जान पडता है कि वह शीघ्र ही पूरा उतरेगा। कचुकीरायजीने अपना काम बडी ही उत्तमतासे किया है। बुन्देलखण्डके अधिकाश राज्योंकी सेनायें महेवाके रास्तेपर आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं। परसों महेवाकी ओर कूच करनेका मुहूर्त्त निकाला है। उस दिन अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए और शाही आज्ञाका पालन करनेके लिए आपको उस सेनाका आधिपत्य ग्रहण करना पडेगा।"

शुभकरणने बडे ही व्यथित अन्तःकरणसे महेवापर आक्रमण करनेवाली सेनाका आधिपत्य स्वीकार किया। उनका मन मानो उनसे कहने लगा कि हम महेवापर आक्रमण करनेके लिए नहीं बल्कि बुन्देलखडकी भावी सुखाशाका नाश करनेके लिए जा रहे हैं। हम चम्पतरायका नाश करनेके लिए नहीं निकले हैं बल्कि स्वतन्त्रतादेवीको विध्वंस करनेके लिए निकले हैं। हम समरदेवताकी सेवा करनेके लिए नहीं निकले हैं, बल्कि अनुचित रूपसे छल कपट और हत्या करनेके लिए निकले हैं। सेनाकी सलामी लेते समय, अपने घोड़ेपर सवार होते समय, कूच करनेकी आज्ञा देते समय और सबके अन्तमें अपने घोड़ेको पुचकारते और एड लगाते समय उनके चेहरेपर एकसा निरुत्साह दिखलाई पड़ता था। परन्तु शुभकरण ज्यों ज्यों महेवाकी ओर बढने लगे, त्यों त्यों प्रतिज्ञाका पिशाच उनके मनपर अधिकार करने लगा। उनके मुखपरके जाज्वल्य क्षात्र-तेजमें आसुरी तेजका पुट पड़ने लगा। उनकी बातोंके करारेपनमें आसुरी निष्ठुरता

मिलने लगी। ठीक दोपहरका सूर्य अपने प्रखर तापके कारण जिस प्रकार सतापकारक जान पडता है, ठीक उसी प्रकार शुभकरण भी भयप्रद जान पडने लगे। उनकी अधीनतामें काम करनेवाले अच्छे अच्छे सरदारोंको भी उनके सामने जानेमें भय लगने लगा। सैनिकोंने अपने सेनापतिके मुँहकी ओर देखना छोड़ दिया। शुभकरण विना एक क्षण भी खोए हुए महेवाकी ओर वरावर वढने लगे।

जवसे विजयाकी जवानी चम्पतरायने यह सुना था कि बुन्देलखडके सव राजाओं और सरदारोंने उनके प्रार्थना-पत्रका इस प्रकार अपमान किया था, तवसे उनके सिरसे पैर तक मानो आग सी लग गई थी। वे अच्छी तरह समझते थे कि स्वतन्त्रताके लिए सव लोगोंका मिलकर प्रयत्न करना ईश्वर-विहित कर्त्तव्य है, उस कर्त्तव्यमें सहायता न देना, उसकी अवज्ञा करना अथवा उसके विरुद्ध प्रयत्न करना देश-हितकी दृष्टिसे, प्रजाके कल्याणकी दृष्टिसे, भूत-दयाकी दृष्टिसे और समताके उदार तत्त्वकी दृष्टिसे वडा भारी अपराध है। इसी लिए उन्होंने यह निश्चय किया था कि सवसे पहले घरके इन भेदियोंका ही नाश करना चाहिए। महेवा पहुँचकर उन्होंने लडाईकी भरपूर तैयारी की। नित्य सवेरेसे महेवाके राज-प्रासादके सामने शस्त्रोंके ढेरके ढेर लगने लगते थे और सन्ध्यातक सव शस्त्र वँट जाते थे। यह सिलसिला वरावर पन्द्रह दिनोंतक जारी रहा। छत्रसाल यह सोचकर वहुत ही दुःखी होते थे कि इतने शस्त्रोंका उपयोग अपने ही भाइयोंका नाश करनेमें होगा! अगर हमने अपने ही भाइयोंको देशद्रोही पाकर उनका नाश कर डाला तो फिर हम शाही फौजसे किसके भरोसे लडेंगे? स्वतन्त्रता फिर किनके लिए प्राप्त की जायगी? शुभकरण सरीखे वीर पुरुषके मनमें वैरकी जो गाँठ पड गई है यदि प्रयत्न करके, हारके अथवा अन्तमें क्षमा प्रार्थना करके वह खोली जा सके, बुन्देलखडके राजाओंको अपना शत्रु समझकर उन पर शस्त्र चलानेकी अपेक्षा उनके कलंकित विचारोंको दूर करके उन्हें स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए लडनेपर तैयार किया जाय तो स्वतन्त्रताकी ओर जानेका मार्ग कितना सुलभ हो जाय? आपसकी कलह छोडकर बुन्देलखण्डकी वची-खुची शक्ति नष्ट करनेकी अपेक्षा बुन्देलोंकी सारी शक्तिको एक ही सूत्रमें वाँधकर एकत्र किया जाय तो वह कितना वलाढ्य, अजेय और अभेद्य होगा? ये और इसी प्रकारके और दूसरे वहुतसे विचार छत्रसालके मनमें उत्पन्न होते थे, पर उनके पिता चम्पतराय स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए जो प्रयत्न कर रहे

थे उनकी ओर देखते हुए उनके वे सब विचार मनके मनमें ही रह जाते थे। वे स्वयं यह सोचकर उन विचारोंको मन-ही-मन दबा रखते थे कि जो पिताजी स्वतन्त्रताका उदात्त ध्येय सामने रखकर अनेक वर्षोंसे निरन्तर प्रयत्न कर रहे हैं वे कभी बुन्देलखंडके अहितका कोई काम न करेंगे। धीरे धीरे कई दिन बीत गये। अन्तमें सग्रामका अवसर अचानक ही आ गया। चम्पतरायकी सेना अभी महेवासे निकली भी न थी कि इतनेमें ही शुभकरणकी प्रबल सेना महेवाकी पंचक्रोशीमें आ पहुँची। चम्पतराय उसे देखकर बहुत ही अधिक क्रुद्ध हुए। छत्रसालको एक बडी सेनाका अधिपत्य स्वीकार करना पडा। कुमार दलपतिराय भी अपने पिताके साथ युद्ध करनेके लिए तैयार हुए। चम्पतरायका चपल घोडा महेवाकी सेनाके आगे दौडने लगा। कूचकी सूचना देनेवाले रणवाद्य कर्कश ध्वनि उत्पन्न करने लगे। महेवाके देवता बुन्देलखण्डके दानवोंके साथ सग्राम करनेके लिए जल्दी आगे बढने लगे।

सग्रामकी सब तैयारियाँ करके शुभकरण महेवाकी सेनाके आनेका रास्ता देखने लगे। उसी समय चम्पतरायके मुँहसे निकला हुआ विन्ध्यवासिनीदेवीका प्रचण्ड जयजयकार उन्हें स्पष्ट सुनाई पडा। उस जयजयकारकी प्रतिध्वनि उत्पन्न होनेसे पहले ही शुभकरणने अपनी सेनाको महेवाकी सेना पर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। तुरन्त ही सेनापतिकी आज्ञाका पालन हुआ। भालेवालोंने भाले निकाल लिये और बरछीवालोंने बरछियाँ खींच लीं। तोपें दगने लगीं। बन्दूकें छूटने लगीं। बिजलीकी तरह तलवारें चमकने लगीं। घोडसवार और पैदल, भालेबरदार और बन्दूकची, वीर और योद्धा एकदमसे चम्पतरायकी सेना पर टूट पड़े।

चम्पतरायकी सेनाने इस आक्रमणका बहुत ही योग्य उत्तर दिया। भालेबरदारोंने भाले बरदारोंको रोका, बरछीवाले बरछीवालोंसे भिड गये और बन्दूकचियोंकी बन्दूकचियोंसे मुठभेड़ हो गई। तलवारोंसे युद्ध करनेवाले वीर तलवारोंसे लडनेवाले योद्धाओंसे जूझने लगे। परन्तु युद्ध अधिक समय तक न हुआ। थोडी ही देरमें सारी व्यवस्था मिट गई और रणक्षेत्रमें गड़बडी मच गई। दोनों ओरकी सेनायें गुथ कर लडने लगीं। उस समय मित्र और शत्रुकी पहचान न रह गई। उस समय अपनी समान श्रेणी, समान आयुध, समान वाहन और समान वयका प्रतिस्पर्धी योद्धा ढूँढ निकालना बहुत ही कठिन हो गया। उस समय धर्मयुद्ध

करना असम्भव हो गया। भालेवाले बरछीवालों पर और बरछीवाले बन्दूकचियों पर टूट पडे और येनकेन प्रकारेण अपनी रक्षा करते हुए अपने सामने पडनेवाले शत्रुके प्राण लेने लगे।

सग्रामके पहले दिन चम्पतरायकी जीत हुई। दलपतिरायके अतुल पराक्रमके कारण शुभकरणकी सेना एक कोस पीछे हट गई। उस दिन पिता और पुत्रमें बडा ही भयकर सग्राम हुआ। युवराज छत्रमालने म्यानसे तलवार भी बाहर न निकाली। वे दिन भर पिता और पुत्रका युद्ध ही देखते रहे। वे सोचने लगे कि यदि इतने वीर आपसमे लडना झगडना छोडकर बुन्देलखण्डके वास्तविक शत्रुओंसे लडने लगें तो बातकी बातमें बुन्देलखण्ड स्वतत्र हो जाय। अपने भाइयोंपर ही हथियार उठाना उन्हें बडा भारी अपराध और अन्याय जान पडता था, लेकिन दलपतिरायके मनमें लडने भिडनेके सिवा और कोई विचार उत्पन्न ही नहीं हुआ। उनका दृढ विश्वास था कि चम्पतराय जो कुछ करते हैं वह सब बुन्देलखण्डके हितके लिए ही करते हैं, इसी लिए उस दिन वे अपने प्राणोंकी भी परवा न करके कर्दन कालकी तरह लडते रहे। शुभकरणने तीन बार बहुत ही जोरोंसे चम्पतरायकी सेनापर आक्रमण किया। लेकिन दलपतिरायकी समर-पटुताके कारण तीनों बार उन्हें पीछे हट जाना पडा। इतना ही नहीं, शुभकरणके तीसरे आक्रमणका उत्तर दलपतिरायने इतने त्वेष और इतनी वीरतासे दिया कि शुभकरणकी सेनाको एक कोस पीछे हट जाना पडा। चम्पतरायने दलपतिरायकी वीरताकी बहुत ही प्रशसा की। सन्ध्या समय दलपतिरायकी वीरताकी प्रशसा करते हुए चम्पतरायके सैनिक अपनी छावनीकी ओर लौटने लगे।

शुभकरण भी कुछ ऐसे वैसे वीर न थे। एक बार कुछ हारकर ही वे पीछे हटनेवाले नहीं थे। दूसरे दिन सूर्य्योदय होते ही युद्धकी तैयारियाँ होने लगीं। थोडी ही देर बाद युद्ध आरम्भ हुआ। उस दिन खाने पीनेकी किसीको चिन्ता नहीं हुई, सूर्यास्त तक लगातार युद्ध होता रहा। शुभकरणकी सेनापर चम्पतरायकी सेना जोरोंसे आक्रमण करने लगी। पर शुभकरणकी सेनाकी पक्तिको वह भेद न सकी। बडे बडे वीर आपसमें लडकर मरने और कटने लगे। लाशोंके ढेर लग गये और खूनकी नदियाँ बहने लग गईं। समर-क्षेत्रका वह भयानक दृश्य, अपने भाइयोंके खूनकी नदियाँ, अपने भाइयोंकी लाशोंके ढेर

देखकर छत्रसाल बहुत ही दु खी हुए। अपने भाइयोंका वह अमानुषी वध उनसे देखा न जाता था। उस दिन भी वे नहीं लडे। उस दिन भी उन्होंने अपनी तलवार म्यानसे बाहर न निकाली, वे खाली युद्ध देखते रहे।

दूसरे दिन भयंकर युद्ध आरम्भ होनेसे पहले छत्रसाल अपने पिताके पास गये। चम्पतराय अपने सरदारोंको यह समझा रहे थे कि आज किस प्रकार आक्रमण और युद्ध करना चाहिए। वीरश्री-युक्त कुमार दलपतिराय एकाग्रचित्तसे चम्पतरायकी बातें सुन रहे थे। चारण और कडखैत इस बातकी प्रतीक्षा कर रहे थे कि चम्पतरायकी बातें समाप्त हों और हम लोग वीरोंके मनमें उत्साह उत्पन्न करनेके लिए कवितायें और कडखे आरम्भ करें। इतनेमे युवराज छत्रसालने आगे बढकर चम्पतरायसे कहा,—

"पिताजी ! यह युद्ध बड़ी ही निर्दयताका हो रहा है। इस आपसके युद्धसे बुन्देलखण्डको क्या लाभ होगा? बुन्देलखण्डकी प्रजाके वधसे बुन्देलोंका कौनसा हित होगा? यदि आपसके इस वैर-भाव और लडाई-झगड़ेमें ही बुन्देलखण्डकी सारी शक्ति नष्ट हो गई, उसका अप्रतिम क्षात्र-तेज जाता रहा, उसी कलहाग्निमें यदि इतने वीरोंकी आहुति पड गई तो बुन्देलखण्डको किस प्रकार स्वतंत्रता मिलेगी? मेरी समझमें तो इस युद्धसे बुन्देलखण्डका कुछ भी हित न होगा।"

चम्पतरायने बहुत ही चकित होकर कहा,—"छत्रसाल ! तुम ऐसी बातें कहते हो? मैं अच्छी तरह समझता हूँ कि बुन्देलोंका हित किसमें है। जिसने स्वतन्त्रतादेवीकी भक्तिमें ही अपना अधिकाश जीवन बिता दिया उसे तुम्हारा कुछ समझाना बुझाना धृष्टता ही है। तुम्हारी ऐसी कायरता भरी बातें सुनकर मुझे बहुत ही दु ख हुआ, अगर फिर कभी तुम इस तरहकी बातें करोगे तो—" चम्पतरायने अपना क्रोध मनमें ही दबा लिया। चारणोंने ऊँचे स्वरसे बुन्देलोंकी वीरताके गीत गाने आरम्भ किये। चम्पतराय, दलपतिराय तथा अन्य वीरोंमें उत्साह और तेज सचार करने लगा, रण-वाद्य जोर जोरसे बजने लगे। विन्ध्यवासिनीदेवीका गगन-भेदी जयजयकार हुआ। रण-क्षेत्रमें पहुँचकर योद्धा रण-देवताको प्रसन्न करनेका प्रयत्न करने लगे। पर छत्रसाल उस दिन भी न लडे। उनकी तलवार उस दिन भी म्यानसे बाहर न निकली।

बुन्देलखडमें परस्परका यह युद्ध बहुत दिनोंतक होता रहा पर निर्णय नहीं हुआ। तो भी इतने दिनोंमें चम्पतराय कभी अपयश लेकर नहीं लौटे थे। पर हाँ उन्हें इस बातकी अवश्य आशका होने लगी थी कि यदि और कुछ दिनोंतक यही क्रम रहा तो दशा दिनपर दिन बिगडती जायगी और योद्धा बराबर छीजते जायँगे। शुभकरणके भी कुछ कम सैनिक काम न आए थे। लेकिन हीरादेवी बराबर नए नए सैनिक भेजकर उनके स्थानकी पूर्ति करती जाती थी, इस लिए शुभकरणकी सेना अभीतक मुकाबले पर ठहरी हुई थी।

यद्यपि शुभकरण और चम्पतरायकी सेनाओंमें बराबर खूब घनघोर युद्ध हुए थे पर तो भी चम्पतरायका पक्ष ही प्रबल रहा और शुभकरणके बहुतसे सैनिक मारे गये। जब औरगजेबको यह बात मालूम हुई तब उसने चम्पतरायको परास्त करनेकी तैयारी शुरू की। यह जानकर भी कि औरगजेबकी प्रचण्ड सेना हमपर आक्रमण करनेके लिए आ रही है, चम्पतरायका धैर्य्य न छूटा और वे दृढ़तापूर्वक उसका सामना करनेके लिए तैयार हो गये। शाही सेनाको अकस्मात् आते देखकर उन्हें तनिक भी चिन्ता नहीं हुई। छत्रसाल इतने दिनोंतक दूरसे ही रणक्षेत्रका तमाशा देखा करते थे, पर अब वे भी उसमें उतर पडे। उन्होंने भी अपनी तलवार म्यानसे बाहर निकाली। उनका अद्वितीय उत्साह देखकर चम्पतरायके बचे हुए सैनिकोंमें भी नई आशा और नए उत्साहका सचार हो आया। शुभकरण और औरगजेबके मिश्र सैनिकोंको वे लोग यमराज सरीखे जान पडने लगे।

औरगजेब बडा भारी कूटनीतिज्ञ और दूरदर्शी था। उसने शुभकरणकी सहायतासे चम्पतरायकी सेना पर आक्रमण करनेके लिए उपयुक्त स्थान ढूँढ निकाला और उसी स्थानसे उसने आक्रमण करना आरम्भ किया। दोनों ओरसे भीषण युद्ध आरम्भ हुआ। शुभकरण और औरगजेबकी सेना यद्यपि सख्यामें बहुत अधिक थी, बादशाहको यद्यपि घरके भेदी शुभकरणकी सहायता मिल रही थी तथापि उनके आक्रमणोंको कुछ भी न गिनते हुए चम्पतरायके अनेक वीरोंने अच्छा पराक्रम दिखलाया और बहुत ही वीरतापूर्वक लडकर शत्रुओंके प्राण लिये और अपने प्राण दिये।

ज्यों ज्यों चम्पतरायके वीर कटने लगे त्यों त्यों उनका पक्ष निर्बल होने लगा। प्राय आधे योद्धा तो शुभकरणके साथ युद्ध करनेमें काम आ चुके थे

और जो आधे बच रहे थे वे भी बहुत थके हुए थे और ऐसे अवसर पर उन्हें दिल्लीकी प्रचण्ड सेनाका सामना करना पडा। चम्पतरायने देखा कि हम जिन बुन्देलोंके लिए लडते हैं वही हमारे शत्रु हैं और अवसर पडने पर जिन लोंगोंका विश्वास करना चाहिए था वे विश्वास-घातक निकले। अब उन्हें किसी पर विश्वास न होता था। वे यह भी समझने लगे कि अब महेवाका सरक्षण न हो सकेगा। वे अपनी आँखोंके सामने यह नहीं देख सकते थे कि शाही सेना महेबाको विध्वंस करे, इस लिए बहुत ही शोकाकुल अन्त करणसे उन्होंने महेवा छोडा। बुन्देलखण्डकी स्वतत्रताके लिए इतना प्रयत्न करनेवाले वीरोंने अन्तमें वनवास स्वीकार किया। जो युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय अपने अतुल पराक्रमसे शत्रुओंका नाश कर रहे थे वे भी चम्पतरायके साथ जगलकी ओर निकल गये। छत्रसालकी माता सरलादेवी भी उन्हीं लोगोंके साथ हो ली। अब चम्पतरायके साथ केवल पचास चुने हुए वीर रह गये थे। पर तो भी हीरादेवी उधर सेना सग्रह करती ही जाती थी।

महेबा पर शाही झण्डे फहराने लगे। हीरादेवीके आनन्दका पारावार न रह गया। अब वह केवल इतना ही चाहती थी कि जिस तरह चम्पतराय अपनी स्त्री और पुत्रके साथ महेवासे चले गये हैं उसी तरह वे अब इस संसारसे भी चले जायँ। जिन चम्पतरायने उसे और उसके पति पहाडसिंहको राज्य और ऐश्वर्य दिलवाया था, उन्हीं चम्पतरायको उस राक्षसीने वन वन फिरनेके लिए विवश किया!

हीरादेवीसे जहाँतक हो सकता वह बुन्देलखण्डकी सारी शक्ति एकत्र करके चम्पतरायके विरुद्ध बादशाहको सहायता देती थी, और रोज कहीं न कहीं शाही सेनाके साथ चम्पतरायकी मुठभेड हो ही जाती थी। उस समय छत्रसाल और दलपतिराय अपने प्राणोंकी परवा न करके पराकाष्ठाकी वीरता दिखलाते थे, पर तो भी उनके साथी सैनिक बराबर कटते ही जाते थे।

अन्तमें बडे ही शोकका दिन आया! सौभाग्यसिंह एक दिन जंगलमें इधर उधर शत्रुकी टोह लेनेके लिये गये थे। चम्पतरायको इधर उधर घूमते फिरते एक झाडीके नीचे उनका मृतशरीर दिखलाई पडा। उसकी अन्त्येष्टि-क्रिया करके चिन्ताकुल चम्पतराय पत्थरकी एक चटानपर पडे हुए थे। युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय गम्भीर भावसे पास ही बैठे हुए थे। सरलादेवी

शोकदग्ध अन्त करणसे अपने पति और पुत्रकी वह हीनावस्था देख रही थी। उनके बाकीके सब साथी मारे जा चुके थे। बहुत देरतक विचारोंमे मग्न रहनेके उपरान्त चम्पतरायने वह स्मशानतुल्य शान्ति इस प्रकार भंग की,—

"बडा ही विकट प्रसग आ पड़ा है। या तो लड भिडकर प्राण दे दें और या निर्लज्जतासे शत्रुके हाथ आत्मसमर्पण कर दे, इसके सिवा और कोई गति नहीं है। अब तो यही निश्चय करना है कि जीते रहें या मर जायें, चलकर शत्रुके हाथ आत्मसमर्पण कर दे और निर्लज्जतासे अपना जीवन व्यतीत करें, या शत्रुसे दो दो हाथ करके पहर दो पहरमे निष्कलक रूपसे वीर-गतिको प्राप्त हों। मरना तो सहज है पर मरनेके समय अपने देशकी आपत्तिका जो चित्र ऑखोंके सामने खिचा रहेगा उसे देखनेमें ही असह्य वेदना होगी। तब क्या जीते रहें? जीते रहकर उस वचनभ्रष्ट औरंगजेबके गुलाम बनें? छि! इस प्रकार जीना तो नरक-निवासके समान है। मरने पर स्वर्ग पहुँचकर देवताओंको बुन्देलोंकी दासताकी कहानी तो सुना सकेंगे। यहाँ गुलाम बनकर क्या करेंगे? चलो मैंने तो निश्चय कर लिया। देवताओंके कान खोलनेके लिए, स्वर्ग-सुखमे मग्न देवताओंका ध्यान बुन्देलोंकी दुर्दशाकी ओर आकृष्ट करनेके लिए, जहाँ तक शीघ्र हो सकेगा, मैं उनके चरणोंमें जाऊँगा। अब शत्रुके सैनिकोंकी जो टोली पहले दिखलाई पडेगी, उसीपर आक्रमण करूँगा। मेरे ससारिक कर्त्तव्य पूरे हो गये, मैंने बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र करनेके लिए सभी उपाय कर डाले, अब मैं देवताओंके पास जाकर उनसे बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र करानेकी प्रार्थना करूँगा। (अपनी स्त्रीकी ओर देखकर) तुम व्यर्थ शोक न करो। छत्रसाल और दलपति! तुम लोग भी दु:खी मत हो। मैं अब पहर दो पहरका ही पाहुना हूँ, इतना समय हम लोगोंको सुखसे बिताना चाहिए। आओ, हम लोग प्रेमसे गले मिल लें! अपने जीवनके अन्तिम अनुभव-सर्वस्वका आनन्द ले लें! अब मै तुम लोगोंसे सदाके लिए अलग होऊँगा।"

सरलादेवी अब तक सिसक सिसककर रो रही थीं, पर वे अब फूटकर रोने लगीं। उनकी ओर देखते हुए चम्पतरायने कहा,—

"क्या तुम पागल हो गई हो? जगलमे चारों ओर शत्रुके सैनिक घूम रहे है। न जानें वे कब आकर हम लोगोंपर आक्रमण कर बैठें। उनके आ जानेपर परस्पर एक दूसरेसे मिलने, एक दूसरेको देखने और आपसमें बातचीत कर-

नेकी इच्छा भी मनमें ही रह जायगी और कदाचित् इसी लिए शत्रुओंपर हाथ भी अच्छी तरहसे न चल सकेगा। इस लिए इस समय अपनी सब इच्छायें पूरी कर लो।"

सरला अपने स्वामीके चरणोंपर रोती हुई गिर पडी। छत्रसाल आँखोंमें आँसू भरकर माता पिताकी ओर देखते रहे। पर जब उन्हें इस बातका ध्यान हुआ कि यदि पिताजी मुझे रोता हुआ देखेंगे तो उन्हें बहुत ही दु:ख होगा, बडी कठिनतासे वे शान्त हुए। चम्पतरायने अपनी स्त्रीको पैरों परसे उठाकर कहा,—

"अब हम लोगोंकी भेट स्वर्गमें होगी। मैं पहले स्वर्गमें चलकर सब प्रबन्ध कर रखूँगा, तब तक तुम अपना शेष कर्त्तव्य करते रहना। युवराज छत्रसाल अभी बालक है। उसे शान्त रखने और धैर्य्य देनेके लिए मातृ-प्रेमकी आवश्यकता है। उसके सयाने हो जाने पर भी तुम मेरे पास स्वर्गमें आ जाना। छत्रसाल! अपने जीवनका एक बहुत महत्त्वपूर्ण अनुभव मैं तुम्हें बतलाना चाहता हूँ। उसे सावधान होकर सुन लो और सदा इस बातका ध्यान रखना कि जो प्रमाद मुझसे हुआ है वही कहीं तुमसे भी न हो जाय।"

युवराज छत्रसाल हाथ जोड़कर सिर नीचा किये हुए अपने पिताके सामने खडे थे। दलपतिराय भी उसी रूपमें उनके पास ही खडे थे। दोनों एकाग्रचित्त होकर चम्पतरायकी बातें सुनने लगे।

चम्पतराय अपने पिछले जीवनका सिंहावलोकन करके कहने लगे,—"छत्रसाल! युद्ध छिड जाने पर एक बार तुमने मुझसे कहा था कि व्यर्थ आपसमें रक्तपात न होना चाहिए। तुम्हारी इस बातका मूल्य मैंने बहुत देरमें समझा। मैंने स्वतन्त्रताके लिए पराकाष्ठाका प्रयत्न किया। सुखविलास आदिको लात मारकर मैं दिन रात स्वतंत्रताके लिए परिश्रम करता रहा। मेरा लक्ष्य सदा स्वतंत्रता पर ही रहा। महेबाके प्रासादमें राजसिंहासन पर बैठनेके समय, अन्तःपुरमें विश्राम करनेके समय, देवीके मन्दिरमें उपासना करनेके समय, सदा मुझे स्वतन्त्रताकी ही चिन्ता बनी रहती थी। मुझे कभी स्वतन्त्रताके सिवा और कुछ दिखलाई ही न देता था। पहले मैंने सोमगढके युद्धमें औरगजेबकी सहायता की थी, आज मैंने औरंगजेब पर ही शस्त्र उठाया है। पहले मैं और शुभकरण दोनों साथ साथ मिलकर युद्ध करते थे, आज हम दोनों परस्पर

एक दूसरेसे लडते हैं। पहले मुझे हीरादेवीको ओडछेके राजसिंहासनपर बैठाना उचित जान पडा था, आज मैं उसके सैनिकोंसे लडना आवश्यक समझता हूँ। लेकिन परस्पर विरुद्ध जान पडनेवाले इन सभी कामोंमें मुझे स्वतंत्रताकी दिव्य ज्योति सदा दिखलाई पडती थी। इतना होने पर भी मुझे स्वतत्रता प्राप्त करनेमें सफलता नहीं हुई—मेरा ध्येय मुझे प्राप्त न हुआ। मैंने इस विषय पर बहुत कुछ विचार किया कि मेरे इस विफल-मनोरथ होनेका मुख्य कारण क्या है और मेरे प्रयत्नोंमें कौनसा दोष है। अब जाकर मुझे अपना दोष, अपना प्रमाद और अपनी विफलताका कारण जान पडा है।"

युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय बडे ही ध्यानसे चम्पतरायकी बातें सुन रहे थे। वे दोनों चम्पतरायकी बातों, उनके चेहरे पर झलकनेवाले मनोविकारों बल्कि उनकी प्रतिमाहीमें मानो लीन हो रहे थे।

चम्पतरायने आगे कहा,—"छत्रसाल! मैंने स्वतत्रताका भव्य प्रासाद बनानेका प्रयत्न किया था। पर उसे आरम्भ करनेके पहले मैंने यह अच्छी तरह न देख लिया कि उसकी नींव दृढ है या नहीं। स्वतत्रताकी प्राप्तिके लिए मैं रणक्षेत्रमें लडा, लेकिन जिन लोगोंको मैं स्वतत्रता दिलवाना चाहता था उनके मनकी परीक्षा मैंने पहले नहीं की। मैंने इस बातका विचार नहीं किया कि बुन्देलोंके मनमें दासताकी भावनाने कितना अधिक घर कर लिया है, दासताके आनुषगिक दोषके कारण बुन्देलोंके सद्गुणोंका कहाँ तक नाश हो गया है, अपने शत्रुका उत्कर्ष सहन न करनेवाली बुन्देलोंकी मन स्थिति कितनी आकुञ्चित होकर मत्सरके रूपमें कहाँतक परिवर्तित हो गई है। इसी लिए मैं अपने विरोधियोंको स्वतत्रताका शत्रु समझने लगा। ऐसे लोगोंका मन स्वतंत्रताकी ओर आकर्षित करनेके बदले, उन्हें स्वतत्रताका आनद दिलानेके बदले, मैं उन्हें यवनोंकी तरह पराया समझने लगा। मैं समझने लगा कि स्वतत्रताके लिए यवनोंके साथ युद्ध करना जितना आवश्यक है उसकी अपेक्षा इन लोगोंका नाश करना अधिक आवश्यक और उपयोगी है। मुझे इन लोगोंके मनसे मत्सर निकालना चाहिए था, पर मैंने वैसा न करके विना दृढ नींवके ही भारी प्रासाद खडा करनेका प्रयत्न किया था। शुभकरण मेरे वैरी हैं, हीरादेवीसे भी मेरा वैर है, इनके अतिरिक्त बुन्देलखडके प्राय और सभी राजाओंसे मेरी शत्रुता ही है, लेकिन उस वैरका नाश करने अथवा उसका कारण ढूंढ निकालनेका मैंने कभी प्रयत्न

नहीं किया। उनसे मेल करनेकी भावना कभी मेरे मनमे उत्पन्न ही नहीं हुई। मै सदा उन्हें अपना शत्रु समझकर उनसे लडता रहा—यही मेरी वडी भारी भूल हुई। स्वतत्रता सरीखा पवित्र काम हाथमे लेकर मैंने अपना हित और अनहित न समझनेवाले अज्ञानी भाइयोंको उपदेश देकर ठीक मार्ग पर लानेका कभी कोई प्रयत्न नहीं किया। मेरे मनमे यह भ्रम-पूर्ण कल्पना दृढ हो गई कि विना उनका नाश किये स्वतत्रता नहीं मिल सकती। जिन लोगोंसे मुझे प्रार्थना करनी चाहिए थी, उनके साथ मैं वैर और द्वेष करने लगा। इन्हीं सव दोषोंके करण स्वतत्रताके लिए मेरा यह भगीरथ-प्रयत्न व्यर्थ हो गया। छत्रसाल! युद्ध आरम्भ होनेके समय तुमने मुझसे व्यर्थ आपसमें रक्तपात न करनेके लिए कहा था, पर उसका मूल्य मैंने वहुत देरमें समझा। खैर, अव जो कुछ होना था सो हो चुका। तुम्हें जो कुछ मैं कहना चाहता था वह भी कह चुका। जिस समय आपसका मत्सर और वैरभाव छोड़ कर वुन्देले शाही सेनासे लड़ेंगे उसी समय वुन्देलखण्ड स्वतत्र होगा। विना नीव दृढ किए इमारत खडी करनेका प्रयत्न करना वडी भारी मूर्खता है।"

छत्रसालने वहुत गम्भीरतापूर्वक कहा,—"पिताजी! आपके उपदेशके अनुसार चलना ही मेरा सर्व-श्रेष्ठ कर्त्तव्य है। मैंने निश्चय कर लिया है कि इस आपत्तिसे वचनेके उपरान्त मैं आपके ढग पर ही कार्य्य करूँगा।"

चम्प०—"नहीं, मेरे ढग पर काम करनेकी आवश्यकता नहीं। मेरे ढंगमें वहुतसे गुण होने पर भी वह विलकुल निर्दोष नहीं कहा जा सकता। इस लिए मैं यह वात तुम्हें अच्छी तरह समझा देना चाहता हूँ। छत्रसाल! मैं तुम्हारा गुरु होनेके योग्य नहीं हूँ। तुम्हारे गुरु होनेकी योग्यता सारे भारतमें केवल एक ही मनुष्यमें है।"

दलपतिरायने पूछा,—"प्राणनाथप्रभुमें न?"

चम्प०—"नहीं, प्राणनाथप्रभु यद्यपि हम लोगोंको स्वतन्त्रता सम्वन्धी प्रयत्नोंमे इतनी सहायता देते हैं तथापि राजनीतिकी वातोंमें उनका इतना अधिक मन नहीं लगता। लेकिन इसमें सन्देह नही कि यदि वे मनपर लावें तो वुन्देलखण्ड वहुत ही थोड़े समयमें स्वतन्त्र हो जाय। छत्रसाल! यदि स्वतन्त्रताके सम्वन्धमें तुम गुरु-मत्र लेना चाहो तो उसके लिए तुम्हें दक्षिणकी ओर जाना पड़ेगा। वहाँ शिवाजी नामक एक महात्मा महाराष्ट्र देशको स्वतंत्र कर रहे हैं।

तुम उनकी सेवामें जाओ और उन्हें अपना गुरु बनाओ। वे जिस प्रकार तुम्हें मन्त्र दें उसी प्रकार तुम बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेका प्रयत्न करो। उस समय तुम अवश्य ही यशस्वी होगे। बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेकी मेरी इच्छा यदि तुम पूरी कर दोगे तो मेरी आत्माको स्वर्ग-सुखसे भी बढकर सुख मिलेगा। देखो वह सामनेसे कुछ यवन सैनिक हम लोगोंपर आक्रमण करनेके लिए इधर आ रहे हैं। युवराज! अब तुम शीघ्र अपनी माताकी रक्षाका प्रबन्ध करो और मैं अब अन्तिम घोर संग्राम करूँगा। अच्छा, अब मैं जाता हूँ, ईश्वर तुम लोगोंका कल्याण करे।"

इतना कहकर चम्पतराय सामनेसे आनेवाले यवन सैनिकोंकी ओर बड़े आवेशमें बढने लगे। पर छत्रसालने उन्हें बीचमें ही रोककर कहा,—

"पिताजी! अभी तो आप अपने प्राणोंकी रक्षा कर सकते हैं। जान बूझकर व्यर्थ आगमें कूदनेकी क्या आवश्यकता है?"

चम्प०—"छत्रसाल! तुम नहीं जानते कि मेरे जीवित रहनेकी अपेक्षा मर जानेमें ही बुन्देलखण्डका अधिक लाभ है। बुन्देलोंके मनमें इस समय मत्सरकी जो आग जल रही है वह मेरे मर जानेसे बुझ जायगी। बहुतसे बुन्देले यही समझते हैं कि चम्पतराय और स्वातन्त्र्य दोनों एक ही हैं। इसी लिए जो लोग चम्पतरायसे द्वेष रखते हैं वे स्वतन्त्रताके भी द्रोही और शत्रु बन गये हैं। मेरे मर जानेसे उस द्रोहका आप-ही-आप नाश हो जायगा और बुन्देलोंके मनमें स्वतन्त्रताके लिए निर्व्याज प्रेम उत्पन्न होगा। इसी लिए इस अवसरपर मुझे मर ही जाना चाहिए। दासत्वकी काली घटासे घिरे हुए बुन्देलखंडमें नरकतुल्य जीवन बितानेकी अपेक्षा समरभूमिमें लडकर वीरोंकी मृत्यु मरना कहीं अच्छा है। तुम जाओ और अपनी माताकी रक्षा करो।"

इतना कहकर चम्पतराय आगे बढे और उन मुसलमान सैनिकोंपर टूट पडे। उस समय दलपतिराय बहुत वीरतापूर्वक उनकी सहायता करने लगे और छत्रसाल अपनी माताकी रक्षाके प्रयत्नमें लग गये।

उस दिन युद्धमें चम्पतरायने अपूर्व और अवर्णनीय शूरता दिखलाई। उन्हें चारों ओरसे घेरकर बहुतसे यवन सैनिक उनपर शस्त्र चला रहे थे। शस्त्रोंके अनेक प्रहारोंके कारण चम्पतरायके शरीरसे कई स्थानोंसे लहूकी धारें बह रही थीं, पर तो भी उनकी तलवार बराबर काट करती ही रही। प्राय एक पहर तक

चम्पतराय उसी तरह लडते रहे, इस वीचमें उन्होंने कई यवनोंको यमपुर पहुँ-चाया। जान पडता था कि उनका अतुल पराक्रम देखकर स्वय युद्ध-देवताने उनके शरीरमें सचार किया है। उन्हें स्वयं भी इस वातके कारण सतोष हो गया कि आजका अन्तिम युद्ध मैंने वहुत अच्छी तरह किया।

शरीरमेंसे वहुतसा रक्त वहते जानेके कारण चम्पतराय धीरे धीरे नि शक्त होने लगे। उन्होंने दृढ निश्चय कर लिया था कि जव तक शरीरमें तनिक भी वल रहेगा तव तक मैं वरावर युद्ध करता रहूँगा। लेकिन उनके सारे शरीरमें इतने घाव हो गये थे कि थोडी ही देरमें उनमें वहुत अधिक शिथिलता आ गई। उस समय चार सैनिक वडे आवेशसे अपनी तलवारें लेकर उन पर टूट पडे। चम्पतरायने उसी अवस्थामें उनमेंसे तीनका काम तो तमाम कर दिया पर चौथेपर वे वार न कर सके। उस समय वे मरणोन्मुख होकर वीरोचित शय्यापर पड़ गये। उस समय कई सैनिक जोरसे चिल्ला उठे कि महेवाके राजा चम्पतराय मारे गये। कुमार दलपतिराय वहाँसे कुछ दूरी पर कई यवनोंके साथ लड़ रहे थे। यह चिल्लाहट सुनकर वे तुरन्त उस स्थानपर पहुँच गये जहाँ चम्पतराय गिरे थे। उन्होंने देखा कि चम्पतराय खूनसे सरावोर जमीन पर पडे हुए हैं और उनके पास ही पिता शुभकरण हाथमें तलवार लिये खडे हैं। उन्होंने समझ लिया कि हमारे पिताने ही चम्पतरायके प्राण लिये हैं। बिना कुछ आगा पीछा सोचे वे वडे आवेशसे अपने पितापर वार करनेके लिए टूटे, पर इतनेमें ही उन्हें चम्पतरायका क्षीण स्वर सुनाई दिया,—

“ दलपतिराय, बस हाथ रोको। व्यर्थ पितृ-वध करके नरकके भागी न वनो। मैंने अभी तुम लोगोंको जो उपदेश दिया था, वह क्या तुम इतनी जल्दी भूल गये? आगे अपने घरके लोगोंसे कभी लड़ाई न करना।”

ऊपर उठाई तलवार ज्योंकी त्यों रखकर दलपतिरायने वड़े ही दु खसे पूछा,—

“ इन्होंने ही आपपर शस्त्र चलाया था न?”

शुभकरण बीचमें ही कुछ दु खित होकर बोल उठे,–“ नहीं, शुभकरण इतने भाग्यवान् नहीं हैं। शुभकरणका इतना भाग्य कहाँ कि समरभूमिमें चम्पतरायको मारकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करे। मैं यह सुनते ही कि चम्पतराय इसी जगलमें हैं, अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए वड़ी आशासे दौड़ा हुआ यहाँ आया था,

पर यहाँ आते ही मैंने देखा कि चम्पतराय इस दशामें पडे हुए हैं। अब मैं इनकी यह अन्तकालीन वेदना देखकर सन्तोष करता हूँ।"

चम्पतरायने बडे कष्टसे कहा,—"दलपतिराय! शुभकरण जो कुछ कह रहे हैं वह बहुत ही ठीक है। उन्होंने मुझपर शस्त्र नहीं चलाया। तुम व्यर्थ पितृ-वध न करो।"

दलपतिरायने अपनी तलवार नीचे कर ली और जमीनपर बैठकर उनका सिर अपनी गोदमें ले लिया और उनके चेहरेपर हवा करना आरम्भ किया। इससे चम्पतरायकी वेदना कुछ कम होतीसी जान पड़ने लगी।

यवन सैनिक धीरे धीरे वहाँसे खिसकने लगे। उनमेंसे कई पहले ही दौड-कर बादशाहको यह समाचार सुनानेके लिए जा चुके थे कि राजा चम्पतराय मारे गये। उस समय छत्रसालको अवसर मिला और वे अपनी माताको साथ लेकर बहुतसे यवनोंकी लाशोंपर पैर रखते हुए उस स्थानपर पहुँचे जहाँ चम्पतराय पडे हुए थे।

सरलादेवी और छत्रसालके मनके धैर्यकी परीक्षा करनेवाला यही अवसर था। चम्पतरायका अन्त समयका तडफना देखकर उनके अन्त करण शोकसे दग्ध हो गये, पर उन्होंने अपनी आँखोंसे एक बूँद भी आँसू न निकलने दिया। उनके मुँहसे दु खका एक शब्द भी न निकला!

चम्पतरायकी वह शोचनीय अवस्था देखकर शुभकरण भी थोडी देरके लिए अपनी प्रतिज्ञा भूल गये। उन्हें अपनी बाल्यावस्थावाली चम्पतरायकी मैत्रीका ध्यान हो आया। चम्पतरायके स्वभावकी मृदुलता और मिलनसारीका चित्र उनकी आँखोंके सामने खिंच गया। उन्हें ऐसा जान पडने लगा कि बीचमें हम लोगोंका कुछ दिनोंके लिए परस्पर जो वैर हो गया था वह एक दुष्ट स्वप्न था। उस समय वे चम्पतरायको अपना वही पुराना मित्र समझने लगे। उन्होंने पहले जो कहा था कि,—"अब मैं इनकी यह अन्तकालीन वेदना देखकर ही सन्तोष करता हूँ।" उसका ध्यान करके उन्हें बहुत दु ख हुआ। यह देखकर उनका हृदय बहुत व्यथित हुआ कि हमारा पुराना मित्र और साथी हमें छोड-कर सदाके लिए जा रहा है। वे चम्पतरायके लिए शोक करने लगे।

शुभकरणकी आँखोंसे बहनेवाले आँसुओंकी दो बूँदें चम्पतरायके मुँह पर भी पडीं। उस समय उन्होंने बडी ही धीमी आवाजसे कहा,—

"छत्रसाल! मैंने तो तुम लोगोंको मना कर दिया था, तब तुम लोग मेरे लिए क्यों रो रहे हो?" इतना कहकर चम्पतरायने जब बडे कष्टसे देखा कि छत्रसाल या उनकी माता नहीं, बल्कि शुभकरण रो रहे हैं तब उनके चेहरे पर आश्चर्यकी कुछ छाया जान पडने लगी। उन्होंने बहुत ही धीमे और अस्पष्ट स्वरमे पूछा,—

"शुभकरण! क्या तुम मेरे लिए शोक कर रहे हो? क्या तुम्हें मेरे मरनेका दुःख हो रहा है?"

रणधीर शुभकरणसे कुछ बोला न गया, वे फूट फूटकर रोने लगे।

चम्प०—"शुभकरण! शोक न करो। मैं इतनेसे ही सन्तुष्ट हूँ कि मेरे अन्त समय तुम्हारा मन साफ हो गया।"

अपना शोक रोककर शुभकरणने बडी कठिनतासे कहा,—"चम्पतराय! मैं झूठ नहीं बोलता। मेरा मन अभीतक तुम्हारी तरफसे साफ नहीं हुआ। मुझे केवल बाल्यावस्थाकी बातोंका ध्यान करके ही दुःख हो आया।"

चम्प०—"शुभकरण! भला मैंने तुम्हारा ऐसा कौनसा अपराध किया था जिसके कारण तुम्हारा मन अभी तक साफ नहीं हुआ?"

शुभ०—"इस अन्त समयमें तुम्हें उस अघोर पातकका स्मरण करा देना चाहिए। सोलह वर्षका समय बीत जानेके कारण और स्वतन्त्रताके उच्च ध्येयके पीछे पडे रहनेके कारण शायद तुम्हें वह बात भूल गई होगी। उस पातकके स्मरण और उसके पश्चात्तापसे ही किसी तरह इस समय तुम्हारा अतःकरण डोले तो सही। शायद उस पश्चात्तापके कारण तुम्हारी आत्मा शुद्ध हो जाय और तुम सहजमे अपने प्राण त्याग कर सको। क्या तुम्हें याद है कि सोलह वर्ष पहले तुमने बलात् किसी कुमारीका कौमार्य्य नष्ट किया था?"

चम्प०—"नहीं, अपनी स्त्रीको छोड़कर किसीके साथ आजतक मेरा कभी सम्बन्ध नहीं हुआ।"

शुभ०—"शायद तुम यह बात भूल गये हो कि तुमने एक कुमारीका कौमार्य्य नष्ट किया था और उसी कारण उस कुमारीने आत्म-हत्या कर ली थी।"

चम्प०—(कुछ क्रोधसे) "यदि इस समय मुझमें शक्ति होती तो मैं तुम्हें ऐसे घृणित और मिथ्या कलंक लगानेका मजा चखा देता। मेरे आचार पर किसी प्रकारका कलंक लगाना मेरा भयंकर अपमान करना है।"

शुभ०—" चम्पतराय! इस समय तुम्हारा अन्त-काल बहुत समीप है, तुम्हारी सारी शक्तियाँ क्षीण होती जा रही हैं। शायद इसी लिए तुम्हारी स्मरण-शक्तिने भी जवाव दे दिया है। नहीं तो तुम इस तरह इन्कार न करते। सागरकी ललिता नामकी राजकन्याका तुम्हें स्मरण है न?"

चम्प०—" हाँ, मुझे अच्छी तरह स्मरण है।"

शुभ०—" वह आत्महत्या करके मर गई थी, यह भी तुम्हें याद है न?"

चम्पतरायके चेहरेपर आश्चर्य और दुःखकी मिली हुई छाया दिखाई पडने लगी। उन्होंने शुभकरणके प्रश्नका कोई उत्तर न दिया।

शुभकरणने फिर कहा,—" तुमने उसका कौमार्य्य नष्ट किया था, इसी लिए उसने आत्महत्या की थी।"

यद्यपि उस समय तक चम्पतरायकी बहुत कुछ शक्ति क्षीण हो गई थी तो भी उन्होंने बहुत प्रयत्न करके आवेशमें कहा,—

" मेरा उसके साथ भाई-बहनका सा सम्बन्ध और व्यवहार था। मैं उसे बहनकी तरह जानता था। अपनी बहन और अपने मित्रके सम्बन्धमें ऐसा घृणित और नीच सन्देह करनेवालेको धिक्कार है!"

चम्पतराय मानो घोर दुःख और विचारमें पडकर सन्दिग्ध दृष्टिसे शुभकरणकी ओर देखने लगे।

उन्हें इस दशामें देखकर चम्पतरायने फिर कहा,—

" शुभकरण! सन्देहमें पडकर तुमने खूब देशद्रोह किया। भला अब तो सावधान हो जाओ।"

शुभकरणकी आँखोंसे आँसू निकल आये। उन्होंने कहा,—" यदि यही बात मुझे पहले मालूम होती तो—"

चम्पतरायकी आत्मा शरीर छोडकर चली, उन्होंने अन्तिम बार अपनी स्त्री, अपने पुत्र, अपने मित्र और कर्तव्य-दक्ष दलपतिरायकी ओर देखा और स्वर्गकी ओर प्रयाण किया।

सरलादेवी और छत्रसालने फूट फूटकर रोना आरम्भ किया। शुभकरण भी उन्हीं लोगोंके साथ मिलकर बालकोंकी तरह रोने लगे।

बुन्देलखण्डका स्वातंत्र्य-दीप बुझ गया।

* *

सत्रहवाँ प्रकरण।

ढाँड़ेरका राजमहल।

जन्म, जरा और मरण इन तीनों अवस्थाओंके अधीन सारा विश्व है, इसी लिए जब वृद्धावस्थामें अपना बहुतसा समय बिताकर अन्तमें भगवान् अंशुमालीने पश्चिम क्षितिजपर अपना शरीर छोड़ा तब सुफलादेवीको जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। उसे आश्चर्य केवल अंशुमालीके उत्तराधिकारीके कार्य्योंपर हुआ। सूर्यकी उज्ज्वल प्रभासे वैर करनेवाला उनका उत्तराधिकारी अन्धकार अबतक न जाने किस कन्दरामे छिपा हुआ था। सूर्य्यका अस्तित्व नष्ट होते ही वह सारी पृथ्वीपर अपना अधिकार फैलाने लगा। भगवान् अंशुमालीने प्रजाके हित और रंजनके लिए जो जो कार्य किये थे उन सबको नष्ट करके मानो सारे संसारमें कृष्णसाम्राज्य स्थापित करना ही उसने अपना परम कर्त्तव्य समझ लिया था। जाहीजुहीके फूलोंका सफेद रंग, गुलाबका गुलाबी रंग, चम्पेका चम्पई रंग और केवड़ेका केवड़ई रंग उसे तनिक भी अच्छा न लगा और उसने उन सब पर कालिख पोतना आरम्भ किया। थोड़ी ही देरमें नीले आकाशसे लेकर हरित वर्णकी भूमि तक, सारे विश्वमें अन्धकारका साम्राज्य हो गया। उल्लुओं और दुष्ट निशाचरोंने अन्धकारका जयजयकार करना आरम्भ कर दिया। तो भी सुफलादेवी और विजया अपने बागमें स्तब्ध हो कर बैठीं हुई थीं।

अन्तमें जब विजयाको लगाई हुई लताके सुन्दर फूल भी न दिखलाई पड़ने लगे तब उसने कहा,—

"अभी सूर्य्यको अस्त हुए थोड़ी देर भी नहीं हुई, और अन्धकारने इन सुन्दर फूलोंकी यह दशा कर दी।"

सुफलादेवीने मधुर स्वरसे कहा,—"यह अन्धकार सूर्य्यका उत्तराधिकारी है। किसी प्रतापशाली व्यक्तिके न रहनेपर उसके दुष्ट उत्तराधिकारी ऐसा ही किया करते हैं।"

वि०—"अंशुमालीके अस्त होते ही जिस प्रकार अन्धकारने चारों ओर उपद्रव आरम्भ कर दिया है, उसी प्रकार बुन्देलखण्डके स्वातन्त्र्य-रवि चम्पतरायके अस्त होते ही औरंगजेब भी सारे बुन्देलखंडमें धमाचौकड़ी मचा रहा है।"

ठंटी साँस लेकर सुफलादेवीने कहा,-" यही तो सबसे अधिक दुःखकी बात है। चम्पतरायके स्वर्गवासी होते ही सारे बुन्देलखडमें अन्धकारकी तरह यवन-सेना छागई है। इस अन्धकारमें हीरादेवी सरीखी भूतनियाँ और शुभकरण सरीखे पिशाच धमाचौंकड़ी मचावेंगे और प्रजाके सुखका नाश करेंगे। चम्पतरायने अबतक जो पवित्र और शुभ कृत्य किये थे वे सब इस अन्धकारमें इन फूलोंकी तरह लोप हो जायँगे।"

वि०—" लेकिन एक बात है। अन्धकारके कारण यद्यपि ये फूल नहीं दिखलाई देते तो भी इनकी मनोहर सुगन्धि अभीतक ज्योंकी त्यों बनी हुई है। इसी प्रकार चम्पतरायकी कृतियाँ यद्यपि अदृश्य हो गई है तथापि उनका कीर्ति-परिमल दसों दिशाओंमें फैला रहेगा और प्रातःकाल इन फूलोंका सौन्दर्य जिस प्रकार फिर हम लोगोंको दिखाई पडने लगेगा उसी प्रकार बुन्देलखडकी दासताकी रात बीत जानेपर चम्पतरायकी कृतियाँ भी फिर हमें दर्शन देकर प्रसन्न करने लगेंगी।"

सुफलादेवीने बड़े ही दुःखसे कहा,—" बुन्देलखडकी दासताकी रात! यह घोर काली रात कब बीतेगी और बुन्देलखडकी प्रजाको स्वातन्त्र्यसूर्य्य कब दिखलाई पडेगा? बुन्देलखडके मस्तकपर चम्पतराय स्वातन्त्र्य-तेजसे प्रकाशित होने लगे थे। कुछ दुष्ट मेघोंने उसके प्रकाशकी सुन्दर किरणें प्रजातक नहीं पहुँचने दीं। इसी लिए इस स्वातन्त्र्य-सूर्य्यके प्रकाशसे यथेष्ट लाभ न हो सका। अब मेघोंमें छुपा हुआ वह चम्पतरायरूपी प्रकाश भी न रह गया। बुन्देलखडका अन्तरिक्ष काले मेघोंसे भर गया है। सर्वत्र यवन-सत्ताका अन्धकार फैला हुआ है। बुन्देलखडका भाग्योदय फिर कब होगा? उसके अन्तरिक्षसे ये मेघ कब हटेंगे? बुन्देलखडमें स्वातन्त्र्य-सूर्य्यका प्रकाश फिर कब पडेगा?"

वि०—" चम्पतरायके पुण्यशील पुत्र छत्रसालको तुमने अभीतक नहीं देखा है, इसीसे तुम्हें बुन्देलखडकी दासताकी यह रात बहुत बडी जान पडती है। सच पूछो तो चम्पतराय स्वातन्त्र्य-सूर्य्य नहीं थे बल्कि वे उस सूर्य्यका मार्ग सुलभ करनेवाले अरुण थे। बुन्देलखडके स्वातन्त्र्यसूर्य्यके शुभागमनकी सूचना देनेवाला अरुण अभी अस्त हुआ है। अरुणके अस्त होनेपर थोडी देरके लिए बुन्देलखंडमें यह अन्धकार फैल गया है। पर यह थोडी ही देरमें नष्ट हो जायगा और बुन्देलखंडका भाग्यरवि छत्रसाल स्वातन्त्र्य-तेजसे चमकने लगेगा।"

विजयाकी बात सुफलादेवीको ठीक मालूम हुई। वह कुछ कहना ही चाहती थी कि इतनेमे उन दोनोंने अपना एक परिचित स्वर सुना। कोई कह रहा था, "ईश्वर करे, तुम्हारी बात सच हो। चम्पतरायका बाकी बचा हुआ काम छत्रसालके हाथसे पूरा हो।"

उस पवित्र स्वरको पहचानते ही सुफलादेवी और विजया दोनों उठ खड़ी हुई और चार कदम आगे बढकर बहुत ही नम्रता-पूर्वक मस्तक झुकाते हुए उन लोगोंने महाराज प्राणनाथप्रभुको नमस्कार किया।

प्राणनाथप्रभुने दोनोंको आशीर्वाद देकर कहा,—"सुफलादेवी! तुम मुझे यहीं मिल गईं, यह बहुत अच्छा हुआ। इस समय मेरे साथ और भी तीन आदमी हैं। हम लोग एकान्तमें तुमसे कुछ आवश्यक बातें करना चाहते हैं।"

सुफ०—"महाराज! आप आनन्दसे उन लोगोंको साथ लेकर अन्त पुरमें पधारिए। वहा अच्छी तरह बातें हो सकेंगी।"

*थोडी देर बाद सुफलादेवी प्राणनाथप्रभु और उन तीनों अपरिचित व्यक्ति*योंको लेकर अन्त पुरमें पहुँच गई। विजयाने फुरतीसे वहाँकी सब दासियों आदिको हटा दिया और अन्तमे वह स्वय भी वहाँसे चलने लगी। इसपर प्राणनाथप्रभुने कहा,—

"विजया! तुम्हारे यहाँ रहनेसे कोई हानि नहीं है। तुमसे हम लोग कोई बात छिपाना नहीं चाहते।"

विजयाके बैठ जाने पर प्राणनाथप्रभुने सुफलादेवीसे कहा,—

"सुफलादेवी! तुम इस प्रकार चकित होकर क्यों देख रही हो? यह सरलादेवी तो तुम्हारी बाल्यावस्थाकी सहेली है। क्या तुमने इसे अभी तक नहीं पहचाना? (अपने बाकी दोनों साथियोंसे) छत्रसाल और दलपतिराय! यद्यपि यह महल राजा कचुकीरायका है तथापि यहाँ सारा अधिकार सुफलादेवीका ही है। तुम लोग किसी प्रकारका सकोच या संशय न करो और सुफलादेवीका आदर-सत्कार स्वीकृत करो।"

सुफलादेवी उन लोगोंको पहचान कर बहुत ही प्रसन्न हुई। सरलादेवीको बड़े ही आदरसे बैठाते हुए उसने कहा,—

"हम लोगोंका यह बडा भारी भाग्य है कि ऐसे पुण्यशीलाके चरण यहाँ पड़े। आप लोगोंके आनेको इस बातका शुभ शकुन ही समझना चाहिए कि

ढाँड़ेरका राजकुल अपना पुराना दूषित मार्ग छोड़कर भविष्यमें शुभ मार्गपर चलेगा। बहन सरला! लडकपनमें हम लोगोंने बहुतसा समय एक साथ ही बिताया है। पर उस समयकी अपेक्षा आज तुम बहुत ही शान्त, पवित्र और पूज्य दिखलाई पडती हो। छत्रसाल सरीखे प्रतापशाली पुत्रको जन्म देनेवाली ऐसी पुण्यवती माताके चरण प्रत्येक स्त्री और पुरुषको छूने चाहिए।"

इतना कहकर सुफलादेवीने सरलादेवीके चरण छू लिये। पर सरलादेवीने तुरन्त ही उसे रोककर कहा,—"नहीं बहन, तुम इस अभागिनीके पैर मत छूओ।"

सुफ०—"देवी! तुम्हें तो बुन्देलखण्डके ऐसे सर्व-श्रेष्ठ नररत्नकी पत्नी होनेका सौभाग्य प्राप्त है, जो यद्यपि इस समय इस ससारमें नहीं हैं तथापि जिनकी विमल कीर्ति अनन्त कालतक बनी रहेगी। चाहे इस समय वे इस ससारमें न हों पर केवल इसी कारण तुम अभागिनी नहीं हो सकतीं। तुम तो वीर-पत्नी भी हो और वीर-माता भी, ऐसी दशामें व्यर्थ अपने भाग्यको क्यों दोष देती हो? बहन! मैं तो इस पराई थाती (अपनी कन्या) के कारण ही अपने आपको भाग्यशाली समझती हूँ।"

इतना कहकर सुफलादेवी कुछ देरके लिए चुप हो गई। वह मन-ही-मन सरलादेवीकी स्थितिके साथ अपनी स्थितिकी तुलना कर रही थी। उसने सोचा कि सरलादेवी एक स्वाभिमानी और स्वतन्त्रता-प्रेमी देश-सेवक महात्माकी पत्नी हैं और मैं एक पराधीन । पर इसके आगे उसका विचार न जा सका। कुछ भी हो उसके पति उसके आराध्य देवता थे। इस लिए उसने निश्चय किया कि सरलादेवीके स्वामीकी अपेक्षा मेरे स्वामी किसी बातमें कम नहीं हैं और मेरी स्थिति सरलादेवीकी स्थितिसे बुरी नहीं है। इसके उपरान्त उसका ध्यान छत्रसालकी ओर गया। उनका अतुल पराक्रम वह पहले ही सुन चुकी थी। उनका क्षात्रतेज उसे अपने सामने दिखाई पड रहा था। छत्रसालके उग्र पर प्रेमपूर्ण और तेजस्वी पर सरल मुखकी ओर देखकर सुफलादेवीको थोडी देर-तक इस बातका कुछ दु:ख हुआ कि सरलादेवी एक बडे ही पराक्रमी, स्वदेशा-भिमानी, स्वधर्म्मरत, परम सुन्दर पुत्रकी माता हैं, पर मैं पुत्रहीना हूँ, मेरे आगे कोई पगला-बावला लडका भी नहीं है। पर शीघ्र ही उसके मनमें यह विचार उत्पन्न हो आया कि वे केवल सरलादेवीके पुत्र नहीं हैं, पुत्रकी भाँति

उनसे सेवा करानेका अधिकार सारे बुन्देलखण्डको है। पर तो भी इस अप्रत्यक्ष सम्बन्धके कारण उसे आनन्द न हो सका। तब वह सरलादेवीके पुत्रके गुणोंकी अपनी कन्याके गुणोंके साथ तुलना करने लगी। उस समय उसे जान पडने लगा कि सद्गुण और सौन्दर्य्यमें छत्रसाल और विजया दोनों ही बराबर है। दोनोंकी जोडी उसे बहुत ही अच्छी जान पडी। उसने सोचा कि यदि इन दोनोंका विवाह हो जाय तो सहजमें ही मुझे छत्रसाल पुत्ररूपमें मिल जायँगे और सरलादेवीको विजया सरीखी कन्या प्राप्त हो जायगी। इस अन्तिम विचारसे वह बहुत ही प्रसन्न हुई। उसने वात्सल्य-भावसे छत्रसालकी ओर देखा और विजयाकी ओर दृष्टि फेरी। उस समय उसे ऐसा जान पडा कि मेरे विचारोंका प्रतिबिंब विजयाके मुखपर पड रहा है।

सुफलादेवी अपने मनमे यह सोच ही रही थी कि इन अतिथियोंके भोजन और ठहरने आदिका प्रबन्ध होना चाहिए और वह विजयासे कुछ कहना ही चाहती थी, इतनेमें प्राणनाथप्रभुने उनसे कहा,—

"सरलादेवी ! छत्रसाल और दलपतिराय बहुत दूरसे थके हुए आ रहे हैं। कल रातसे इन लोगोंने अन्न-जल ग्रहण नहीं किया है। इनका आतिथ्य बहुत आवश्यक है। पर इनका यह प्रण है कि जबतक इनका उद्देश्य सिद्ध न हो जायगा तबतक ये विश्राम न करेंगे और न अन्न-जल ग्रहण करेंगे।"

सुफलादेवीने हाथ जोडकर कहा,—"प्रभु ! मेरे योग्य जो कुछ सेवा हो आप उसके लिए आज्ञा दें। मुझे इनका उद्देश्य मालूम हो जाय तो मैं उसे पूरा करके इन्हें सन्तुष्ट करनेका प्रयत्न करूँ।"

सुफलादेवीके आशयोंकी उच्चता देखकर प्राणनाथप्रभुने बडे आनन्दसे कहा, —"राजा चम्पतरायके स्वर्गवासी होनेके कारण महेवाका राजकुल जैसी विकट स्थितिमें पड़ गया है, उसे बुन्देलखंड जानता है। पहले जिस स्थानपर चम्पतरायका स्वतंत्रताका झण्डा फहराता था, वहाँ अब दिल्लीपतिका निशान उड रहा है। चम्पतरायका शरीरान्त हो गया और उनके पुत्र छत्रसालको जगल जगल भटकना पडा। पर दुष्ट और कृतघ्न हीरादेवी इतनेहीसे सन्तुष्ट न हुई, उसकी आँखोंमें कुमार छत्रसाल भी काँटेकी तरह खटक रहे हैं। वह चाहती है कि या तो इन्हें कैद कर लें और या इनके प्राण ले लें। सरलादेवीसे भी वह बहुत ही द्वेष करती है। कुमार छत्रसाल और सरलादेवीका पता लगानेवाले

पातकीको वह बहुतसा पुरस्कार देगी, इस लिए उसके बहुतसे नौकर चाकर इन लोगोंका पता लगानेके लिए चारों तरफ छूटे हैं। हम लोगोंको इस बातका भय होने लगा कि न जाने कब इन लोगों पर कैसा सकट आ पडे। आश्रय पानेके लिए ये लोग अपने अनेक सम्बन्धियों और मित्रोंके पास गये, पर किसीने हीरा-देवीके भयके कारण और किसीने दिल्लीपतिसे डरकर इन्हें अपने यहाँ स्थान नहीं दिया। इस लिए ये लोग आश्रय पानेकी इच्छासे तुम्हारे पास आये हैं।"

सुफ०—"महेवाके स्वर्गवासी महाराजने सारे बुन्देलखड पर बहुत कुछ उपकार किया है और उस उपकारका कुछ अश मुझे भी मिला है। लेकिन रण-दूलहखाँको छोडकर उन्होंने हम लोगों पर जो उपकार किया था, हम लोगोंके लिए वह सबसे बढ कर है और उससे हम लोग कभी उऋण नहीं हो सकते। ऐसे परोपकारी महात्माकी स्त्री और पुत्रकी सेवाके लिए डाँडेरका सारा राज्य उपस्थित है। यहाँकी धन-सम्पत्ति, दास-दासी, किले, प्रासाद, सेना बल्कि प्रत्येक वस्तु आप ही लोगोंकी है। आप लोग जिस प्रकार चाहें, इसका उपयोग करें। आप लोग इसे महेवाका राज-प्रासाद समझकर जबतक चाहें, बडे आनन्दसे रहें। आप लोगोंकी सेवा करके हम लोग अपने आपको धन्य समझेंगे।"

प्राणनाथप्रभुने गद्गद स्वरसे कहा,—"सुफलादेवी, तुम धन्य हो! तुमने आज बुन्देलखडकी लाज रख ली। जिन लोगोंके हितके लिए चम्पतरायने इतने कष्ट सहकर अनेक प्रयत्न किये और अन्तमें अपने प्राण तक दे दिये उनमेंसे एकने भी चम्पतरायकी स्त्री और पुत्रको अपने यहाँ आश्रय नहीं दिया। इससे बढकर बुन्देलोंकी कृतघ्नता और नामरदी और क्या हो सकती है? लेकिन इस समय तुमने इतना साहस करके बुन्देलखडकी लाज रख ली। अकेली सरला-देवी तुम्हारे पास रहेंगी। मैं कल सूर्य्योदय होनेसे पहले ही छत्रसाल और दल-पतिरायको अपने साथ लेकर यहाँसे चला जाऊँगा।"

सुफलादेवीने बहुत ही नम्रतापूर्वक कहा,—"महाराज! यदि हम लोगोंको कुछ दिनों तक आपकी तथा इन दोनों युवराजोंकी सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त होता तो हम लोग अपने आपको कृतकृत्य समझते।"

प्राण०—"नहीं, अभी हम लोग यहाँ अधिक समय तक नहीं रह सकते। बुन्देलखडकी पराधीनता दिन पर दिन बढती ही जाती है और जिन लोगोंका कर्त्तव्य उसका उद्धार करना हो, उन लोगोंका क्षण भर विश्राम करना भी बहुत

ही घातक है, इस समय एक क्षणका विलव भी प्रजाके लिए अनेक दु ख, अनेक अपमान और अनेक आपत्तियॉ खडी कर देगा।"

सुफ०—" महाराज ! यदि ऐसी वात हो तो आप ढॉडेरकी सेना और किलेसे काम ले सकते हैं। स्वतंत्रताका जो झण्डा पहले महेवाके किलेपर फहराता था, अव आप उसे ढॉडेरके किलेपर गाडें। यदि ढॉडेरकी सेना सारे बुन्देलखडको स्वतत्र करनेके लिए रणक्षेत्रमें उतर पडे तो हम लोगोंके अभिमानके लिए इससे वढकर और कौनसी वात हो सकती है ?"

छत्र०—" यह तो और भी उत्तम वात है। यदि हम लोगोंको ढॉड़ेरका किला मिल जाय तो बुन्देलखडकी पराधीनता वातकी वातमें दूर हो सकती है। पर अभी यवनोंसे लड़नेका समय नहीं है। जिसमें पहलेकी तरह इस वार भी प्रयत्न व्यर्थ न हो जाय, इस लिए इस वार सारे बुन्देलखण्डमें तैयारी होनी चाहिए। इससे पहले हम लोग कभी तलवार न उठावेंगे। इस लिए अभी ढॉडेरके किले पर स्वतंत्रताका झण्डा न गाडना चाहिए। हॉ, आगे चलकर तो हम लोगोंको ऐसा करना ही पड़ेगा।"

सुफ०—" जव तक अनुकूल समय न आवे तव तक आप लोग यहीं क्यों नहीं ठहरते ?"

छत्रसालने आवेशमें आकर कहा,—" जो लोग केवल डींगें हॉंकना ही जानते हैं पर जिनमें उदात्त कर्तव्य करनेकी शक्ति नहीं होती वही लोग अनुकूल समयकी प्रतीक्षा करते हैं। ऐसे ऐसे कामोंके लिए जो लोग अनुकूल समयका वहाना करते हैं उन्हें विलकुल ही अयोग्य समझना चाहिए। अपने घरमें लगी हुई आग बुझानेके लिए अनुकूल समयकी प्रतीक्षा कैसी ? भयंकर व्याधिसे ग्रस्त अपना शरीर नीरोग करनेके लिए अनुकूल समयकी प्रतीक्षाका क्या अर्थ ? अपने वैभवको लुटने और अधिकारोंको नष्ट होनेसे वचानेके लिए कभी समय नष्ट न करना चाहिए। इस समय हम लोग पराधीनताके नरकमें अपना जीवन विता रहे हैं। इस नरकसे वच निकलनेके लिए यही समय सबसे अधिक अनुकूल है। जिस प्रकार बुन्देलखडके अन्य राजे अपनी अकर्मण्यताके कारण समयकी अनुकूलताका वहाना करते हैं उसी प्रकार यदि हम भी वहाना करके चुपचाप वैठे रहें तो यह आग सारे बुन्देलखडको भस्म कर देगी, यह व्याधि बुन्देलखंडको खा जायगी, उसका सारा वैभव नष्ट हो जायगा, और तव भी हम

लोगोंको अनुकूल समय न मिलेगा। जो लोग अपना कर्त्तव्यपालन करना चाहते हैं, उनके लिए समय कभी प्रतिकूल नहीं होता। कर्म्मण्य स्वय समयके पीछे न पडकर उसे अपना अनुगामी वनाते हैं। यदि समय अनुकूल न हो तो उसे अनुकूल वना लेनेमे क्या हानि है? समय स्वय जैसे अनिष्ट कार्य्य कर लेता है वैसे उत्तम कार्य वह कभी विना मनुष्यकी सहायताके नहीं कर सकता। इस लिए अनुकूल समयकी प्रतीक्षा करना ठीक नहीं। पिताजीके देहान्तके उपरान्त अवतक सारा समय हम लोगोंने आलसमें ही विता दिया। प्रति दिन अस्त होनेवाला सूर्य्य हम लोगोंके समाचार पिताजी तक पहुँचाता है, इस लिए अव हम लोगोंको व्यर्थ समय नष्ट न करना चाहिए। जिस समय सूर्यसे पिताजीको यह मालूम होगा कि महाराज प्राणनाथ प्रभु अपना भगवद्भजन छोडकर वुन्देलखडको स्वतत्र करनेके प्रयत्नमे लगे हैं उस समय उन्हें कितना आनन्द होगा!"

सुफ०—"क्या महाराज प्राणनाथ हम लोगोंकी यह पराधीनता छुड़ानेके लिए प्रयत्न करेंगे? यदि ऐसा हो तव तो समझना चाहिए कि स्वयं स्वतन्त्रता देवी विन्ध्यवासिनी हाथमें खड्ग लेकर हम लोगोंकी सहायता करेंगी।"

प्राण०—"हाँ, मैं यथासाध्य तुम लोगोंके लिए अवश्य प्रयत्न करूँगा। जगलमें रहकर ईश्वराराधन करनेकी अपेक्षा जनपदमें रहकर दीनों और अनाथोंकी सहायता करना मैं अधिक उत्तम समझता हूँ।"

सुफ०—"धन्य महाराज! तव तो इसे वुन्देलखण्डका वडा भारी सौभाग्य समझना चाहिए। वुन्देलखण्डके सुदिन अव वहुत ही निकट हैं इसी लिए आपके मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए हैं। महेवाके स्वर्गीय महाराजको वरावर समय समय पर आपसे परामर्श आदिके रूपमें सहायता मिला ही करती थी और आप उनके अभीष्टकी सिद्धिके हृदयसे इच्छुक थे, पर उस समय आप स्वय अपने ऊपर इस प्रकार प्रत्यक्ष रूपमे कोई कार्य्य या उत्तरदायित्व नहीं लेते थे। इस समय आप अपनी इच्छासे यह कार्य्य अपने ऊपर लेनेके लिए तैयार हुए हैं। अत अव छत्रसालके यशस्वी होनेमे तनिक भी सन्देह नहीं रह गया। वुन्देलखण्डको स्वतन्त्र करनेके लिए महाराज कौनसा प्रयत्न करेंगे?"

छत्र०—"पिताजीने अपना अन्तिम काल समीप देखकर हम लोगोंको कुछ उपदेश दिया था और यह वतलाया था कि हमारे यशस्वी न होनेके कारण क्या हैं। उन्हीं कारणोंको दूर करनेका भार महाराजने अपने ऊपर लिया है।

आप स्वय जानती हैं कि महाराजकी वातोंका सारे बुन्देलखण्डमें कितना आदर है और उनकी आज्ञा लोग किस प्रकार शिरोधार्य्य करते हैं। कल सूर्य्योदयके उपरान्तसे प्रभुकी अधिकार-युक्त वाणी सारे बुन्देलखण्डमें स्वतन्त्रताके उपदेशामृतकी वर्षा करने लगेगी।"

सुफ०—"अव बुन्देलखण्डके भाग्योदयमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं रह गया। भला यह तो वतलाओ कि कल प्रात:काल तुम लोग महाराजके साथ कहाँ जाओगे ?"

छत्र०—"मैं औरंगजेवके सरदार राजा जयसिंहकी सेनाके साथ दक्षिण जाऊँगा।"

सुफ०—(आश्चर्य) "क्या तुमने उनके यहाँ नौकरी कर ली है ?"

छत्र०—(गम्भीरतासे) "स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए मुझे कुछ समयतक यह निकृष्ट और अप्रिय कार्य भी करना पडेगा।"

सुफ०—"राजा जयसिंह किस कामके लिए दक्षिणकी ओर भेजे जा रहे हैं ?"

छत्र०—"वादशाहका वहादुरखॉ कोका नामक एक सेनापति वहुत दिनोंसे देवगढ़में घेरा डाले वैठा है। वादशाहकी आज्ञासे राजा जयसिंह उसीकी सहायता करनेके लिए जा रहे हैं।"

सुफ०—"तव क्या तुम वादशाहकी ओरसे लडोगे ?"

छत्र०—"हॉ, यदि अवसर पड़ा तो मुझे युद्ध भी करना पडेगा।"

सुफ०—"जो दिल्लीके साम्राज्यकी जड़ खोदना चाहता है वह उसकी सेवा और सहायता क्योंकर करेगा ?"

छत्र०—"राजकीय कारणोंसे समय समय पर प्रिय और अप्रिय सभी काम करने पड़ते हैं। दक्षिण जानेके लिए मुझे राजा जयसिंहका साथ वहुत अच्छा मालूम हुआ, इसी लिए मैंने उनके साथ वहॉ जाना निश्चित किया था। वादशाही सेनामें सम्मिलित होनेका विचार पीछेसे हुआ था।"

सुफ०—(आश्चर्यसे) "लेकिन तुम्हें ऐसे अवसर पर दक्षिणका कठिन प्रवास करने और औरगजेवकी सेनामें सम्मिलित होनेकी क्या आवश्यकता पड़ी ?"

प्राण०—" दक्षिणमें शिवाजी नामक एक महाराष्ट्र महात्मा अपने देशको स्वतन्त्र करनेके प्रयत्नमें लगे हुए है। वे बहुत ही योग्य राजनीतिज्ञ हैं। उनसे गुरुमन्त्र और शिक्षा लेनेके लिए ही छत्रसाल दक्षिणकी ओर जा रहे हैं। स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए हम लोगोंको अन्तमें बादशाही सेनाके साथ घनघोर युद्ध करना पड़ेगा, इस लिए पहलेसे ही उसकी भीतरी व्यवस्था अच्छी तरह जान लेना बहुत ही आवश्यक है। बादशाही सेनाके लड़नेके दाँवपेंच आदि क्या हैं, सैनिकों और अधिकारियों आदिका पारस्परिक व्यवहार कैसा है, आदि आदि अनेक उपयोगी बातोंका ज्ञान प्राप्त करनेका इन्हें यही सबसे अच्छा अवसर जान पड़ा, इसी लिए इन्होंने बादशाही सेनामें सम्मिलित होनेका विचार किया।"

प्राणनाथ प्रभुकी बातें सुनकर सुफलादेवीका आश्चर्य जाता रहा और समाधान हो गया। उसने पूछा,—" मुझे तो केवल सरलादेवीकी ही सेवा करनी पड़ेगी न? अथवा इसके अतिरिक्त मेरे लिए प्रभुकी और भी कोई आज्ञा है?"

प्राण०—" जबतक बुन्देलखण्डमें और सब तैयारियाँ न हो जायँ तबतक तुम्हारे लिए इतना ही काम यथेष्ट है। राजा जयसिंह हमारे चम्पतरायजीके पुराने मित्र थे, इस लिए छत्रसालके सम्बन्धमें मुझे तनिक भी चिन्ता न थी। पर मैं यही सोच रहा था कि सरलादेवीको कहाँ रक्खूँ, और जब तक तुमसे इस सम्बन्धमें बातें नहीं हुई थीं, तब तक मुझे बहुत ही चिन्ता थी। अब हम लोग सब तरहसे निश्चिन्त हो गये हैं और बेखटके अपना अपना काम करेंगे। पर सुफलादेवी! एक बात मैं तुम्हें बतला देना चाहता हूँ। इस बातका बहुत ध्यान रखना कि सरलादेवीका यहाँ रहना किसीको मालूम न हो। राजा कचुकीरायको पूरी तरहसे हीरादेवीकी मुट्ठीमें ही समझना चाहिए, इस लिए न जाने सरलादेवी पर कब कौन विपत्ति आ जाय। तुम्हें ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए जिसमें किसीको यह न मालूम हो कि चम्पतरायकी रानी—छत्रसालकी माता यहाँ है।"

सुफ०—" महाराज! आप इस बातकी तनिक भी चिन्ता न करें। मैं सारी व्यवस्था कर लूँगी।"

दलपतिरायने प्राणनाथ प्रभुकी ओर देखते हुए पूछा,—" राजा कचुकीराय आजकल कहाँ है?"

इस पर विजया बोल उठी,—" विन्ध्यवासिनीके महोत्सवके उपरान्त पिताजी इधर नहीं आये। दिल्लीसे तो उनके लौटनेका समाचार आ गया है, पर अभी तक वे यहाँ नहीं पहुँचे हैं। शायद वे आजकल ओड़छेमें ही हैं।"

सुफलादेवीने प्राणनाथ प्रभुसे पूछा,—" ये कौन सज्जन हैं ?"

प्राण०—" ये सागरके राजा शुभकरणके पुत्र हैं। इनका नाम दलपतिराय है।"

सुफ०—" इन्हें तो हीरादेवीकी मण्डलीमें रहना चाहिए था। आप लोगोंके साथ ये कैसे हो लिये ?"

प्राण०—" ये राजा चम्पतरायके वडे भक्त और छत्रसालके वडे मित्र हैं। राजा शुभकरणने न जाने क्यों इन्हें अपने राज्यसे निकाल दिया है। इधर वहुत दिनोंसे ये छत्रसालके साथ ही रहते हैं। वुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेके लिए ये निरन्तर उपाय सोचते और प्रयत्न करते रहते हैं। अभी हालमें चम्पतरायने जो अन्तिम युद्ध किये थे, उनमें इन्होंने उनकी वहुत सहायता की थी और अपूर्व वीरता दिखलाई थी। अव ये सारे वुन्देलखडमें भ्रमण करेंगे और इस वातका पता लगावेंगे कि देशमें कितने स्वतन्त्रताप्रेमी युवक हैं और आवश्यकता पड़ने पर हम लोगोंको कहाँसे कितनी सहायता मिल सकती है।"

सुफ०—" इनकी ये सभी वातें वहुत प्रशंसनीय हैं।"

थोड़ी देरमें भोजन आरम्भ हुआ। चम्पतरायके देहान्तके उपरान्त छत्रसाल और दलपतिरायको आजका ही भोजन कुछ अच्छा लगा था। पर पतिके अभाव और पुत्रके भावी वियोगके विचारसे सरलादेवीसे कुछ भी न खाया गया।

भोजनके उपरान्त सव लोगोंने विश्राम किया। पहर रात वाकी रहते ही प्राणनाथ प्रभु, छत्रसाल और दलपतिराय उठकर ढाँड़ेरके राजप्रासादसे चलने लगे। सरलादेवी और सुफलादेवीसे आशीर्वाद लेकर छत्रसाल विजयाकी ओर मुडे।

सुफलादेवीको आनन्द भी हुआ और आश्चर्य भी।

छत्र०—" विजया! जयसागर सरोवर पर मैंने तुमसे और विमलदेवसे जो प्रार्थना की थी, वह तुम्हें याद होगी। विमलदेव तो उस सम्बन्धमें कुछ भी न कर सके, पर हाँ, तुमने जो कुछ और जितनी उत्तमतासे किया है उसके लिए मुझे वहुत ही अभिमान है।"

वि०—"विमलदेव जिस प्रकार युवराज जान पड़ते हैं, वे वास्तवमें वैसे नहीं हैं। उन्हें व्यर्थ दोष मत दीजिए।"

विजया अभी छत्रसालसे और छत्रसाल विजयासे बहुतसी बातें करना चाहते थे, पर दोनोंने ही अपने अपने हृदयके भाव प्रकट करनेके लिए वह अवसर उपयुक्त न समझा। दोनों ही चुप रह गये।

प्राणनाथ प्रभु अपने दोनों शिष्योंको साथ लेकर बुन्देलखडकी स्वतन्त्रताके उपाय करनेके लिए ढॉढेरके राजप्रासादसे निकलकर चल खड़े हुए।

* * * *

अठारहवाँ प्रकरण।

ललिताकी प्रेतात्मा।

शुभकरणको सारा भूमडल बहुत ही भयावना जान पड़ने लगा। उनके मनकी निराशा उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। वे अत्यधिक उत्साह-हीन हो गये। वे मन बहलानेके लिए शिकार खेलने जाते थे और बिना एक पशु भी मारे हुए जगलसे लौट आते थे। शिकारमें जब कभी किसी पशुको मारनेका अवसर पड़ता था तब वे यही समझ कर उसके मारनेका विचार छोड़ देते थे कि मनुष्योंकी अपेक्षा जगली जानवर कम क्रूर और हिंसक होते हैं। कुछ देरके लिए अपने मनकी चिन्ता दूर करनेकी इच्छासे वे किसी बागमें टहलनेके लिए चले जाते थे और पहरों इधर उधर भटका करते थे, उस समय उन्हें जान पड़ता था कि सब फूल मुझे चिढानेके लिए हँस रहे हैं। वे जब बागसे लौटने लगते थे तब उनकी निराशा पहलेकी अपेक्षा और भी बढ़ जाती थी। वे इस कल्पनाके कारण दिनके समय कभी आकाशकी ओर न देखते थे कि सूर्य्यमडलमे बैठे हुए राजा चम्पतराय बहुत ही क्रुद्ध होकर मेरी ओर देख रहे हैं और रातके समय आकाशकी ओर देखनेमें उन्हें यह समझकर लज्जा आती थी कि बुन्देलखडकी स्वतंत्रताके लिए लड़कर मरनेवाले वीर आकाशमें तारे बनकर बैठे हैं और मेरी ओर टक लगा कर देख रहे हैं।

हीरादेवीने जव सुना कि शुभकरण विजयी होकर ओडछेकी ओर लौट रहे हैं तव उसने उनके स्वागतकी लम्बी चौड़ी तैयारियाँ कीं। उनके पहुँचने पर हीरादेवी वहुत ही प्रसन्न होकर इस आशासे उनसे मिलने चली कि विजयी शुभकरण वडी प्रसन्नतासे मुझसे मिलेंगे। पर वीचमें ही शुभकरणने उससे कहला दिया कि मुझसे रास्तेमें मिलनेकी आवश्यकता नहीं, ओडछे पहुँचने पर महलमें ही भेंट होगी। बेचारी हीरादेवीको अपनासा मुँह लेकर लौट आना पडा।

हीरादेवी अपने महलके एक कमरेमें वैठी हुई कचुकीरायसे कुछ गुप्तमत्रणा कर रही थी। रजनीनाथ अपने स्वर्गीय तेजसे उन दोनोंके आन्तरिक दुष्ट भावोंको उनके चेहरों पर प्रकट कर रहे थे। इतनेमें एक भव्य मूर्ति द्वार खोल कर हीरादेवीके पास आकर खडी हो गई।

हीरादेवी और कचुकीराय दोनों उठकर खड़े हो गये।

हीरा०—"आइए, आइए। हम लोग आपका ही रास्ता देख रहे थे। आपने आनेमें वहुत देर कर दी। लेकिन यह क्या ? आप तो विलकुल पहचाने ही नहीं जाते। इतने दिनोंतक समर-भूमिमे रहनेके कारण तो आपका चेहरा विल-कुल ही वदल गया है।"

शुभकरणने वहुत ही गम्भीर होकर कहा,—जो मनुष्य परले सिरेका निर्दय होकर अपने भाइयोंका वध करता है, जो चोरोंको सहायता देकर अपना घर लुटवाता है और अपने राष्ट्र-देवताका अपमान करनेके लिए दूसरोंको उत्तेजित करता है, वह हत्यारा और पापी किस प्रकार प्रसन्न रह सकता है ? मैंने असख्य हत्यायें की हैं और अनगनित डाके डाले हैं। मैंने वुन्देलखंडके राष्ट्र-देवताको मुसलमान वादशाहके अधीन कर दिया है। तव भला मैं किस प्रकार प्रसन्न रह सकता हूँ ? मेरा चेहरा उतरा हुआ न हो तो और कैसा हो ?"

इतना कहकर शुभकरण थोड़ी देरतक चुपचाप खडे रहे। वे अपनी स्मरण-शक्तिसे अन्तिम सग्रामका कृष्ण-चित्र बना कर अपने मानसिक चक्षुओंसे देख रहे थे। थोड़ी ही देरमें उन्हें खूनसे लथपथ चम्पतरायका शरीर दिखाई पडने लगा। चम्पतरायकी अन्तिम वातोंका भी उन्हें ध्यान हो आया। वे वडे ही दु खी होकर हीरादेवीकी ओर देखते हुए बोले,—

"हीरादेवी ! ललिताके सम्वन्धमें तुमने जो कुछ मुझसे कहा था वह सव झूठ था। तुमने मुझे यह पट्टी पढा कर चम्पतरायका नाश करनेके लिए तैयार

किया था कि उन्होंने ललिताका कौमार्य्य नष्ट किया था। स्वतन्त्रताके पवित्र कार्यसे तुमने मुझे हटा दिया। बुन्देलखंडका सत्तानाश करनेके लिए तुमने मुझे उत्साहित किया। तुम्हें इस भारी अपराधका दण्ड देनेके लिए ही मैं यहाँ आया हूँ। बतलाओ, तुम किस मार्गसे नरकमें जाना चाहती हो?"

शुभकरणका यह अनपेक्षित और विलक्षण प्रश्न सुनकर हीरादेवीके देवता कूच कर गये। वह जितना चकराई, उतना ही डरी भी। हीरादेवीको पहले स्वप्नमें भी इस बातका ध्यान न था कि ललितावाली बात इतने वर्षोंके उपरान्त और वह भी उसका उद्देश्य सिद्ध हो जाने पर, इस रूपमें उठेगी। अब ललिता प्राय सभी लोगोंके ध्यानसे उतर चुकी थी। उसके अप्रतिम सौन्दर्य्य, विनय आदि अनेक गुणों और आकस्मिक देह-त्यागकी बहुतसी बातें गडी गई थीं। सोलह वर्ष बीत गये थे, पर इस बीचमें कभी कोई ऐसी बात नहीं हुई थी जिससे हीरादेवी यह समझती कि शुभकरणको ललिताकी बातें याद हैं। ललिताके सम्बन्धमें शुभकरणके मनमें हीरादेवीने इतनी घृणा उत्पन्न कर दी थी कि वे उसको स्मरण करना भी पातक समझने लगे थे। और हीरादेवी सदा यही चाहती भी थी कि शुभकरणके मनमें ललिताका ध्यान न आने पावे, नहीं तो न जाने कैसी आफतका सामना करना पडेगा। लेकिन हीरादेवी यह जानकर आश्चर्य और भयसे बहुत ही घबराई कि शुभकरणको अभीतक ललिताका स्मरण है, केवल यही नहीं बल्कि उन्हें यह भी मालूम हो गया है कि मैंने उनसे जो कुछ कहा था वह सब झूठ और बनावटी था। घबराहटके कारण उसके मुँहसे शब्द भी न निकल सकता था। अन्तमें शुभकरणने फिर कहा,—

"जान पडता है कि नरकमें जानेके लिए तुम स्वय कोई मार्ग नहीं बतलाना चाहती। मैंने इस बात पर बहुत देरतक विचार किया कि बुन्देलखण्डको पराधीनताके पकमें फँसाकर, मेरी बुद्धि भ्रष्ट करके, मुझसे अनेक पैशाचिक कृत्य कराके, चम्पतराय तथा बुन्देलखडके अन्य अनेक वीरोंकी हत्या कराके और अपने पतिकी मृत्युका कारण बनकर तुमने जो घोर और अक्षम्य अपराध किये हैं, उनके बदलेमें मैं तुम्हें कौनसा दण्ड दूँ। मगर तुम्हारे पातक मनुष्यकी कल्पनाके बाहर थे, इसलिए मैं उनके लिए उचित और अनुरूप दण्ड न सोच सका, अत मैं तुम्हींसे पूछता हूँ कि तुम्हें कौनसा दण्ड दिया जाय। पर शायद तुम स्वय यह बतलाना नहीं चाहतीं, इस वास्ते तुम्हारे लिए मुझको ही दण्ड स्थिर करना चाहिए।"

इतना कहकर शुभकरण विचार करने लगे। वे अच्छी तरह समझते थे कि किसी मनुष्यकी हत्या करनेवालेका सिर काट लेना चाहिए, राष्ट्र-द्रोह करने-वालेके लिए प्राणदण्ड यथेष्ट है और देश-प्रेम, धर्म्म-प्रेम तथा बन्धु-प्रेमसे लोगोंका मन हटानेवालेको वध-स्तम्भ पर लटकाना ही न्याय है, पर वे उस दण्डकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे जो अत्यन्त भयंकरतासे यह सब अप-राध करनेवाले एक ही व्यक्तिको मिलना चाहिए। उन्होंने भयसे काँपते हुए कंचुकीरायकी ओर देखा। उन्हें आशा हुई कि शायद हीरादेवीके लिए यह कोई उपयुक्त दण्ड बतला सकेंगे, इस लिए उन्होंने कंचुकीरायसे पूछा,—

"कहिए साहब! आप तो दिल्लीके शाही महलोंमें बरसों रहे हैं। हीरादेवीने अबतक जो जो गहन अपराध किये हैं वे सभी आप अच्छी तरह जानते हैं। आप ही बतलाइए कि उन सब अपराधोंके लिए कौनसा दण्ड होना चाहिए और इसे किस प्रकार यमपुर भेजना चाहिए। मैं यह नहीं चाहता कि इसे कम दण्ड देनेका दोषी बनूँ।"

इतनी देरमें हीरादेवीने अपने मनको बहुत कुछ सँभाल लिया था और भयके चिह्न बनावटी हँसीके नीचे छिपा लिये थे। अब वह बातकी तह तक पहुँचनेके लिए तैयार हो गई थी। उसने अपने चेहरेपरसे आश्चर्यकी छटा जरा भी कम न होने दी और बहुत ही कोमल स्वरसे कहा,—

"महाराज, पहले आप जरा शान्त होइए! यदि सचमुच मेरा कोई अप-राध हो तो उसके लिए आप जो दण्ड मुझे देना चाहेंगे उसे मैं बड़ी प्रसन्नतासे स्वीकृत कर लूँगी। पर मेरे लिए दण्ड निश्चित करनेसे पहले आप थोड़ी देर-तक विचार कर लें। आप यही कहते हैं न कि सागरकी सती-साध्वी ललिता पर मैंने झूठा कलंक लगाया है?"

शुभकरणने उसकी ओर तिरस्कारसे देखते हुए उत्तर दिया,—"हाँ।"

ही०—"आपको अब इस बातका विश्वास हो गया है न कि चम्पतरायने उसका कौमार्य नष्ट नहीं किया था?"

हीरादेवीकी धृष्टता देखकर शुभकरणको खेद भी हुआ और आश्चर्य भी। उन्होंने कहा,—"हीरादेवी! यह तुम्हें याद है न कि ललिता मेरी कौन थी? अब तुम उसके विषयमें जो कुछ कहो वह इस बातका ध्यान रखकर कहो कि

वह मेरी बहन थी। उसका कौमार्य्य नष्ट नहीं हुआ था। यह मानना बडी भारी अधमता है कि अपने भाइयों और बहनोंके हितके लिए प्राण देनेवाले चम्पत-राय सरीखे सदाचारी महात्मा एक सुशीला कुमारी पर हाथ छोडनेके लिए तैयार होंगे। उन दोनोंका प्रेम और सम्बन्ध शुद्ध और पाप-रहित था। अब मुझे इस बातका पूरा पूरा विश्वास हो गया है कि ललिताको चम्पतराय अपनी बहनके बराबर मानते थे।"

हीरादेवीके चेहरेका तेज जाता रहा। तथापि उसने बनावटी धैर्य्यसे कहा,—

"जान पडता है कि मानो आप अभी सोकर उठे हैं। नहीं तो स्वप्नमें देखे हुए, कल्पित और झूठे दृश्य पर आपका इतना विश्वास न होता। अपने स्वप्नमें आपने चम्पतराय और ललिताका जो पाप-रहित आचरण देखा उसीके आधार पर आप मेरी बातोंको झूठ बतलाते हैं न?"

शुभ०—"वाह री तेरी आसुरी धृष्टता! ज्यों ही मुझे इस बातका विश्वास हुआ कि ललिता और चम्पतरायका व्यवहार शुद्ध और निष्पाप था त्यों ही मैंने मनमें भ्रांतिमूलक कल्पना-तरग उत्पन्न करनेवाली निद्रा त्याग दी। तभीसे मैंने समझ लिया कि बडी ही निन्दनीय प्रतिज्ञा करके मैं व्यर्थ देशभक्तिसे विमुख हुआ। उसी समय मेरे चेहरे पर लज्जा, पश्चात्ताप और शोककी जो छाया पडी थी वह अभीतक ज्योंकी त्यों बनी है। इसीसे तुम्हें मेरा चेहरा ऐसा उतरा हुआ और काले ठीकरेसा दिखाई पडता है। मेरा चेहरा देख कर तुम्हें मालूम हो जायगा कि चम्पतरायका आचरण बिलकुल निष्कलंक था और मैं अबतक घोर प्रमादके अधीन था।"

हीरादेवीने और भी ढीठ होकर पूछा,—"लेकिन आपको इस बातका वि-श्वास क्योंकर हुआ कि ललिताने चम्पतरायके पातकी अत्याचारके कारण आत्म-हत्या नहीं की?"

शुभ०—"मुझे इस बातका दृढ प्रमाण मिल गया है कि ललिताके मरने तक चम्पतरायका उसके साथ भाईका सा व्यवहार था।"

हीरादेवी विकट रूपसे हँसती हुई बोली,—"दृढ प्रमाण! आपको इस बा-तके दृढ प्रमाणकी तो कोई आवश्यकता नहीं कि चम्पतरायको ललिता अपने भाईके समान समझती थी। पर ललिताके सम्बन्धमें चम्पतरायका मन अन्त

तक शुद्ध और पाप-रहित था, इसका दृढ प्रमाण आपको कैसे मिला ? चम्पत-रायके मनकी बात आपको किसने बतलाई ? ”

शुभ०—“ स्वय चम्पतरायने। ”

हीरादेवीने भयभीत स्वरसे पूछा,—“ स्वय चम्पतरायने ? मनुष्यकोटिके चम्पतरायने या पिशाच-कोटिके चम्पतरायने ? ललिताके सम्बन्धमें आपका समाधान किसने किया ? ”

शुभ०—“ हीरादेवी ! तुम्हारे सरीखे हृदयशून्य दुष्टोंके लिए या मेरे सरीखे विचारशून्य नराधमोंके लिए असह्य दु ख देनेवाली पिशाच-कोटि होती है। चम्पतरायसरीखे श्रेष्ठ महात्मा तो दिव्य सूर्यलोकमें जाते हैं। सुनो, मैं तुम्हें बतलाता हूँ कि मुझे इस बातका विश्वास किस प्रकार हुआ कि चम्पतरायने ललिताका कौमार्य नष्ट नहीं किया। जिस समय राजा चम्पतरायके प्राण निकल रहे थे, उस समय मैं उनके पास ही खडा हुआ था। चम्पतराय अन्तिम समय लहूसे लथपथ वीरोचित शय्यापर पड़े हुए थे। उनके ऐहिक विचार नष्ट होते जा रहे थे और वे स्वर्लोकके पवित्र वातावरणमें पहुँच रहे थे। उसी समय मैंने उन्हें ललिताकी याद दिलाई थी। ”

हीरादेवीके मनपर मानो भारी चोट लगी। वह बीचमें ही बोल उठी,—“ क्या उस समय चम्पतराय होशमें थे ? क्या उनमें सोच समझकर बातें कर-नेकी शक्ति थी ? ”

शुभ०—“ हॉ, वे मरते दमतक होशमें थे। उन्हें मुझसे यह सुनते ही बहुत दु ख हुआ कि ललिता आत्म-हत्या करके मरी। यह जान कर उन्हें और भी आश्चर्य तथा दु ख हुआ कि अपना कौमार्य नष्ट होनेके कारण उसने आत्म-हत्या की थी। और जब उन्होंने सुना कि उसका कौमार्य्य नष्ट करनेका अपराध मैं उन्हीं पर लगाता हूँ तब उन्होंने बहुत ही दु खी होकर मुझे धिक्कारा और स्पष्ट रूपसे कह दिया कि मैं सदा ललिताको अपनी बहनकी तरह मानता था। हीरादेवी ! अब तो तुम समझ गई न कि मेरा समाधान किस प्रकार हुआ ? अब तो तुम यह बात स्वीकार करती हो न कि तुमने व्यर्थ ललिता और चम्प-तरायपर कलक लगाकर मुझे चम्पतरायका वैरी बनाया और बुन्देलखण्डकी स्वतत्रताके प्रयत्नमें विघ्न डाला ? ”

शुभकरणकी वातें सुनकर मायाचारी हीरादेवी हँसने लगी। वह हँसती हुई बोली,—"आप भी वडे ही भोले हैं। समर-भूमिमें तलवार चलानेवाला योद्धा ससारके साधारण व्यवहारमें इतना भोला हो, यह वडे ही आश्चर्यकी वात है। जो चम्पतराय मरते दम तक आपके साथ इतना वैर रखते थे, उन्हें अन्त समयमें आपने इतना सीधा और सच्चा कैसे समझ लिया ? उनकी वातों पर आपको चटपट कैसे विश्वास हो गया ?"

शुभ०—"इसी लिए कि वे तुम्हारे सरीखे झूठे नहीं थे, वे सत्यताके मूर्त्तिमान अवतार थे। जो सारे जीवनमें झूठ वोलनेको वहुत ही निन्दनीय और घृणित समझता हो वह मरनेके समय क्यों झूठ वोलने लगा ?"

हीरादेवीके होठोंपर अभी तक मायावी हँसी वनी हुई थी। उसने हँसते हुए कहा,—"इसीको भोलापन कहते हैं! जव उन्होंने देखा होगा कि शुभकरण और हीरादेवीका नाश करनेमें मैं सव प्रकारसे असमर्थ हो गया हूँ तव उन्होंने यह युक्ति निकाली होगी। (कचुकीरायकी ओर देखकर) क्यों साहव! आपकी समझमें भी यह वात आती है न ?"

वुढापे और डरसे काँपते हुए कचुकीरायने कहा,—"भला तुम्हारी वात आज तक कभी झूठ हुई है ? दिल्लीकी रोशनआरा और वुन्देखण्डकी हीराढेवीकी वात कभी कोई काट ही नहीं सकता।"

कचुकीरायकी वात सुनकर शुभकरणका क्रोध और भी वढ गया। उन्होंने डपटकर कहा,—"चुप रहो, व्यर्थ वातें न वनाओ। तुम दोनों मिलकर मुझे वनाना चाहते हो। अव शुभकरण पहलेकी तरह भोले नहीं रह गये। अव तक हीरादेवीकी वातोंपर विश्वास करके मैंने अपने कर्त्तव्योंपर चौका लगा दिया, पर अव मेरी आँखें खुल गई हैं, मैं अव तुम लोगोंकी वातोंमें नहीं आनेका। हीरा-देवी! अव तुम अपने अपराधोंका दण्ड भोगनेके लिए तैयार हो जाओ। मैंने तुम्हें प्राणदण्ड देना निश्चित किया है। आजतक मैंने अनेक वुन्देलोंके प्राण लिये हैं, पर उन सव हत्याओंका प्रायश्चित्त केवल तुम्हारे वधसे हो जायगा। जव तक तुम जीती रहोगी तवतक वुन्देलखण्ड कभी स्वतन्त्र न होगा। इसलिए वुन्देलखण्डके स्वातन्त्र्यदेवताके सामने मे तुम्हें वलि चढाऊँगा। हीरादेवी! अव तुम मरनेके लिए तैयार हो जाओ। मैं तुम्हारी वातोंका मूल्य चम्पतरायकी वेहोशीकी वड़-वड़के वरावर भी नहीं समझता। अव तुम यही वतलाओ कि मैं

तुम्हारे प्राण किस प्रकार लूँ ? गला दवाकर, मुक्का मारकर, या लातोंका प्रहार करके ? लेकिन इनमेंसे किसी मार्गका अवलंवन करनेसे मुझे तुम्हारा अपवित्र अग छूना पडेगा और उसे छूनेके कारण मुझे जो पातक लगेगा उसके प्रायश्चित्तके लिए मुझे कचुकीराय सरीखे देश-द्रोहीका वध करना पड़ेगा। इसलिए कंचुकीरायको तुमपर ढकेलकर एक साथ ही तुम दोनोंके प्राण ले लेना अधिक उत्तम है।"

अपने प्राणोंपर ऐसा विकट सकट आते देखकर कंचुकीरायसे न रहा गया। वे चटपट वोल उठे,—"शुभकरणजी ! आप ऐसा अन्याय न कीजिए। पहली वात तो यह है कि मैं विलकुल निरपराध हूँ। यदि आप मेरी हत्या करेंगे तो मेरी सती साध्वी स्त्री विधवा हो जायगी और मेरी भोली भाली कन्या अनाथ वन जायगी। दूसरी वात यह है कि आप वीर हैं, आपको हीरादेवी सरीखी कोमलांगी स्त्रीपर भी हाथ न उठाना चाहिए। आगे जैसी आपकी इच्छा हो, वैसा कीजिए, पर जो कुछ कीजिए, वह समझ वूझकर कीजिए।"

शुभकरणने कुछ शान्त होकर कहा,—"आपका कहना ठीक है। आपकी साध्वी स्त्री और देवी कन्याके विचारसे ही मैं आपको छोड देता हूँ, पर अव आप यहाँसे चटपट चले जाइए, क्षण भर भी यहाँ न ठहरिए। पर हीरादेवीको मैं विना मारे न छोड़ूँगा। दोष तो स्त्रियोंकी हत्या करनेमें है। ऐसी राक्षसियोंके प्राण लेनेसे, जिनसे ससारके अनिष्टकी ही सम्भावना हो, वहुत ही पुण्य होता है।"

कचुकीरायने सोचा,—जान वची, लाखों पाए। वे सिर पर पॉव रखकर वहॉसे चलते बने। चलते समय उन्होंने हीरादेवीकी ओर देखनेकी भी आवश्यकता न समझी।

कंचुकीरायके चले जाने पर शुभकरणने हीरादेवीसे कहा,—"हीरादेवी ! तुम्हारे प्राण लेना मैंने दृढ रूपसे निश्चित कर लिया है। अव तुम्हारा जीवन दो ही चार क्षण और है। तुम्हारा अन्तिम समय वहुत ही पास आ गया है। भला अव भी एक वात सच कहो। मुझे ठीक वतला दो कि ललिताने आत्महत्या क्यों की ?"

हीरा०—"राजा साहव ! मैं राजकीय कारणोंसे झूठ वोली होऊँगी, दूसरोंके साथ मैंने दॉवपेच किये होंगे, पर आपसे मैंने एक शब्द भी मिथ्या नहीं कहा

होगा। ललिताका मेरे साथ बहनापा था और हम दोनोंमें परस्पर बहुत ही प्रेम था। भला उसके विषयमें मै आपसे इतनी घृणित झूठी बात क्यों कहने लगी? बेतवा नदीमेंसे उसका जो फूला हुआ मृत शरीर निकला था वह आपने देखा था न? उसके शरीर परके गहनों और कपडोंको आपने ही पहचाना था न? उस समय आपको विश्वास हो गया था न कि ललिताने आत्म-हत्या कर ली?"

शुभ०—"हाँ, यह तो मैं अब भी मानता हूँ कि ललिताने आत्म-हत्या कर ली थी।"

हीरा०—"ललिता सदा बहुत ही प्रसन्न-चित्त रहती थी। उसे संसारके किसी पदार्थकी आवश्यकता न थी। उसकी सुख-पूर्ण स्थिति देखकर और लोग उससे ईर्ष्या करते थे। ऐसी दशामें उसने आत्महत्या सरीखा भयंकर कृत्य क्यों किया? संसारमें किसीको अपना मुँह न दिखलानेकी उसकी इच्छा क्यों हुई? उसने अपने प्राण क्यों दिये?"

शुभकरणने बहुत ही गम्भीरतासे कहा,—"यही तो प्रश्न है।"

हीरा०—"यदि चम्पतरायने ललिताका कौमार्य नष्ट न किया होता तो—"

शुभकरण फिर बहुत ही दुःखी हो गये। उन्होंने बात काटकर कहा,—"फिर वही चम्पतरायका नाम! फिर वही ललिताके कौमार्य-भंगकी बात! हीरादेवी! शायद तुम यह बात अच्छी तरह नहीं जानतीं कि चम्पतरायके साथ बहुत दिनोंतक मेरी गहरी दोस्ती रही है। उनमें जितने सद्गुण थे उन सबका मुझे बहुत अच्छा परिचय है। मैं यह भी जानता हूँ कि उनमें कभी कोई दुर्गुण नाममात्रको भी न था। तुम्हारी बातोंमें पडकर जब मैने उनके साथ दुश्मनी कर ली थी उसके बाद भी मैं समय समय पर उस महात्माके गुण देख कर मन ही मन उन पर मुग्ध हो जाया करता था। मुझे इस बातका दृढ विश्वास है कि चम्पतरायके मुँहसे सारे जीवनमें कभी एक शब्द भी झूठ नहीं निकला। वे कभी किसी दशामें झूठ बोलनेवाले नहीं थे। तुम्हारी सरीखी झूठीकी कौन कहे यदि प्रत्यक्ष आकाशवाणी भी चम्पतरायको असत्यवादी बतलावे तो मैं उसपर विश्वास नहीं कर सकता। चम्पतरायने जो कुछ कहा है उसे असत्य माननेके लिए मैं कभी तैयार नहीं हूँ। और तो और, यदि स्वयं ललिता भी इस समय आकर मेरे सामने खडी हो जाय और मुझसे कहे कि चम्पतरायने मेरा कौमार्य नष्ट किया है तो चम्पतरायकी बातके सामने मैं उसपर विश्वास

नहीं कर सकता। मेरे मनमें जो कुछ सन्देह था वह चम्पतरायकी अन्त समय-वाली बातोंसे बिलकुल निर्मूल हो गया। अब मेरे मनमें फिरसे वह सन्देह बैठाना स्वय ईश्वरके लिए भी सम्भव नहीं है। हीरादेवी! अब तुम चम्पतरायके सम्बन्धमें फिरसे मेरा मन कलुषित करनेका वृथा प्रयत्न न करो। तुम मुझे ललिताकी आत्म हत्याका ठीक ठीक कारण बतला दो और शान्तिपूर्वक अपने किये हुए अपराधोंका दण्ड भोगनेके लिए तैयार हो जाओ।"

हीरा०—" उस सम्बन्धमें मैं जो कुछ जानती थी वह मैं पहले भी आपको बतला चुकी हूँ और अब फिर बतलाती हूँ। सोलह वर्ष पहले इसी स्थान पर ललिताने मुझसे कहा था कि मैंने आत्म-हत्या करना निश्चित किया है। आत्म-हत्या करनेका ठीक ठीक कारण भी उसने मुझे बतला दिया था। उस समय भी रातका यही समय था, चद्रमा इसी प्रकार आकाशमें चमक रहा था, बेतवा नदीके जलसे स्पर्श करके आनेवाली ठढी हवा ललिताके क्षुब्ध मनको शान्त करनेका प्रयत्न कर रही थी। यदि उन सबमें बोलनेकी शक्ति होती तो वे बतला देते कि हीरादेवीका कहना सच है या झूठ। लेकिन, जरा ठहरिए।" हीरादेवी अपने स्थान परसे उठ खडी हुई और अपने कमरेके एक ओरके दरवाजेकी ओर देखती हुई कुछ शान्त होकर बोली,—" आप जानते हैं, जो लोग आत्म-हत्या करते हैं उन्हें कभी सद्गति प्राप्त नहीं होती। उनकी आत्मा अनन्त काल तक पिशाच बनकर उसी स्थान पर घूमा करती है। इसके सिवा उनकी और कोई गति ही नहीं होती। ललिताने उसी सामनेवाली टेकरी परसे बेतवा नदीमें कूद कर अपने प्राण दिये थे।"

शुभकरण खिडकीमेंसे उस टेकरीकी ओर देखने लगे।

हीरादेवी धीरे धीरे पैर उठाती हुई आगे बढने लगी। कुछ दूर आगे बढ-कर उसने कहा,—जिस समय उसने अपने प्राण दिये थे, उस समय वह पन्द्रह वर्षकी सुकुमार कुमारी थी। उसका चेहरा चन्द्रमाकी तरह चमकता था और उसकी ऑखोंमें तारोंका-सा तेज था। उसे सफेद कपडे बहुत पसन्द थे। वह जब चाँदनी रातमें इधर उधर घूमा करती थी तब बहुधा इसी कारण वह दूरसे दिखलाई न पडती थी।"

शुभकरण अच्छी तरह दृष्टि गड़ाकर उसी चट्टानकी ओर देख रहे थे।

हीरादेवी और दो कदम आगे बढ़ी और उसी टेकरीकी ओर उँगली उठाकर कहने लगी,—

" जिस समय ललिता उस चट्टान परसे नदीमें कूदी थी, उस समय भी वह सफेद साडी पहने हुए थी। तभीसे सुनती हूँ, उसकी प्रेतात्मा कभी कभी रातके समय उस चट्टान पर चाँदनी रातमें इधर उधर घूमा करती है। आप थोडी देरतक ध्यानपूर्वक उधर ही देखते रहिए, यदि उसे मेरी मित्रता और सत्यताका कुछ भी ध्यान होगा तो वह अवश्य इस समय भी हम लोगोंको दिखाई देगी और मेरी ओरसे गवाही देगी। "

उसकी बातोंपर विश्वास करके शुभकरण बडे ही ध्यानसे उस चट्टानकी ओर देख रहे थे। पर हीरादेवीकी निगाह दूसरे दरवाजेकी तरफ थी। वह चाहती थी कि शुभकरणको बातोंमें लगाकर और उनका ध्यान बँटाकर स्वयं वहाँसे भाग जाय। उसी चट्टानकी ओर उँगलीसे दिखलाकर हीरादेवीने कहा,—

" अभी थोडी देरमें आपको ललिताकी प्रेतात्मा वहाँ घूमती हुई दिखाई पडेगी। आप उसीसे पूछिएगा कि ललिताने आत्म-हत्या क्यों की। वह आपको उसका ठीक ठीक कारण बतला देगी।"

शुभकरण उसी चट्टानकी ओर दृष्टि गडाकर देख रहे थे। उस तरफ देखते ही देखते उन्होंने हीरादेवीसे पूछा,—" क्या सचमुच वहाँ उसकी प्रेतात्मा दिखाई देगी ? और यदि वह दिखाई भी पडी तो क्या पूछनेपर वह मेरे प्रश्नका उत्तर देगी ? "

शुभकरणके हाथसे निकल भागनेवाली हीरादेवीको यह बहुत ही अच्छा अवसर मिला। वह वहाँसे भागना तो चाहती थी पर उसके पैर न उठते थे। तो भी बहुत साहस करके वह धीरे धीरे वहाँसे पीछे हटने लगी और अन्तमें उस कमरेसे बाहर निकल गई। शुभकरण उस समय चट्टानकी ओर इतने ध्यानसे देख रहे थे कि उन्हें हीरादेवीके वहाँसे चले जानेकी खबर भी न हुई। थोडी देर बाद उन्हें उसी चट्टानपर पन्द्रह वर्षकी एक सुन्दर बाला सफेद साडी पहने हुए दिखाई पडी। उन्हें विश्वास हो गया कि यह ललिताकी ही प्रेतात्मा है। उन्होंने बहुत ही आतुर होकर कहा,—" ललिता, ललिता! तुम किस रूपमे हो और इस समय यहाँ कैसे आई ? मैं तुमसे केवल एक बात पूछना चाहता

हूँ। तुम क्षणभर मेरे लिए खडी रहो। मैं अभी तुम्हारे पास आता हूँ। मेरे वहाँ पहुँचने तक तुम अदृश्य न हो जाना।"

इतना कहकर शुभकरण वरामदेमेंसे ही नदीमें कूद पडे। कमरेसे बाहर निकलकर सीधे रास्तेसे नदी किनारे तक पहुँचने अथवा हीरादेवीकी ओर देखनेकी भी उन्हें सुध न रही। वे तेजीसे नदीका पानी चीरते हुए सीधे उस चट्टानकी ओर वढने लगे। उनकी दृष्टि उसी प्रेतात्मापर गडी हुई थी। वे ज्यों ज्यों आगे वढ रहे थे त्यों त्यों उनके मनकी आतुरता भी वढती जाती थी। उन्हें कुछ भय भी हो रहा था। पर उन्हें भय इस वातका नहीं था कि अभी प्रेतात्मासे वातें करनी पड़ेंगी, वल्कि इस वातका भय था कि कहीं वह प्रेतात्मा अदृश्य न हो जाय और उससे भेंट करनेका अवसर हाथसे जाता न रहे। वेतवा-नदीके जल-प्रवाहमें आकाश मडलका ठीक ठीक प्रतिविंव पड़ रहा था। उस प्रतिबिम्बके कारण ऐसा जान पडता था कि वेतवा नदी कोई अभिसारिका है जो वहुतसे अच्छे अच्छे अलंकार पहनकर गजगतिसे अपने पतिसे मिलनेके लिए जा रही है। वायुके वारवार होनेवाले स्पर्शके कारण उस अभिसारिकाके मुख पर लज्जाकी क्षणिक लहरें उत्पन्न होती थीं। उस नायिकाकी ओर देखती हुई एक परम सुन्दरी वाला सफेद कपडे पहने हुए चाँदनीमें खडी हुई मुस्करा रही थी। वह जानती थी कि वेतवा-सुन्दरीका पति कौन है और वह किससे मिलनेके लिए जा रही है। वेतवा-सुन्दरीका शृंगार देखनेमें वह इतना मग्न थी कि उसे इस बातका पता भी न लगा कि कोई मेरी ओर वढता हुआ चला आ रहा है। इतनेमें उसे जान पडा कि किसीने जाकर उसका हाथ पकड़ लिया। उसने भयभीत होकर दृष्टि उठाई तो उसे दिखाई पडा कि एक हृष्टपुष्ट आदमी उसका हाथ पकड़े हुए सदय मुद्रासे उसकी ओर देख रहा है। इतनेमें उस आदमीने उससे कहा,—"सुकुमार प्रेतात्मा! पहले तुम मेरे प्रश्नका उत्तर दे दो तव अदृश्य होना।"

वह बाला उसकी विलक्षण वात न समझ सकी, वड़ी कठिनतासे उसने अपने आपको सँभाला और पूछा,—"तुम कौन हो? तुम मुझे प्रेतात्मा क्यों कहते हो? तुमने मेरा हाथ क्यों पकड़ लिया? तुम्हारा प्रश्न क्या है?"

शुभ०—(प्रसन्नतासे) "मैं केवल यही जानना चाहता हूँ कि तुम इस प्रेत-योनिमें किस प्रकार पहुँचीं?"

वा०—" तुम्हे क्या हो गया है ? तुम पागल तो नहीं हो गये हो ? मैं प्रेत-योनिमे कहाँ हूँ ? मैं तो अच्छी खासी मनुष्य-योनिमें हूँ।"

शुभ०—" नहीं, तुम मुझे धोखा नहीं दे सकतीं। तुम स्त्री नहीं हो वल्कि मेरी मृत बहन ललिताकी प्रेतात्मा हो। मुझे ठीक ठीक बतलाओ कि तुम इस अवस्थामे किस प्रकार पहुँचीं।"

वा०—" तुम अच्छी तरह होशमे आकर मुझे देखो। मैं प्रेत नहीं वल्कि स्त्री हूँ।"

शुभ०—" यदि तुम स्त्री हो तो इतनी रातके समय इस निर्जन स्थानमें क्यों घूम रही हो ?"

वा०—" मैं पहले पहल इस देशमे आई हूँ। यहाँ मेरा कोई परिचित नहीं है। मै केवल दिल वहलानेके लिए इस समय यहाँ आ गई हूँ।"

शुभ०—" तुम कहाँकी रहनेवाली हो ? "

वा०—" मैं दिल्लीकी रहनेवाली हूँ।"

शुभ०—" तुम्हारा नाम क्या है ?"

वा०—(कुछ सोचकर) " मुझे लोग वदरुन्निसा कहते हैं।"

शुभ०—(आश्चर्यसे) " वदरुन्निसा ! तव क्या तुम मुसलमानी हो ?"

वा०—" हाँ।"

शुभ०—" तव तुमने हिन्दू स्त्रियोंके से कपडे क्यों पहन रक्खे है ?"

वा०—" मुझे ऐसे ही कपडे पसन्द हैं, इस लिए मैं प्राय इसी वेषमे रहती हूँ।"

शुभ०—" तुम दिल्लीमे कहाँ रहती हो और तुम्हारे यहाँ क्या कारवार होता है ?"

वा०—" मै दिल्लीके शाहशाह औरंगजेवकी कन्या हूँ।"

शुभ०—(वहुत चकित होकर) " तुम वादशाहकी कन्या हो ? भला यहॉ तुम्हारा क्या काम ?"

वा०—" मैं सागरके महाराज शुभकरणके पुत्र दलपतिरायकी खोजमे यहाँ आई हूँ। क्या तुम कृपा कर मुझे उनका पता वतला सकते हो ?"

शुभ०—" सागरका राजा शुभकरण तो मैं ही हूँ और दलपतिराय मेरा ही पुत्र है, पर मुझे यह नहीं मालूम कि आजकल वह कहाँ है। राजा चम्पतरायने बुन्देलखडको स्वतंत्र करनेका जो प्रयत्न आरम्भ किया था वह निष्फल हुआ। चम्पतराय मारे गये। उनके जो साथी आजकल जगलोंमें अज्ञातवास कर रहे हैं, उन्हींके साथ दलपति भी है।"

वदरुन्निसाका चेहरा उतर गया। उसने वहुत दु खी होकर पूछा—" क्या बुन्देलखडकी स्वतंत्रताका प्रयत्न निष्फल हुआ ? क्या मुझे किसी प्रकार कुमार दलपतिरायका पता नहीं मिल सकता ?"

वदरुन्निसाके दोनों प्रश्नोंके उत्तरमें शुभकरणने केवल " नहीं " कहा और वे लौटकर हीरादेवीके महलकी तरफ चले। महलमे पहुँचकर उन्होंने हीरादेवीको वहुत ढूँढा, पर कहीं उसका पता न लगा। यह जानकर उनका क्रोध और भी बढ गया था कि हीरादेवीने मुझे झूठमूठ वहाकाया और धोखा दिया था। उन्होंने अच्छी तरह समझ लिया कि हीरादेवी विलकुल झूठी है, इस लिए उन्होंने उसे दण्ड देनेका अपना निश्चय और भी दृढ कर लिया। इसके वाद उन्हें अपने पुत्र दलपतिराय और उन्हें ढूँढनेवाली वदरुन्निसाका ध्यान आया। वे तुरन्त फिर उसी स्थानपर पहुँचे जहाँ थोडी देर पहले वदरुन्निसासे उनकी भेंट हुई थी, पर इस वार वदरुन्निसा उन्हें वहाँ न मिली। वे वहुत ही दु खी होकर सामनेके घने जगलमें जाकर अदृश्य हो गये।

* * * *

उन्नीसवाँ प्रकरण।

नई आपत्तिका निदान।

ओड्छेके नागरिक आज तरह तरहके तर्क वितर्क करते हुए भयभीत दृष्टिसे दीवानखानेकी ओर देख रहे थे। अपनी जगलकी स्वतन्त्रतामें वाधा डालनेवाले शेरकी माँदकी तरफ जिस तिरस्कारपूर्ण और सभय दृष्टिसे जंगली जानवर देखा करते हैं उसी तिरस्कारपूर्ण और सभय दृष्टिसे ओडछा-निवासी वीरसिंह देवके बनवाये हुए उस दीवानखानेकी ओर देख रहे थे। सभी लोग किसी

न किसी रूपमे यह वात कह रहे थे कि शीघ्र ही कोई भारी नई आपत्ति आनेवाली है। राजा वीरसिंहदेवने वह दीवानखाना वनवाकर उसमें शाहजादा सलीमसे मुलाकात की थी और उसके थोडे ही दिनों वाद ओडछेकी स्वतन्त्रता नष्ट हो गई थी। राजा पहाडसिंहने उसी दीवानखानेमें शाहजहाँ वादशाहका आदरातिथ्य किया था और उसके थोडे ही दिनों वाद पहाडसिंहको राज्य छोडकर जगलकी ओर निकल जाना पडा था। उसके वाद हीरादेवीने वह दीवानखाना खुलवाया था और उसमें वुन्देलखण्डके सव राजाओंका दरवार किया था। उस दरवारके वाद तुरन्त ही राजा पहाडसिंहकी मृत्यु हुई, आपसमे भयकर सग्राम हुआ, व्यर्थ हजारों आदमियोंके प्राण गये और ओडछेपर तरह तरहकी आपत्तियाँ आईं। इस प्रकार उस दीवानखानेका इतिहास सकटोंसे ही भरा हुआ था। जव जव वह दीवानखाना खुलता था, तव तव ओडछेके नागरिक समझ लेते थे कि शीघ्र ही हम लोगोंपर कोई भारी आपत्ति आनेवाली है।

मुलाकाती दीवानखानेकी सजावट और रोशनी देखकर आज फिर लोगोंमें तरह तरहके तर्क होने लगे। पर सवके तर्कोंका मुख्य अभिप्राय यही था कि शीघ्र ही हम लोगोंपर कोई भारी सकट आनेवाला है। एक तर्कचूडामणिने कहा कि खुद शाहशाह औरगजेव अपने वहुतसे अमीरोंको साथ लेकर ओडछे आया है और यह तैयारियाँ उसीके स्वागतकी हैं। इस पर दूसरे तर्कालकार महाशयने मुफ्तमें लोगोंको वादशाहके आनेका कारण समझाना आरम्भ कर दिया। उन्हें देखकर एक तीसरे तर्करत्नसे न रहा गया, उन्होंने पहले तो लोगोंको अग्निसे धूम-निष्पत्तिका पुराना सिद्धान्त समझाया और तदुपरान्त वेधडक होकर कह डाला कि दीवानखानेके प्रकाशसे धूम-निष्पत्ति होगी, यह प्रकाश शाहंशाह औरगजेवको निमित्तकारण वनाकर ओडछा नगर जलाकर राख कर देगा। राजकर्मचारियोंने अनुमान किया कि राज्य पर आपत्ति आवेगी और व्यापारियोंने समझा कि व्यापार पर सकट आवेगा। इस प्रकार सव लोग भयभीत होकर भावी सकटके सम्वन्धमें आपसमें तरह तरहकी वातें करने लगे।

खूव वने ठने और वढिया कपडे पहने राजा कचुकीराय वडे ही गर्वसे लोगोंकी ओर देखते हुए कई सरदारोंके साथ दीवानखानेकी ओर जा रहे थे। उन्हें देखकर एक वृद्ध सज्जनने, जो यही समझते थे कि उमर वढनेके साथ ही साथ अक्ल भी वढती है, आगे वढकर वडे अदव-कायदेसे राजा कंचुकीरायको

सलाम किया और पूछा,—"महाराज! मैंने सुना है कि शाहशाह औरंगजेबको आदमियोंके गरमागरम खूनसे नहाना बहुत अच्छा लगता है इस लिए बुन्देलोंको कोल्हूमे पेरकर उनका खून निकाला जायगा। क्या यह बात ठीक है?"

कंचुकीरायने इस प्रश्नका कुछ भी उत्तर न दिया। वे तिरस्कार-पूर्ण दृष्टिसे उस वृद्धकी ओर देखते हुए आगे बढ गये।

वे चार कदम भी आगे न बढे होंगे कि उन्हें सफेद बालोंवाली एक विधवा बुड्ढी मिली। उस बुढ़ियाने बडी ही चिन्ता प्रकट करते हुए पूछा,—"मैंने सुना है कि कल बादशाहके हुक्मसे लोगोंकी गरदनें मारी जायँगी। क्या मेरी सरीखी रॉड बुड्ढियॉ भी न बचने पावेंगी?"

कचुकीरायने उस बुड्ढीके प्रश्नका भी कोई उत्तर न दिया। वे मोछोंपर ताव देते हुए बढते ही चले गये। थोड़ी दूरपर उन्हें देवीके बहुतसे भक्त दिखलाई पड़े। वे सब भी राजा साहबको घेरकर खडे हो गये और पूछने लगे,—"सुना है कि कल बादशाह हुक्म देंगे कि सब बुन्देले हाथ हाथ भरकी दाढी रक्खें। क्या अब माईके भक्तोंको भी दाढी रखनी पडेगी?"

कचुकीराय बडी कठिनतासे उन लोगोंकी भीडमेंसे निकलकर आगे बढे। इतनेमें एक कृपण बनियेने उन्हें रोककर पूछा,—"सुनते हैं, अब मुसलमानी कायदेसे लोगोंका जनेऊ हुआ करेगा। मैं अपने खर्चसे पुराने तरीकेसे लडकेका जनेऊ करा लूँ या आगे चलकर बादशाहकी तरफसे जनेऊ कराया जायगा?"

कचुकीरायने इस प्रश्नका भी कोई उत्तर न दिया। वे चार कदम भी आगे न बढे थे कि इतनेमें उन्हें एक पढे लिखे भले आदमी मिल गये। वे राजासाहबको रोककर कहने लगे,—"सुना है कि सब दफतरोंमें फारसी जारी होगी। हम यह तो जानते हैं कि फारसी उलटी लिखी जाती है पर हम लोगोंको यह नहीं मालूम है कि फारसी लिखनेमें दावात सीधी रक्खी जाती है या उलटी, कलम सीधी पकडी जाती है या उलटी, और लिखा सीधी तरहसे जाता है या उलटे टॅगकर। अगर सरकार यह बात बतला देते तो बडी मेहरबानी होती।"

इसी तरहके बीसियों प्रश्न सुनते सुनते राजा कचुकीराय तग आ गये। जहॉ तक जल्दी हो सका, वे पैर बढाते हुए दीवानखानेके सदर फाटक तक पहुँचे। वहॉ पहुँचने पर उन्हें यह जानकर बहुत ही दुःख हुआ कि अभी अभीष्ट-सिद्धिमे देर है और कुछ समय तक हमें यही ठहरना पडेगा।

दीवानखाना आज बहुत अच्छी तरह सजाया गया था। उसमें जगह जगह पर खूब बढ़िया मोमी शामदान जल रहे थे और उनका उज्ज्वल तथा सुगन्धित प्रकाश चारों ओर फैल रहा था। एक स्थान पर वह प्रकाश अकेले बैठे हुए एक विचारमग्न, पर प्रसन्नवदन यवन युवकके चेहरेपर पड रहा था। उस युवकके चेहरेपर न तो औरंगजेबके चेहरेकी-सी गम्भीरता ही थी और न प्रौढता ही। उस युवकके मनकी अस्थिरता, चचलता और अहमन्यता आदि देखकर एक साधारण मनुष्य भी समझ सकता था कि ओडछेके जो निवासी यह समझते है कि आज दीवानखानेमें औरंगजेबका दरबार होगा, वे बडी भूल करते है।

समस्त बुन्देलखडपर अपना अधिकार करके और बुन्देलोंकी गुलामीकी जंजीर मजबूत करके औरंगजेब कभीका दिल्ली चला गया था। उसने बुन्देल-खडका सत्त्व हरण किया था। ऐसी दशामें वह उस सत्त्वहीन बुन्देलखडमें क्यों रहने लगा? उस समय तो वह किसी दूसरे देशपर अधिकार करनेकी चिन्तामें लगा होगा। जिस प्रकार बडे बड़े धीमानोंके भोजन कर चुकनेपर कँगले उनकी जूठनपर टूटते हैं, अथवा शेरके शिकारकी बची हुई हड्डी-पसली चिचोडनेके लिए कौवे-कुत्ते आ जाते हैं, उसी प्रकार सत्त्वहीन बने हुए बुन्देलोंकी लाशों पर हाथ साफ करनेवाला यह युवक औरंगजेबका कोई प्यारा कुत्ता होगा। यदि भिन्न भिन्न मनोविकारोंसे रजित इसकी मुख-प्रभा अपनी स्वाभाविक स्थितिपर आ जाती तो यह सहजमें ही पहचाना जा सकता।

विचार-मग्न अवस्थामें बहुत देर तक भावी सुखका मनोराज्य करनेके उप-रान्त उस यवन युवकको मानो अचानक किसी बातका स्मरण हो आया। अब तक तो उसके मुख पर काल्पनिक विलासकी छटा दिखाई पडती थी, कल्पित अधिकारोंसे वह मदान्ध जान पडता था, पर अब उसका वह मुख स्वाभाविक रूपमें दिखाई पडने लगा। अब मालूम हो गया कि वह हम लोगोंका पुराना परिचित सरदार रणदूलहखाँ है।

रणदूलहखाँ बडे ठाटसे मसनद पर बैठा हुआ अपने सुख और अधिकारका ध्यान करके फूले अगों न समाता था। उसे अपनी उस पुरानी अवस्थाका स्मरण हो आया जब कि वह समरकन्दकी गलियोंमें भीख माँगा करता था और बुरी तरहसे उसके दिन बीतते थे। आगे चलकर उसे उच्चाकांक्षाओंने पागल

बनाया, पर अपने देशके वैभव पर अधिकार करनेमें वह नितान्त असमर्थ था, इसलिए पराभूत देशमें जाकर अपने जाति-भाइयोंकी सहायतासे उसने अपने भाग्यकी परीक्षा करनेका विचार किया था। फिर उसे अपनी उस दुर्दशाका ध्यान आया जो उसे दिल्ली पहुँचनेके समय महीनों रास्तेमें भोगनी पडी थी। दिल्ली पहुँचकर उसके नसीवने कैसा पलटा खाया, वह रकसे किस प्रकार राव बन गया, थोड़े ही दिन पहले समरकन्दकी गलियोंमे लोगोंके सामने हाथ पसारनेवाला भिखमंगा कितनी जल्दी औरगजेवके दरवारका भारी सरदार बन गया और हजारों आदमियोंके मुजरे लेने लगा, आदि बातोंका विचार करके मन-ही-मन वह अपने आपको धन्य समझने लगा। कुछ समय तक स्वाभाविक स्वरूपमें दिखलाई पड़नेवाला उसका मुखमंडल फिर भिन्न भिन्न विकारोंसे आक्रमित होने लगा। वैभवशिखर पर चढनेमें राजा चम्पतराय और उनके पुत्र छत्रसालने बाधा डाल कर उसका जो भारी अपमान किया था, उसने उसका जैसा व्याज सहित बदला लिया था, औरगजेवको उसने अपने ऊपर जिस तरह खुश किया था और आखिरमें उसने अपनी समझसे जो इतनी बहादुरी और मरदानगीका काम किया था, उन सब बातोंका स्मरण करता हुआ—एक एक करके वैभवगिरिकी सीढ़ियोंका दर्शन करता हुआ—विचारमग्न रणदूलहखाँ वैभवगिरिके उत्तुंग शिखर पर जा पहुँचा था। उसने अपनी कल्पनाकी सहायतासे अपनी उच्चाकाक्षाओंके ध्येयका जो चित्र बनाया था उसमें वह देख रहा था कि मैं बुन्देलखडके किसी नामर्द राजाको पदभ्रष्ट करके उसके सिंहासन पर अधिकार कर बैठा हूँ, बुन्देलखडके सब माण्डलिक राजे सिर झुकाकर नम्रतापूर्वक मेरे सामने खड़े हैं और मेरा मुँह जोह रहे हैं। उन्हींमें मिला हुआ वह पद-भ्रष्ट राजा भी चुपचाप खडा है और एक साधारण पद पाकर ही सन्तुष्ट और प्रसन्न है। इस प्रकार सारे बुन्देलखंडकी दृश्य और अदृश्य, सजीव और निर्जीव कुल सम्पत्ति मेरे अधिकारमें आ गई है और मैं उसका मनमाना उपभोग कर रहा हूँ। इतनेमें उसे कचुकीरायका ध्यान हो आया और उनके अभीतक दरबारमें हाजिर न होनेके कारण उसे आश्चर्य हुआ। पूछनेपर उसे मालूम हुआ कि कंचुकीराय बहुत देरसे नीचे आये हुए हैं और दरबारमें हाजिर होनेकी इजाजत चाहते हैं। उस समय उसे वैसा ही आनन्द हुआ जैसा किसी चिड़ीमारको अपने जालमें अच्छा शिकार फँसनेपर होता है।

ज्योंही राजा कञ्चुकीरायको मालूम हुआ कि सरदार रणदूलहखाँ साहबने मुझे याद फरमाया है, त्योंही वे झपटे हुए उनके पास बडे कमरेमें पहुँचे और अदबसे झुककर सलाम करके एक कोनेमें खडे हो गये। खाँसाहबने जब इन्हें अपने पास बैठनेका इशारा किया तब वे बडे कायदेसे सरक कर उस जगहपर आ बैठे और बोले,—

"जनाबने इस वक्त मुझे याद फरमाया, इसे मैं अपनी बडी खुश-किस्मती समझता हूँ। फरमाइए, क्या इरशाद है?"

रण०—"राजा साहब! मैंने इस वक्त एक बहुत ही जरूरी काममें मशविरा करनेके लिए आपको बुलवाया है। आप सलतनत-देहलीके बहुत बडे खैरख्वाह और बहुत ही समझदार राजा हैं। मुझे उम्मीद है कि आप मुझे सिर्फ उम्द राय ही न देंगे बल्कि जहाँ तक हो सकेगा, मेरा इरादा पूरा करनेमें मदद भी देंगे।"

कञ्चु०—"जरूर जरूर। मैं हर तरहसे आप लोगोंकी खिदमत बजा लानेके लिए तैयार हूँ। अगर आप मेरा सारा राज-पाट और यहाँ तक कि जान भी माँगेंगे तो मुझे देनेमें कभी कोई उज्र न होगा।"

रण०—"बस बस राजा साहब! मुझे आप पर पूरा पूरा इतमीनान है और इसी लिए मैंने ऐसे मौके पर आपको याद किया है। अब मैं अपना मतलब बयान करता हूँ, आप गौरसे सुनें।"

कंचु०—"हाँ हाँ, फरमाइए। मेरा खयाल बिलकुल आपकी ही तरफ है।"

रण०—"सबसे पहली बात तो यह है कि आपकी लडकीकी वजहसे मुझे सख्त नदामत और परेशानी उठानी पडी है और महीनों चम्पतरायकी कैदमें रहना पडा है। मैं उसे कोई माकूल सजा देनेका इरादा रखता हूँ। आप मेरे इस खयालको कहाँतक पसन्द करते हैं?"

कंचु०—"जनाब आली! मैं क्या अर्ज करूँ मैं तो खुद उस लडकीसे सख्त परेशान रहता हूँ। वह सलतनत देहली और उसके खैरख्वाहोंकी ऐसी जानी दुश्मन है कि पनाह ही भली। क्या मैं सुन सकता हूँ कि जनाबने उसके लिए क्या सजा तजवीज फरमाई है?"

रण०—"हाँ हाँ, शौकसे सुनिए, और इन्हीं सब बातोंके लिए तो मैंने आपको बुलवाया ही है। मैं यह चाहता हूँ कि या तो आप उसे अपने राजसे

एकदम निकाल ही दे और या ज्याद से ज्याद॰ उसकी शादी किसी बहुत ही गरीब शख्ससे करके उसे अलग कर दे, ताकि आपकी रियासतपर उसका कोई हक न रह जाय। वह नाबकार कभी इस काबिल नहीं है कि इतनी बडी रियासतकी मालिका बनाई जाय।"

कंचु०—" आपकी यह तजवीज तो बेशक बहुत ही उम्द और काबिल तारीफ है। मैं भी बहुत दिनोंसे उसके लिए कोई ऐसा ही इन्तजाम सोच रहा था और बहुत दिनोंसे मेरा यह इरादा भी था कि मैं अपनी रियासत शाहशाह देहलीकी नजर कर दूँ। मुझे कोई लडका तो है ही नहीं और ऐसी नालायक लड़कीको मैं अपनी वारिसा नहीं बनाना चाहता।"

रण०—" राजा साहब! आपकी लियाकतकी जिस कदर तारीफ की जाय, सब बजा है। मैं भी आपके इस खयालसे पूरा पूरा इत्तफाक करता हूँ, मगर मेरी समझमें आप अपने इस इरादेमें थोड़ीसी तबदीली कर दें तो और भी बेहतर हो।"

कचु०—" हाँ हाँ, फरमाइए। मैं हर तरहसे तैयार हूँ। मुझे किसी बातमें उज्र नहीं है।"

रण०—" आप जानते हैं, इस वक्त हिन्दुओं और मुसलमानोंमे मेलजोल बढानेके लिए किस कदर कोशिशकी जरूरत है। बादशाह सलामतका खयाल है कि अगर हिन्दुस्तानके मुख्तलिफ सूबोंमें कुछ मुसलमानी रियासतें कायम हो जायँ तो उनसे दोनों कौमोंका इत्तिफाक बढाने और दीने इस्लाम फैलानेमें बहुत कुछ मदद मिल सकती है। हालाँ कि इस वक्त करीब तमाम हिन्दू रियासते शाहंशाह देहलीकी ही बाजगुजार हैं और तमाम हिन्दुस्तानपर हमारा ही कब्ज है, ताहम अगर कुछ छोटी छोटी रियासते भी दरबार-देहलीके अच्छे तच्छे सरदारोंको मिल जायँ तो आइन्द बहुत कुछ बेहतरीकी उम्मीद हो सकती है। इसी खयालसे बादशाह सलामत खुद अपने सरदारोंको बडी बडी जागीरें देकर उन्हें राजा बनाना चाहते हैं। खुदाके फज्लसे अब बुन्देलखड पर मुसलमानोंका पूरा पूरा कब्जा हो गया है और इस मौकेपर यह मुनासिब मालूम होता है कि यहाँ भी एक छोटी मुसलमानी रियासत कायम हो जाय। अगर आप अपनी रियासत शाहशाह-देहलीकी नजर कर देंगे तो मुझे उम्मीद है कि बादशाह सलामत वह रियासत मुझको ही बख्श देंगे, क्यों कि वे बखूबी जानते हैं कि मुझे

ढाँडेर और उनके आसपासकी सरजमीन किस कदर पसन्द है। लेकिन उसमें आपको किसी कदर तवालत होगी। ऐसी हालतमें मेरी रायमें अगर आप खुद ही अपनी रियासतका कुछ हिस्सा मुझे दे दें तो सब काम भी बन जायगा और हम और आप दोनों मिलकर सलतनत-देहलीकी बडी बडी खिदमतें भी अंजाम दे सकेंगे। लडकीको आप अलग ही कर देंगे और कोई आपका वारिस है ही नहीं, जब तक आप जिन्द रहें—और खुदा करे आप बहुत दिनों तक जिन्द रहें—आप बदस्तूर अपनी रियासतके मालिक बन रहें। मेरे रहनेके लिए एक मामूली मकान ही काफी होगा। बाद अजाँ जैसा कि आपका इरादा है, वैसा—ही"

रणदूलहखाँ 'वैसा ही' कहकर रुक गया। उसकी समझमें ही न आया कि आगे क्या कहूँ। कञ्चुकीरायने यद्यपि पहले स्वय ही अपना सारा राज्य शाह-शाह-देहलीकी नजर कर देनेके लिए तत्परता दिखलाई थी, पर रणदूलहखाँके प्रस्तावने उन्हें कुछ चिन्तित कर दिया। जो इच्छा उन्होंने केवल रणदूलहखाँको प्रसन्न करनेके लिए प्रकट की थी उसकी पूर्तिके लिए अपने ऊपर इस प्रकार दवाव पडता देखकर वे मनहीमन कुछ दुखी हुए। पर उस समय रणदूलह खाँकी इच्छाके विरुद्ध कुछ कहनेका साहस भी उनमें नहीं था। वे बडी ही असमंजसमे पड़े। बडी कठिनतासे अपनी घबराहट दबाकर उन्होंने कहा,—" बहुत बेहतर! मुझे किसी बातमें उज्र नहीं है। मैं ढाँडेर पहुँचते ही अपने सरदारोंसे भी इस बारेमें बहुत जल्द मशविरा कर लूँगा और तब फौरन् जनाबको खबर दूँगा।"

इसके बाद कुछ देरतक इधर उधरकी बातें होती रहीं। खाँ साहब इस विचारसे बहुत ही प्रसन्न थे कि मेरा चक्र चल गया और अच्छा शिकार हाथ लगा। कञ्चुकीरायने सोचा, आगे जैसा होगा वैसा देखा जायगा, चलो इस समय तो पीछा छुडावें। थोड़ी देर बाद कञ्चुकीरायने खाँ साहबसे इजाजत लेकर अपना रास्ता लिया। रास्तेमें वे सोचते जाते थे,—" जान बची, लाखों पाये।"

* * *

बीसवाँ प्रकरण।

कुमार छत्रसाल और राजा जयसिंह।

विजय प्राप्तिका वास्तविक आनन्द केवल वही वीर जानते हैं जो समरभूमिमें अपना समरतेज दिखला कर विजयी होते हैं, और लोग उस आनन्दकी कल्पना भी नहीं कर सकते। देवगढका किला जीतकर शाही सेना विजयोत्सव मनानेमें मग्न थी। लश्करमें जगह जगह गाना-वजाना हो रहा था। कहीं मुगल सिपाही शराव पीकर वेहोश पडे थे और कहीं तरह तरहके ऊधम मचा रहे थे। उस वक्त उनके पैर जमीन पर नहीं पड़ते थे, उनके दिमाग सातवें आसमान पर थे। घडी घडी "तानारीरी" और "किट-किट ताँय-ताँय" पर "वाह वाह" और "सुवहान् अल्ला" की वौछारें हो रही थीं। लश्करमें सभी छोटे वडे आनन्द-सागरमें मग्न दिखाई पडते थे।

आधी रात वीत गई। चन्द्रमा वढ़ता वढता आकाशके मध्यमें पहुँच गया। जगत् निद्रादेवीकी आराधना करने लगा। देवगढके चारों ओर जहाँ तहाँ छावनी डाले पडे हुए सिपाहियोंका विजयोत्सव और भी नया रंग लाने लगा। राजा जयसिंह सॉडनी-सवारोंके हाथ विजयका समाचार दिल्ली भेजकर अभी खाली हुए थे और अपने खेमेसे वाहर निकलकर मनोहर चाँदनीमें टहल रहे थे। विजय-प्राप्तिका समाचार सुनकर वादशाह वहुत ही प्रसन्न और सन्तुष्ट होंगे, इतने सहजमें देवगढके किलेको फतह हुआ सुनकर मुझ पर उनकी कृपा वहुत वढ़ जायगी, वे मेरे प्रति वहुत कुछ कृतज्ञता प्रकट करेंगे, आदि विचार उस शूर और स्वामि-भक्त राजपूतके मनमें उत्पन्न हो रहे थे। उनके चेहरेसे विजय-प्राप्तिका सच्चा आनन्द झलक रहा था। उन्होंने अपने चारों ओर देखा। सैनिकों और सरदारोंको अपनी अपनी इच्छा और योग्यताके अनुसार तरह तरहसे आनन्द मनाते देखकर वे मन-ही-मन वहुत प्रसन्न और सन्तुष्ट हुए। उसी समय कुमार छत्रसालका स्मरण करके उनका हृदय प्रेमाकित और गद्गद हो गया जिनके अतुल पराक्रमके कारण देवगढका किला जीता गया था। जवसे राजा चम्पतराय मरे और महेवाकी जागीर शाहशाह-देहलीने जब्त कर ली तवसे अनाथ युवक छत्रसाल राजा जयसिंहके ही पास रहते थे। जयसिंह भी

उनपर अपने पुत्रकी तरह प्रेम करने लग गये थे । इसी लिए उस समय उनका मन पुत्रप्रेमसे मानो विह्वल हो उठा था । कार्य्यकी अधिकताके कारण उन्हें अभीतक कुमार छत्रसालकी अप्रतिम शूरताकी उचित प्रशसा करने और उनके प्रति कृतज्ञता स्वीकार करनेका भी अवसर न मिला था । अब अवसर पाकर वे धीरे धीरे कुमार छत्रसालके डेरेकी तरफ बढने लगे। रास्तेमें वे सोचते जाते थे कि छत्रसालने आज जो वीरता दिखलाई है उससे प्रसन्न होकर बादशाह उनके पिताकी जागीर उन्हें फिर लौटा देंगे । यह विचार स्वय उनके लिए बहुत ही आनन्ददायक था ।

जब वे कुमार छत्रसालके डेरेके पास पहुंचे तब उन्होंने देखा कि चॉदनीमें एक युवक पत्थरपर बैठा हुआ है और चिन्तित होकर कुछ सोच रहा है । थोड़ी देरतक उस युवककी ओर देखकर जयसिंहने पूछा,—

" कौन ? कुमार छत्रसाल ? किस चिन्तामें पडे हो ? " लेकिन उनके प्रश्नका कुछ भी उत्तर न मिला । छत्रसालके कन्धेपर हाथ रखकर वे आश्चर्य और प्रेमसे फिर पूछने लगे,—

" कुमार ! तुम क्या सोच रहे हो ? तुम्हारी इस चिन्ताका क्या कारण है ? आज तुम्हारे चेहरे पर विजयके आनन्दकी छटा दिखाई पडनी चाहिए थी । तुम ऐसे निराश और उदास क्यों हो रहे हो ? तुम्हारे ही पराक्रम और वीरताके कारण आज शाही सेनाको इतना आनन्द मनानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है, पर बडे आश्चर्यकी बात है कि स्वय तुम्हीं इतने खिन्न हो ।"

छत्रसालकी विचार-तन्द्रा टूट गई । वे झट उठकर खडे हो गये और बडी नम्रतासे सिर झुकाकर बोले,—" चाचाजी ! यह समय तो आपके आरामका था । इस समय आपने यहाँतक आनेका क्यों कष्ट किया ? कहिए, क्या आज्ञा है ? मैं इस समय आपकी कौन-सी सेवा कर सकता हूँ ?"

राजा जयसिंह समझ गये कि छत्रसाल अपने विचारोंमें मग्न रहनेके कारण हमारी बातें नहीं सुन सके थे । इस लिए उन्होंने फिर कहा,—" कुमार ! आज तुमने जो विजय प्राप्त की है उसका आनन्द तुम क्यों अनुभव नहीं कर रहे हो ? मैं तुम्हारी आजकी वीरताका अभिनन्दन करनेके लिए इस समय यहाँ आया था, पर तुम्हारे मनकी स्थिति मुझे बिलकुल ही विपरीत दिखलाई पडी । क्या तुम्हें इस विजय-प्राप्तिका कुछ भी आनन्द नहीं हो रहा है ?"

छत्रसालने उद्वेगसे कहा,—" विजय प्राप्त हो किसी दूसरेको और आनन्द मनावे कोई और ? आज तो दिल्ली-पतिकी जीत हुई है, उसके लिए मैं क्यों आनन्द मनाने लगा ? मैंने तो केवल अपना कटु कर्तव्य समझकर युद्ध किया था। देवगढ पहले भी पराधीन ही था और अब भी पराधीन ही है। उसपर आदिल-शाही अधिकार रहा तो क्या और औरंगजेवका अधिकार रहा तो क्या ? उसपर शीया मुसलमानोंका झडा फहराया तो क्या और सुन्नी मुसलमानोंका निशान गड़ा तो क्या ? छत्रसालके लिए दोनों ही वरावर हैं। लेकिन आजतक मैं आपके आश्रयमें था और भविष्यमे मुझे अपना उद्देश्य सिद्ध करनेमें आपसे बहुत कुछ सहायता मिलनेकी आशा है, अत मैं आपको ही सन्तुष्ट और प्रसन्न करनेके लिए जी खोलकर लडा था। मैं जानता था कि यदि देवगढका किला जीत लिया गया तो चाचाजी प्रसन्न होंगे, इसी लिए आज मैंने इस कटु कर्त्तव्यका पालन किया। तब फिर उसके लिए मुझे आनन्द क्यों होने लगा ?"

राजा जयसिंहने हाथसे सामनेकी ओर इशारा करके कहा,—" अपने आस-पास चारों ओर ऑखें उठाकर देखो, यहॉ जितने सैनिक विजयोत्सवमें मग्न हैं, क्या वे सभी यवन हैं ? उनमें आधेसे अधिक तो हिन्दू ही हैं। तव फिर आज वे क्यों विजयोत्सव कर रहे हैं ? वादशाहकी जीत होनेके कारण वे क्यों आनन्द मना रहे हैं ?"

छत्र०—" यही वात तो मेरी समझमें नहीं आ रही है। जिन लोगोंने इतनी वीरतासे लडकर स्वयं अपना ही देश औरंगजेवके अधीन कर दिया है वे क्यों आनन्दमें मग्न हैं ? चाचाजी ! क्या आप मुझे भी इन्हीं अज्ञानियोंकी श्रेणीमें रखना चाहते हैं ? पेटका गड्ढा भरनेके लिए देशद्रोह करनेवाले सैनिकोंके साथ आप मेरी तुलना क्यों करना चाहते हैं ? इन सैनिकोंको आनन्द करते देख तो मुझे और भी दु ख होता है। उनका आनन्द ही मेरे दु खका कारण है और जो वात मेरे आनन्दका कारण होगी वही इनके लिए दु खदायक होगी। अपने देशका दुर्भाग्य आप इसीसे अच्छी तरह समझ सकते हैं।"

जय०—" मैं समझता था कि स्वतत्रताका विचार राजा चम्पतरायके साथ ही साथ नष्ट हो गया। लेकिन अब मुझे मालूम हुआ कि तुम भी उन्हींके रँगमें रँगे हुए हो। कुमार ! कमसे कम अपने पिताकी दशा देखकर तो तुम्हारी ऑखें खुलनी थीं। वुन्देलखडका भयंकर रक्तपात देखकर तो तुमने समझा होता

कि देशके कल्याणके लिए हमने जो मार्ग ग्रहण किया है वह भ्रमपूर्ण है। जान पड़ता है कि अभी बुन्देलखडके बुरे दिन पूरे नहीं हुए। छत्रसाल! निर्जल मेघ कभी नहीं बरसते, वे सूर्य्य और चन्द्रमाके प्रकाशको केवल रोकते हैं, उनसे और कोई लाभ नहीं होता।"

छत्रसालने अधिक आवेशमें आकर कहा,—"चाचाजी! स्पष्ट कहनेके लिए मुझे क्षमा कीजिएगा। आप पिताजीके तथा मेरे प्रयत्नोंकी उपमा निर्जल मेघोंसे देते हैं और अपने आपको चन्द्र सूर्य्य मानकर हम लोगोंको अपने तेज और प्रकाशका बाधक मात्र बतलाते हैं। आप इतने दिनोंसे अपनी जन्मभूमि छोडकर सारे भारतवर्ष पर प्रकाश डालनेके लिए बादशाहके दरबारमें रहते हैं, पर अबतक देश पर कितना प्रकाश पडा है?"

राजा जयसिंहने कुछ गम्भीर होकर कहा,—"छत्रसाल! मुझे तुम्हारी बातोंसे जरा भी क्रोध नहीं आता। तुमने मुझ पर जो यह दोष लगाया है कि बादशाहके दरबारमें रहकर मुझसे प्रजाका कुछ भी लाभ नहीं हुआ सो यह दोष अकेले मुझपर ही नहीं लग सकता। लेकिन मेरा यह सिद्धान्त है कि दूस-रोंके दोषोंकी ओर ध्यान न देकर धीरे धीरे बराबर अपने कर्तव्योंका पालन करते रहना चाहिए। यद्यपि दरबारमें रहकर मैंने अपने देशभाइयोंका बहुत अधिक उपकार नहीं किया है तो भी शायद तुम यह अच्छी तरह जानते होगे कि मैंने अबतक कितने ही अनुचित और अन्याय-पूर्ण कर उठवा दिये हैं।"

छत्र०—"आपने बहुतसे पुराने कर तो अवश्य उठवा दिये हैं पर उसके साथ ही साथ बादशाहने और भी तो अनेक नये कर लगाये हैं। आप स्वयं जानते हैं कि एक अधिकार देकर उतने ही महत्त्वके दूसरे दो अधिकार छीन लेना, दो कर माफ करके उसकी कमी पूरी करनेके लिए तीसरा कर खूब बढा देना, आदि आदि बातें राजनीतिके दाँव-पेंच हैं। इस विषयमें मैं आपको और अधिक क्या बतला सकता हूँ? आप यदि विचार करेंगे तो आपको मालूम हो जायगा कि आपके प्रयत्नोंकी अपेक्षा महाराणा राजसिंहकी तलवार जिस उदात्त भावनासे म्यानके बाहर निकली है, महात्मा शिवाजीकी तलवार जिस पवित्र कर्त्तव्यके लिए दक्षिणमें चल रही है, उसी मंगलमय उद्देश्यसे अन्ततक पिताजी भी लडते रहे। उदयपुरके भाग्य अच्छे थे, दक्षिणका सितारा तेज था, इस लिए महाराणा राजसिंह और महात्मा शिवाजीके प्रयत्न सफल हुए। लेकिन

बुन्देलखण्डका नसीब अभीतक सोता है इस लिए पिताजीका प्रयत्न निष्फल हुआ। लेकिन केवल इसी कारण आप निर्जल मेघोंसे उनकी उपमा न दे। जो मेघ अभी प्रजाकी सहानुभूतिके अभावके कारण निर्जल जान पड़ते हैं, बहुत शीघ्र वही मेघ बुन्देलखण्डपर स्वतंत्रतारूपी अमृतकी वर्षा करने लगेंगे।"

जय०—"बुन्देलखण्डका भाग्योदय चाहे जब हो, पर मैं चाहता हूँ कि तबतक तुम इस हीन अवस्थामें अपना समय व्यर्थ नष्ट न करो और इस विजयसे लाभ उठाकर अपने प्राचीन वैभवके पुन अधिकारी बनो। कल यहाँसे शाही सेना कूच करेगी। तुम भी मेरे साथ ही दिल्ली चलो। तुम्हारी आजकी अप्रतिम वीरताका समाचार सुनकर बादशाह बहुत खुश होंगे और तुम्हारा सब ऐश्वर्य तुम्हें लौटा देंगे। छत्रसाल! तुम मेरी बातोंकी अवज्ञा मत करो। मैं वहाँ चलकर तुम्हें महेवाका राज्य दिलवा दूँगा।"

छत्र०—"मुझे महेवाका राज्य मिल जाना ही बुन्देलखंडको स्वातन्त्र्य मिल जाना नहीं है। चाचाजी! भूखे शेरकी भूख कुत्ते या गीदडसे नहीं मिट सकती। चातक कभी गड्हीके जलसे अपनी प्यास नहीं बुझाता। इसलिए बुन्देलखडको स्वतत्र करनेकी इच्छा केवल महेवाके राज्य या बादशाही दरबारकी अमीरीसे पूरी नहीं हो सकती।"

जय०—"छत्रसाल! यदि तुम बुन्देलखडकी स्वतत्रताके इतने अभिलाषी हो तो तुम दिल्ली चलो और बादशाहसे प्रार्थना करो कि बुन्देलखड पर अनुचित और अन्यायपूर्ण कर न लादे जायँ, वहाँ किसी प्रकारका अन्याय न हो, बुन्देलोंके अधिकारोंकी अच्छी तरह रक्षा हो, लोगोंको धार्मिक स्वतत्रता मिले और वहाँका शासन सुव्यवस्थित रूपसे हो। यदि बादशाहने तुम्हारी ये बातें मान लीं और इनके सम्बन्धमें तुम्हें अभिवचन दिया तब तो तुम्हारी इच्छा पूरी हो जायगी न?"

छत्र०—"चाचाजी! हमें स्वतंत्रता चाहिए, अभिवचन नहीं। अकबर बादशाहकी शासन-प्रणाली बहुत ही अच्छी थी, उससे सब सुखी रहते थे। तो भी वीरवर महाराणा प्रतापने चित्तौरके वैभवको लात मारकर दिल्लीकी प्रबल सत्ताका विरोध करनेमें अपना जीवन क्यों बिताया?"

राजा जयसिंहने प्रेमपूर्ण दृष्टिसे छत्रसालकी ओर देखते हुए कहा,—"कुमार! तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। बादशाही दरबारकी अमीरी स्वीकृत

करते समय चम्पतरायने भी यही कहा था। लेकिन बुद्धिमानोंको उचित है कि वे समय देखकर काम करें। तुम हमारे साथ दिल्ली चलो। वहाँ चलकर तुम बादशाहको अपने समस्त उपकारोंका स्मरण कराओ। यदि बुन्देलखडके सौभाग्यसे उसे स्वतन्त्रता मिल गई तो ठीक ही है, नहीं तो तुम फिर अपने इच्छानुसार कार्य करना। पर मुझे विश्वास है कि बादशाह तुम्हारी बात मान लेंगे। तुम्हारी आजकी वीरताके कारण बादशाहको जितना प्रदेश मिला है, बुन्देलखड शायद उससे आधा भी न होगा। यदि उन्होंने शान्त मनसे तुम्हारी प्रार्थना पर विचार किया तो वह अवश्य स्वीकृत होगी और उसमें बादशाहकी लेशमात्र हानि भी न होगी।"

छत्र०—"चाचाजी! दीवान ए-आममें दरबारके समय बादशाहने जो जो बातें कही थीं, क्या आप उन्हें भूल गये? क्या आपको याद नहीं है कि उस समय बादशाहने हमारी प्रार्थनाका कितने अनुचित रूपसे तिरस्कार किया था? बारबार 'भिक्षा देहि' करनेसे क्या होगा? जब एक बार हमें अच्छी तरह मालूम होगया कि भीखमें स्वतंत्रता नहीं मिलती तब घडी घडी हाथ पसारनेसे क्या लाभ?"

राजा जयसिंहने आग्रहपूर्वक कहा,—"चाहे लाभ हो और चाहे न हो, तुम्हें कमसे कम मेरी बात माननी चाहिए और मेरे साथ दिल्ली चलना चाहिए। मैं तुम्हें ऐसी असहाय और दीन स्थितिमें बुन्देलखडमें नहीं छोड सकता। हीरादेवीके गुप्तचर सारे बुन्देलखडमें तुम्हें ढूँढ रहे हैं, ऐसी दशामें तुम्हें अकेले बुन्देलखडमें छोडना ठीक नहीं। तुम्हारे पिता मेरे मित्र थे, मित्र ही क्यों भाईके समान थे। मैं नहीं चाहता कि तुम किसी प्रकार हीरादेवी सरीखी दुष्टाके फेरमें पडकर अपनी भारी हानि कर बैठो। तुम्हें मेरे साथ दिल्ली चलना पडेगा।"

छत्रसालने गद्गद स्वरसे कहा,—"चाचाजी! आपकी इस कृपाके लिए मैं आपका बहुत ही ऋणी और अनुगृहीत हूँ। लेकिन मेरे सम्बन्धमें आपको इतना अधिक भय करनेकी आवश्यकता नहीं। हीरादेवी भले ही मेरी जानकी गाहक हो जाय, मुझे उसकी चिन्ता नहीं है। प्राणनाथ प्रभुके प्रयत्नसे शीघ्र ही बुन्देलखडकी प्रजा स्वातन्त्र्यवादी बन जायगी और मुझे अपने प्राणोंसे भी अधिक प्रिय समझने लगेगी। चाचाजी! आप मेरे सम्बन्धमें किसी प्रकारकी चिन्ता न करें। महेवाका कोट भले ही मेरे प्राणोंकी रक्षा न कर सके पर पिताजीसे मुझे

धैर्यका जो अभेद्य दुर्ग मिला है वह अवश्य ही मेरी रक्षा करेगा। पिताजीका प्रेम यदि मेरी रखवाली न करेगा तो विन्ध्यवासिनीदेवीकी दया अपने भक्तकी रखवाली अवश्य करेगी। मेरे मनमें स्वतन्त्रताकी दिव्य ज्योति जल रही है, धैर्य्य मेरी रक्षा कर रहा है, देश-हितके पवित्र कर्त्तव्य पर मेरा लक्ष्य है, प्राणनाथ प्रभु तथा आप सरीखे महात्माओंके मुझे आशीर्वाद मिल रहे हैं, तब फिर मैं हीरादेवीसे क्यों डरूँ? चाचाजी! मुझसे दिल्ली चलनेके लिए आग्रह न कीजिए। इस प्रान्तमें मुझे अभी बहुतसे महत्त्वपूर्ण काम करने हैं। मैं अभी इतनी जल्दी दक्षिण नहीं छोड सकता।"

राजा जयसिंहने चकित होकर पूछा,—"क्या तुम हम लोगोंके साथ लौटकर बुन्देलखंड भी न चलोगे?"

छत्र०—"नहीं, मुझे दक्षिणमें ही अभी और कुछ दिनोंतक रहना पड़ेगा।"

जय०—"तुम यहाँ रहकर क्या करोगे?"

छत्र०—"मैं अपने गुरुके दर्शन करूँगा।"

जय०—"क्या प्राणनाथप्रभु आजकल दक्षिणमें ही हैं?"

छत्र०—"नहीं, वे तो बुन्देलखंण्डमें ही अपना काम कर रहे हैं।"

जय०—"तब फिर दक्षिणमें तुम्हारे कौन गुरु हैं जिनके दर्शनोंके लिए तुम यहाँ ठहरोगे?"

छत्र०—"महात्मा शिवाजी।"

थोडी देर तक विचार करनेके उपरान्त जयसिंहने बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक कहा,—"तब तो तुम बहुत ही उत्तम, प्रशसनीय और योग्य कार्य्य करोगे। तुम बडे आनन्दसे उन महात्माके पास जाओ और उनसे गुरुमंत्र लो। वे सब प्रकारसे तुम्हारे गुरु होनेके योग्य हैं। लेकिन साथ ही तुम मुझे इस बातका वचन दो कि अपना काम पूरा करके मेरे पास दिल्ली आओगे। आज तुमने इस युद्धमें जो काम किया है, वह व्यर्थ न जाना चाहिए। दिल्ली आकर तुम उससे कुछ लाभ उठाओ।"

छत्र०—"मैं इस विषयमें उन्हींसे सम्मति लूँगा। बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके सम्बन्धमें मैं उन्हींके उपदेशके अनुसार प्रयत्न करूँगा। पिताजीने भी

अन्तिम समय मुझे ऐसा ही करनेको कहा था । यदि उन्होंने मुझे दिल्ली जानेकी आज्ञा दी तो मैं आपके दिल्ली पहुँचनेसे पहले ही आपकी सेवामें पहुँच जाऊँगा।"

थोडी देर तक इधर उधरकी बातें करनेके उपरान्त राजा जयसिंह वहाँसे चले गये । उस समय उनकी आँखें प्रेमाश्रुओंसे भर गई थीं । रास्तेमें लोग स्थान स्थानपर विजयोत्सवमें मग्न थे, पर जयसिंहको कुछ भी दिखाई न पडता था ।

दूसरे दिन बहादुरखाँ कोका और राजा जयसिंहकी सम्मिलित सेनाने दिल्लीकी ओर प्रस्थान किया ।

कुमार छत्रसाल उनके साथ नहीं गये ।

* * * *

इक्कीसवाँ प्रकरण ।
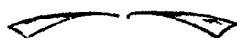
बेचारे कंचुकीराय ।

प्रधान सज्जनराय यथार्थनामा थे । राजा कंचुकीराय तो अपना सारा समय बादशाह औरंगजेब और हीरादेवीकी आराधना तथा उपासनामें बिताते थे, राज्यके पेचीले और उत्तर-दायित्वपूर्ण कार्योंके लिए उन्हें समय ही न मिलता था । आज शाही दरबारके उस अमीरका स्वागत करो, कल दरबारके उस अमीरकी दावत करो, परसों उस सरदारको नजरें भेजो और चौथे दिन हीरादेवीके बुलानेपर ओडछे चलनेकी तैयारी करो, बस इसी प्रकारके कामोंमें नित्य उनका समय बीता करता था । जबसे वे डाँडेरके राजसिंहासनपर बैठे, तबसे इन्हीं सब कामोंमें फँसे रहनेके कारण अभी तक उन्हें कभी राज-कार्य्य देखनेकी फुरसत ही न मिली थी । लेकिन ऐसी अवस्थामें भी डाँडेर-राज्यकी व्यवस्था बहुत ही उत्तम थी । वहाँ न तो प्रजापर अनावश्यक कर लादे जाते थे और न प्रजाके साथ किसी और प्रकारका अन्याय होता था । प्रजाका दुखडा बहुत ही सहजमें सुन लिया जाता था और उसके साथ पूरा पूरा न्याय होता था । इसी लिए डाँडेर राज्यकी बहुत कुछ कीर्ति भी फैल गई थी । उसकी इस कीर्तिके मुख्य कारण प्रधान सज्जनराय ही थे जो रानी सुफलादेवीकी सम्मति और आज्ञाके अनुसार बहुत ही दक्षतासे राज्यकी व्यवस्था और प्रबन्ध करते थे।

आज राजा कचुकीराय खूब बढ़ियाँ बढियाँ अलकार और वस्त्र पहने हुए वडे ठाठसे ढॉडेरके राज-सिंहासन पर बैठे हुए थे और सरदारों तथा नागरिकोंसे मुजरे ले रहे थे। प्रजाको भी आज बहुत दिनोंके वाद अपने राजाके दर्शनोंका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसी लिए सारा दरबार सरदारों और नागरिकोंसे भरा हुआ था। प्रधान सज्जनराय कुछ आश्चर्य और कुछ चिन्तासे सोच रहे थे कि आज राजा साहवने किस उद्देश्यसे इतना वड़ा दरवार किया है और आजके दरवारमें वे क्या कहना चाहते हैं। राजा कचुकीरायके बहुत आग्रह करने पर उनकी वातें सुननेके लिए एक ओर परदेकी आड़में विजयाको साथ लेकर रानी सुफलादेवी भी आ बैठी थीं।

जव कंचुकीरायको सज्जनरायसे मालूम हुआ कि प्राय सभी निमन्त्रित लोग आ चुके हैं तव उन्होंने अपना वक्तव्य इस प्रकार आरम्भ किया,—

"आज लोगोंकी राजनिष्ठा देखकर हमें इस समय जो अभिमान हो रहा है, उसका वर्णन नहीं हो सकता। आप लोग यह वात अच्छी तरह जानते हैं कि हम वरावर ढॉडेर राज्यकी प्रतिष्ठा वढानेका प्रयत्न करते रहते हैं। पर साथ ही यह वात भूल न जानी चाहिए कि ढँडेर राज्य चाहे कितना ही वडा क्यों न हो, पर मुगल-साम्राज्यसे यदि उसकी तुलना की जाय तो वह बिन्दु मात्र ही ठहरेगा। हम लोगोंको इतने वडे साम्राज्यका आश्रय मिला है, इसे हमें अपना सौभाग्य ही समझना चाहिए। आप लोगोंको यह सूचित करनेमें हमें वहुत ही आनन्द होता है कि शीघ्र ही हमारे राज्यका मुगल-साम्राज्यके साथ वहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध हो जायगा। सयोगसे हमें अभीतक कोई पुत्र नहीं हुआ है और न भविष्यमें ही होनेकी सम्भावना है। हमारी अवस्था भी अव वरावर दिनपर दिन ढलती ही जाती है, इस लिए हमारा यह परम कर्तव्य है कि हम इस समय ऐसी व्यवस्था कर दें जिसमें हमारे उपरान्त आपको ऐसा ही राजा मिले जो आप लोगोंके कल्याणकी हमारी ही तरह चिन्ता करे। हमें कोई पुत्र नहीं हुआ, यह भी एक प्रकारसे अच्छा ही हुआ, क्योंकि आजकलके छोकरे प्राय साम्राज्यके द्रोही निकलते हैं, उनके दिमाग फिरे हुए होते हैं और उनकी दृष्टि स्वराज्य और स्वतत्रता पर होती है। सागरके राजा शुभकरण कितना पुत्र-सुख भोगते हैं, यह आप लोग अच्छी तरह जानते हैं। पिता तो साम्राज्यकी तरफसे लडते हैं और पुत्र राजद्रोहियों और वलवाइयोंमें मिला हुआ

है। इन बलवाइयों और राजद्रोहियोंका अगुआ छत्रसाल कितना दुष्ट, मूर्ख और अत्याचारी है, उसके कारण बुन्देलखडमें कितना रक्तपात हो रहा है, उसके कुकर्म्मोंके कारण उसके पिता चम्पतरायके प्राण किस प्रकार गये और अपने सारे राज्य और ऐश्वर्य्यसे हाथ धोकर वह आजकल किस प्रकार अज्ञातवास कर रहा है, यह आप सब लोगोंको अच्छी तरह मालूम ही है। छत्रसाल या दलपतिराय सरीखे पुत्रोंकी अपेक्षा पुत्रका न होना ही बहुत अच्छा है। अत आप लोगोंको इस बातका दु ख न होना चाहिए कि आप लोगोंके युवराज नहीं है। यदि हमें कोई पुत्र होता और वह अयोग्य भी होता तो भी आप सरीखे साम्राज्य-भक्तोंको विवश होकर उसे अपना राजा मानना ही पडता। हमारी इच्छा थी कि हमारा उत्तराधिकारी कोई ऐसा व्यक्ति हो जो सम्राट् औरंगजेबका बहुत बडा कृपापात्र और उनके साम्राज्यका अनन्य भक्त हो, जिसमें उसके कारण आप लोगोंपर किसी प्रकारकी विपत्ति आनेकी सम्भावना न हो। सौभाग्यवश हमें एक ऐसा व्यक्ति इस समय मिल भी गया है। आजका दरबार इसी लिए हुआ है कि आप लोगोंको यह बतला दिया जाय कि आपका भावी राजा कौन होगा।" इतना कहकर राजा कंचुकीराय यह जाननेके लिए कुछ देरतक चुप हो रहे कि श्रोताओंपर हमारी बातोंका क्या और कैसा प्रभाव पडता है।

उस समय सब लोगोंने समझा था कि राजा साहब या तो किसी साम्राज्य-भक्त सरदार या राजाके पुत्रको दत्तक लेंगे और या किसी वैसे ही सरदार या राजाके पुत्रसे अपनी कन्याका विवाह करके उसे अपना उत्तराधिकारी बनावेंगे। इसी लिए लोगोंमें किसी प्रकारकी उत्तेजना न फैली और सब लोग राजा साहबकी आगेकी बातें सुननेके लिए चुपचाप ज्योंके त्यों बैठे रहे।

कंचुकीरायने फिर अपना भाषण आरम्भ किया,—"हम आप लोगोंसे यह तो अभी कह ही चुके हैं कि आप लोग युवराज न होनेके कारण दुखी न हों, पर इससे आप लोग यह न समझें कि सन्तति-हीन होना ही सबसे अच्छा है। सन्ततिमें पुत्र भी होता है और कन्या भी। आजकलके ज़मानेमें पुत्र न होना ही अच्छा है, क्योंकि प्राय वह अनेक सकटों और दोषोंका कारण होता है। हम लोग प्राय देखते हैं कि पुत्र अपने पितासे लड जाता है और उसकी अप-मृत्युका कारण होता है। इस लिए व्यर्थ पुत्रकी चिन्ता करना ठीक नहीं।"

राजा कचुकीरायकी बातें सुन सुनकर प्रधान सज्जनराय वहुत ही चकित हो रहे थे। साथ ही उनके मनमें दारुण चिन्ता भी उत्पन्न हो रही थी। उनकी समझमें न आता था कि राजा साहबकी ये सब बातें किस प्रकार बन्द करें और न वे यही समझ सकते थे कि इन बातोंका परिणाम क्या निकलेगा।

पर राजा कचुकीरायकी बातें खतम होना जानती ही न थीं। वे बहुत देरतक इसी प्रकारकी ऊट-पटाँग बातें कहते रहे। अन्तमें वे अपने मतलब पर आये। उन्होंने कहा,—"हमने अपने राज्यकी दृढता और सुप्रबन्ध आदिका बहुत अच्छा आयोजन किया है। राजकुमारीका विवाह शीघ्र ही किसी साधारण जागीरदार या सरदारके पुत्रके साथ हो जायगा। उसके लिए उपयुक्त वर ढूँढा जा रहा है। विवाहके उपरान्त वह अपने घर चली जायगी। सज्जनरायजी अब बहुत वृद्ध हो गये हैं। अब इनका शरीर नहीं चलता। अवस्था तो हमारी भी अधिक हो गई है पर हम अभी और कुछ दिनों तक टेर ले चलेंगे। हमारा विचार है कि रणदूलहखाँ साहब अब यहीं आ रहें और राजकीय कामोंकी देख-भाल आरम्भ कर दें। प्रबन्ध और शासन-सम्बन्धी कामोंमें वे बहुत ही योग्य हैं और शाहंशाह औरंगजेबकी उनपर विशेष कृपा है। हमारे जीवनकालमें वे हमें राजकार्य्यमें बराबर सहायता दिया करेंगे और हमारे उपरान्त राज्यके उत्तराधिकारी भी वही होंगे। आप लोगोंको न तो घबराना चाहिए और न किसी प्रकारकी चिन्ता करनी चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंके द्वेषके दिन अब गये, अब तो दोनोंमें सुहृद-भाव स्थापित होनेका समय आ गया है और उस भावका सूत्रपात इसी प्रकार होना चाहिए। आप लोग विश्वास रक्खें कि आपके साथ किसी प्रकारका अन्याय या अत्याचार न होगा। रणदूलहखाँ एक तो स्वय बहुत समझदार आदमी हैं, दूसरे मैं भी उन्हें अच्छी तरह समझा बुझा दूँगा। आप लोग सब प्रकारसे निश्चिन्त रहें।"

राजा कचुकीरायकी बातें समाप्त होनेसे पहले ही सारे दरबारमें खलबलीसी मच गई थी—लोग आपसमें काना-फूसी करने लग गये थे। कई नागरिक और सरदार उठकर कुछ कहना चाहते थे, पर सज्जनरायका मुँह देखकर सब चुप हो रहते थे। कई आदमियोंको तो स्वय सज्जनरायने कई बार शान्त रहनेका सकेत किया था। कचुकीरायकी बातें समाप्त होते ही सारे दरबारमें शोर मच गया। इसपर कचुकीरायने जरा बिगड़कर कहा,—"प्रधानजी! यह क्या बात

है? आप इन लोगोंको तुरन्त शान्त कराइए, दिल्लीमें दिन दिन भर शाही-दरबार हुआ करते हैं, पर उनमें हमने कभी ऐसी गड़बड़ी नहीं देखी। हमने कोई ऐसी नामुनासिब बात नहीं कही। हमारी आज्ञा है कि आप इन लोगोंको शान्त करें और जो लोग उपद्रव मचावें उन्हें यथोचित दण्ड दिया जाय।"

प्रधान सज्जनराय उठकर खड़े हुए और दोनों हाथोंसे लोगोंको शान्त होनेका इशारा करने लगे। बड़ी कठिनतासे लोगोंको चुप कराकर उन्होंने कहा,—"आप लोग अभी इतने उद्विग्न न हों। महाराज साहबका ऐसा प्रस्ताव है। अभी इस सबबमें कोई कार्रवाई नहीं की गई है। अभी इस बातका समय है कि आप लोग इसपर विचार करें और अपनी सम्मति भी दें। महाराज साहब बहुत विचारशील हैं। वे बिना आप लोगोंकी सम्मतिके अथवा बिना अच्छी तरह विचार किये कोई काम न करेंगे। सम्भव है कि सोच समझकर यह विचार छोड़ भी दिया जाय। मैं भी समय पाकर महाराज साहबको इस सम्बन्धमें समझाऊँगा और आशा है कि महाराज हम लोगोंकी प्रार्थना अस्वीकृत न करेंगे।"

पर सज्जनरायकी ये बातें कंचुकीरायको पसन्द न आईं। यद्यपि जिस समय रणदूल्हखाँने ओड़छेके दीवानखानेमें कंचुकीरायसे यह प्रस्ताव किया था उस समय इसे सुनकर वे कुछ चिन्तित और दुखी हो गये थे और खाँ साहबके प्रस्तावसे सहमत न थे, तथापि जब हीरादेवीने उन्हें बहुत कुछ ऊँच नीच समझाया तब वे अपना राज्य रणदूलहखाँको देनेके लिए तैयार हो गये थे। हीरादेवीने इसी लिए उनसे एक और बात भी जड़ दी थी कि कहीं वे आगे चलकर अपने विचारसे डिग न जायँ। उसने उनसे कह दिया था कि आपकी कन्या जबतक मेरे यहाँ रही वह बराबर छत्रसाल और उनके कार्य्योंकी प्रशंसा ही करती रही, वह उनपर कुछ अनुरक्त भी जान पड़ती है। यदि आगे चलकर कहीं छत्रसाल और विजयाका विवाह-सम्बन्ध हो गया तो बहुत ही बुरा होगा,—सारा किया धरा नष्ट हो जायगा, छत्रसाल डॉंडेरके राजा बन बैठेंगे और बुन्देलखंडमें फिर उपद्रव आरम्भ कर देंगे। यह अन्तिम बात कंचुकीरायके मनमें अच्छी तरह जम गई थी और इसी लिए वे खाँ साहबको अपना सारा राज्य देनेके लिए तैयार हो गये थे। ऐसी दशामें यदि प्रजा और सज्जनरायकी बातें कंचुकीरायको पसन्द न आईं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

बहुत दुखी होकर राजा कचुकीरायने कहा,—"प्रधानजी ! यह आप क्या कह रहे हैं ? आप जानते हैं कि हम जो कुछ कहते या करते हैं उसपर पहले बहुत अच्छा तरह विचार कर लेते हैं। तब व्यर्थ इस तरहकी बातें करनेसे क्या लाभ ? हमने जो कुछ कहा है वह बहुत ठीक है, उसमें कोई परिवर्त्तन नहीं हो सकता। हम इस विषयमें और कुछ सुनना भी नहीं चाहते।"

सज्जन०—"पृथ्वीनाथ ! यह सब कुछ ठीक है, पर एक हिन्दू राज्यका इस प्रकार मुसलमानके अधिकारमें चला जाना लोगोंको सह्य नहीं हो सकता। श्रीमान् स्वय देखते हैं कि जिन जिन स्थानों पर मुसलमान स्वयं अधिकार करते हैं, वहाँसे भी प्रजा उन्हें निकाल बाहर करनेकी चिन्तामें लगी रहती है। ऐसी दशामे जान-बूझकर राज्यमे कोई नया उपद्रव खडा करना कहाँ तक न्याय-सगत है, इसका विचार स्वय श्रीमान् कर सकते हैं। देशमें मुसलमानोंका दिन पर दिन जो अत्याचार बढता जाता है उसे देखते हुए इतना बडा राज्य एक मुसलमानके हाथमें दे देना वैसा ही है जैसा कि गौको बाघकी रक्षामें देना। युवराजके अभावमें सर्वथैव यही उचित है कि राजकुमारीका विवाह किसी योग्य राजकुमारके साथ किया जाय और वही राजकुमार राज्यका उत्तराधिकारी हो। शास्त्रके अनुसार भी और नैतिक दृष्टिसे भी यही सबसे उत्तम है कि बुन्देलखडका राज्य बुन्देलोंके हाथमें ही रहे।"

कचुकी०—"प्रधानजी ! आप व्यर्थ इस विषयमें आग्रह करके हमारे कोप-भाजन न बनें, हम शास्त्रकी मर्यादा भी अच्छी तरह जानते हैं और नीतिके तत्त्व भी हमसे छिपे नहीं हैं। हमने इस विषय पर बहुत गूढ विचार किया है और बहुत दूर तक भविष्य सोचा है। आप लोग अभी वहाँ तक नहीं पहुँच सकते। और फिर यह राज्य हमारा है। हमें अधिकार है, हम चाहे जिसे दे दें। इसमें किसीको आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इस विषयमें हमारा जो विरोध करेगा वह राजद्रोही समझा जायगा।"

इसपर बहुतसे लोग शोर मचाने लगे। कोई कहता था—"ऐसा कदापि न होना चाहिए।" कोई कहता था,—"भाई अब तो हम यहाँ न रहेंगे।" और कोई कहता था,—"अब हम लोगोंके विनाशके दिन आ गये।" तरह तरहकी बातें और बहुतसा हो-हुल्लड सुनकर राजा कचुकीराय दुखी भी हुए और घबरा भी गये। अन्तमें उन्होंने दरबार बरखास्त करनेकी आज्ञा दी और

वे स्वय दरवार छोडकर उठ गये। उनके चले जानेपर सज्जनरायने सब सरदारों और नगरनिवासियोंको वहुत कुछ आश्वासन दिया और कहा कि सम्भवत राजा साहवकी इच्छा पूरी न होने पावेगी, आप लोग निश्चिन्त और शान्त रहें। तब कहीं जाकर लोगोंके जीमें जी आया और सब लोग अपने अपने घर गये। उस दिन वहुतोंने अपने मनमें समझ लिया कि राजा कचुकीराय पागल हो गये हैं।

भगवान् भास्कर ससारका परित्याग करके चले गये। धीरे धीरे काली रात वढने लगी। वह अपने पति चन्द्रदेवके आनेकी प्रतीक्षा कर रही थी। पतिके आनेमें विलम्ब होता देखकर वह कुछ उद्विग्न हुई, उसके कृष्ण वदनपर चिन्ताकी छाया दिखाई पडने लगी। इस प्रकार दो घडियाँ बीत गई, इतनेमें उसने देखा कि मेरे पति-देव स्वर्गीय अमृतमें स्नान करके मुझे आलिंगन करनेके लिए हाथ वढाए हुए आ रहे है। वह भी जल्दी जल्दी वढकर रजनीनाथके पास पहुँच गई और उनकी ज्योत्स्नाके शुभ्र समुद्रमें आनन्दसे तैरने लगी।

इस समय रानी सुफलादेवीने अपनी एक विश्वस्त दासीको प्रधान सज्जनरायको बुला लानेके लिए भेजा। थोडी देरमें वृद्ध सज्जनराय वहाँ आ पहुँचे। आते ही उन्होंने सुफलादेवीका अभिवादन किया और कहा,—"कहिए, इतनी रातके समय श्रीमतीने इस दासको क्यों स्मरण किया? मैं इस समय किस सेवाके लिए बुलाया गया हूँ?"

सुफला—"प्रधानजी! आज दरवारमें जो कुछ हुआ वह तो अपने देखा ही। अव वतलाइए कि इसके प्रतिकारके लिए आपने कौनसा उपाय सोचा है?"

सज्ज०—"श्रीमती! जहाँतक मै समझता हूँ, कदाचित् महाराजको कुछ मति-भ्रम हो गया है। महाराज वरावर अनेक प्रकारके कृत्य किया करते थे पर आजकेसे विचार उनके और कभी सुननेमें नहीं आये थे। मैं तो यही उचित समझता हूँ कि अभी दो चार दस दिन हम लोग शान्त रहें और तब समय देखकर महाराजको कुछ समझावें बुझावें।"

सुफ०—"नहीं, प्रधानजी, इस प्रकार काम न चलेगा। डॅडेरके राज्य और राजवशकी रक्षाके लिए हम लोगोंको इस समय एक कपट-प्रवन्ध करना पडेगा और उसीमें सहायता देनेके लिए मैंने आपको इस समय वुलाया है।"

सज्ज०—"अच्छी वात है। मुझे श्रीमती जो आज्ञा देंगी वह मै करनेके लिए सदा तैयार हूँ।"

सुफ०—" प्रधानजी ! आप इसी समय विजयाको अपने साथ लेकर ओड़छे चले जायँ। बाहर आप दोनोंके लिए दो घोडे खडे हैं। उन्हींपर सवार होकर आप दोनों तुरन्त ओडछेका रास्ता लें।"

सज्ज०—" क्या श्रीमतीकी यह इच्छा है कि मैं राजकुमारीको ले जाकर ओड़छेमें रानी हीरादेवी के आश्रयमें रख आऊँ ? लेकिन इस युक्तिसे भी तो काम न चलेगा, क्योंकि रानी हीरादेवी—"

सुफ०—" प्रधानजी ! पहले आप मेरी बात पूरी तरहसे सुन लें। आप विजयाको लेकर हीराढेवीके पास जायँ। वे आपको पहचानती ही हैं। आप जाते ही उनसे एकान्तमें मिलिएगा और कहिएगा कि रानी सुफलादेवीकी इच्छा थी कि विजयाका विवाह छत्रसालके साथ कर दिया जाय और ढॉडेरका सारा राज्य उन्हींको दे दिया जाय। इसी लिए महाराजने मुझे विजयाके साथ आपके पास भेजा है और कहा है कि यदि गुप्त रीतिसे विजयाका विवाह छत्रसालके साथ हो जायगा तो वही ढँड़ेर-राज्यके उत्तराधिकारी हो जायँगे। इसलिए महाराज चाहते हैं कि विजयाका विवाह युवराज विमलदेवके साथ हो जाय। विजया और विमलदेवकी जोडी बहुत अच्छी है। यदि अभी इन दोनोंका विवाह हो जायगा तो ढँड़ेर राज्य परसे यह आपत्ति टल जायगी और छत्रसालको ढँडेरका राज्य न मिल सकेगा। आप उनसे यह भी कह दीजिएगा कि महाराजने मुझे विमलदेवके साथ विजयाका विवाह कर देनेका पूरा अधिकार देकर भेजा है। उस दशामें वह तुरन्त ही विवाहका सब प्रबन्ध करके विजयाका पाणिग्रहण करा देंगी। जहाँ तक हो सके, आप उन्हें इस बातकी आशंका कराके विवाह शीघ्र करा दीजिएगा कि कहीं छत्रसाल आकर इस विवाहमें बाधा न डाल दे। बस, इतनेसे ही सब काम हो जायगा।"

सज्जनरायकी समझमें रानी सुफलादेवीकी एक बात न आई। वे हक्केबक्केसे खडे सब सुनते रहे। सुफलादेवीकी बात समाप्त होनेके बहुत देर बाद तक भी जब वे कुछ न बोले तब सुफलादेवीने फिर कहा,—

" प्रधानजी ! क्या मेरी युक्ति आपको पसन्द नहीं आई ? अथवा आप इतने बडे राज्य और अपने स्वामीके कल्याणके लिए थोड़ासा झूठ बोलनेके लिए तैयार नहीं हैं ? यदि आप मेरा बतलाया हुआ इतना काम कर देंगे तो विश्वास रखिए कि ढॉड़ेरका राज्य कभी यवनोंके हाथमें न आयगा।"

सज्ज०—" श्रीमती ! मीठे फल पानेके लिए बडे बडे कँटीले पेडों तक जाना पडता है । आरोग्यता प्राप्त करनेके लिए विषके समान कडवी दवाइया खानी पडती हैं । उसी प्रकार अत्यन्त न्याय्य, पवित्र और सत्यपक्षको विजयी करनेके लिए भी कभी असत्य या अन्यायकी सहायता लेनी पडती है । इस समय भी वैसा ही प्रसग है । मैं आपका आज्ञापालन करनेके लिए हर तरहसे तैयार हूँ । लेकिन इस बातको आप सोच लें कि राजकुमारीका विवाह विमलदेवके साथ होना भी ठीक न होगा । उस समय सारा ढाँडेर हीरादेवीके चगुलमें फँस जायगा और यह भी कुछ कम बुरा न होगा । "

सुफ०—" नहीं, आप इस बातकी चिन्ता न करें । वास्तवमें विजयाका विवाह छत्रसालके साथ ही होगा । मैं अपने राज्यको कभी हीरादेवीके चगुलमें न जाने दूँगी । "

सज्जनरायका आश्चर्य और भी बढ गया । उन्होंने चकित होकर पूछा, " भला, जब एक बार विजयाका विवाह विमलदेवके साथ हो जायगा तब फिर छत्रसालके साथ उसका विवाह क्योंकर हो सकेगा ? "

सुफ०—" प्रधानजी ! इसमें एक भारी भेद है, जो मैं आपको बतलाए देती हूँ । ओडछेके राजा विमलदेव पुरुष नहीं बल्कि वास्तवमें स्त्री हैं । पुत्रके अभावके कारण कहीं अपना राज्य महेवाके राजाओंके अधिकारमें न चला जाय, इस आशकासे हीरादेवीने अपनी कन्या विमलाको पुत्र विमलदेवके रूपमें रक्खा है । हीरादेवीको दृढ विश्वास है कि उसका यह छल कोई नहीं जानता । शीघ्र ही वह बहुत ठाठ बाटसे विमलदेवका राज्याभिषेक करनेवाली है । इससे पहले ही विजया और विमलदेवका विवाह हो जाना चाहिए । इस विवाहसे विजयाका कौमार्य्य भग न होगा । दो कुमारियोंका परस्पर विवाह वास्तवमें विवाह ही नहीं है । जब छत्रसाल बुन्देलखडमें स्वतत्रता स्थापित करके रणदूलहखाँको मार भगावेंगे तब विजयाका विवाह उनके साथ कर दिया जायगा । अब तो आप सब बातें अच्छी तरहसे समझ गये न ?

प्रधान सज्जनरायका अब अच्छी तरह समाधान हो गया और वे बहुत प्रसन्न दिखाई पडने लगे । वे विजयाको अपने साथ लेकर ओड़छेकी ओर चल पडे । मार्गमें उन्हें विजयासे मालूम हो गया कि विमलदेवके स्त्री होनेका समाचार उसीने सुफलादेवीको दिया था ।

थोडी देर बाद रानी सुफलादेवीने एक पत्र अपने एक विश्वसनीय नौकरको दिया और उसे प्राणनाथ प्रभुको ढूँढकर देनेके लिए कहा। वह भी पत्र लेकर प्राणनाथ प्रभुकी तलाशमे चल पडा।

* * * *

बाईसवाँ प्रकरण।

शापादपि शरादपि।

अनन्त विश्वके मध्य भागमें जिस प्रकार भगवान् अंशुमाली सुशोभित होते हैं, अनन्त तारकाओंमें जिस प्रकार रजनीनाथ तेजस्वी जान पड़ते हैं अथवा तेतीस करोड देवताओंके समुदायमें जिस प्रकार भगवान् चतुर्भुज ही ओड़छेके नागरिकोंको सबसे अधिक पूज्य जान पडते हैं, उसी प्रकार असख्य मनुष्योंके समुदायमें प्राणनाथ प्रभु आज अलौकिक तेजसे सुशोभित हो रहे थे। ओडछेके दीवानखानेमें बैठकर रणदूलहखॉने हुक्म दिया था कि आज तीसरे पहर चतुर्भुजविष्णुकी मूर्ति तोड डाली जाय कल तक उनका मन्दिर बिलकुल ढा दिया जाय और जहॉतक शीघ्र हो सके उसी स्थानपर एक बढिया मसजिद तैयार की जाय। यह सुनते ही ओडछेके नागरिक बहुत दु खी और सन्तप्त हुए, चिढ गये और अन्तमें अत्याचारी यवन अधिकारियों पर गालियाँ और शापोंकी वर्षा करने लगे, लेकिन उन्हें प्रतिकारका कोई मार्ग दिखाई न पड़ता था। ओडछा नगरके बाकी सभी छोटे बडे मन्दिर ढा दिये गये थे, तथापि सब लोगोंको इस बातका दृढ विश्वास था कि चतुर्भुजके मन्दिरकी यह दशा न की जायगी। पर अन्तमें जब उन्हें यह मालूम हुआ कि वह मन्दिर भी गिरा दिया जायगा तब उन्हें असह्य दु ख हुआ। उन्हें कुछ भी न सूझ पडता था कि इस समय क्या करें और क्या न करें। रानी हीरादेवी अपने पुत्र विमलदेवके विवाहके प्रबन्धमें लगी हुई थी। उसे इस बातकी चिन्ता ही नहीं थी कि मेरी राजधानीमें कैसा अनर्थ हो रहा है। इसलिए बडी कठिनतासे नगरके कई प्रतिष्ठित निवासी रानी हीरादेवीके पास गये और उससे प्रार्थना करने लगे कि जिस प्रकार हो सके रणदूलहखॉकी आज्ञाका पालन न होने दिया

जाय और भगवान् चतुर्भुजका मन्दिर नष्ट होनेसे बचा लिया जाय । लेकिन हीरादेवीने उन लोगोंसे कह दिया कि एक तो मैं अभी ब्याहके झमेलेमें हूँ और दूसरे रणदूलहखाँ या शाहशाह औरगजेबकी आज्ञाके विरुद्ध कोई प्रयत्न करना ठीक नहीं होगा, अभी रणदूलहखाँको मनमानी कर लेने दो, उसके चले जाने पर फिर नए मन्दिर बन जायँगे । बस इतनी ही बातचीतके बाद उन नागरिकोंको छुट्टी मिल गई । इस कारण ओडछेके नागरिकोंकी निराशा परमावधिको पहुँच गई थी । उन्हें कोई योग्य सहायक या मार्गदर्शक दिखाई न पडता था । सूर्योदयके समयसे ही झुण्डके झुण्ड लोग चतुर्भुज परमात्माके अन्तिम दर्शन करनेके लिए मन्दिरकी ओर जाने लगे । सारे नगरमें दुःखका रोना, शोककी ध्वनि, संतापके उद्गार और आत्म-निन्दाके वचन सुनाई पडने लगे । उस दिन नागरिकोंने अन्न-ग्रहण न किया । सब लोगोंको यह दुःखदायक भावना असह्य वेदना देने लगी कि थोडी ही देर बाद हमें परम दयाघन चतुर्भुज परमात्माके दर्शन न हो सकेंगे । इतनेमें सब तरफ शोर मच गया कि प्राणनाथ प्रभु आ गये । ओडछेके प्रत्येक निवासीके मनमें आशा-तन्तु उत्पन्न हो आया । सब लोग यह देखनेके लिए मन्दिरतक पहुँचने लगे कि अब प्रभु क्या करते हे । थोडी ही देरमें प्राणनाथप्रभुके सामने असख्य मनुष्योंकी भीड लग गई ।

प्राणनाथप्रभु एक ऊँचे आसनपर खडे होकर उच्च स्वरसे बोलने लगे । उस समय सुननेवालोंको ऐसा जान पडने लगा कि हम लोगों पर अमृतकी बूँदोंकी वर्षा हो रही है । इतना बडा समुदाय था, पर सब लोग एकाग्रचित्त होकर प्राणनाथप्रभुका उपदेशामृत ग्रहण करने लगे । प्रभु कहने लगे,—

"सज्जनो ! जबसे स्वतन्त्रतादेवीके परम भक्त और उपासक महेवाके राजा चम्पतराय वीरगतिको प्राप्त हुए, तबसे बुन्देलखण्डकी प्रजाके मनमें स्वातन्त्र्य-प्रेमका बीज बोनेके लिए मैं सारे देशमें घूम रहा हूँ । पहले मैंने समझा था कि इस काममें बहुत परिश्रम करना पड़ेगा और बहुत समय लगेगा । पर ज्यों ज्यों मैं प्रवास करने लगा, ज्यों ज्यों मुझे जन-साधारणके आन्तरिक भावोंका पता लगता गया, त्यों त्यों बुन्देलखडकी स्वतन्त्रताका दिन मुझे पहले जितना दूर जान पडता था उतना ही वह समीप जान पड़ने लगा । गाँवके गरीब खेतिहरोंसे लेकर शहरके करोडपतियोंतक, रकसे लेकर रावतक मैंने सबके मनकी स्थितिका पता लगाया । तब मुझे मालूम हो गया कि सब लोग स्वतंत्रताके

इच्छुक हैं। स्वतंत्रता चाहते तो सब हैं पर स्वतन्त्रताका वास्तविक ज्ञान बहुत ही थोड़े लोगोंको है। इसी लिए सारे बुन्देलखण्डमें यवनोंको मनमाना उत्पात करनेका अवसर मिला है। वास्तवमें सब लोग यही चाहते हैं कि अपने धर्म्मका भली भाँति प्रतिपालन करें, अपने तीर्थों और धार्मिक भावोंकी पवित्रताकी रक्षा करें, हमारे साथ अत्याचार और अन्याय न हो, हम पर अनुचित कर न लगें, हम लोगोंका दिया हुआ उचित कर हमारे हितके कामोंमें लगे, हमें राज-काय्योंमें सम्मति देनेका पूरा पूरा अधिकार मिले, आदि आदि। लेकिन यह बात बहुत ही कम लोग जानते हैं कि ऐसी सुविधायें केवल स्वतन्त्रतासे ही मिल सकती हैं। स्वतंत्रताके फलोंसे तो सब लोग परिचित हैं, पर यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि वे फल किस वृक्षमें लगते हैं। दुष्ट और पातकी लोग सर्वसाधारणको समझाते हैं कि परतंत्रताके विषवृक्षमें स्वतंत्रताके सुन्दर फल लगते हैं, इस लिए स्वतंत्रताके मधुर फलोंकी इच्छा रखनेवाले लोग भूलसे स्वतन्त्रताके वृक्ष पर ही कुल्हाडी चलाते हैं और इस प्रकार अपने नाशका कारण बनते हैं। जब तक देश दासत्वमें फँसा हुआ है तब तक यह अन्याय और अत्याचार किस प्रकार नष्ट हो सकता है? जब तक देश दासताके घोर नरकमें डूबा हुआ है तब तक अधिकारियोंके अत्याचारों और कुकर्मोंका किस प्रकार अन्त हो सकता है? जब तक देश यवन-सेवामें लगा हुआ है तब तक दुष्काल, दरिद्रता और विपन्नावस्था कैसे दूर हो सकती है? जब तक देश यवनोंके अधिकारमें है तब तक उच्च भावनाओं, उच्च मनोविकारों और उच्च तत्त्वोंका जनताके मनसे कैसे स्पर्श हो सकता है? जब तक बुन्देलखण्डको धर्मान्ध और अत्याचारी औरंगजेबके चंगुलसे न छुड़ा लिया जाय तब तक हमारे देव-मन्दिरोंकी कैसे रक्षा हो सकती है? सज्जनो! क्या प्रार्थना करने, याचना करने, भीख माँगने और क्षुद्रता स्वीकार करनेसे कभी आजका अनर्थ टल सकता है? वीर बुन्देलो! क्या तुम्हें अपनी इस नामर्दीके कारण लज्जा नहीं मालूम होती? जिन हाथोंमें अपने प्राणोंसे भी अधिक प्रिय देव-मन्दिरोंकी रक्षा करनेके लिए तलवार पकड़नेकी शक्ति नहीं उन हाथोंमें चूड़ियाँ पहनाई जानी चाहिए। जो मन अपने परम-पूज्य मन्दिरोंकी रक्षा करनेके लिए उद्विग्न न हो वह मन मर्दोंके शरीरमें नहीं बल्कि औरतोंके शरीरमें रहने योग्य है। जिस नगरमें प्रतापशाली रुद्र प्रतापने स्वतंत्रतादेवीकी उपासना की, उस नगरमें ऐसा दुःखकारक

प्रसंग हो ! सज्जनो ! यदि आज बुन्देलखंडमें स्वराज्य होता तो क्या कभी ऐसा अपमानकारक प्रसंग पडता ? यदि बुन्देलखंडमें स्वतंत्रता होती तो क्या यवनोंको इस प्रकार आसुरी दृष्टिसे हम लोगोंके मन्दिरोंकी ओर देखनेका साहस होता ? यदि आप लोगोंने परलोकवासी चम्पतरायके प्रयत्नमें सहायता दी होती तो क्या रणदूल्हखाँकी इतनी मजाल थी कि वह इस आसुरी स्फूर्तिसे बुन्देलखंडकी पवित्र भूमिपर पैर रखता ? आप लोग बहुत सोये, अब चैतन्य होइए! अपने धर्म्म और देवमन्दिरकी रक्षा कीजिए ! नहीं तो थोडी ही देरमें धर्म्मान्ध यवन मार्गमें पड़नेवाले प्रत्येक बुन्देलेके प्राण लेते हुए इस पवित्र स्थान तक पहुँच जायँगे और इसे तहस नहस कर डालेंगे । थोडी ही देरमें परमात्मा चतुर्भुजकी मूर्तिपर पुष्पोंकी वर्षाके बदले फावडों और कुदलोंका प्रहार होने लगेगा । थोडी ही देरमें रणदूल्हखाँके पैरोंकी ठोकरें—हाय वह दुर्निवार प्रसंग देखनेकी अपेक्षा जहाँके तहाँ मर जाना ही कहीं अच्छा है !"

प्राणनाथप्रभु शोकाकुल अन्तःकरणसे थोडी देर तक चुपचाप खडे रहे । उस समय उनके सामने खडे हुए असंख्य मनुष्योंकी आँखोंसे आँसुओंकी अविरल धारा बहती थी । इस समुदायमें कुछ लोग क्रूर भी होंगे और कुछ कपटी भी, कुछ अनाचारी भी होंगे और कुछ विश्वासघातक भी, कुछ दगाबाज भी होंगे और कुछ गुलामीमें ही सुख माननेवाले, कुछ दयालु भी होंगे और कुछ धर्म्मात्मा भी, कुछ सदाचारी भी होंगे और कुछ परोपकारी भी, कुछ सुशील भी होंगे और कुछ स्वतन्त्रताप्रेमी भी, पर उस समय उन सभी लोगोंके मनमें धर्म-प्रेमकी एक ही ज्योति जल रही थी । यह देखकर प्राणनाथप्रभुने गद्गद स्वरसे कहा,—

"भारतवर्षके आर्योंके मन सदा मोक्ष-सुखकी ओर ही लगे रहते हैं, इसी लिए हम लोग अपने आचार-विचार, रुचि-अरुचि और प्रेम-द्वेष आदिको अलग रखकर धर्म्म-प्रेमके एक ही झण्डेके नीचे खडे हो सकते हैं । लेकिन उनका राष्ट्रोद्धारके एक ही झंडेके नीचे खडा न होना जितना दुःखकारक है उतना ही आश्चर्यजनक भी है । राष्ट्रोद्धारसे ऐहिक सुखोंकी वृद्धि होती है । ऐसे प्रत्यक्ष ऐहिक सुखको छोडकर परलोकके कल्पित मोक्ष-सुखकी ओर न जाने क्यों लोगोंकी अधिक प्रवृत्ति होती है । प्रत्यक्ष सुखको भ्रामात्मक समझकर मृग-जलकी तरह अप्रत्यक्ष सुखकी अपेक्षा हम लोग क्यों करते है ? अप्रत्यक्ष सुखकी प्राप्तिके

लिए हम लोग जिस प्रकार एक हो सकते हैं, उसी प्रकार प्रत्यक्ष सुखकी प्राप्तिके लिए भी हम लोग क्यों न एक हो जायँ ? वह समय अवश्य आवेगा और बहुत शीघ्र आवेगा। मोक्ष-सुखकी प्राप्ति और धर्म-प्रेमके लिए एक हो जानेवाले लोगोंका राष्ट्रोद्धारके लिए मिलकर एक हो जाना असम्भव नहीं है। जो लोग नदीके उस पारतक जा सकते हैं उनके लिए बीच धारातक जाना कोई बड़ी बात नहीं है। सज्जनो! ससारका कारबार चलानेमें तुम लोगोंमें तरह तरहके जो विरोध खडे हो गये हों उन सबको भूलकर तुम लोग जिस प्रकार चतुर्भुज परमात्माके मन्दिरकी रक्षाके लिए एकत्र हुए हो उसी प्रकार तुम लोगोंको बुन्देलखडकी स्वतंत्रताके लिए भी एक हो जाना चाहिए। अब तक जिन जिन देशोंमें मुसलमानोंका अधिकार हुआ है उन उन देशोंकी प्रजा बराबर अधर्मकी ओर ही प्रवृत्त होती गई है, उनके धर्म्मका बराबर धीरे धीरे नाश ही होता गया है और वह प्रजा बराबर नष्ट होती गई है। अत अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिए और धर्म्मको रक्षित रखनेके लिए हम लोगोंको स्वतत्र होनेका प्रयत्न करना चाहिए। आज तो भगवान् चतुर्भुजकी मूर्ति और मन्दिरका ही विध्वस होता है, कलको कोई इससे भी भयकर कार्य्य होगा। एक हाथमें कुरान और एक हाथमें तलवार लेकर शीघ्र ही धर्मान्ध मुसलमान सारे बुन्देलखण्डमें धमाचौकड़ी मचाने लगेंगे। आज जबरदस्ती तुम्हारे रिश्ते नातेके और भाई बन्द मुसलमान बनाये जा रहे हैं कलको स्वय तुम भी मुसलमान बनाये जाओगे। इस लिए उचित है कि तुम लोग इन सब बातोंका विचार करो और स्वतत्रतादेवीका जयजयकार मनाकर मुसलमानोंको दिखला दो कि तुममें इतनी वीरश्री है जो तुम्हारी कीर्ति अनन्त कालतक बनाये रक्खेगी!"

इस पर एक युवक नागरिकने बहुत ही नम्रतापूर्वक कहा,—" प्रभो! यदि आप आज्ञा दें तो हम लोग आज ही भगवान् चतुर्भुजका मगलमय नाम लेकर यवन-सत्ताको जड़से उखाड कर फेंक दे और अपने पवित्र देश, धर्म्म, और देवस्थानोंकी रक्षा करें।"

प्राणनाथ प्रभुने ओड़छेके नागरिकोंकी ओर दृष्टि फेरते हुए पूछा,—"स्वतंत्रताके लिए लडनेको कौन कौन तैयार हैं ?" उस समय स्वतंत्रतादेवी विन्ध्यवासिनी और भगवान् चतुर्भुजके जयजयकारसे आकाश गूँज उठा। सब लोगोंने

मानो प्राणनाथप्रभुको बतला दिया कि हम लोग यवनसत्ताके विरुद्ध लडनेके लिए तैयार है।

उस समय प्रभुने बहुत ही प्रसन्न होकर कहा,—" जहाँ जहाँ मैं गया वहाँ वहाँ मुझे यही उत्तर मिला। आज अखिल बुन्देलखड मन, वचन और कर्मसे स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए लडनेको तैयार है। इससे यह बात स्पष्ट जान पड़ती है कि बहुत शीघ्र इस देशसे यवनोका अधिकार उठ जायगा। बुझनेसे पहले जिस प्रकार एक बार दीपकका प्रकाश बढ जाता है अथवा मरनेसे थोडी देर पहले जिस प्रकार आसन्न-मरण मनुष्यके चेहरे पर कुछ तेज आ जाता है उसी प्रकार यवनसत्ता भी इस समय कुछ प्रबल हो गई है। यवनोंका कठोर और विकट अधिकार, उनकी अमानुषी धर्मान्धता और अत्याचार तथा दिन पर दिन बढती हुई साम्राज्य-लालसा यह बात प्रकट कर रही है कि उनकी सत्ताका बहुत ही शीघ्र ह्रास होगा। वैभवके सबसे ऊँचे शिखर पर आनन्द करनेवाले काल-वशात् अपमान और अवनतिके गहरे गड्ढेमें गिर पड़ते है। अपने ऐश्वर्यका घमड करनेवाले लोग शीघ्र ही दरिद्र हो जाते हैं। जो लोग अनुचित रूपसे अपना अधिकार दिखलाते हैं उन्हे शीघ्र ही दूसरे प्रबल सत्ताधारीकी सेवा करनी पडती है। रहटकी मालामे बँधी हुई भरी हँडियाँ धीरे धीरे खाली होती हैं और खाली हाडियाँ धीरे धीरे भरती जाती है। इस समय मुसलमान ऐश्वर्य और अधिकारके सबसे ऊँचे शिखर पर पहुँच गये हैं और बुन्देलोंके वैभवका कलश बिलकुल खाली हो गया है। वह फिरसे भरा जानेके लिए कुएमें बहुत नीचे, पानीके बहुत ही पास पहुँच गया है। शीघ्र ही यवनसत्ताका अधःपतन होने लगेगा, उसके वैभवकी हँडियाँ खाली होने लगेगी और हमारे वैभवका कलश भरकर ऊपरकी ओर उठने लगेगा। सज्जनो! शीघ्र ही ऐसा प्रबन्ध हो जायगा कि जिससे यवन हमारे पवित्र देवमन्दिरोंको स्पर्श तक न कर सकें, हमें जबरदस्ती मुसलमान न बना सके और हम लोग स्वतन्त्रतापूर्वक अपने धर्म्मका पालन कर सकें। स्वतन्त्रता-प्रेमी बुन्देलोंके नेता शीघ्र ही विजयी होंगे। परतन्त्रताराक्षसी और स्वतन्त्रतादेवीका भीषण युद्ध होगा और बुन्देलखड अपने नैसर्गिक और ईश्वर-दत्त अधिकार प्राप्त करेगा।"

कई नागरिकोंने अधीर होकर कहा,—" प्रभो! हम लोगोंने दृढ निश्चय कर लिया है कि बुन्देलखडकी स्वतन्त्रताके लिए लड़ेंगे, लेकिन इस समय आप यह

उपाय बतलाइए जिससे भगवान् चतुर्भुजकी मूर्ति और मन्दिरकी रक्षा हो। आप हमें वह युक्ति बतलाइए जिससे हमारे देव-मन्दिर विध्वस होनेसे बचें। हम लोग अपने प्राणोंकी भी परवा न करके वह उपाय करेंगे।"

इस पर एक युवक नागरिक बोल उठा,—"यदि आप विधर्म्मी यवनों पर तलवार चलानेके लिए कहें तो जब तक यहाँके उपस्थित बुन्देलोंमेंसे एकके भी शरीरमें प्राण रहेंगे और जब तक मन्दिरका सारा आँगन लहूसे भर न जायगा तब तक रणदूलहखाँ या उसका कोई सिपाही मन्दिरमें प्रवेश न कर सकेगा।"

एक दूसरे नागरिकने आवेशमें आकर कहा,—"स्वतन्त्रताका युद्ध आजसे ही आरम्भ होने दीजिए। भगवान् चतुर्भुजके मन्दिरकी रक्षासे ही स्वतंत्रताके युद्धका मगलमय आरम्भ होने दीजिए, इसका अन्त भी परम मगल-कारक ही होगा, हम अवश्य विजय प्राप्त करेंगे।"

प्राणनाथ प्रभुने गम्भीर होकर कहा,—"मैं आज ही युद्ध आरम्भ करनेकी सलाह तुम लोगोंको कभी न दूँगा। इस समय सारे बुन्देलखडमें लोग यवन-सत्ताको नष्ट करनेके लिए हाथमें तलवार लिये सब तरहसे तैयार हैं। जहाँ जहाँ मैंने लोगोंको उपदेश दिया वहा वहाँ लोगोंने इसी प्रकार अधीर होकर मुझसे प्रश्न किये और स्वावलवनके लिए तत्परता दिखलाई, लेकिन सभी जगह मुझे यही कहना पड़ा कि तुम लोग कुछ समय तक और ठहरो, जब तक तुम लोगोंका नेता लौटकर बुन्देलखडमें न आ जाय तबतक धीरज धरो। महेवाके छत्रसाल ही तुम लागोंके नायक और पथ प्रदर्शक होनेके लिए सब प्रकारसे योग्य हैं। लेकिन इस समय वे यहाँ नहीं हैं। इसी सम्बन्धके एक महत्त्वपूर्ण कार्य्यके लिए वे दक्षिण गये हैं, वह कार्य्य करके वे शीघ्र ही लौट कर यहाँ आ जायँगे। तब तक तुम लोगोंको यह सब अपमान सहकर चुपचाप बैठे रहना चाहिए।"

ओडछेके नागरिकोंको जितना आनन्द यह सुनकर हुआ कि चम्पतरायके पुत्र छत्रसाल स्वतन्त्रताप्राप्तिके कार्य्यमें हम लोगोंके नायक होंगे उतना ही उद्वेग और दु ख उन्हें यह जानकर हुआ कि अभी हम लोगोंको चुपचाप बैठे रहना पड़ेगा और भगवान् चतुर्भुजका मन्दिर अपनी आँखोंसे नष्ट होता हुआ देखना पडेगा। उनमेसे कुछ लोग असन्तुष्ट होकर बोले,—

"प्रभो! कृपा कर आप हम लोगोंको चुपचाप बैठे रहनेका उपदेश मत दीजिए। हमारे शरीरमें जबतक एक बूँद भी रक्त रहेगा तबतक हमारी शक्ति

ऐसा उपाय करनेमें ही लगी रहेगी जिससे मुसलमानोंका मन्दिरमें प्रवेश न हो। वह देखिए। सामनेसे धर्मान्ध यवन असुर शस्त्रोंसे सुसज्जित होकर इसी ओर चले आ रहे हैं! बोलो, श्री चतुर्भुजमहाराजकी जय!"

रणोत्साह-पूर्वक गरजते हुए ओडछेके नागरिक रणदूलहखॉ और उनके सैनिकों पर आक्रमण करनेके लिए तैयार हो गये। उनकी यह तैयारी देखकर प्राणनाथप्रभु बहुत ही चिन्तित हुए। उन्होंने कहा,—"ठहरो! ठहरो! ऐसा अविचार न करो। इन सशस्त्र यवनसैनिकोंके सामने तुम लोग न ठहर सकोगे। याद रक्खो, तुम लोग नि शस्त्र हो। यह भी मत भूलो कि तुम लोगोंका कोई नेता या मार्गदर्शक नहीं है। व्यर्थ अपने प्राण देनेके लिए तैयार मत हो। पहले यह समझ लो कि तुम्हारे इस अविचारका दुष्परिणाम केवल ओडछा नगरीको ही नहीं बल्कि सारे बुन्देलखडको भोगना पडेगा, और तव आगे पैर बढाओ।"

लड-भिडकर मुसलमानोंको मन्दिरमें घुसनेसे रोकनेके लिए जो लोग तैयार हुए थे वे प्रभुके आज्ञानुसार बडे ही कष्टसे चुपचाप जहॉके तहाँ खडे रह गये। उन्हें कुछ चिन्तित और कुछ शान्त देखकर प्रभुने कहा,—

"सज्जनो! यह बात ठीक है कि आज तुम लोगोंपर बडा भारी अत्याचार हो रहा है, लेकिन यही अत्याचार तुम्हारे अशुद्ध मनको पश्चात्तापकी आगसे तपाकर उज्ज्वल करेगा और धर्म्म तथा राष्ट्रसम्बन्धी कर्त्तव्योंका पालन करनेके लिए उसे उत्साहित करेगा।"

प्राणनाथप्रभु यह बात कह ही रहे थे, इतनेमें बहुतसे यवन सैनिक वहाँ आ पहुँचे और स्वतन्त्रतापूर्वक इस आशासे इधर उधर घूमने लगे कि इतने उपस्थित लोगोंमेंसे कोई हम लोगोंका प्रतिबन्ध, प्रतिकार या विरोध करेगा और तब हम लोगोंको सारे नगरमें लूटपाट करने और उत्पात मचानेका अच्छा अवसर मिलेगा। जिस स्थानपर स्वय कभी विना शुद्ध और पवित्र हुए न जाते थे, जिस स्थानको स्वय बिना स्नान किये कभी स्पर्श न करते थे, उसी स्थानपर शराबमें बेहोश यवनोंको जूते पहने घूमते देखकर ओडछेके प्रत्येक नागरिकका मन तलमलाने लगा। अपने पवित्र मदिरका यह अपमान उनसे सहा न जाता था। उनके चेहरेपर क्रोध, सन्ताप और जोशके स्पष्ट प्रतिबिंब दिखाई पडते थे। उनके होंठ फडकने लगे, उनकी ऑखें लाल हो गईं, उनके हाथोंकी मुट्ठियाँ ऐंठने लगीं। इन सब बातोंको देखकर प्राणनाथप्रभुने कहा,—

"सज्जनो! धैर्य्य धरो! धैर्य्य धरो! यह अवसर यवनोंपर आक्रमण करनेका नहीं है। अपनी वीरता और आवेशका व्यर्थ नाश मत करो। शीघ्र ही बुन्देलखडको तुम्हारे इस रणोत्साह और आवेशकी आवश्यकता पडेगी। शीघ्र ही वह समय आवेगा जब कि युद्धमें लडकर मरनेवालेका जीवन ही सार्थक समझा जायगा। अभी बुन्देलखण्ड पूरी तरहसे तैयार नहीं है। विश्वास रक्खो कि यदि तुम लोग अभी यवनोंसे भिड जाओगे तो विजय-श्री तुम लोगोंकी तरफ झाँकेगी भी नहीं, अभी तुम लोग शान्त रहो। तुम्हारे इस निष्कारण आत्म-यज्ञसे भगवान् चतुर्भुज प्रसन्न न होंगे।"

इतनेमें एक मत्त यवन-सैनिकने आगे बढकर बडे ही उजड्डपनसे प्राणनाथ प्रभुसे कहा,—"अरे ओ! तू कौन है और क्यों तूने यहाँ इतनी भीड़ लगा रक्खी है? तू बडा भारी बागी मालूम होता है और लोगोंको शाहशाह आलमके बरखिलाफ भडकाता है। सच सच बतला तू कौन है और अभी इन लोगोंसे क्या कह रहा था?"

प्राणनाथप्रभु एक शब्द भी न बोले। वे गम्भीरता और शान्तिपूर्वक खडे रहे।

प्रभुका वह गम्भीर और शान्त भाव देखकर वह यवन सैनिक मनहीमन बहुत कुढा और तलवार खींच कर यह कहता हुआ उन्हें मारनेके लिए आगे बढा,—"ओ कम्बख्त! म तुझसे सवाल करता हूँ और तू चुप रहकर मुझे अपनी शेखी दिखलाता है? ठहर! मैं मुझे इस शेखी, शरारत और बागावतका कैसा मजा चखाता हूँ।"

इस पर प्राणनाथप्रभुने गम्भीरता-पूर्वक कहा,—

"जब तक बुन्देलखण्डसे मुसलमान निकल न जायँ, जब तक यह देश स्वतंत्र न हो जाय, तब तक मैं कभी मर नहीं सकता। तू मेरे पास मत आ, वहीं दूर खडा रह। तेरे जैसे नीच शराबियोंको मैं नहीं छूता। (डपटकर) तू दूर ही खडा रह।"

प्राणनाथप्रभुकी बातोंमें न जाने कौनसा जादू भरा था जिससे वह यवन सचमुच दो कदम पीछे हट गया। उसे पीछे हटते देखकर ओडछेके निवासियोंने प्राणनाथप्रभुका प्रचण्ड जयजयकार किया। इसपर उस यवनने जो वास्त-

बने स्वय रणदूलहखाँ था, कुछ चिढकर अपने पास ही खडे हुए एक आदमीसे कहा,—

"ओ कासिम! देख, इस बागीकी खबर लेनेके लिए फिदाईखॉ अपनी फौज लेकर आता होगा। तू फौरन् जा और उसे अपने साथ लेकर जल्दी आ। उससे कह देना कि बागी गोसाई परानाथ पकडा गया। जा जल्दी कर। (प्राणनाथप्रभुकी ओर मुडकर) ओ गोसाई! तू फौरन् इन लोगोंको यहाँसे हटा दे, नहीं तो मैं अभी तेरे सामने ही इन सबको कत्ल करवा दूँगा।"

ओडछेके नागरिकोंसे प्राणनाथप्रभुका यह अपमान सहा न गया। वे रणदूलहखाँकी बोटी बोटी काटनेके लिए उसपर टूटना ही चाहते थे पर प्रभुने सकेत करके बडी कठिनतासे उन लोगोंको रोका, पर स्वय उसकी बातोंका कोई उत्तर नहीं दिया।

थोडी ही देरमें बहुतसे हथियारबद मुसलमान सिपाहियोंको साथ लिये हुए फिदाईखा वहाँ पहुँच गया। उसे देखते ही फिर बडे क्रोधमें आकर रणदूलहखॉने प्राणनाथ प्रभुसे कहा,—

"ओ गोसाई! मैंने सुना है कि तू सारे बुन्देलखडमे बगावत फैलाता फिरता है और लोगोंको शाहशाह आलमके बरखिलाफ भडकाता है। इस लिए मैं चाहता हूँ कि तेरी जिन्दगीका खातमा कर दिया जाय।"

प्राणनाथप्रभुने बहुत ही शान्त भावसे कहा,—"लेकिन यह तो मैं तुझसे पहले ही कह चुका हूँ कि जब तक बुन्देलखडसे मुसलमानोंको बाहर न निकाल दूँगा तब तक मैं नहीं मर सकता।"

रण०—"तेरी क्या मजाल जो तू मेरी मरजीके खिलाफ जीता बच सके। फिदाईखॉ! फौरन इस नाबकारकी गरदन उडा दे।"

लेकिन प्राणनाथ प्रभुका तेजस्वी चेहरा देखकर फिदाईखॉको उनपर हाथ छोडनेकी हिम्मत न हुई। उसने अपने एक सरदारकी ओर देखते हुए कहा,—"हैदरखाँ! तलवारके एक ही हाथसे इस गोसाईका सिर धडसे अलग कर।"

रणदूलहखॉने जो काम फिदाईखाको सौंपा था, वही जब उसने हैदरखॉपर छोड दिया तब प्राणनाथ प्रभु मुसकरा पडे।

प्रभुका मुस्कराता हुआ पर गम्भीर मुख देखकर हैदरखाँने अपने एक साथीसे कहा,—

" मुहम्मदखॉं ! बगलें क्यों झॉंक रहे हो ? खॉं साहबका हुक्म बजा लाओ और इस काफिरकी गरदन भुट्टेकी तरह उडा दो । "

बेचारा मुहम्मदखॉं बहुत घबराया । वह किससे कहने जाता । इस लिए लाचार होकर उसने हैदरखॉंसे ही कहा,—

" क्या खूब ! आपकी मौजूदगीमें और मैं एक बागी काफिरकी गरदन उडाऊँ ? वल्लाह ! मुझसे तो यह गुस्ताखी हरगिज न होगी । आप जरा भी पसोपेश न करें और एक ही हाथ ऐसा चलावें कि इस बद-बख्तकी गरदन जमीनपर कलाबाजियॉं खाती नजर आवे । "

हैदरखॉंसे और कुछ तो करते धरते न बन पड़ा, उसने फिदाईखाँकी तरफ देखकर कहा,—

" जनाब ! ऐसे बडे बड़े बागियोंको मारना आप ही जैसे सरदारों और सूरमाओंका काम है । ये बेचारे मामूली सिपाही कब ऐसी हिम्मतका काम कर सकते हैं ? "

इसपर फिदाईखॉं चुपचाप रणदूलहखॉंका मुँह ताकने लगा । रणदूलहखॉंने समझ लिया कि प्राणनाथ पर हाथ चलाना मामूली काम नहीं है । इस बातसे यद्यपि वह मनहीमन बहुत कुढा था, तथापि वह किसीसे कुछ कह न सका । उसने सोचा कि जिस आदमी पर हाथ चलानेकी खुद मेरी ही हिम्मत नहीं पडती उसे मामूली सरदार और सिपाही क्या मार सकेंगे । जबसे वह चम्पतरायकी कैदसे छूटा था तबसे निरपराध हिन्दुओंकी गरदनें काटना ही उसने अपना सिद्धान्त बना लिया था । तलवारके एक ही एक वारसे उसने अबतक बहुतेरे हिन्दुओंके सिर काटे थे और इस कामका उसने बहुत अच्छा अभ्यास कर लिया था पर तो भी प्राणनाथ प्रभुपर हाथ छोडनेकी उसकी हिम्मत न होती थी और इसी लिए वह मनहीमन बहुत कुछ लज्जित भी हुआ था । बड़ी कठिनतासे उसने खूब हिम्मत की, होंठोंको दॉंतोंसे खूब कसकर दबाया, अपनी मुद्रा खूब उग्र की, सारे शरीरका बल एकत्र किया और आगे बढकर प्राणनाथप्रभुपर वार करनेके लिए हाथ उठाया । लेकिन प्राणनाथप्रभुने प्रति-

कारका कोई आयोजन न किया और वे शान्तभावसे पर्वतकी भाँति अटल होकर खड़े रहे। प्रभुका संकेत पाकर सब नागरिक भी ज्योंके त्यों चुपचाप खड़े रहे। ज्यों ही उसने हाथ उठाकर प्रभुपर वार करना चाहा त्योंही एक ओरसे तीरकी तरह एक सुन्दरी बाला वहाँ आ पहुँची और रणदूलहखाँका हाथ पकड़कर बोली,—

"रणदूलहखाँ! तुम यह क्या गजब कर रहे हो? तुम जानते नहीं, ये बुजुर्ग कौन हैं? खबरदार आइन्द कभी ऐसा काम न करना।"

बहुत ही क्रोधमें आकर रणदूलहखाँने उस बालाका हाथ झटक दिया और कहा,—

"ओ नादान! तू कौन है? क्यों तेरी शामत तुझे यहाँ खींच लाई है? चल, दूर हट। नहीं तो पहले यह तलवार तेरे ही खूनसे अपनी प्यास बुझाएगी।"

वह बाला हँसती हुई बोली,—

"रणदूलहखाँ! जरा होशमें आओ। आँखें खोलकर पहले अच्छी तरह देख लो, मैं कौन हूँ, तब इस तरहकी फजूल बातें करना।"

इस समय नगरनिवासी समझ रहे थे कि प्रभुकी रक्षा करनेके लिए स्वयं कोई देवी चलकर आई है। प्राणनाथ प्रभुको भी यह जाननेकी बहुत उत्कंठा हुई कि मेरे लिए इतना कष्ट करके यहाँ आनेवाली यह बाला कौन है। सब लोग आश्चर्यसे उस सुकुमार बालाकी ओर देखने लगे।

रणदूलहखाँने उस बालाकी ओर देखकर कहा,—"मालूम होता है कि यह लड़की पागल हो गई है या कमसे कम इसे अपनी जान भारी पडी है। मैं फिर भी तुझसे कहता हूँ कि अगर तुझे अपनी जान प्यारी हो तो फौरन् मेरे सामनेसे हट जा। नहीं तो एक ही हाथमें मैं तेरा काम तमाम कर दूँगा।"

बालाको कुछ अधिक आवेश आ गया। उसने तेज होकर कहा,—"ओ नाबकार! होशमें आ और आँखें खोलकर देख, मैं कौन हूँ। शाहजादी बदरुन्निसा तुझे हुक्म देती है कि तू फौरन् यहाँसे अपने सिपाहियोंको लेकर निकल जा।"

शाहजादी बदरुन्निसाका नाम सुनते ही रणदूलहखाँको मानो काठ मार गया। काटो तो खून नहीं। उसका चेहरा पीला पड गया और वह थर थर काँपता

हुआ हाथ जोड़कर शाहजादीके सामने खड़ा हो गया। मारे भयके उसके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। शाहजादीने उसे पैरोंसे ठुकराकर कहा,—

" पहले तू उन्हीं महात्मासे माफी माँग। अगर उन्होंने तुझे माफ कर दिया तो मैं भी तुझे माफ कर दूँगी।"

रणदूलहखाँने शाहजादीकी आज्ञाका यथावत् पालन किया। प्रभुने भी बड़ी प्रसन्नतासे उसे क्षमा कर दिया। जब वह अपने सिपाहियोंके साथ वहाँसे चलने लगा तब बदरुन्निसाने उससे कहा,—

" देखो! तुम शाहशाह देहलीके नमकख्वार हो। तुम्हें कोई ऐसा काम न करना चाहिए जो हजरत सलामतकी बदनामीका बाइस हो। सलतनतका सारा दार-मदार रिआया और वह भी खास कर हिन्दू रिआया पर है। इसके अलाव हिन्दू हमेशहसे वफादार और सच्चे होते आये हैं। इनके साथ कभी कहीं जुल्म न करना। जहाँ इनके साथ अच्छा सलूक और उम्द बरताव किया जायगा वहाँ ये पानीकी जगह अपना खून बहानेके लिए तैयार हो जायँगे। इन्हें सताना या इनके मजहबी मामलोंमें दखल देना बड़ी भारी नादानी है। अगर इनके साथ अच्छा बरताव किया जायगा तो ये कभी तुम्हें किसी तरहकी तकलीफ न पहुँचावेंगे, हमेशह तुम्हारी मदद करेंगे और सलतनतमें अमन कायम रक्खेंगे। और अगर ये कहीं बिगड गये तो हिन्दुस्तानमें सलतनत-इसलामका खातमा ही समझना। साथ ही यह भी याद रखना कि जालिमपर खुदाका कहर पड़ता है। नाइन्साफी और जुल्म खुदाको कभी पसन्द नहीं है। तुम्हारे इन जुल्मोंसे हजरत-सलामतकी भी बदनामी होती है। खबरदार! आइन्द कभी ऐसा काम न करना जिससे तुम दोनों जहानमें गुनहगार बनो। जाओ, अपना काम करो।"

रणदूलहखाँ अपने सिपाहियोंको साथ लेकर चुपचाप वहाँसे चल दिया। चलते समय उसने पहले शाहजादीको और तब प्राणनाथप्रभुको कई बार झुककर फर्शी सलाम किया था। सब नगरनिवासी भी इस अकल्पित रीतिसे चतुर्भुजके मन्दिर और प्राणनाथप्रभुकी रक्षा होते देखकर परमात्मा और बदरुन्निसाको धन्यवाद देते हुए, प्रभुकी आज्ञा पाकर वहाँसे अपने अपने घर चले गये। इसके बाद उस दिन और कोई विशेष बात नहीं हुई।

ब्याहकी तैयारियोंमें फँसी हुई हीरादेवीको यह जानकर आश्चर्य हुआ कि अभी तक चतुर्भुजका मन्दिर गिराया नहीं गया! इतनेमें उसने सुना कि रणदूलह-

खाँकी सवारी लौटकर आ गई । उसका आश्चर्य और भी वढ गया । जब उसे यह मालूम हुआ कि स्वय शाहशाह औरगजेवकी कन्याने मेरी राजधानीमें पहुँचकर चतुर्भुजका मन्दिर नष्ट होनेसे बचाया तब उसे अपने चुपचाप बैठे रहने पर बडी लज्जा आई । तो भी उसने यह सोचकर अपना समाधान कर लिया कि छत्रसालका विनाश करके मै मुसलमानोंके इस अत्याचारको रोकनेका प्रबन्ध करूँगी । इससे अधिक उसने कुछ और सोचने समझनेकी आवश्यकता न समझी और वह फिर अपने लडकेके व्याह और वरातकी तैयारियोंमें लग गई ।

* * *

विन्ध्यवासिनीके ध्यानमें एकाग्र चित्तसे मग्न रहनेके कारण प्राणनाथप्रभुको यह भी पता न लगा कि कव आधी रात बीत गई । ध्यान विसर्जन करनेके बाद जब उन्होंने सामने देखा तब उन्हें जान पडा कि सूर्य्य भगवान्‌की कडी अमलदारी खतम हो गई और रजनीनाथका शीतल राज्य बहुत देरसे आरम्भ हो चुका है । उन्होंने देखा कि सवेरे हमारे सामने जितने लोग एकत्र थे वे सब हट गये, चतुर्भुज भगवान्‌का मन्दिर ज्योंका त्यों है और प्रत्यक्ष विन्ध्यवासिनी हाथ जोडकर उनके सामने खडी है ! उन्हें बहुत ही आश्चर्य्य हुआ । पहले तो उनकी समझमें यह बात न आई कि विन्ध्यवासिनीकी मनोज्ञ मूर्ति चित्रकूटवाला अपना मन्दिर और दिव्य आयुध छोडकर यहाँ क्यों चली आई और उच्च आसनपर बैठकर भक्तोंसे सेवा करानेवाली देवी हाथ जोडकर इतने नम्र-भावसे मेरे सामने क्यों आ खडी हुई । वे विनय-पूर्वक उस मूर्तिसे कहना ही चाहते थे कि,—" जगन्माते विन्ध्यवासिनी ! इस दासके लिए तुम्हारी क्या आज्ञा है ? " पर इतनेमें ही कुछ ध्यानसे देखकर उन्होंने पहचान लिया कि सामने शाहजादी बदरुन्निसा खडी है । ध्यानस्थ होनेसे पहलेके सब चित्र उनकी मानसिक दृष्टिके सामने फिर गये । तब वे उस बालाके उच्च और उदार आशयोंकी प्रशसा करते हुए बोले,—

" कोयलेकी खानमें जिस प्रकार हीरा निकलता है, कटकमय जगलमें जिस प्रकार गुलावका सुन्दर फूल फूलता है अथवा तरह तरहके भीषण जीवोंसे युक्त समुद्रमें जिस प्रकार बढिया आवदार मोती निकलता है ठीक उसी प्रकार असुरोंके कुलमें तुम देवी उत्पन्न हुई हो, तुम्हारे असाधारण गुण अवश्य ही देवि-

योंके गुणोंके से हैं। मैं तो अभी तुम्हें भ्रमसे देवी समझ कर ही सम्बोधित करनेको था। असुरोंके गुरु शुक्राचार्य्यको भी तुम्हारे ही समान देवयानी नामक एक अद्वितीय कन्या-रत्न मिला था। कहते हैं, श्री रामचन्द्रजीकी पत्नी सीता-देवी भी लंकाके रावणकी ही कन्या थीं। भला यह तो बतलाओ, तुम इस प्रकार हाथ जोड़े कबसे खड़ीं हो ?"

बद०—"जबसे प्रभु ध्यानस्थ हुए तभीसे।"

प्रभु०—"क्या इतने कोमल पुष्पको मैंने लगातार चार पहर तक खड़ा रक्खा ? सुकुमारी, तुम्हारे कोमल चरण दुखने लगे होंगे। बैठ जाओ और मुझे बतलाओ कि तुम्हारी इस कठिन तपश्चर्य्याका क्या कारण है ?"

प्रभुकी आज्ञा पाकर बदरुन्निसा जमीन पर बैठ गई और बहुत ही नम्रता-पूर्वक बोली,—"प्रभो ! आप ज्ञानी और सर्वज्ञ हैं। वर्त्तमान कालके भारी परदेकी आडमें छिपा हुआ भविष्यकाल आपको अपनी दिव्यदृष्टिके कारण स्पष्ट दिखाई पड़ता है। मैं आपके श्रीमुख और पवित्र वाणीसे केवल यही सुनना चाहती हूँ कि बुन्देलखड कब स्वतंत्र होगा।"

प्रभु०—"न तो मैं दिव्य दृष्टिवाला ही हूँ और न मुझे अन्तर्ज्ञानी होनेका ही अभिमान है। तथापि बुन्देलखंडकी प्रजाके मनकी स्थितिका मैंने ध्यान-पूर्वक अवलोकन किया है, इस लिए मैं कह सकता हूँ कि बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताका दिन अब दूर नहीं है। लेकिन दिल्लीपतिकी कन्याको बुन्देलखडकी स्वतंत्रताकी इतनी चिन्ता क्यों है ? उसके स्वतत्र होनेका समय जाननेके लिए ही उसे चार पहर तक खड़े रहनेकी क्या आवश्यकता थी ?"

बद०—"मेरे ऐहिक जीवनका सुखमय या दु खपूर्ण होना पूर्ण रूपसे बुन्देखंडकी स्वतंत्रतापर ही अवलबित है। प्रभो ! क्या कभी मैं बुन्देलखडको स्वतंत्र देख सकूँगी ?"

प्रभु०—बहुत ही शीघ्र, प्राय चार महीनेके अन्दर ही बुन्देलखडसे यवनोंकी सत्ता उठ जायगी और यहाँके निवासी स्वतंत्र हो जायगे। दिल्लीपतिका बल बहुत अधिक है इस लिए वे बुन्देलोंकी स्वतत्रता नष्ट करनेके लिए कोई बात उठा न रक्खेंगे। पर तो भी जहाँ एक बार बुन्देले स्वतत्र हुए और उन्हें स्वतत्रताका चसका लगा तहाँ फिर कोई उनकी स्वतत्रता छीन न सकेगा।

बुन्देलखडकी प्रजाको मैंने स्वतन्त्रता प्राप्तिके प्रयत्नके लिए तैयार कर लिया है। बड़े बड़े सरदारों और राजाओंके पुत्रोंको छत्रसालके पक्षमें मिलानेके लिए सागरके युवराज दलपतिराय सारे बुन्देलखडमें घूम रहे हैं। चम्पतरायके स्वर्गवासी हो जानेके कारण सब लोगोंने अपना वह पहला द्वेष भुला दिया है जो किसी समयमें चम्पतराय और उनके उद्देश्य और कार्य्यके प्रति उनके मनमें था। यही कारण है कि छत्रसालके स्वतन्त्रताका झडा खडा करते ही सभी राजकुमार और सरदारोंके पुत्र उसके नीचे एकत्र होनेके लिए तैयार हैं। यही नहीं बल्कि दलपतिरायका यहाँ तक कहना है कि हीरादेवी और उनके भक्त कबुकीराय सरीखे दो चार लोगोंको छोडकर बाकी सभी राजे सब प्रकारसे छत्रसालकी सहायता करने और बुन्देलखंडको स्वतन्त्र बनानेके लिए तैयार हैं। हीरादेवीके पुत्र विमलदेवको समझा बुझाकर अपने पक्षमें लानेके लिए दलपतिराय आज यहाँ आनेको ही थे। विमलदेवसे मिलकर वे यहाँ आनेवाले थे पर न जाने क्यों वे अभी तक नहीं आये।"

बदरुन्निसाने प्रसन्न होकर पूछा,—"क्या सागरके युवराज अभी यहीं आनेवाले हैं?"

प्रभु०—"हाँ, सम्भवत वे अभी आते ही होंगे, लेकिन तुम्हारी उनके साथ कहाँकी जान पहचान है?"

बदरुन्निसाके मुखपर लज्जाकी लाली छा रही। वह कुछ ठहरकर बोली,—"उनके साथ मेरी जितनी जान पहचान है उतनी त्रिभुवनमें और किसीके साथ नहीं है।"

प्राणनाथप्रभुको बहुत ही आश्चर्य हुआ। वे कुछ कहना ही चाहते थे कि इतनेमें युवराज दलपतिराय वहाँ पहुँच गये और उन्होंने प्रभुके चरणोंपर अपना सिर रख दिया। उन्हें बडे प्रेमसे उठाते हुए प्रभुने पूछा,—"दलपति! इस बालाको तुम पहचानते हो?"

बहुत दिनोंपर आज दोनोंकी आँखें चार हुई थीं। बदरुन्निसाको अचानक वहाँ देखकर दलपतिरायको बहुत ही आश्चर्य हुआ और दलपतिरायके दर्शनसे बदरुन्निसाकी प्रसन्नताका ठिकाना न रहा। जब दलपतिरायका आश्चर्य कुछ कम हुआ तब उन्होंने कहा,—

" मैं जितना इस बालाको पहचानता हूँ उतना त्रिभुवनमे और किसीको नहीं पहचानता।"

लेकिन दलपतिराय और बदरुन्निसाकी गूढ बातोंका कुछ भी अर्थ प्राणनाथ-प्रभुकी समझमें न आया। उन्होंने सरल भावसे कहा,—

" ऐसी देवीसे जान पहचान होना बडे सौभाग्यकी बात है। आज सवेरे रणदूलहखॉ यह मन्दिर और मूर्ति तोड़नेको था और मेरे प्राण लेना चाहता था, लेकिन इसी उदार बालाने बीचमें पडकर इस मन्दिरकी और मेरी रक्षा की। यह बाला अपने आपको दिल्लीपतिकी कन्या बतलाती है पर अपने सद्-गुणोंके कारण यह बुन्देलखडके अच्छे अच्छे घरानोंकी राजकुमारियोंको भी लज्जित करती है। इसके निष्कलक सौन्दर्य्य और सद्गुणोंको देखते हुए यही मालूम होता है कि यह साधारण बाला नहीं बल्कि असाधारण देवी है। दल-पति! यह बुन्देलखडके परम शत्रुकी कन्या होकर भी इस चिन्तामें है कि बुन्दे-लखंड कब स्वतत्र होगा। इसके सद्गुणों और सत्काय्योंको देखकर शका होती है कि यह शुक्राचार्य्यके घर जन्म लेकर देवताओंके न्यायपक्षके लिए लडनेवाली देवयानी अथवा लकाके रावणसे उत्पन्न होकर असुरोंके नाशमे सहायता देने-वाली सीता तो नहीं है?"

दलपतिराय भला ऐसा सुयोग कब जाने देते, उन्होंने चट कहा,—" प्रभो! असुर कन्यका देवयानीने सुर-पुत्र कचके साथ अपना पाणिग्रहण करानेका प्रयत्न किया था और सीतादेवी तो श्री रामचन्द्रजीकी पत्नी बनकर तीनों लोकमें धन्य ही हो गई थीं। यदि उसी प्रकार यह यवनकन्या भी किसी बुन्देले राजकुमारसे परिणीत होना चाहे तो उसमें इसका कोई अपराध तो न होगा?"

प्रभु०—" आजकलके अधिकाश यवन युवक नैतिकदृष्टिसे प्राय बिलकुल ही पतित होते हैं, इस बालाके पवित्र मन, मगल विचारों और बहुत ही कोमल अन्त करणको देखते हुए इसके लिए कोई योग्य हिन्दू युवक ही बहुत अनुरूप पति होगा।"

बदरुन्निसाने गद्गद स्वरसे पूछा,—" प्रभो! यदि उच्च कुलका कोई हिन्दू युवक मुझे ग्रहण करनेका वचन दे तो उसका यह कार्य्य नैतिकदृष्टिसे निन्दनीय तो न होगा?"

प्राणनाथप्रभुने आवेशमें आकर कहा,—"बदरुन्निसा! तुम पवित्रता, मांगल्य और नीतिकी साकार मूर्ति हो। तुम्हें ग्रहण करके देवलोकके देवता भी धन्य होंगे। तब फिर मनुष्योंका तो पूछना ही क्या है? वह कौन ऐसा भाग्यवान् बुन्देला है जो तुम्हें ग्रहण करनेके लिए तैयार है?"

बदरुन्निसा लज्जा-युक्त भावसे दलपतिरायके चरणोंकी ओर देखने लगी।

इतनी देर बाद प्राणनाथप्रभु पर सब बातें खुलीं। उनकी समझमें सब पहेलियाँ आ गईं। पहले उनका मन कुछ घबराया, तब चंचल हुआ और अन्तमें विचारमें पड गया।

दलपतिरायने भी सोचा कि अब प्रभुको पूरी तरह विचार करनेका अवसर देना चाहिए। इस लिए उन्होंने कहा,—

"प्रभो! छत्रसाल शीघ्र ही बुन्देलखडमें आ पहुँचेंगे। राजा जयसिंहकी सेना छत्रसालके पराक्रमके कारण विजयी होकर दिल्ली लौट गई। राजा जयसिंहजीसे मुझे मालूम हुआ है कि महात्मा शिवाजीसे भेंट करनेके लिए छत्रसाल दक्षिण गये हैं और शीघ्र ही उनसे भेंट करके वे यहाँ लौट आवेंगे। छत्रसालके यहाँ पहुँचते ही स्वतन्त्रताके लिए युद्ध आरम्भ कर दिया जायगा न? ऐसा प्रयत्न होना चाहिए जिसमें विन्ध्यवासिनीके आगामी महोत्सव तक बुन्देलखडमें स्वतन्त्रताका झडा फहराने लगे।"

प्राणनाथप्रभु प्रमुदित अन्त करणसे झूमने लगे। थोडी देर बाद प्रभु प्रात -स्नान आदिके लिए बेतवा नदीकी ओर निकल गये।

उस समय दलपतिरायने बदरुन्निसासे पूछा,—"शाहजादी! दिल्लीके शाही महलोंका आराम छोड कर तुम बुन्देलखडमें क्यों और कब आई?"

बद०—"यमुनाके किनारे जिस दिन आपसे मेरी बातें हुई थीं, शाही महलोंके आरामसे उससे पहले ही मेरा जी भर चुका था। मैं जो सुख चाहती थी उसे पानेके लिए ही मुझे महलोंका सुख छोडना पडा। मैंने आपसे कहा था कि जहाँतक हो सकेगा मैं आपके काममें मदद दूँगी और उसी कामके लिए मैं लौटकर महलमें गई थी। मैंने मौका पाकर शाहंशाह आलमको बहुत कुछ समझा बुझाकर बुन्देलखडको स्वतन्त्र कर देनेके लिए राजी भी कर लिया था, पर उसी वक्त वे उठकर रोशनआराके महलमें पहुंच गये। वहाँ रोशनआराने उन्हें कुछ ऐसी उलटी सीधी बातें समझाईं कि उनका इरादा फिर पलट गया

और वे पहलेकी तरह बुन्देलों और बुन्देलखंडके दुश्मन बन गये। उसी दिन मेरी सारी उम्मीदें जाती रहीं और मैं महलोंसे निकल खडी हुई तथा आपको ही ढूँढती हुई यहाँतक पहुँची हूँ।"

दलपतिरायने प्रेमपूर्वक कहा,—"तुममें जितनी ज्याद खूबसूरती है उतनी ही ज्याद खूबियाँ भी हैं। लोग कहते हैं कि सोनेमें सुगन्ध नहीं होती। पर मैं देखता हूँ कि तुम सोना भी हो और तुममें सुगन्ध भी है। सोना तुम्हारा रूप है और सुगन्ध तुम्हारी खूबियाँ हैं। अब तुम्हें ना-उम्मेद नहीं होना चाहिए। बुन्देलखंड अब बहुत जल्दी स्वतंत्र हो जायगा। ज्यों ही छत्रसाल बुन्देलखंडमें पहुँचेंगे त्यों ही हर एक बुन्देलेके हाथमें तलवार दिखाई देगी। उस वक्त बातकी बातमें मुसलमानोंकी हुकूमत यहाँसे उठ जायगी।"

बद०—"और तब?"

दल०—"और तब मैं पूरी तरहसे तुम्हारा हो जाऊँगा।"

इसके बाद बहुत देरतक उन दोनोंमें प्रेमालाप होता रहा।

लेकिन अभी हमें उस प्रेमालापसे कहीं बढकर महत्त्वपूर्ण विषयोंकी ओर पाठकोंको ले चलना है।

* *

तेईसवाँ प्रकरण।

शिवाजीसे भेंट।

गिरि कन्दरामें जन्म लेनेवाली भिल्ल-कन्यायें जिस प्रकार अपना सारा जन्म उसी पहाडकी टेकडियोंमें घूम फिर कर ही बिता देती हैं, ऋषि-कन्याओंको जिस प्रकार अपना वन या उपवन छोड़कर और कहीं जाना अच्छा नहीं लगता अथवा विशाल नेत्रोंवाली हरिणी, पतली कमरवाली सिंहिनी, मनोहर गतिवाली हंसिनी या मधुर स्वरवाली कोकिला जिस प्रकार सहसा जन-समुदायमें नहीं जाती, उसी प्रकार हिमालय, विन्ध्याचल, सह्याद्रि जैसे गम्भीर जनकोंके यहाँ जन्म लेनेवाली कन्यायें भी अरण्य-वासमें ही अपना अधिकांश जीवन व्यतीत करती हैं। प्रत्येक पर्वत-कन्या यही समझती है कि मैं अरण्य

वासिनी हूँ, जगली पुष्पोंके सिवा मेरे लिए और कोई अल्कार नहीं है और बाल-सूर्य्यके दिए हुये पीले साल, रजनीनाथके दिये हुए सफेद साल अथवा पतिके परोक्षमें रजनीके दिये हुए काले सालूके सिवा मेरे लिए और कोई वस्त्र नहीं हैं। इस लिए जब वह अरण्य-वासिनी पर्वत-कन्या अपने पतिके पास जाने लगती है तब वह जगह जगह यह देखनेके लिए चक्कर लगाती फिरती है कि युवतियाँ किस प्रकार अपना शृंगार करती हैं। अपने पिता पर्वतके घरसे ससुराल जाते समय प्रत्येक नदी चक्कर लगा कर किसी वस्तीके पास जाती है, वहाँकी स्त्रियोंकी अभिरुचि अपने कोमल मनमें प्रतिबिम्बित करती है और फिर जगलका रास्ता लेती है। जगलमें पहुँचते ही वहाँकी प्राकृतिक शोभा देखकर वह युवतियोंका कृत्रिम शृगार भूल जाती है, फिर दो चार चक्कर लगाकर शृगार-प्रिय युवतियोंको देखनेके लिए वह किसी दूसरी वस्तीमें जाती है और वहाँसे पहलेकी जानी हुई बातोंको भूल जानेके कारण अथवा न जाने क्यों वह फिर जगलका रास्ता लेती है।

बेचारी भीमा बडी ही भोली थी। उसका जन्म भोलेभाले शकरके कुलमें हुआ था। फिर भला उसके भोलेपनका क्या पूछना ? शृगारकी ठीक ठीक शिक्षा पानेके लिए भोली भीमाने कितने चक्कर लगाये थे, नगरकी विलासी स्त्रियोंसे लेकर गाँवकी नीरोग युवतियों तक, लिंबाजी पटेलकी कन्या सुभीसे लेकर शाह-जादी बदरुन्निसा तक उसने कितनी युवतियोंके शृगार देखे थे, इसकी गिनती नहीं हो सकती। जगलमें थोडी दूर जाते ही भोली भीमा सब कुछ भूल जाती थी और फिर शृगारका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए वस्तीकी तरफ बढने लगती थी। भीमामें आवश्यकतासे अधिक शृंगार-लालसा भी थी और जरूरतसे ज्याद भोलापन भी, इस लिए वह सदा गाँवों और शहरोंकी शृगारप्रिय युवतियोंके सहवासमें ही मग्न रहती थी।

बाल-रविका झीना पीला साल पहने हुए भोली भीमा अठलाती हुई लिंबाजी पटेलके मकानके पाससे जा रही थी। लिंबाजीकी एकलौती कन्या सुभी उसके पास ही खडी हुई उसकी चचल चाल देख रही थी। भोली भीमा उसे अपनी योग्य अध्यापिका समझ कर बहुत ही प्रसन्न हुई। पहले उसने सुभीके कोमल चरण छूए जिससे सुभीको भी बहुत आनन्द हुआ, अब वह बडी प्रसन्नतासे भीमाकी सेवा ग्रहण करने लगी। भीमा भी सुभीसे मेलजोल बढाने

लगी। यहाँ तक कि अन्तमें भीमाने सुभीकी कमरमें हाथ डाल दिया। भीमाने समझा कि प्रवाहमें सुभीसे मेरा बहुत काम निकलेगा और वह मुझे शृंगारकी अच्छी तरह शिक्षा देगी, इस लिए उसने अपनी लहरोंसे सुभीको अपने और समीप कर लिया। अपने आनन्दमें भीमाको यह भी न मालूम हुआ कि सुभी घबरा गई है। सुभीको पाकर भीमाको इतना आनन्द हुआ कि उसकी समझमें न आया कि मैं इसे कहाँ रक्खूँ और कहाँ न रक्खूँ, अन्तमें उसने सुभीको अपने उदरमें डाल लिया।

थोडी ही देरमें सारे गाँवमें पुकार मच गई कि भीमाकी भँवरमें पडकर सुभी डूब गई। कोई अपनी जाल लेकर नदीकी तरफ दौड़ा और कोई तूंबे लेकर लपका। सब अपनी अपनी बहादुरी दिखानेके लिए तरह तरहके उपाय करने लगे। नावपर चढकर सुभीका पता लगानेवालोंमें नावपर चढनेसे पहले सुभीको उसके अल्हडपनके कारण मनमाना कोसा और जिसके जीमें जो आया उसने सुभीको वही कहा डाला। बेचारा पटेल अपने दालानमें अलग एक कोनेमें बैठा हुआ रो रहा था। उसे घेरकर बहुतसे लोग खड़े हो गये और लगे फटकारने कि तुम लडकीका जरा भी ध्यान नहीं रखते और उसे मनमाना घूमने देते हो। डूबी हुई लड़कीको किसी तरह निकालनेका प्रयत्न तो कोई न करता था पर अपनी अपनी बहादुरी और समझदारीका बखान सब लोग खूब करते थे। उसी भीडमें खडा हुआ एक तेजस्वी तरुण इन लोगोंका यह तमाशा देख रहा था। जब उसने देखा कि लड़कीको निकालनेका साहस किसीमें नहीं है तो उससे न रहा गया और वह आगे बढकर कहने लगा,—

" इस तरहकी हुज्जत-तकरारका यह समय नहीं है। जैसे हो चटपट लड-कीको निकालनेका प्रयत्न करना चाहिए, नहीं तो थोडी देरमें उसके प्राण निकल जायँगे। तुम लोगोंसे न कुछ हो सकता हो तो मुझे वह जगह बतलाओ जहाँ वह डूबी हो, मैं उसे तुरन्त निकाल लाता हूँ।"

यह कहकर वह तेजस्वी वीर पटेलके दालानसे बाहर निकलने लगा। इतनेमें शिवाजी और दूसरे बहुतसे लोगोंने बडी श्रद्धा और भक्तिसे प्रचण्ड घोष किया,— " श्री शिवाजी महाराजकी जय।" जो युवक सुभीको निकालनेके लिए जा रहा था वह बीचमें ही रुक गया। उसने चकित होकर देखा कि एक बलिष्ठ मराठा एक हाथमें तलवार लिये और दूसरे हाथसे सुभीको सहारा दिये हुए

मुस्कराता हुआ आ रहा है। सिरसे पैर तक उसके सब कपडे भीगे हुए थे जिसमे उसका गठीला और कसा हुआ शरीर अच्छी तरह दिखाई पडता था। उसके बडे बडे और चमकीले नेत्रोंमे भूत-दयाकी अविरत वर्षा हो रही थी, दाढीके कारण उसके प्रसन्नवदनकी गम्भीरता और भी बढ गई थी और उसका प्रशस्त ललाट उसकी अतुल बुद्धिमत्ताकी साक्षी दे रहा था। उस युवकने समझ लिया कि इतने कष्ट सहकर इतनी दूरका मेरा प्रवास करना सफल हो गया, मुझे साक्षात् परमेश्वरके दर्शन हो गये। इस विचारसे उसे हर्ष-रोमाच हो आया और वह झपटकर आगे बढा। अर्जुनने भी जिस भक्ति-भावसे परमात्मा श्रीकृष्णके चरण न छूए होंगे, राजा श्रेणिकने भी जिस भक्ति भावसे महावीर तीर्थंकरका वन्दन न किया होगा, सम्राट् अशोक ने भी जिस भक्ति-भावसे बोधि-वृक्षके नीचे भगवान् गौतम बुद्धकी चरण-सेवा न की होगी, उस विमल भक्ति-भावसे वह युवक शिवाजीके चरणोंपर पड गया।

अपरिचित वेष, अपरिचित भाषा और अपरिचित मुद्राके एक तरुणको इतने प्रेम और भक्तिसे अपने पैरोंपर गिरते देख शिवाजीको बहुत आश्चर्य हुआ और उनके हृदयमें एक अपूर्व भाव उत्पन्न हो आया, उन्होंने गद्गद स्वरसे कहा,—

"अपरिचित युवक! हम लोग एक ही भारत-माताके पुत्र हैं। जगदम्बा भवानी और भारत माताके सामने उसके सब बालक समान हैं। तब भला मेरे चरणोंपर गिरनेकी क्या आवश्यकता है? उठो और मुझसे गले मिलो।"

इतना कहकर शिवाजी दोनों हाथोंसे पकडकर उस युवकको ऊपर उठाने लगे। वह भी अपनी आँखोंके प्रेमाश्रु पोंछता हुआ और सूर्य्यके समान तेजस्वी और चन्द्रमाके समान शीतल, अग्निके समान तेज और जलके समान निर्मल, लोहेके समान कठोर और पुष्पके समान कोमल शिवाजीके रूपकी ओर देखता हुआ नम्रता-पूर्वक बोला,—

"महात्मन्! आपके ही दर्शनोंकी इच्छासे मैं बुन्देलखण्डसे चलकर यहाँ-तक आया हूँ। इतने दिनोंके प्रयत्नका फल मुझे आज मिला है। मैं महेवाके राजा चम्पतरायका पुत्र छत्रसाल हूँ। मेरे देशपर मुसलमानोंका अधिकार हो गया है और, वहाँकी प्रजा उनके उपद्रवों और अत्याचारोंसे बहुत दुःखी हो गई है। मैं उस देशको स्वतन्त्र करना चाहता हूँ और इस सम्बन्धमे आपको अपना

गुरु मानकर मन्त्र लेना चाहता हूँ। आपके सदुपदेशको वेद-वाक्यके समान पवित्र समझकर मै उसीके अनुसार कार्य्य करूँगा। आप गुरु हैं और मैं शिष्य हूँ। गुरुकी चरण-सेवा करना शिष्यका परम कर्त्तव्य है, इसी लिए मैंने आपके चरण छूए। अनुग्रह करके मुझे अपना शिष्य बनाइए और मेरी सेवा स्वीकार कीजिए। यदि हो सके तो मुझे कुछ समयतक अपनी सेवामें रहने दीजिए और मुझे इतना अवकाश दीजिए कि आपके दैनिक कार्य्यों और प्रयत्नों आदिको कुछ समयतक देख कर मैं शिक्षा ग्रहण करूँ। इस प्रकार जब आप मुझे अपने शिष्य होनेका पात्र समझ ले तब मुझे गुरुमन्त्र देकर अपना शिष्य बनावें और प्रसन्न होकर आशीर्वाद दे कि मेरे हाथोंसे बुन्देलखण्ड स्वतन्त्र हो जाय।"

शिवाजीकी आँखोंसे प्रेमाश्रु बहने लगे। सुभीके कन्धेपरसे हाथ उठा कर उन्होंने वह हाथ छत्रसालके कन्धे पर रख दिया और प्रेमपूर्वक कहा,—

"मातृभूमिकी इतने मनोभावसे सेवा करनेवाले भाग्यशाली युवक! महाराष्ट्र देशमें मै तुम्हारा स्वागत करता हूँ। मुझे एक ऐसा मित्र पाकर अवर्णनीय आनन्द हुआ है जिसके उद्देश्य और कार्य्य मेरे उद्देश्यों और कार्योंके समान ही है। तुम थोडी देर यहीं ठहर जाओ, मैं इस लडकीको इसके पिताके सपुर्द करके यहाँसे चलता हूँ। उस समय मैं शान्त होकर एकान्तमें तुमसे बातें करूँगा।"

इतना कहकर शिवाजी आगे बढकर लिंबाजी पटेलके पास पहुँचे और सुभीको उसके सपुर्द करके बोले,—

"लो, यह तुम्हारी लडकी आ गई। यह बडी अल्हड है। अहमदनगरकी चाँदबीबीकी तरह तलवार चलानेमें यह आगा पीछा देखनेवाली नहीं है। दिल्लीके बादशाहके दो सरदार दिलेरखाँ और जयसिंह अपने साथ प्रबल सेना लेकर महाराष्ट्र देश पर आक्रमण करनेके लिए आ रहे हैं। उस समय तुम्हें कमसे कम एक सौ जवानोंको अपने साथ लेकर भगवे झण्डेके नीचे आना चाहिए।"

पटे०—"महाराज! मेरे गाँवमे तलवार चलाने योग्य जितने पुरुष हैं वे सब आज्ञानुसार सेवा करनेके लिए तैयार हैं। हम सब लोगोंका दृढ विश्वास है कि महाराजके मुखसे निकलनेवाला प्रत्येक शब्द जगन्माता भवानीके मुखसे ही निकल रहा है। मनुष्यकी आज्ञा भले ही टाली जा सकती है, पर भगवतीकी

आज्ञा टालनेका सामर्थ्य किसमें है ? महाराज ! कृपाकर गीले वस्त्र उतार डालिए और ये सूखे वस्त्र पहन लीजिए।"

शिवाजीने बिना कुछ कहे सुने तुरन्त अपने गीले कपडे उतार दिये और पटेलके दिये हुए कपडे पहन लिये। इसपर लिंबाजी पटेलने बहुत ही प्रसन्न होकर कहा,—

"लोग जो यह कहा करते हैं कि महाराज निर्धनोंके धन, अनाथोंके नाथ, दुष्टोंके संहारक और गो-ब्राह्मणप्रतिपालक हैं सो वह बिलकुल ठीक है। महाराजके पवित्र चरण मेरी इस कुटियामें आये, इसे मैं अपना बहुत भारी सौभाग्य समझता हूँ। क्या मुझे इतना सौभाग्य प्राप्त हो सकता है कि मैं महाराजका आतिथ्य करूँ और मेरे यहाँ जो कुछ मोटा झोटा अन्न हो उसे मैं महाराजकी सेवामें उपस्थित करूँ ?"

शिवाजीने अभिमानपूर्वक कहा,—"मैं तुम्हारा हूँ और सारे महाराष्ट्रदेशका हूँ। भला, मैं तुम लोगोंकी बात कब अस्वीकृत कर सकता हूँ ? मुझे कुछ आवश्यक और महत्त्वपूर्ण बातें करनेके लिए इस बुन्देलखण्डके युवकके साथ बाहर जाना है। प्रायः दोपहरके अन्दर ही मैं लौट आऊँगा और तुम्हारे इच्छानुसार तुम्हारे यहाँ भोजन करूँगा।"

सब लोगोंका अभिनन्दन स्वीकृत करते हुए जब शिवाजी वहाँसे चलने लगे तब पटेलने कहा,—

"महाराज ! वह बुन्देला युवक कल सन्ध्याको ही यहाँ आया था। अपने सुन्दर मधुर भाषण और पवित्र आचरणके कारण वह हम लोगोंको बहुत ही प्रिय हो गया है। शिवाजी महाराज देखनेमें कैसे हैं, वे कैसे चलते हैं, कैसे बोलते हैं, सब लोग उनके दर्शन कर सकते हैं या नहीं, उन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए पहले क्या किया था, उनके लडनेका ढंग कैसा है, वे किन शस्त्रोंका व्यवहार करते हैं, आदि आदि अनेक प्रकारके प्रश्न उसने आते ही हम लोगोंसे किये थे। महाराजके दर्शनोंके लिए वह इतना आतुर हो रहा था कि सारी रात उसकी आँख ही नहीं लगी। मैं उसे लेकर महाराजकी सेवामें उपस्थित होनेको ही था, लेकिन सुभीके डूब जानेके कारण मुझे रुक जाना पडा था। महाराजकी कृपासे सुभीके प्राण बच गये और उस बुन्देले युवकको अकल्पित रीतिसे महाराजके दर्शन मिल गये।"

इसके बाद फिर शिवाजी महाराजका जयजयकार हुआ। जयजयकारकी प्रतिध्वनि होनेसे पहले ही वे अपने साथ छत्रसालको लेकर वहाँसे चल दिये थे। एक मनचलेने कह दिया कि उस बुन्देले युवकके साथ महाराज देखते देखते जहाँके तहाँ लुप्त हो गये। गाँवके सभी लोग बडी गम्भीर मुद्रासे यह कहते हुए अपने अपने घर चले गये कि भवानीकी कृपा और सहायतासे महाराज जो चाहें सो कर सकते हैं।

महाराज शिवाजी अपने साथ छत्रसालको लेकर धीरे धीरे चलते हुए और स्वतन्त्रता सम्बन्धी बातें करते करते भीमा नदी तक पहुँच गये और उसके किनारे किनारे आगे बढते हुए बहुत दूर तक चलनेके उपरान्त एक ऊँची टेकरीके पास पहुँचे। दूरसे उस स्थानको देखकर इस बातकी कल्पना भी न हो सकती थी कि वहाँ मनुष्योंको रहनेकी जगह हो सकती है। लेकिन ज्योंही शिवाजी महाराजने एक बडी शिलाके पास पहुँचकर आवाज दी—"एसाजी" त्योंही "जी महाराज" सुनाई पडा। वह शिला मानो टूट गई और भीतर जानेके योग्य मार्ग निकल आया। इस पर छत्रसालको बहुत ही विस्मय हुआ। लेकिन वे एक शब्द भी न बोले और चुपचाप शिवाजीके पीछे पीछे उस गुफामें घुस गये। थोडी ही दूर चलने पर उन्हें एक सभामण्डप दिखाई पडा। वहाँ हवा भी खूब आ रही थी और प्रकाशकी भी कमी नहीं थी। पृथ्वीके गर्भमें छिपी हुई इतनी बडी इमारत देखकर छत्रसालके आश्चर्यकी सीमा न रही।

छत्रसालके मनकी स्थिति समझनेमें सारे महाराष्ट्रको अपने शब्द पर चलानेवाले चतुर शिवाजीको देर क्यों लगती? उन्होंने तुरन्त छत्रसालसे कहा,—

"छत्रसाल! यह भव्य सभामण्डप देखकर कदाचित् तुम्हें बहुत आश्चर्य हो रहा है। लेकिन जब तुम्हें यह मालूम होगा कि इस प्रकारके गुप्त स्थानों और गुप्त मार्गोंकी स्वतन्त्रताके कामोंमें कितनी आवश्यकता पडती है तब तुम्हारा आश्चर्य और भी बढ जायगा। महाराष्ट्र देशके सन्तों और महात्माओंने यद्यपि यहाँके निवासियोंको समताका तत्त्व अच्छी तरह समझा दिया था तो भी स्वतन्त्रताके वास्ते लडनेके लिए बहुत ही कम लोग तैयार हुए थे। शूर, चतुर और राजनीतिज्ञ मराठे बहमनी राज्यकी सेवामें लगे हुए थे, इस लिए सबसे पहले जो लोग भगवे झण्डेके नीचे एकत्र हुए वे राजकीय विषयोंसे प्राय बिलकुल ही अनभिज्ञ और अपरिचित थे। महाराज रामदास स्वामीने कर्म-मार्गका उप-

देश करके वहुतसे युवकोंको भगवे झण्डेके नीचे एकत्र किया था। सारे महा-राष्ट्रमें पताकाओंके वदले तलवारें दिखाई पडने लगीं और हरिनामके वदले हर-हर-महादेव सुनाई पडने लगा। लेकिन हम लोगोंने समझ लिया कि अनुभवी यवन सेनाके सामने हम लोग न ठहर सकेंगे, इस लिए हम लोग समय पाकर छापे मारने लगे। मेरे शूर मराठे यद्यपि गिनतीमें वहुत ही कम थे पर तो भी वीजापुरकी प्रवल सेनापर समयपर छापे मारकर वे सदा विजयी होते थे। ऐसे आकस्मिक छापोंके समय लुकने छिपनेके लिए ऐसे गुप्त स्थानोंसे वडा काम निकलता है। गुप्त स्थानोंमें जगह जगहपर रास्ते भी वने हुए हैं, इसलिए आज जिस स्थानपर मराठे अन्तर्धान होंगे उनका किसीको पता भी न लगेगा और वे कल ही वहाँसे दस वीस कोस दूर कहीं जा निकलेंगे। वहुधा हम लोग दो चार छापे डालकर शत्रुको वेकाम कर देते हैं और वहुतसी रसद, गोली-वारूद और लूटका माल लेकर थोडी ही देरमें इसी प्रकारके किसी गुप्त स्थानमें अन्तर्धान हो जाते हैं। इसी लिए हम लोगोंकी तो कोई हानि नहीं होती पर शत्रु वडी ही विपत्तिमें पड जाते हैं। छत्रसाल! अव तो तुम ऐसे गुप्त स्थानोंका उपयोग समझ गये न? राज-स्थानके राजपूत और वुन्देलखडके वुन्देले वडे वीर और लडाके होते हैं, पर वे वलावल और समय असमयका विचार नहीं करते और न दाँवपेंच ही जानते हैं। वे सीधे चलकर शत्रुपर आक्रमण कर वैठते हैं और वहुधा अपने ही नाशका कारण होते हैं। लेकिन जव तक छापे न डाले जायँ तव तक प्रवल शत्रु कभी दवाया नहीं जा सकता।"

छत्रसाल एकाग्र चित्तसे शिवाजीकी सव वातें सुनते रहे। उनका हाथ पक-डकर शिवाजीने कहा,—

"चलो, हम लोग वहाँ चलकर वैठें। मैंने पहलेसे ही निश्चित कर लिया था कि इसी स्थानपर हमारी तुम्हारी वातें होंगी। मैं लिंवाजी पटेलके यहाँ विना कारण नहीं गया था। मैं समझता था कि वहाँ तुमसे भेंट होगी।"

शिवाजीकी ओर भक्ति और आश्चर्यसे देखते हुए छत्रसालने पूछा,—"महा-राज! आपको यह कैसे मालूम हुआ कि मैं आपके दर्शनोंके लिए यहाँ आ रहा हूँ? विशेषत आपको यह कैसे मालूम हो गया कि आपको ढूँढता हुआ मैं इसी गाँवमें पहुँचूँगा? यह आपने किस प्रकार निश्चित किया कि इसी स्थानपर आप मेरे साथ वातें करेंगे?"

छत्रसालके प्रश्नका उत्तर विना दिये शिवाजीने आवाज दी,—" एसाजी जरा इधर आना।"

तुरन्त एसाजी आकर शिवाजीके सामने खडे हो गये। उन्हें देखकर शिवाजीने छत्रसालसे पूछा,—" छत्रसाल! तुमने इन्हें पहले कभी कहीं देखा है?"

छत्रसालने सिरसे पैरतक एसाजीको अच्छी तरह देखकर कहा,—" जी नहीं महाराज! मै इन्हें आज पहले ही पहल देख रहा हूँ।"

इस पर शिवाजीने हँसते हुए कहा,—" जबतक राजधानीमे दिल्लीकी सेनाके मोरचे नहीं लग जाते तबतक राजस्थानके राजाओंको शत्रुकी सेनाका हालचाल ही नहीं मालूम होता। जब तक शत्रुकी सेनाका राजप्रासादमें प्रवेश न हो तब तक बुन्देलखडके राजाओंको यह भी नहीं मालूम होता कि शत्रुने हमारा सारा देश नष्ट करके अपने अधीन कर लिया है। इसका मुख्य कारण यही है कि शत्रुका समाचार पानेके लिए बुन्देले और राजपूत कोई उपाय नहीं करते। या तो वे लोग शत्रुकी छावनीमें गुप्त रूपसे घुसकर उनका पूरा पूरा पता लगाना ही नहीं जानते और या वे इसे अनुचित और कायरताका काम समझते है। लेकिन यह बडी भारी त्रुटि या भूल है। छत्रसाल! मेरे अनेक गुप्त दूतोंमेसे एसाजी एक ऐसे ही गुप्त दूत हैं। मैने इन्हें देवगढका समाचार लानेके लिए भेजा था। देवगढ जीतकर जब विजयी सेना वहाँसे दिल्लीको रवाना हुई तो ये भी लौटने लगे। जब तुम देवगढसे चले तब ये भी भेस बदलकर तुम्हारे साथ ही चले। रास्तेमें भी उन्होंने कई बार अपना भेस बदला था। समय समय पर अनेक रूपोंमे मेरा पता भी इन्हींने तुम्हे बतलाया था।"

अब छत्रसालकी आँखें खुलीं। उन्हे ध्यान आ गया कि देवगढसे चलते समय एसाजीसे मिलते जुलते एक मनुष्यसे उनकी बाते हुई थीं। अब वे समझ गये कि वे एसाजी ही थे। अब उनकी समझमे आ गया कि जहाँ जहाँ मै ठहरता था वहाँ वहाँ क्यों मुझे सब प्रकारका सुभीता होता था। शिवाजीकी ओर कृतज्ञतापूर्वक देखते हुए उन्होंने कहा,—

" महाराज आपकी चतुराई और राजनीतिज्ञताका बखान नहीं हो सकता। अब मैने अच्छी तरह समझ लिया कि कल सन्ध्याको एसाजीने ही मुझे लाकर लिवाजी पटेलके यहाँ ठहराया था। मैं बहुत ही गुप्त रूपसे यात्रा कर रहा था, लेकिन इतना होनेपर भी गुप्त दूतके द्वारा महाराजने मेरा पता लगा ही लिया,

और इसीकी सहायतासे आपने मुझे अपने चरणोंके समीप बुलवाकर मुझपर बहुत ही उपकार किया।"

शिवाजीने गम्भीरतापूर्वक कहा,—"छत्रसाल! मैंने केवल अपना कर्त्तव्य किया है। जिस समय मैंने सुना था कि अनेक कष्ट भोगता हुआ, प्रवासके दारुण यातना सहता हुआ, दुर्लंघ्य विंध्याचल लाँघता हुआ, अपार नर्मदा पार करता हुआ, बुन्देलखड सरीखे दूर देशसे केवल परोपकारके लिए एक युवक मेरे पास आ रहा है, उस समय यदि मैं चुपचाप बैठा रहता और प्रवासमें तुम्हारे सुभीतेका कोई प्रबन्ध न करता तो ईश्वरके सामने मैं बडा भारी अपराधी बनता। उचित तो यह था कि मैं स्वय आगे बढकर तुमसे मिलता। लेकिन जिस समय तुम देवगढसे चलने लगे थे उस समय मुझे तुम्हारा उद्देश्य ही मालूम न था, और जिस समय मुझे तुम्हारा उद्देश्य मालूम हुआ उस समय तुम बहुत जल्दी यात्रा कर रहे थे, इस लिए विवश होकर तुमसे भेंट करनेके लिए मुझे यही स्थान नियत करना पडा।"

इसके बाद शिवाजी थोडी देरतक चुप रहे। कमलोंका रस लेनेवाला भ्रमर जिस प्रकार तल्लीन होकर कमलकी ओर देखता है, छत्रसाल भी उसी प्रकार तल्लीन होकर शिवाजीकी ओर देख रहे थे। वे सोचते थे कि कब शिवाजीके मुखकमलसे उपदेशामृत निकलने लगे और कब मैं उसका आनन्द लूँ। कुछ देर तक विचार करनेके उपरान्त शिवाजीने कहा,—

"छत्रसाल! सुनते है, बुन्देलखण्डमें वहाँसे यवनोंको निकाल देनेके लिए आजतक अनेक प्रयत्न हुए है। लेकिन सदा परस्परके विरोध और द्वेष आदिके कारण ही आज तक उसमें कभी सफलता नहीं हुई। क्या यह बात ठीक है? बुन्देलखण्डकी भीतरी अवस्थाका तुम्हें बहुत कुछ ज्ञान होगा, इसी लिए मैं यह बात तुमसे पूछता हूँ। यह बात ठीक है न कि बुन्देलखण्डके सभी राजे और सरदार वहाँसे यवनोंको निकाल देनेके लिए मिलकर प्रयत्न नहीं करते?"

छत्रसालने बडे दुःखसे कहा,—"महाराज! बुन्देलखण्डको स्वतत्र करनेके प्रयत्नमें आज तक बराबर लोगोंको विफलता ही होती रही, और इसी लिए मुझे अब महाराजकी सेवामें उपस्थित होना पडा है। मेरे पिताजीको इस बातका बहुत बडा भरोसा था कि बुन्देलखडपरसे यवनोंका अधिकार अवश्य उठ जायगा। उनमें बहुत अधिक साहस, विलक्षण धैर्य्य और अद्वितीय क्षात्र-

तेज था। लेकिन इसी परस्परकी कलहके कारण उनका राज्य गया, उनके प्राण गये और अन्तमें प्राणोंसे भी अधिक प्रिय उदात्त उद्देश्य नष्ट हो गया। उनकी आँखें उस समय खुलीं जिस समय उन्हें अन्तकालकी शाश्वत निद्रा आई। जिस समय उनकी सारी सेना नष्ट हो गई, उनके राज्यपर यवनोंका अधिकार हो गया और वे अपनी ऐहिक आशायें छोडकर परलोक जानेके लिए तैयार हुए उस समय उन्हें अपनी विफलताका कारण मालूम हुआ। उसी समय उन्होंने मुझे आज्ञा दी कि मैं यहाँ आकर आपसे 'गुरु मन्त्र' लूँ। उनकी उसी आज्ञाका पालन करने, उनके उदात्त उद्देश्यको पूरा करने और बुन्देलखडको मुसलमानोंके विकट चंगुलसे निकालनेके लिए ही इस समय मैं आपकी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ। मुझे आप कृपा कर योग्य मन्त्र और उपदेश दीजिए। स्वतन्त्रता-प्राप्तिका सबसे सहज उपाय, सबसे निकटका मार्ग आप मुझे बतलाइए और ऐसा आशीवाद दीजिए जिसमें स्वतन्त्रताके वास्ते लडनेके लिए मुझमें दैवी शक्ति आ जाय।"

शिवाजीने स्नेहपूर्वक कहा,—" भूत दयाका उदात्त चित्र सामने रखकर जो मनुष्य अपने देशके उद्धारके लिए हृदयसे प्रयत्न करता है उसका मार्ग बन्धु-प्रेमके उज्ज्वल तेजसे प्रकाशित होता है। नीति, न्याय और समताके देवता मंगल गान गाते हुए उसके साथ साथ चलते हैं। बन्धुप्रेमकी दिव्य जोति हाथमें लेकर आत्मोन्नति उसको रास्ता दिखलाती चलती है। शालीनता, मधुरता, और सत्य प्रतिज्ञा उस पर चँवर डुलाती है। दक्षता और तत्परता उसका मार्ग निष्कण्टक और सुगम करती है। प्रसन्नता और सरलता उसके मनमें उत्साह उत्पन्न करती है। सम्पन्नता, नीरोगता और निर्व्यसनता उसकी कमाई लिये चलती है। इस प्रकार स्वतन्त्रता देवीका सारा परिवार उसकी सहायता करता है। और नहीं तो मेरे सरीखे पामरसे और क्या हो सकता है? छत्रसाल! मैं भी तुम्हारी ही तरह स्वतन्त्रता देवीका एक भक्त हूँ। इससे अधिक मैं तुम्हें और क्या बतला सकता हूँ?"

छत्रसालने गम्भीरतापूर्वक कहा,—" महाराज! आप ऐसा न कहें। आपमें बहुत सामर्थ्य है, आपका अधिकार बहुत अधिक है। समस्त भारतमें स्वतन्त्रताका ठीक ठीक और पूरा ज्ञान पहले पहल आपको ही हुआ है। धर्मके भँवरमें घूमनेवाले महाराष्ट्रोंको सबसे पहले आपने ही स्वदेश-प्रेमकी ओर लगाया। भारतवर्षमें स्वतंत्रताका बीजारोपण सबसे पहले आपने ही किया है

भारतवर्षके चैतन्यहीन होते जानेवाले पौरुष पर अमृतकी वर्षा सबसे पहले आपने ही की । भारतकी भावी स्वतन्त्रताके सबसे पहले गुरु आप ही हैं । मेरे सरीखे जो अल्पज्ञ भक्त स्वतन्त्रता देवीके मन्दिरतक पहुँचना चाहते हों आपके उपदेशके अनुसार चलना उनका सबसे पहला कर्त्तव्य है ।"

शिवाजी उस समय कुछ विचारोंमें मग्न थे, छत्रसाल चुपचाप उन्हींकी ओर देखने लगे ।

बहुत देरतक विचार-मग्न अवस्थामें रहकर शिवाजीने कहा,—" छत्रसाल ! बुन्देलखण्डकी परिस्थिति और महाराष्ट्रकी परिस्थिति एक ही नहीं है । जिन प्रयत्नोंसे महाराष्ट्र देशमें स्वतन्त्रताकी प्राप्ति हुई है ठीक उन्हीं प्रयत्नोंसे ही बुन्देलखण्डमें सफलता नहीं हो सकती । देश, काल और परिस्थिति आदिका पूरा पूरा विचार करनेके उपरान्त अपने विवेकसे जो मार्ग ठीक जान पडे उसीका अवलवन करना सर्वोत्तम होता है । महाराष्ट्र बहुत दिनोंसे प्राय स्वतन्त्र ही रहा है, यहाँके निवासी स्वराज्य और स्वतन्त्रताके सुखोंको भूले नहीं थे । इसी लिए उन्हें स्वराज्यकी ओर प्रवृत्त करनेमें न तो अधिक समय लगा और न अधिक परिश्रमकी आवश्यकता हुई । महाराज रामदासप्रभु और उनके कर्त्तव्य-दक्ष शिष्योंने कई वर्षों तक निरन्तर प्रयत्न करके दैवाधीन बने हुए नि सत्व महाराष्ट्रोंको उपदेशामृत बरसाकर सतेज, सबल और स्वावलंबी बनाया । महाराष्ट्रकी स्वतन्त्रताकी नीव तैयार होनेमें बहुत समय लगा था । लेकिन बुन्देलखण्डकी दशा वैसी नहीं है । बुन्देलखण्ड चाहे आज ही मुसलमानोंके अधिकारमें गया हो पर तो भी वहाँके स्वराज्य, स्वतन्त्रता और स्वावलम्बनका गौरवशाली इतिहास है । बुन्देले भले ही स्वराज्यका स्वरूप भूल गये हों, ' स्वतन्त्रता ' शब्द उन्हें अपरिचितसा जान पडता हो, पर तो भी स्वराज्य और स्वतन्त्रताके फलोंका मधुर स्वाद वे अभीतक भूले न होंगे । इस लिए जब उन्हें एक बार इस बातका विश्वास हो जायगा कि जिन फलोंकी उन्हें आकांक्षा है वे फल स्वराज्य या स्वतन्त्रताके वृक्षमें ही लगते हैं तब समझ लेना कि बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताकी पक्की नीव तैयार हो गई । बुन्देलखण्डकी प्रजा बहुत थोडे समयमें और बडी सुगमतासे तैयारी की जा सकती है । इसके अतिरिक्त वहाँकी प्रजा माण्डलिकों और सरदारोंके अधीन है, जब सब माण्डलिक और सरदार आपसमें मिल जायगे तब वहाँकी प्रजाको भी विवश होकर उनका साथ देना पडेगा । छत्रसाल !

तुम बुन्देलखड पहुँचते ही पहले अपने स्वार्थका त्याग करके वहाँसे द्वेष और विरोधके बीजका नाश करो। अभिमानियोंके सामने नम्र बनकर, बुद्धिमानोंको समझा बुझाकर, अज्ञानियोंको उपदेश देकर और मूर्खोंको आशा दिलाकर उनके मनमे स्वतन्त्रताके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करो। सब लोगोंकी प्रकृति एक दूसरेसे अलग हुआ करती है इस लिए व्यक्तिगत कलह, व्यक्तिगत द्वेष और व्यक्तिगत मत्सरका पूर्ण रूपसे नाश नहीं हो सकता, तथापि जहाँतक हो सके तुम ऐसा उपाय करो जिससे सब बुन्देले परस्परका वैरभाव, कलह, द्वेष और मत्सर भूलकर स्वतन्त्रताके कार्य्यमें सहायक बनें। पहले स्वतन्त्रताके पवित्र झडेके नीचे सब बुन्देलोंको एकत्र करो और तब स्वतन्त्रताके लिए लडना आरम्भ करो।"

उपदेशामृतकी वर्षासे पुलकित होकर छत्रसालने कहा,—"महाराज! जिस प्रकार महाराष्ट्रमे स्वामी रामदास लोगोंको स्वतन्त्रताका ज्ञान कराते फिरते है, उसी प्रकार बुन्देलखण्डमे प्राणनाथ प्रभु लोगोको स्वतन्त्रताकी शिक्षा देते फिरते हैं। बुन्देलखण्डमे प्राणनाथप्रभुकी बातें राजाज्ञासे भी बढकर मान्य समझी जाती है। इसके अतिरिक्त दलपतिराय नामक एक तेजस्वी राजकुमार भी इसी उद्देश्यसे सारे बुन्देलखडमे घूम रहे है। इस लिए मै कह सकता हूँ कि बुन्देलखडमें स्वतन्त्रतासम्बन्धी बहुत कुछ तैयारी हो चुकी है।"

शि०—"छत्रसाल! यदि बुन्देलखण्डमें इतनी तैयारियाँ हो चुकी हों तब तो तुम्हें बाकीका काम करनेके लिए तुरन्त वहाँ पहुँच जाना चाहिए। तुम वहाँ जाकर अपने शत्रुका सहार करो और विजयी हो। अपने देश पर फिरसे अधिकार करके राज्य करो। तुर्कों और मुगलोंका विश्वास न करके उनकी सेनायें नष्ट करो। यदि वे अधिक सख्यामें तुमपर आक्रमण करना चाहे तो मुझे समाचार दो, मैं सब प्रकारसे तुम्हे सहायता देकर उन्हें परास्त करूँगा। जिस समय उन्होंने मेरे साथ वैर आरम्भ किया था उस समय स्वय भवानीने ही मेरी सहायता की थी जिसके कारण मैंने मुसलमानोंकी जरा भी परवा न की। बडे बडे यवन वीर मेरा सिर काटनेके लिए गर्व करके मुझपर आक्रमण करनेके लिए आये पर मैंने उन सबको काट गिराया। इस लिए तुम किसी बातकी चिन्ता न करो, अपने देशको लौट जाओ, सेना एकत्र करो और यवनोंको अपने देशसे बाहर निकाल दो। सदा हाथमें नगी तलवार

रक्खो, परमेश्वर तुम्हारी रक्षा करेगा। गो-ब्राह्मणका पालन करना, वेदोंकी रक्षा करना और समर-भूमिमें वीरता दिखलाना ही क्षत्रियोंका मुख्य कर्तव्य है। यदि इस काममें तुम्हारे प्राण भी निकल गये तो भी तुम सूर्य्यमण्डल भेदकर स्वर्ग पहुँच जाओगे और वहाँका अपार सुख भोगोगे। और यदि तुम युद्धमें विजयी हुए तो बुन्देलखण्डमें स्वराज्य स्थापित हो जायगा और तुम्हारी कीर्ति अमर हो जायगी। इसलिए स्वदेश जाओ और यवनोंसे युद्ध करो। यदि आवश्यकता पड़े तो वलिष्ठ शत्रु सेनापर छापे डालकर उनका वल घटा दो। प्रामाणिक बुन्देले युवकोंको भेस वदलकर शत्रुका समाचार लानेकी आज्ञा दो। अपने अन्त -करणमें वन्धु–प्रेमके तेलसे जलनेवाला भूतदयाका दीप सदा प्रज्वलित रहने दो। विश्वास रक्खो कि जवतक दासत्वका नाश न हो जायगा तव तक स्वदेश-में सुखों, सद्भावों और शान्तिकी वृद्धि नहीं होगी। स्वराज्यका पवित्र ध्येय सदा अपने सामने रक्खो। बुन्देले वहुत वीर होते हैं। जहाँ उनमें एक वार स्वराज्य-प्रेम उत्पन्न होगा तहाँ वे यमराजकी तरह पराक्रम दिखलाकर स्वराज्य स्थापित कर लेंगे। छत्रसाल! हम लोग उसी जगन्नियन्ता परमेश्वरके वालक हैं न? हमने अन्याय या अत्याचारके लिए हाथमें तलवार नहीं ली है। अपना स्वार्थ सिद्ध करने, दूसरोंके नैसर्गिक अधिकार छीनने या अनावश्यक राज-तृष्णा पूरी करनेके लिए हम लोगोंने हथियार नहीं उठाये हैं। ईश्वर जो न्याय चाहता है वह जव दूसरे किसी मार्गसे नहीं हो सकता तभी विवश होकर हमें शस्त्र उठाना पडता है। हम लोग उस न्यायशाली परमेश्वरके एकनिष्ठ सेवक हैं। हमारे सरीखे सेवकोंको यशस्वी करना उसीके अधिकारमें है। हमारा काम निष्काम बुद्धिसे अपने कर्त्तव्योंका पालन करना ही है। यशस्वी होना उसी पर-मेश्वरकी इच्छापर अवलवित है। जव हम मन लगाकर उसी परमेश्वरका काम करनेके लिए तैयार होंगे तव क्या वह हमसे सन्तुष्ट न होगा?"

छत्रसालने गद्गद होकर कहा,—"महाराज! आपके उपदेशामृतके सेवनसे मेरे मनमें एक प्रकारके नये तेजका सचार होने लगा है। मेरा निराश मन, किंकर्तव्यविमूढ वनी हुई बुद्धि और तेजहीन आत्मनिष्ठा अव प्रवल, प्रगल्भ और तेजस्वी हो गई है। अव मैं यही चाहता हूँ कि जहाँतक शीघ्र हो सके मैं अपने देशमें पहुँचूँ, उसे स्वतन्त्र करूँ और अपने भाइयोंको परतन्त्रताके घोर नरकसे छुडाऊँ। लेकिन इससे पहले मुझे एक वार दिल्ली जाना पड़ेगा। महाराज!

राजा जयसिंह मुझपर बहुत प्रेम रखते हैं। देवगढवाले युद्धमें मैं दिल्लीपतिकी ओरसे लडा था।"

शिवाजीने छत्रसालकी ओर बडे आनन्दसे देखते हुए कहा,—

"दिल्लीपतिके साथ लडनेसे पहले तुमने उसकी सेनाकी भीतरी अवस्था जान ली, यह बहुत ही अच्छा किया।"

छत्र०—"राजा जयसिंह उनके सब सैनिकों और यहाँ तक कि स्वयं बहादुरखाँ कोकाने भी यह बात स्वीकृत की है कि देवगढके युद्धमें मेरे कारण ही दिल्ली-पतिके पक्षकी जीत हुई है। इस लिए राजा जयसिंह चाहते हैं कि मैं एक बार दिल्ली जाकर बादशाहसे मिलूँ, वे बादशाहसे मेरे और मेरे देशके लिए सिफारिश करेंगे। उन्होंने मुझसे दिल्ली आनेके लिए बहुत आग्रह किया है, लेकिन मैं समझता हूँ कि दिल्ली जानेमें मेरा बहुतसा समय व्यर्थ नष्ट हो जायगा। यदि आप आज्ञा दें तो मैं दिल्ली न जाकर तुरन्त बुन्देलखण्ड पहुँच जाऊँ और जहाँ तक शीघ्र हो सके लडभिडकर अपने देशको स्वतन्त्र कर लूँ।"

शि०—"मैं यह मानता हूँ कि दिल्ली जानेमें तुम्हारा बहुतसा समय व्यर्थ नष्ट होगा। लेकिन युद्धका अन्तिम उपाय करनेसे पहले यदि तुम दिल्ली हो आओगे तो समस्त बुन्देले अच्छी तरह समझ जायेंगे कि अब युद्धके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। बुन्देलखण्डमें आलसी, निकम्मे और विलासी राजाओंकी ही अधिकता है, इस लिए जब तक शान्तिके सब उपाय न कर लिये जायेंगे तबतक वे सहसा युद्धके लिए तैयार न होंगे। इस लिए दिल्ली जाकर पहले ही दिल्लीपतिसे नकारात्मक उत्तर पा लेना बहुत अच्छा है। तुम राजा जयसिंहकी बात मानकर पहले दिल्ली जाओ, पर वहाँ बादशाह तुमसे सीधी तरहसे बात भी न करेगा। जब बुन्देलखण्डके राजाओंको यह मालूम हो जायगा कि सीधे मार्गसे चलने पर बादशाह नहीं मानता, तब उन्हें युद्धका अन्तिम मार्ग स्वीकृत करना पडेगा। दिल्लीसे होकर तुम तुरन्त बुन्देलखण्ड पहुँच जाओ। उपदेश देकर, प्रार्थना करके और जिस तरहसे हो सके लोगोंको अपने पक्षमें करो और बादशाहसे लडनेके लिए तैयार हो। तुम्हारी मिलनसारी, तुम्हारा पवित्र उद्देश्य और तुम्हारा निःस्वार्थ व्यवहार देखकर युवक बुन्देले अवश्य ही तुम्हारी बात मान लेंगे। तुमने कहा था कि तुम

यहाँ रह कर कुछ दिनोंतक मेरी कार्य्यप्रणाली देखना चाहते हो। लेकिन परिस्थितिके कारण स्वतन्त्रताका मार्ग सदा बदलता रहता है, इस लिए इस मार्गमे स्वातंत्र्य-प्रेमसे बढकर और कोई अच्छा मार्गदर्शक नहीं हो सकता। इस लिए तुम व्यर्थ यहाँ भी समय मत गँवाओ। यदि तुमने इस प्रान्तमे रहकर मेरी सहायता की और हम दोनोंने मिलकर शत्रुपर आक्रमण किया तो सारा यश लोग मुझे ही देने लगेंगे। उससे बुन्देलखंडका उतना लाभ नहीं होगा। इस लिए तुम स्वय अपने देशमे जाकर युद्ध करो। थोडे ही समयमें तुम्हे सैकडों मित्र मिल जायँगे, तुम यश-श्री प्राप्त करोगे और तुम्हारी कीर्त्ति अनन्त कालतक बनी रहेगी।"

शिवाजीके उपदेश सुनकर छत्रसालका हृदय आशा और उत्साहसे भर गया और उनकी आँखोंसे आनन्दाश्रु बहने लगे। वे बडी ही श्रद्धासे शिवाजीके चरणों पर गिर पडे। शिवाजीने प्रेमपूर्वक उन्हें उठाकर गले लगाया। भारतवर्षकी स्वतन्त्रताके इतिहासमे यह मगलमय प्रसग बहुत ही महत्त्वपूर्ण समझा जायगा।

शीघ्र ही छत्रसाल दक्षिणसे चल पडे। चलते समय शिवाजीने उन्हें प्रेमपूर्वक एक तलवार दी। छत्रसाल सदा यही समझते थे कि जबतक यह तलवार मेरे हाथमे है तबतक स्वय शिवाजी मेरे साथ हैं।

देवगढके घनघोर युद्धमें औरगजेबकी ही जीत हुई। औरगजेब सारे दक्षिणको अपने अधिकारमें करना चाहता था और उसकी इस इच्छाकी पूर्तिका आरम्भ बहुत ही उत्तम रीतिसे हुआ था। इस विजयके कारण बादशाहके आज्ञानुसार दिल्लीमें बडा जशन हुआ था। सारा शहर खूब अच्छी तरह सजाया गया था, रोशनी हुई थी, आतिशबाजियाँ छूटी थीं, मसजिदोंमें नमाजें पढी गई थीं और विजय करके लौटनेवाले राजा जयसिंह और बहादुरखाँ कोकाके नगर प्रवेशके समय उनके आदर सत्कारका बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया था। शामकी नमाजके बाद तोपोंकी गडगडाहट और आतिशबाजी आदिके उज्ज्वल प्रकाशमें उन विजयी वीरोंका स्वागत होनेको था। दिल्लीके उत्सवप्रिय नागरिक खूब बढिया बढिया कपडे पहनकर चाँदनी चौकमे घूम रहे थे। विजयी वीरोंका स्वागत करनेके लिए नमाज पढकर स्वयं बादशाह भी वहाँ आनेको थे।

निरपेक्ष रूपसे पृथ्वीके सब भागों, सब मनुष्यों और यहाँतक कि सभी सजीवों और निर्जीवोंपर समान रूपसे उपकार करनेवाले भगवान् अंशुमाली पृथ्वीके दूसरे गोलार्धको प्रकाशित करनेके लिए चले गये थे। आलमगीर बादशाहके मनमें पक्षपात भरा हुआ था और उसी पक्षपातके कारण वह थोड़ी देर बाद ही भारी अन्याय करनेवाला था, शायद इसी लिए अंशुमालीने वहाँ अधिक ठहरना उचित न समझा था। लोग समझते थे कि जब हाथीके हौदेमें बैठकर बादशाह सलामत इधर आवेंगे तब वे बहुत ही प्रसन्नवदन दिखाई पड़ेंगे। लेकिन सब लोगोंको यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि बादशाहका मुह उस समय वैसा ही श्री-हीन हो रहा है जैसा कि किसी भयंकर पातक करनेवाले मनुष्यका मुँह लज्जा और आत्मनिन्दाके कारण हो जाता है। खैर! तोपें गड़गड़ाने लगीं, कर्कश रणवाद्य बजने लगे। जहाँ पर दोनों विजयी वीरोंका स्वागत होनेको था वहाँ एक बहुत बड़ा शामियाना खड़ा किया गया था। उसी शामियानेके नीचे एक बहुत ऊँचे आसनपर औरंगजेब जा बैठा। इसके सिवा और भी बहुतसे सरदार, वजीर, उमरा आदि अपने अपने स्थानपर वहाँ बैठे हुए थे जो बादशाहके आते ही उठकर ताजीम बजा लाये। विजयी वीरोंका नगर-प्रवेश होने लगा।

बहादुरखाँ कोका अपने चुने हुए वीरोंके साथ बड़ी शानसे बढ़ता हुआ चाँदनी चौककी तरफ जा रहा था, पर उसकी ओर नागरिकोंका ध्यान नहीं गया। राजा जयसिंह भी कभी विजय-श्रीके कारण मन्द मन्द मुस्कराते हुए और कभी अपने साथके एक तरुण वीरसे बातें करते हुए चौककी तरफ बढ रहे थे, पर उनकी तरफ भी लोगोंका ध्यान नहीं गया। सबके मनों और सबके नेत्रोंका एक ही केन्द्र स्थान था। सबकी उँगलियाँ एक ही ओर उठ रही थीं। सबके मनमें एक ही विषय वास कर रहा था। दिल्लीवालोंने किसी प्रकार पहले ही सुन रक्खा था कि देवगढका किला किसके अतुल पराक्रमसे सर हुआ है। बहुतसे लोग समझते थे कि देवगढको जीतनेवाला वीर खूब हट्टा-कट्टा, गठीले बदनका, अनुभवी, वृद्ध और क्रूरताकी प्रतिमा ही होगा। लेकिन जब उन्होंने सुना कि राजा जयसिंहकी बाई ओरके घोड़ेपर सवार तेजस्वी वीरने ही देव-गढका किला जीता है तब उनके आश्चर्यकी सीमा न रही। सबका ध्यान उसी वीरकी ओर लग गया। बहादुरखाँ कोका बादशाहके पास ही एक आसनपर बैठ गया, राजा जयसिंहको भी बैठनेके लिए बादशाहके निकट ही एक स्थान

मिल गया। पर सबके नेत्र उसी तरुण वीरकी ओर लगे हुए थे जो चुपचाप एक कोनेमें खडा हुआ था। सब लोग समझते थे कि उस वीरको भी बादशाहके पास बैठनेकी आज्ञा मिलेगी। लेकिन सब लोगोंको यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि देवगढका यशस्वी और विजयी वीर जिस ओर खडा हुआ था उस ओर औरंगजेब जान बूझकर न देखता था। राजा जयसिंहको इस बातसे बहुत ही दु ख और आश्चर्य हुआ, क्यों कि वे पहलेसे ही छत्रसालकी वीरताका पूरा पूरा समाचार बादशाहको भेज चुके थे। ऐसी दशामें बादशाहकी उदासीनता वे सहन न कर सके। छत्रसालके सबन्धमें वे कुछ कह न सकें, इसी लिये बादशाहने देवगडके युद्धकी बात छेड दी और राजा जयसिंह तथा छत्रसालको चिढानेके लिए बहादुरखॉ कोकाकी बहुत कुछ तारीफ भी की। इस पर उन्हें और भी बुरा मालूम हुआ और वे कुछ कहनेके लिए उठकर खडे हुए। पर कपटी औरंगजेबने उन्हें कुछ कहनेका अवसर ही न दिया और स्वयं उनसे कहा,—

"राजा साहब! आप शायद छत्रसालके बारेमें कुछ कहना चाहते हैं। मुमकिन है देवगढ फतह करनेमें छत्रसालने भी कुछ बहादुरी दिखलाई हो और आप लोगोंको थोडी बहुत मदद दी हो, लेकिन उसकी यह खिदमत कुछ बहुत ज्याद काबिल कदर नहीं है। महेवाका खानदान हमेशासे सलतनत और दीन इस्लामका सख्त दुश्मन है और चम्पतराय या छत्रसालके बागी होनेमें किसी तरहका शक नहीं किया जा सकता। इस लिये उसके साथ किसी तरहकी रिआयत करना या उसे किसी मरतबेतक पहुँचाना सरासर बेजा और गैर-वाजिब है। एक बार चम्पतरायको मन्सब दिया गया, उसका जो कुछ नतीजा हुआ वह आप लोगोंपर रोशन ही है। छत्रसालके लिए यही बडी खुशकिस्मतीकी बात है कि उसे पुरानी बगावतों और गुस्ताखियोंकी कोई सजा नहीं दी जा रही है। सलतनतको ऐसे बागियोंकी खिदमतकी कोई जरूरत नहीं है। आप फजूल उसके लिए किसी तरहकी सिफारिश न करें। हाँ आप लोगोंने जो कुछ खिदमतें की है वे बेशक काबिल-कदर हैं।"

राजा जयसिंह बडे ही लज्जित और दु खी हुए। उनकी समझमें न आया कि क्या कहें और किस प्रकार कहें। इसी बीचमें एक बार बादशाहकी नजर छत्रसाल पर जा पडी। उसने उनकी आन और तेजी देखी, वह पहले तो कुछ

लज्जित हुआ, फिर कुछ घबराया और अन्तमें क्रोधसे लाल हो गया। लेकिन उसने अपनी इस दशाका किसीको ज्ञान न होने दिया और तुरन्त दूसरी ओर दृष्टि फेर ली और धीरे धीरे एक अमीरसे बातें शुरू कर दीं। राजा जयसिंहने बादशाहकी यह दशा ताड़ ली थी। वे दुःखी तो पहलेसे ही थे, बादशाहकी वह विकट उदासीनता और क्रोध देखकर वे और भी आवेशमें आ गये। उनसे यह पक्षपात देखा न जाता था। उस समय और कोई उपाय न देखकर वे लहूका घूँट पी गये और चुपचाप अपनी जगह पर बैठ गये। इतनेमें छत्रसाल अपने स्थानसे बढ़कर उनके पास पहुँच गये और उनके सामने खड़े होकर कहने लगे,—

"चाचाजी! व्यर्थ विषकी अधिक परीक्षा करनेसे कोई लाभ नहीं। कोयलेको बार बार धोनेसे कोई फल नहीं। अब आप मुझे देश जानेकी आज्ञा दीजिए। मेरा मन देशवासियोंकी ओर ही लगा हुआ है। केवल आपकी आज्ञाके अनुसार और आपको सन्तुष्ट करनेके लिए ही मैं अपनी इच्छाके विरुद्ध यहाँ आया था। अब मैं चलता हूँ।"

इतना कहकर छत्रसाल वहाँसे चलनेके लिए तैयार हुए। उस समय उन्होंने देखा कि सब लोगोंकी, यहाँतक कि स्वयं बादशाहकी भी दृष्टि मेरी ही ओर लगी हुई है, इस लिए उन्होंने वह अवसर हाथसे जाने देना ठीक न समझा और बादशाहकी ओर देखकर कहा,—

"मैं किसी मन्सब, खिताब या जागीरके लालचसे यहाँ नहीं आया था। राजा साहब मेरे चचाके बराबर हैं और मुझपर बहुत मेहरबानी रखते हैं। उन्हींके हुकुमसे मैं यहाँ आया था। सलतनतका नौकर बनकर मैंने देवगढ़का किला फतह नहीं किया था। जो शख्स बुन्देलोंको मुसलमानोंकी गुलामीसे निकालनेके लिए अपनी जान तक देनेको तैयार हो वह मुसलमानोंकी गुलामी नहीं कर सकता। मैं जिस मतलबसे राजा साहबके साथ दक्खिन गया था मेरा वह मतलब पूरा हो गया। मैंने जिस तलवारसे देवगढ़ जीता था, अब मेरी वही तलवार बुन्देलोंको गुलामीसे निकालनेके लिए बिजलीकी तरह चमकेगी। याद रहे, बुन्देलखण्डका हर एक बुन्देला छत्रसाल है। (राजा जयसिंहकी ओर देखकर) चाचाजी! अब मैं चलता हूँ। विन्ध्यवासिनीके आगामी महो-

अवसर यदि आप पधारनेका कष्ट करेंगे तो बडी कृपा होगी। आप मेरे लिए किसी प्रकारकी चिन्ता न करें, मेरी रक्षा स्वयं भगवती विन्ध्यवासिनी करेंगी।"

इतना कहकर छत्रसाल वहाँसे बडी तेजीसे निकल गये। दिल्लीके जो नागरिक उनके पराक्रमकी बात सुनकर चकित हो गये थे, वे उनका आवेशपूर्ण भाषण सुनकर और उन्हें अकस्मात् अदृश्य होते देखकर और भी स्तम्भित हुए। छत्रसालके सिवा और किसीका जिक्र उन्हें अच्छा ही न लगता था।

* *

चौवीसवाँ प्रकरण।
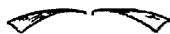
विमल-विजय।

भगवान् श्री रामचन्द्रने स्वदेशसे पैर बाहर रखते समय कहा था,—"लक्ष्मण! यदि यह लंका सोनेकी भी हो तो भी वह मुझे अच्छी न लगेगी। जननी और जन्मभूमि स्वर्गसे भी बढकर श्रेष्ठ है।" भगवानका यह अमृतोपम उद्गार प्रत्येक स्वदेशभक्तके मनमें किसी न किसी रूपमें निरन्तर घर किये रहता है। स्वदेशको निर्धन समझकर धन कमानेके लिए परदेश जानेवाला मनुष्य, स्वदेशको निर्वीर्य समझकर अपना बाहुबल दिखलानेके लिये विदेश जानेवाला वीर, या स्वदेशको नीरस समझकर सृष्टिसौन्दर्य्य देखनेके लिए आसपासके प्रदेशोंमें घूमनेवाला रसिक भी अपनी जन्मभूमिकी ओर लौटनेके लिए कितना आतुर होता है। तब रत्नोंकी खानोंसे भरे हुए, बडे बडे वीरोंसे पूर्ण और सृष्टि-सुन्दरीके विलासगृह बने हुए बुन्देलखंडको देखनेके लिए छत्रसाल सरीखे मातृ-भूमिके निस्सीम भक्त कितने आतुर हुए होंगे, इसका अनुमान मातृभूमिके सच्चे पुत्र और भक्त ही कर सकते हैं। पित्राज्ञाके भारी भारी पुश्ते तोडकर, कठिन कर्तव्यके दुर्गम बुर्जोंको लाँघकर श्रीरामचन्द्रका जन्मभूमिके प्रति प्रेम स्वर्गसुखको धिक्कारकर भारतभूमिके दक्षिणी छोरसे उत्तरी छोर-तक, लंकासे अयोध्या तक पलक मारतेमें पहुँच जाता था। उसी प्रकार देवगढके युद्धमें अनुपम वीरता दिखलाते समय, शिवाजी महाराजसे बातें करते

समय, दिल्लीमें बादशाहके सामने बोलते समय छत्रसालका शरीर तो उन उन स्थानोंपर ही रहता था पर मन सदा बुन्देलखण्डमें ही सचार करता था। लेकिन जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रको सोनेकी लका अच्छी नहीं लगी, और विभीषणका आदर-सत्कार छोडकर अयोध्याकी ओर लौटना उन्हे स्वर्ग-सुखसे भी बढकर अच्छा जान पडा, उसी प्रकार दिल्लीकी सुन्दरता और शोभा छत्रसालको अच्छी न लगी और जयसिंहजीसे आज्ञा लेकर, जहाँतक शीघ्र हो सका वे बुन्देलखण्ड पहुचे। बुन्देलखण्डकी सीमामें पहुँचकर वे ज्यों ज्यों आगे बढते जाते थे त्यों त्यों उन्हें मालूम होता जाता था कि प्राणनाथप्रभुके उपदेशोंने सारे बुन्देलखण्डकी प्रजाके विचारोंमें कितना अधिक विलक्षण परिवर्तन कर दिया है।

शीशेमें पडनेवाले प्रतिबिंबको पकडनेके लिए जिस प्रकार बालक तरह तरहके प्रयत्न करते है उसी प्रकार बेतवा नदीमें पडनेवाले पेडोंके प्रतिबिंबको पकडनेके लिए उसके तलपर सूर्य्य अपना सुवर्ण-कर बार बार फैला रहा था। बेतवा नदीके किनारे खडे हुए दो सुकुमार बालक उसका यह निरर्थक प्रयत्न देख रहे थे। उनका वेष और चर्या आदि देखकर यह नहीं कहा जा सकता था कि ये केवल सृष्टि-सौन्दर्य्य देखनेके लिए ही यहाँ आये है। सृष्टिकी शोभा देखनेके लिए निकलनेवालोंको इतने शस्त्रोंकी क्या आवश्यकता है? उनका मुँह इतना गम्भीर क्यों होने लगा? उनके मुँहपर आनन्दके अतिरिक्त दूसरे विकार क्यों झलकने लगे? एक एक पैर उठानेमें वे इतने सचेत और सावधान क्यों होने लगे?

लेकिन इतनेमें ही अपनी गम्भीरताका त्याग करके एक कुमारने अपने दूसरे साथीसे कहा,—"विमलदेव! वीरोचित आभूषण और वस्त्र आदि पहनकर तथा वस्त्र धारण करके अपने हाथके कृत्यों और मनके विचारोंको भी वैसा ही वीरोचित स्वरूप देना पडता है, नहीं तो असबद्धताका दोष आ जाता है और सारा ढोंग खुल जाता है।"

अपने साथीकी ओर देखते हुए मधुर स्वरसे विमलदेवने कहा,—"मेरे लिए तुम जरा भी चिन्ता न करो। मेरा तो सदा यही वेष रहता है और उसका निर्वाह करना मुझे बहुत अच्छी तरह आता है। लेकिन विजयदेव! मुझे सबसे अधिक चिन्ता तुम्हारी है। मैं आठ दिनसे बराबर तुम्हें सिखाता आता हूँ, पर तो भी तुमसे बराबर भूलें होतीं ही रहती हैं।"

विज०—"भला बतलाओ तो सही मुझसे कब कौनसी भूल हुई ? किसीके 'विजयदेव' कहकर बुलाने पर मैं कब घबराया ? सेवकोंसे जुहार लेते समय मैं कब लजाया ? मेरे चेहरे पर से मरदानापन कब कम हुआ ? मेरी गतिपर तुम मुझे कई बार रोक चुके हो, पर यहाँ आते समय रास्तेमें मेरी चाल कितनी मरदानी थी! विमलदेव! इस भेस बदलनेमें तुम अवश्य ही मेरे गुरु हो, पर तो भी इस समयका मेरा व्यवहार देखकर तुम्हें मेरे सामने हार माननी पड़ेगी।"

विम०—"हाँ हाँ, क्यों न हो! आज तुम्हारी चालका क्या कहना है! तुम्हें चलते हुए देखकर मालूम होता है कि समुद्रमे लहरें उठ रही हैं। उसी दिन दिये हुए पाठको अपने शिष्यसे ठीक ठीक सुनकर और पुराने सब पाठोंको भूला हुआ देखकर जितना आनन्द गुरुजीको हो सकता है, उतना ही आनन्द तुम्हे और तुम्हारी चाल देखकर आज मुझे हो रहा है। विजयदेव! जब छत्रसालसे मिलनेके लिए जानेके समय रास्तेमें ही तुम्हारी दृष्टि इतनी कोमल हो चली, तुम्हारे कपोल लज्जासे लाल दिखाई पडने लगे और तुम्हारे माथे पर पसीनेकी बूँदोंका सुन्दर किरीट बन गया तब छत्रसालसे भेंट होने पर तुम्हारी क्या दशा होगी ?"

विजयदेवने मुस्कराते हुए कहा,—"वही, जो तुम्हारी होगी। मनुष्यमात्रमें यह एक विशेष गुण होता है कि उसे दूसरोंके तो छोटेसे छोटे दोष दिखाई पडते हैं, पर अपने बडेसे बडे दोष भी ध्यानमें नहीं आते। पर उससे भी बढकर तुममे एक यह विशेषता है कि तुम्हें स्वयं अपने दोष मुझमें दिखलाई पडते हैं। तुम्हारे मनोहर नेत्र अमृतकी वर्षा कर रहे हैं, तुम्हारी चचल भ्रू-लता बराबर नृत्य कर रही है और तुम्हारे सुन्दर मुखसे भावी सुखकी आशाके कारण प्रसन्नता मानो टपकी पडती है, पर जान पडता है कि शायद तुम्हे यह बात मालूम नहीं है कि तुम ऐसी स्थितिमें छत्रसालके सामने जा रहे हो!"

विम०—"विजयदेव! जयसागर सरोवरमें डूबते समय मैं जिस वेषमें था वह तो तुम्हें मालूम ही है। उस समय मुझे स्त्री-वेषमें देखकर जब छत्रसालको मेरे विषयमें कुछ भी सन्देह न हुआ, तब मुझे पुरुष-वेषमें देखकर वे क्योंकर सन्देह कर सकेंगे ? जो लगातार सोलह वर्षोंसे इसी पुरुष-वेषमें रहा आया है, जिसे सब लोग युवराज और राजपदका अधिकारी समझते हों, वर बनाकर जिसका विवाह किया गया, नृपति मानकर जिसका अभिषेक हुआ, उसे कौन कह

सकेगा कि यह पुरुष नहीं बल्कि स्त्री है? मुझे दृढ विश्वास है कि छत्रसालको मेरे वास्तविक स्वरूपके सम्बन्धमे शका नहीं होगी। शीघ्र ही मै छत्रसालके स्वतन्त्रता-सम्बन्धी युद्धमें भी सम्मिलित होऊँगा। लेकिन तुम्हारे विषयमे मुझे बडी शका हो रही है। ऐसे गुलाबी गाल, सुन्दर और सुडौल हाथ, मधुर मुसकान और कोमल शरीर देखकर छत्रसाल तुरन्त ही समझ लेगे कि यह समर-भूमिमे लडनेके योग्य नहीं बल्कि अन्त पुरमे रहनेके योग्य है, और तब तुम्हे विजयदेवसे विजया बनकर छत्रसालका अन्त पुर सुशोभित करना पडेगा।"

विजयदेवने हँसते हुए पूछा,—"लेकिन क्या मेरे वर्तमान पतिराज-विमलदेव मुझे ऐसा करनेकी आज्ञा देंगे?"

विम०—" यह तो विवाहके दिन ही निश्चित हो चुका है कि इस विवाहका अन्तिम परिणाम ऐसा अच्छा होगा। जहा विजया, नहीं नहीं, विजयदेव रहेंगे वहीं विमलदेव भी रहेंगे।"

विज०—" जान पडता है कि तुम लौकिक दृष्टिकी इस सहधर्मिणीको अपनी सहवासिनी बनाना चाहते हो। पतिदेव! समय पडनेपर अपनी प्रिय पत्नीपर यह अनुग्रह करना तुम भूल तो न जाओगे?"

विम०—" विजयदेव—"

विज०—" तुमने यह 'विजयदेव' 'विजयदेव' क्या लगा रक्खा है? ऐसे एकान्त स्थानमे असली नाम लेकर क्यों नहीं पुकारते? कमसे कम जब केवल तुम और हम ही हों तब तुम मुझे 'विजया' ही कहा करो, मुझे इसीमें सबसे अधिक आनन्द होगा।"

विम०—" लेकिन तुम्हारे इस क्षणिक आनन्दके लिए मै छत्रसालके सह-वास-सुखको नहीं छोड सकता। जब तक बुन्देलखड स्वतन्त्र न हो जायगा तब तक हम लोग विमलदेव और विजयदेव ही रहेंगे। क्योंकि इसी रूपमे हम लोग छत्रसालके साथ रह सकेंगे। जब बुन्देलखड स्वतन्त्र हो जायगा तब विमल-देवसे विमला और विजयदेवसे विजया बननेमे अधिक विलम्ब न लगेगा।"

विज०—" विमलदेव! तुम्हारा कहना बहुत ही ठीक है। जो उद्देश्य पूरा करनेके लिए हम लोग राजप्रासादसे निकले है जबतक वह उद्देश्य पूरा न हो जाय तब तक हम लोगोंको इसी नकली भेसमे रहना चाहिए। अगर छत्रसाल हम

लोगोंका वास्तविक स्वरूप समझ गये तो वे हम लोगोंको अपने साथ समर-भूमिमें क्योंकर ले जायगे ? हम लोग उनकी सवा किस प्रकार करने पावेंगे ?"

विम०—"विजयदेव ! भावी सुखका ध्यान रखकर हम लोगोंको बडी होशियारीसे चलना चाहिए। इस बातका पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए कि छत्रसाल या उनके साथी हमारा असली भेद न जान लें। नहीं तो सारा खेल बेगड जायगा। लेकिन विजयदेव ! छत्रसालके पास जाने और उनकी सेवा करनेके लिए तो हम लोग तैयार हो गये, पर हम लोगोंने यह न सोचा कि उनकी कौनसी सेवा करेंगे। क्या तुमने कुछ सोचा है कि तुम अपने लिए उनसे कौनसा काम माँगोगे ?"

विजयदेवने दृढ होकर कहा,—"मैंने तो निश्चित कर लिया है कि युद्धके समय हाथमें तलवार लेकर मैं छत्रसालकी सहायता करूँगा और जिस समय सब लोग छावनीमें आराम करेंगे उस समय छत्रसालके खेमेमें जाकर उनकी सेवा करूँगा।"

विमलदेवने कुछ चिन्तित होकर कहा,—"आठों पहर छत्रसालकी सेवा करनेमें तो मुझे बहुत आनन्द होगा, लेकिन समर-भूमिमें खडे होकर तलवार किस प्रकार चलाई जायगी ? जो तलवार आजतक केवल शोभाके लिए ही मैं लटकाये फिरता था उसे म्यानसे बाहर निकाल कर मैं शत्रुओंपर किस प्रकार वार करूँगा ? अपने समान जीते हुए मनुष्योंपर उसका आघात किस प्रकार हो सकेगा ? खूनकी बहती हुई नदियों और लाशोंके लगे हुए पहाड देखकर मन और नेत्र किस प्रकार स्थिर रक्खे जा सकेंगे ? विजयदेव ! समरभूमिसे तो हम लोग बिलकुल ही अपरिचित हैं। हाथमें तलवार लेकर हम लोग उनकी मदद किस तरह कर सकेंगे ?"

विज०—"विमलदेव ! तुम इन सब बातोंकी चिन्ता न करो। बडे बडे पराक्रमी वीरोंका भी समरभूमिमें जानेके लिए एक बार पहला दिन होता ही है। साहसी, वीर और कडे दिलके होनेके लिए उन्हें भी समर-देवतासे बहुतसे पाठ पढने पडते हैं। छत्रसाल और उनके पराक्रमी सैनिकोंको सहायता देनेके लिए स्वयं भगवती विन्ध्यवासिनी समरभूमिमें सचार करने लगेंगी। वे ही हम लोगोंको भी तलवार पकडने और चलानेमें समर्थ बनावेंगी। उन्हींकी स्फूर्तिसे स्वतन्त्रताका कार्य पूरा होगा और छत्रसालको विमल-विजयकी प्राप्ति होगी।"

इतना कहकर विजयदेव धीरे धीरे आगे बढने लगे। चार कदम आगे बढ़नेके उपरान्त जब उन्होंने पीछेकी ओर मुड़कर देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि विमलदेव हर्ष-रोमाञ्चित वदनसे वहीं निश्चल खड़े हुए हैं और पासके एक वृक्षकी ओटसे आनेवाले एक व्यक्तिकी ओर टक लगाये देख रहे हैं। उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ। वे कुछ कहना ही चाहते थे कि उन्हें अपना परिचित प्रेमपूर्ण और मधुरस्वर सुनाई पड़ा—

"मित्रो! ठहरो, ठहरो! खोई हुई स्वतन्त्रता फिरसे प्राप्त करनेके लिए जब तुम्हारे सरीखे सुकुमार और कोमल तरुण समर-भूमिमें जानेके लिए तैयार हो गये तब छत्रसालको विमल विजय मिलनेमें देर न लगेगी! बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताके झंडेके नीचे मैं अत्यन्त प्रेमसे तुम लोगोंका स्वागत करता हूँ।"

विमलदेव और विजयदेव टक लगाये छत्रसालके तेजस्वी वदनकी ओर देखते हुए चुपचाप खड़े रहे।

छत्रसाल ज्यों ज्यों विमलदेव और विजयदेवके पास पहुचने लगे त्यों त्यों उनका आनन्द और आश्चर्य बढ़ता गया। विमलदेव और विजयदेवका सौन्दर्य एक दूसरेसे बढकर था, उनके मुखों और भावोंकी पवित्रता मानो विमलताको भी लज्जित करती थी, उनमें फूलोंकीसी मृदुलता और कोमलता थी, उनकी ऑखें बिजलीकी तरह चमकती हुई मानो अमृतकी वर्षा कर रही थीं, उनका शरीर बड़ा ही सुन्दर और सुडौल था ओर उनकी कान्ति परम मनोहर और चित्ताकर्षक थी। उन्हें देखते ही छत्रसाल थोडी देरतक हक्के बक्केसे हो रहे। जयसागर सरोवर पर दैवी सौन्दर्य और मानवी सौन्दर्यके दर्शनसे छत्रसालके मनकी जैसी स्थिति हुई थी ठीक वैसी ही आज भी हुइ। वे विमलदेव और विजयदेवकी ओर प्रेमपूर्वक देखने लगे।

अन्तमें विमलदेवने बहुत साहस करके नम्रतापूर्वक अभिवादन करते हुए कहा,—"महाराज! आपकी सेवाके लिए विमलदेव अपना शरीर अर्पित करनेको तैयार है।"

छत्र०—"कौन? विमलदेव!"

विज०—"महाराज! यह विजय भी आपकी सेवाके लिए अपना शरीर अर्पित करता है।"

छत्र०—"और तुम विजय ! यह विमल विजयकी जोडी आजसे मेरी हुई न ? चलो, आज मुझे विमलविजयका लाभ हुआ। रक्त वहाकर मनुष्योंकी हत्या करके और क्रूरता दिखलाकर जो विजय प्राप्त हो उसकी अपेक्षा यह विमल विजय बहुत ही पवित्र और मंगलकारक है। विमल ! और तुम नव-परिचित विजय ! क्या तुम लोग मेरे साथ भयावने समरक्षेत्रमें चलोगे ?"

विमलदेव और विजयदेवने एक साथ ही उत्तर दिया,—"जी हाँ महाराज ! तम्बूमें विश्रान्तिके समय आपकी सेवा करना हम लोगोंको जितना अच्छा लगता है, समरक्षेत्रमें अपने शत्रुके साथ लडना भी हम लोगोंको उतना ही भला मालूम होता है।"

बडे कौतुकसे विमल-विजयकी ओर देखते हुए छत्रसाल बोले,—"सुकुमार कुमारो ! तुम्हारे फूलों सरीखे कोमल शरीरोंको देखनेसे जान पडता है कि तुम लोगोंने सेवा करनेके लिए नहीं बल्कि सेवा करानेके लिए जन्म ग्रहण किया है। छत्रसालको अपनी सेवा करानेकी आवश्यकता नहीं। बल्कि तुम्हारे सरीखे सुकुमारोंकी सेवा करनेमें ही मुझे विशेष आनन्द होगा। तुम लोग मेरे साथ मेरे तम्बू तक चलो। महाराज प्राणनाथ प्रभुके दिव्य उपदेशसे सारा बुन्देलखण्ड कैसा खडबडाकर जाग उठा है ! रणवीर बुन्देले देखें कि उद्यानोंके पुष्पों, आकाशके नक्षत्रों और घरके बालकोंमें भी जो कोमलता नहीं मिल सकती, वह कोमलता केवल स्वतन्त्रताके लिए भीषण रणक्षेत्रमें उतरनेके लिए तैयार हुई है। इन सुकुमार कुमारोंको रणक्षेत्रमें जाते देखकर प्रत्येक वीरमें आत्मनिष्ठा उत्पन्न होगी और उनमें रणोत्साहका तेज प्रकाशित होने लगेगा। तुम्हारे समान अलौकिक सुन्दर, पवित्र और कोमल देवदूतोंको बुन्देलखडकी स्वतन्त्रताके लिए लडते देखकर विन्ध्यवासिनीदेवी सन्तुष्ट होंगी, हम लोगोंको वरदान देंगी और हमारे देशको स्वतंत्र करेंगी।"

विम०—"महाराज ! हम लोग आपके पास जानेके लिए तैयार हो कर ही घरसे निकले थे।"

छत्र०—"लेकिन तुम लोग मेरा पता किस प्रकार लगाते ?"

विज०—"तारकाओंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं होती कि तारकापति कहाँ मिलेंगे, भक्तोंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं होती कि परमे-

श्वर कहाँ मिलेंगे, भ्रमरको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं होती कि मकरन्द कहाँ मिलेगा। ठीक उसी प्रकार हम लोगोंको यह जाननेकी आवश्यकता नहीं थी कि बुन्देलखण्डका स्वातन्त्र्य रवि हम लोगोंको कहाँ मिलेगा। तारकापतिका केवल तेज ही तारकाओंको आकर्षित करता है, परमेश्वरका केवल प्रेम ही भक्तोंको अपनी ओर खींचता है और मकरन्दकी केवल सुगन्धि ही भ्रमरोंको अपने पास बुला लेती है। लेकिन महाराज आपके अद्वितीय तेज, अलौकिक प्रेम और उत्कट सद्गुण-सुगन्ध इन तीनों पदार्थोंके कारण कौन तारका आपके पास न पहुचेगी, कौन भक्त आपके समीप न पहुँचेगा और कौनसा भ्रमर आपके चारों ओर न गुजारेगा। आपकी सेवा करनेके उद्देश्यसे जिस समय हम लोग अपने स्थानसे चले उस समय आपका तेज गुप्त रूपसे हम लोगोंको मार्ग दिखाने लगा और आपका सद्गुण-सुगन्ध हम लोगोंके प्रवासका श्रम मिटाने लगा। इस प्रकार आपका पता लगानेमें हम लोगोंको कोई कठिनता नहीं हुई।"

"विम०—ओडछेका राज-प्रासाद छोडनेके क्षणभर बाद ही आपसे भेंट हो गई, इसीसे आप समझ सकते है कि हमारा मार्ग-दर्शक कितना चतुर है।"

छत्र०—"विमलदेव! क्या तुम्हारी माता रानी हीरादेवी तुम्हारा स्वतन्त्रताके झण्डेके नीचे जाकर लडना पसन्द करती है?"

विम०—"यदि उन्हे मेरा यह काम पसन्द होता तो मुझे इस प्रकार छिपकर अपने महलसे निकलनेकी क्या आवश्यकता थी? उस समय ओडछेके प्रधान प्रवेश-द्वार पर स्वतन्त्रताका झण्डा खडा करके, नौबत बजवाकर, विन्ध्यवासिनीका प्रचण्ड जयजयकार करके, चतुर्भुजका मगल नामोच्चार करके, हजारों वीरोंके साथ में आपकी सहायताके लिए आता। लेकिन मेरा ऐसा भाग्य कहाँ? इसी लिए मुझे छुक छिपकर आपके पासतक आना पडा। महाराज! आपके पिताजीके राष्ट्रोद्धारके प्रयत्नमे मेरी माताने जितना विरोध किया था उतना ही विरोध वह आपके प्रयत्नमें भी करना चाहती है। जबसे उसने सुना है कि आप बुन्देलखण्डमें लौट आये हैं, बडे उत्साहसे सेना एकत्र कर रहे हैं और बुन्देलखण्डके बडे बडे गरोह आपको खोजते हुए पहुँचते हैं तबसे वह बहुत ही घबरा रही है। परसों वह अपने पक्षवाले सरदारोंका फिर एक दरबार दीवानखानेमें करनेवाली है। उसमें इसी बात पर विचार होगा कि आपका प्रयत्न किस प्रकार निष्फल किया जाय और आपके सहायकोंका कैसे नाश हो—"

छत्रसाल एकाग्र चित्तसे विमलदेवकी बातें सुन रहे थे। विमलदेवने आगे कहा,—"लेकिन मैं जहाँतक समझता हूँ, उस दरबारमें भी उनका वह उद्देश्य पूरा न होगा। क्योंकि प्राणनाथ प्रभु और युवराज दलपतिरायके अविश्रान्त परिश्रमके कारण प्रत्येक बुन्देलेको अपना श्रेष्ठ कर्त्तव्य दिखाई पडने लगा है। इसी लिए जो बहुतसे राजा और सरदार पहले उनके पक्षमें थे, वे अब उनका पक्ष छोड कर आपकी ओर आ जायँगे।"

छत्र०—"विमलदेव! तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है। प्राणनाथप्रभुने अपनी दिव्यवाणीसे सचमुच बुन्देलखण्डमें विलक्षण क्रान्ति कर दी है। अभी तक मैंने छावनीका स्थान निश्चित नहीं किया है। अभीतक मैंने युद्धका निश्चय प्रकट नहीं किया है, अभी तक मैंने अपने विचार लोगोंको नहीं बतलाये हैं तो भी असख्य बुन्देले युवक मेरी खोजमे घूम रहे हैं। विमलदेव! मैं एक बार तुम्हारी मातासे मिलना चाहता हूँ। उनके पक्षके लोगोंको मैं एक बार समझाना चाहता हूँ। मैं यह सुनना चाहता हूँ कि वे लोग स्वतन्त्रताके विरुद्ध क्यों प्रयत्न करते हैं और तदुपरान्त मैं उनसे न्यायपक्ष ग्रहण करनेके लिए प्रार्थना करना चाहता हूँ। इस लिए मैं चाहता हूँ कि परसोंवाले दरबारमें मैं भी किसी प्रकार पहुँच जाऊँ।"

विजयदेवने पूछा,—"क्या आपको इस बातकी आशा है कि रानी हीरा-देवी और उनके पक्षके लोग आपकी बात स्वीकार करेंगे?"

छत्र०—"चाहे वे लोग मेरी बात स्वीकार करें और चाहे न करें, पर मैं उन्हें एक बार अवश्य समझाऊँगा। मेरा दृढ विश्वास है कि परस्परके मत्सरकी आगमें जलनेवाली आत्मायें प्रार्थना और कोमल शब्दोंसे शान्त हो जाती हैं। इस लिए मैं मान-अपमान, सुख-दु:ख आदिका विचार न करके अपने बुन्देले भाइयोंको स्वतन्त्रतादेवीका सच्चा भक्त बनाऊँगा। विमलदेव! चतुर्भुजके देवा-लयकी मूर्ति तोडनेके लिए फिदाईखाँने कौनसा दिन नियत किया है?"

विम०—"जब पहली बार चतुर्भुजका मन्दिर तोडनेमें फिदाईखाँको सफ-लता नहीं हुई तब उसने दिल्लीसे उसके तोडनेका एक शाही फरमान मँगवाया है। दो दिन बाद दीवानखानेमें हीरादेवीका एक दरबार फिर होगा। जिस समय दरबार होता रहेगा उसी समय फिदाईखाँके सिपाही जाकर मन्दिर तोड डालेंगे।"

छत्र०—" बहुत ठीक। लेकिन क्या तुम लोग जानते हो कि रणदूलहखाँ किस कामके लिए ढाँड़ेर गया है ?"

पहले तो विमलदेव कुछ देर तक चुप रहे और तब विजयदेवकी ओर देखते हुए बोले,—" राजा कंचुकीरायने अपना राज्य उसे दे देना निश्चित किया है। इसी लिए वह बड़ी धूमधामसे कल सन्ध्या समय ढाँड़ेर गया है।"

छत्र०—(आश्चर्यसे) " क्या कहा ? राजा कचुकीराय अपना राज्य रणदूलहखाँको दे देंगे ? उन्हें क्या हो गया है जो वे दुर्बल हिन्दुओंकी शक्तिका इस प्रकार नाश करनेपर तुल गये हैं ? क्या उन्हें कोई कहने सुननेवाला नहीं है ?"

विम०—" महाराज ! आरम्भसे ही उनके जैसे विचार हैं वे किसीसे छिपे नहीं हैं। तिसपर मेरी माताने उनसे कह दिया है कि तुम अपना राज्य रणदूलहखाँको दे दो, नहीं तो महाराज छत्रसाल तुम्हारे राज्यपर आक्रमण करके उसपर अधिकार कर लेंगे। यह भी निश्चित हुआ है कि विजयाका विवाह किसी बहुत ही साधारण सरदारके पुत्रसे कर दिया जाय और उन दोनोंको राज्यका अश भी न दिया जाय। ढाँडेरकी प्रजा और प्रधान सज्जनरायजीने इन बातोंका बहुत विरोध किया था पर राजा कचुकीरायने किसीकी बात न मानी।"

छत्र०—"हे ईश्वर ! तू ही कृपाकर इन लोगोंको सुमति दे। विमलदेव तुम इस समय लौटकर अपने महलमें चले जाओ। ढाँडेर राज्य और वहाँकी प्रजाकी सहायता इस समय बहुत ही आवश्यक है। हीरादेवीके दरबारके दिन मैं तुमसे मिलूँगा। तुम्हारे राज्यकी सारी सेना मुझे सहायता देनेके लिए तैयार है। तुम्हारे सेनापति चामुण्डराय मेरी आज्ञाकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुम यह पत्र उन्हें दे देना। जिस समय हीरादेवीका दरबार आरम्भ हो उस समय तुम चामुण्डरायके साथ अपनी सारी सेना लेकर फिदाईखाँकी सेनापर आक्रमण कर देना। तुम्हारी सहायताके लिए कुछ चुने हुए बुन्देले वीरोंको साथ लेकर दलपतिराय ठीक समयपर वहीं पहुँच जायँगे। इसके अतिरिक्त प्रजासे भी तुम्हें यथेष्ट सहायता मिलेगी। परमात्मा चतुर्भुज तुम्हें यशस्वी करेंगे।"

विमलदेव तो वहासे लौट जानेके लिए तैयार हो गये, पर विजयदेव वहाँसे हटना नहीं चाहते थे। यह देखकर विमलने विजयसे कहा,—" अब क्या सोचते हो ? चलो, लौट चलें।"

विजय०—" अब मैं व्यर्थ वहाँ चलकर क्या करूँगा ? मुझे कुछ काम करने दो। (छत्रसालसे) महाराज, यदि मुझे आज्ञा हो तो मैं आपके साथ रहकर आपकी कोई सेवा करूँ।"

छत्र०—" विजय, मुझे किसी प्रकारकी सेवाकी आवश्यकता नहीं है। तथापि तुम लोगोंके साथ रहनेसे मुझे स्वर्गका सुख मिलता है। विमल ! तुम अपने मित्रको दो दिनोंके लिए छोड दो। दो दिन बाद फिर तुम्हारी इनके साथ भेंट हो जायगी।"

विम०—" महाराज ! मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। पर इस बातका आप मुझे वचन दें कि जो अनुग्रह आप इस समय विजयपर कर रहे हैं वही अनुग्रह मुझपर भी करेंगे।"

छत्र०—" विमल ! विजय मुझे जितने प्रिय हैं तुम भी उतने ही प्रिय हो। इस विमल विजयका लाभ मेरे लिए बहुत ही सुखदायक होगा। तुम दोनोंपर सदा मेरा निर्व्याज प्रेम रहेगा।"

विजय और विमलके आनन्दकी सीमा न रही। थोडी देर बाद विजयदेवके कोमल हाथोंके स्पर्शका सुख लेते हुए छत्रसाल वहाँसे चले गये।

जब विमलदेव लौटकर अपने महलमें पहुँचे तब उन्हें मालूम हुआ कि उनकी नव-विवाहिता स्त्री अचानक लापता हो गई। वे बडी तत्परतासे उसकी खोजमें लग गये।

* * *

पच्चीसवाँ प्रकरण।

छत्रसालका जयजयकार।

जिस दिन चम्पतराय स्वर्गवासी हुए थे उसी दिनसे हीरादेवी अपने आपको कृतकृत्य समझने लग गई थी। जिस दिन उसने सुना कि चम्पतराय मारे गये, महेवा जब्त हो गया, सुकुलादेवी और छत्रसाल जंगलोंमें मारे मारे फिरते हैं और आज नहीं तो कल उनका भी अन्त हो जायगा, उसी दिन

उसने समझ लिया कि चम्पतरायके परिवारका समूल नाश हो गया और मेरे जीवनका प्रधान कर्त्तव्य पूरा हो गया। उसने यह भी निश्चित कर लिया था कि अब मैं अमुक स्थानपर रहकर अमुक प्रकारसे अपने पुराने पापोंका प्रायश्चित्त करते हुए शेष जीवन बिता दूँगी। जब कई दिनों तक उसे अपने जासूसोंसे छत्रसाल या सुफलादेवीके सम्बन्धमे कोई समाचार न मिला तब वह यह समझकर बहुत ही प्रसन्न हुई कि अवश्य ही इन दोनोंको जंगली जानवरोंने खा डाला होगा। उसी अवसरपर राजा शुभकरण युद्धक्षेत्रसे लौटकर आये। शुभकरणकी क्षणिक भेंट हीरादेवीको बहुत दिनों तक न भूली। पर बीचमें ही विमलदेवका राज्यारोहण और विवाह हुआ था और उसीके झमेलेमें वह शुभकरणको भूल रही थी कि इतनेमें उसने सुना कि देवगढके युद्धमे बादशाहकी ओरसे लडकर छत्रसालने बडी भारी विजय प्राप्त की। अब उसे फिर भविष्य भवितव्य दिखाई पडने लगा। लेकिन इस बातकी उसने स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की थी कि बुन्देलखण्डकी प्रजाके विचार अब इतने अधिक बदल गये हैं। उसे इस बातका दृढ विश्वास था कि यदि राजा शुभकरण मेरी ओरसे न भी लड़ें, तो भी मैं अकेली ही छत्रसालको अवसर पडनेपर अच्छी तरह परास्त कर सकूँगी। लेकिन इन बातोंकी उसे कल्पना भी न थी कि प्राणनाथप्रभुने लोगोंके विचार कहाँ तक बदल दिये हैं, उन्होंने लोगोंका आलस्य और भ्रम कहाँतक दूर कर दिया है, दासत्वसे मुक्त होनेका प्रयत्न करना लोग अपना कितना श्रेष्ठ कर्त्तव्य समझने लगे हैं, और हमारी प्रजा और यहाँतक कि हमारी सेना ही हमारे विरुद्ध शस्त्र उठानेके लिए कहाँ तक तैयार हो गई है। उसे पूरा पूरा विश्वास था कि हमारी मण्डलीका प्रत्येक राजा पहलेकी तरह ही हमारा साथ देगा, हमारी हर एक बात मानेगा और अच्छा वेतन पानेपर प्रत्येक बुन्देला वीर हमारी आज्ञाके अनुसार काम करेगा। इसी लिए ज्यों ही उसने सुना कि छत्रसाल सेना सग्रह कर रहे हैं त्यों ही उसने अपनी मडलीके सब राजाओं और सरदारों आदिको निमन्त्रण भेजा। दरबारका दिन नियत किया और सूबेदार फिदाईखाँको अध्यक्ष बनानेके लिए राजी किया। ओड़छेके नागरिकोंके नेत्र फिर मुलाकाती दीवानखानेकी ओर खिंचने लगे।

आज यह निश्चित करना बहुत ही कठिन था कि हीरादेवीका भेस जनाना है या मरदाना। उसने अपने मस्तकपर राजा पहाडसिंहका शिरस्त्राण

रक्खा था जिससे उसका चेहरा मरदाना मालूम होता था। उसकी ओढ़-नीका आँचल कन्धे तक पहुँचकर ही रह गया था। उसके हाथोंमें एक नगी तलवार लपलपा रही थी। विमलदेव इस बातकी प्रतीक्षा कर रहे थे कि वह कब मुलाकाती दीवानखानेकी ओर जाती है। थोड़ी देर बाद वह महलसे निकलकर उक्त सजधजसे दीवानखानेकी तरफ बढ़ी। विम-लदेव भी बड़े आनन्दसे अपने घोड़ेपर सवार होकर जल्दी जल्दी सेनापति चामुण्डरायकी ओर चले।

जिस समय हीरादेवी दीवानखानेमें पहुँची उस समय फिदाईखाँ अध्य-क्षके आसनपर बैठे हुए थे और सारा मण्डप बुन्देलखण्डके राजाओं और सरदारोंसे भरा हुआ था। वह मरदानी चालसे चलती हुई फिदाईखाँके पासतक पहुँची और वहीं एक आसनपर बैठ गई। उसकी चाल ढाल देखकर सब लोग बहुत ही चकित हुए। उसी समय हीरादेवी गरज कर बोल उठी,–

" आप लोग जानते हैं कि शाहशाह देहलीने बुन्देलखण्डसे विद्रोह और विद्रोहियोंका समूल नाश करके हम लोगोंपर कितना बड़ा उपकार किया है। इस प्रदेशको अपने संरक्षणमें लेकर उन्होंने सरदार फिदाईखाँ सरीखे नररत्नको उसका सूबेदार नियुक्त किया है, और इस प्रकार वे इस प्रदेशकी साम्राज्यनिष्ठ प्रजाके हितकी वृद्धिमें बहुत कुछ सहायक हुए हैं।"

बीचमें ही एक युवक सरदार बोल उठा, " रानी साहब ! शायद आप यह समझ रही हैं कि इस समय जो लोग यहाँ उपस्थित हैं वे अन्धे, बहरे और मूर्ख हैं। फिदाईखाँ या शाहशाहने हम लोगोंका कौनसा हित किया है? महेवाके चम्पतरायके प्राण लेकर शाहशाहने बुन्देलखण्डपर फिरसे जजिया सरीखा अन्यायपूर्ण कर लाद दिया है। हमारे प्राणोंसे भी प्रिय देव-मन्दिरोंका जल्दी जल्दी नाश किया जा रहा है। हमारी और हमारे धर्म्मकी ये लोग बराबर दुर्दशा कर रहे हैं। ऐसी अवस्थामें यह कहना कहाँकी बुद्धिमत्ता है कि हमारे हितकी वृद्धि हो रही है?"

हीरादेवीने आवेशमें आकर कहा,—" शायद तुम्हें मालूम नहीं कि तुम इस प्रकारकी बातोंसे मेरा और शाहशाहका अपमान कर रहे हो, और तुम्हारे

लिए इसका परिणाम कैसा भयकर हो सकता है । अभी तुम लड़के हो, अभी तुम सरदार फिदाईखाँ या शाहंशाहकी उदारताकी कल्पना नहीं कर सकते। जबतक तुम सयाने और समझदार न हो जाओ तबतक तुम्हारी भलाई इसीमें है कि तुम हम लोगोंके बतलाये हुए मार्गपर ही चलो।"

एक वृद्ध राजा साहब बीचमें बोल उठे,—"रानी साहब! लोगोंको बहकाकर उपदेशके बहानेसे और अपने अनुभवी होनेका ढोंग करके आपने आजतक बुन्देलखंडकी बहुत कुछ हानि की है। बुन्देलखण्डमे इस प्रकार आग लगाकर आप दूरसे तमाशा देख रही हैं। बुन्देलखडकी एक पीढीको आपने देशद्रोही बना दिया। लेकिन शायद इतने अनर्थोंको ही आप यथेष्ट नहीं समझतीं और अभी कुछ नये अनर्थ करना चाहती हैं। लेकिन अब आप कृपा कीजिए और इन युवकोंको बहकाकर नष्ट करनेका प्रयत्न छोड दीजिए।"

हीरादेवीका आवेश बढ गया। उसने कहा,—"राजा साहब! आप बिना सोचे समझे कैसी बातें कर रहे हैं! आप सठिया तो नहीं गये हैं?"

पास ही बैठे हुए एक वृद्ध सरदारने कहा,—"राजा साहब न तो सठिया गये हैं और न बिना सोचे समझे बोल रहे हैं। अब तक उन्होंने जो पातक किये हैं उन्हींके कारण उनके मनमें ग्लानि उत्पन्न हुई है।"

हीरादेवी चिल्लाकर बोल उठी,—"बस! अब आप लोग चुप रहिए। आप लोगोंकी ये बातें मुझे या सूबेदार साहबको बिलकुल पसन्द नहीं हैं। अगर अब आप लोग ऐसी बातें करेंगे तो लाचार होकर सूबेदार साहबको आप लोगोंकी रियासतें और जागीरें जब्त कर लेनी पड़ेंगी।"

हीरादेवीकी यह धमकी बहुतसे राजाओं और सरदारोंको बहुत बुरी और अपमानकारक मालूम हुई। एक राजा साहब बोल उठे,—

"आप रहने दीजिए। हम लोग अच्छी तरह समझ गये हैं कि अपने राज्योंकी रक्षा किस प्रकार करनी चाहिए। अब हम लोग समझ गये हैं कि दूसरोंकी लातें खाने और 'जी हॉ, जी हॉ' करनेकी अपेक्षा अपने बाहुबलके भरोसे अपने राज्यका कहीं अच्छा सरक्षण होता है। हम लोगोंकी भलाई इसीमें है कि आप हम लोगोंके राज्योंकी रक्षाकी चिन्ता छोड दें।"

बहुत ही दु खित होकर हीरादेवीने कहा,—"जान पड़ता है, आज आप लोगोंकी बुद्धि ठिकाने नहीं है।"

कालिंजरके बूढे राजा साहब बोल उठे,—"रानीसाहब ! हम लोगोंकी बुद्धि तो पहले ही ठिकाने नहीं थी। आपके बहकानेमें आकर ही हम लोगोंने अबतक इतने अनाचार किये। इस समय बुन्देलखण्डमें धर्म और नीतिका जो ह्रास और नाश हो रहा है उसके मूल कारण हम राजा लोग ही हैं। यदि हम लोगोंकी बुद्धि ठिकाने होती तो अपने पतिकी हत्या करनेवालीकी बातोंमें न आते और न उनकी सम्मतिके अनुसार चलते। चम्पतरायका अत्यन्त पावन कृत्य हम लोगोंको सदोष न जान पड़ता, स्वयं अपनी हानि करनेके लिए हम लोग तलवार न चलाते और न अपने बचे बचाये अधिकार खो बैठते। लेकिन अब हम लोगोंकी बुद्धि ठिकाने आ गई है और हम लोग अच्छी तरह समझने लग गये हैं कि आपका पक्ष कितना अन्याय-पूर्ण, कितना अनीति-युक्त और कितना स्वार्थ-मूलक है।"

हीरादेवी आँखें फाड़कर बूढे राजा साहबकी ओर देखते हुए बोली,—"हैं राजा साहब ! आपको क्या हो गया है ? खैर, यदि आपको इस प्रकार मेरा विरोध ही करना था तो आप इस दरबारमें ही क्यों आये ? अगर आप हमारी बातें नहीं मानना चाहते थे तो फिर आपने ओड़छेकी सीमामें पैर ही क्यों रक्खा ?"

कालिंजरके राजाने कहा,—"आपको ऐसी बातें कहनेका अधिकार ही नहीं है। ओड़छा राज्यके साथ आपका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। पहले मैं ही आपसे पूछता हूँ कि इस उच्च आसनपर बैठनेका आपको क्या अधिकार है ? ओड़छेकी प्रजा पर शासन करनेवाली आप कौन होती हैं ?"

मारे क्रोधके दाँतोंसे होंठ चबाते हुए हीरादेवी बोली,—"मैं परलोकवासी राजाकी रानी और युवराज विमलदेवकी माता हूँ।"

कालिंजरके राजाने कहा,—"यह सब आप रहने दीजिए। मरते समय राजा पहाड़सिंहने जो कुछ कहा था वह हम लोग भूल नहीं गये हैं। सब लोग जानते हैं कि उन्होंने साफ कह दिया था कि विमलदेव हमारा पुत्र नहीं है और हमारे वास्तविक उत्तराधिकारी राजा चम्पतराय हैं। यहाँ जितने राजा और सरदार उपस्थित हैं, वे सब उस समय भी उपस्थित थे। वही लोग बतलावें कि मरते समय राजा पहाड़सिंहने क्या कहा था। उन्होंने साफ यह कहा था न

कि विमलदेव हमारा पुत्र नहीं है ? उनकी अन्तिम इच्छा यही थी न कि ओड़छेके सिंहासनपर छत्रसाल बैठे ?"

बहुतसे लोगोंने कहा,—"हाँ हाँ, ठीक है।"

एक राजाने कहा,—"राजा पहाड़सिंहकी अन्तिम इच्छा पूरी करनी चाहिए। ओड़छेके सिंहासनपर छत्रसालको बैठाना चाहिए। अज्ञानके कारण हम लोगोंने चम्पतरायका जो कुछ विरोध किया था, उसका बदला चुका देना चाहिए। छत्रसाल ही ओड़छेके सिंहासनपर बैठनेके योग्य हैं।" इस पर कई राजाओंने कहा,—"हाँ, अवश्य ऐसा ही होना चाहिए।" इसके बाद बहुतसे लोगोंने जोरसे छत्रसालका जयजयकार मनाया।

उसी समय सब लोगोंको एक युवक गम्भीर मुद्रासे सभा-मण्डपकी ओर आता हुआ दिखाई दिया। सब राजाओं और सरदारोंने उठकर फिर उन्नत स्वरसे कहा,—"छत्रसालकी जय।"

हीरादेवी मारे क्रोधके बहुत ही सन्तप्त हुई और ईर्ष्यासे जलने लगी। छत्रसालका जयजयकार सुनकर फिदाईखाँ भी घबरा गया। सभा-मण्डपके राजा और सरदार बहुत ही प्रसन्न दिखाई पड़ने लगे। उस समय मानो उन्हें साक्षात् परमेश्वर ही मिल गये थे।

हीरादेवीका क्रोध पराकाष्ठाको पहुँच गया। वह आँखें लाल करके छत्रसालकी ओर देखती हुई बोली,—"तुम यहाँ कैसे चले आये ? तुम तुरन्त इस मण्डपसे निकल जाओ, नहीं तो तुम जीते न बचोगे। विद्रोहियोंका यहाँ कोई काम नहीं है।"

छत्र०—(बहुत ही नम्रतापूर्वक) "यहाँसे निकल जानेके लिए मैं नहीं आया हूँ। मैं इन्हीं लोगोंमें मिलकर रहने, इनसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करने और इनके मनसे द्वेष-भाव निकालनेके लिए यहाँ आया हूँ। आप मुझपर क्यों व्यर्थ नाराज होती हैं ? मैंने आपका कौनसा अपराध किया है ?"

हीरा०—"तुम्हारे अपराधोंकी फेहरिस्त सुनानेकी मुझे फुरसत नहीं है। यह दरबार साम्राज्यके प्रति भक्ति दिखलानेके लिए किया गया है। जब दरबार बरखास्त हो जायगा तब तुम्हारे अपराध बतलाये जायँगे और तुम्हें उचित दण्ड दिया जायगा।"

फिदाईखाँने कुछ डरते हुए कहा,—"बेशक।"

छत्रसालने फिदाईखाँकी ओर देखते हुए शान्तिपूर्वक कहा,—"बुन्देलखडमें अब मुसलमानोंके शासनकी अवधि पूरी हो चली है। शीघ्र ही बुन्देलखण्ड इस दासत्वसे मुक्त होकर स्वतन्त्रताका आनन्द लेने लगेगा। आज ही स्वतन्त्रताके प्रयत्नका मगलकारक समारभ चतुर्भुजके मन्दिरमें आरम्भ हुआ है। राजा विमलदेव अपने सेनापति चामुण्डरायको साथ लेकर चतुर्भुजके मन्दिरकी रक्षा कर रहे हैं। यहाँकी अधिकाश प्रजा भी उनकी सहायताके लिए तैयार है। थोडी ही देरमें विमलदेव, दलपतिराय और चामुण्डराय विजयी होकर यहाँ आवेंगे। फिदाईखाँ! चतुर्भुजका मन्दिर तोडनेके लिए तुमने जो सैनिक भेजे हैं वे शीघ्र ही यमपुर पहुँचेगे। तुम्हें गिरिफ्तार करनेका भार मैंने अपने ऊपर लिया है। अगर तुम चुपचाप उठकर मेरे साथ चले चलोगे तो तुम्हारी जान बच जायगी। लेकिन अगर तुम जरा भी चीं-चपड करोगे तो यह तलवार तुम्हारा काम तमाम कर देगी। चलो, इस सिंहासनपरसे नीचे उतरो। इस समय तुम हमारे कैदी हो।"

फिदाईखाँ थोडी देर तक चुपचाप सोचता रहा। उसने पहले चारों ओर दृष्टि फेरी तब अन्तमें हीरादेवीकी ओर देखा। अपने आपको हर तरहसे लाचार देखकर वह सिंहासनसे नीचे उतरना ही चाहता था कि इतनेमें हीरादेवीने कर्कश स्वरसे कहा,—

"सूबेदार साहब! आप इस छोकरेसे जरा भी न डरें। इसने अब तक जितनी बातें कही हैं वे सब झूठ हैं। आपके सैनिकोंने अबतक चतुर्भुजका मन्दिर तोड डाला होगा। चामुण्डराय या विमलदेव उनसे कभी न लडेंगे। ओडछेके नागरिक बहुत ही विश्वसनीय और राजनिष्ठ हैं। वे कभी ऐसा अनुचित काम न करेंगे। आप निश्चिन्त होकर बैठे रहें। (राजाओं और सरदारोंकी तरफ देखकर) क्या आप लोग विद्रोही छत्रसालकी बातोंमें आकर शाहशाह और साम्राज्यके साथ वैर करना कल्याणकारक समझते हैं? शाहशाहका इतना प्रबल राज्य उठा देनेका प्रयत्न करना बडी भारी मूर्खता है। यदि आप लोग छत्रसालके इस प्रयत्नका विरोध न करेंगे तो सूबेदार साहब और शाहशाह सलामत समझ लेंगे कि आप लोगोंकी उसके साथ सहानुभूति है। आजका दरबार इसी लिए किया गया है कि आप लोग छत्रसालके कृत्यों पर अपना

असन्तोष और साम्राज्यके साथ सहानुभूति प्रकट करें। जिसमे शाहंशाह आप लोगोंपर नाराज न हों, जिसमें आप लोगोंकी साम्राज्य-भक्तिमें कलंक न लगे और जिसमें बुन्देलखण्डकी शाति भग न हो, इस लिए आप लोगोंको केवल शब्दोसे ही नहीं बल्कि अपने कार्य्योंसे भी छत्रसालके कृत्योंका विरोध करना चाहिए। सूबेदार साहब! आपको जरा भी डरना न चाहिए। किसीकी मजाल नहीं जो आपको छू भी सके।"

छत्रसालने पहलेकी तरह ही शान्त और गम्भीर होकर कहा,—

"फिदाईखॉ! तुम व्यर्थ विषकी परीक्षा न करो। हम बुन्देलोंका साहस और शूरता तुम अच्छी तरह जानते हो। इस लिए चुपचाप अपने आपको मेरे सपुर्द कर दो। अब मैं तुमसे कुछ अधिक नहीं कहूँगा। अब मेरा काम तलवारसे होगा।"

छत्रसालके शब्दोंमें इतना अधिकार और तेज भरा हुआ था कि हीराढेवीकी बातोंका बिना कुछ विचार किये ही चटपट फिदाईखॉ अपने आसनपरसे उतरकर छत्रसालके पास चला आया और सिर झुकाकर नम्रतापूर्वक कहने लगा,–

"मैं आपके हुक्मका बन्दा हूँ। बराय मेहेरबानी मेरी जान बख्श दें और मुझे अपने बाल-बच्चोंमे जानेकी इजाजत दे।"

छत्र०—"खान! तुम घबराओ मत, तुम्हारी जान नही ली जायगी।" इसके बाद छत्रसालने सभा-मण्डपमें राजाओं और सरदारोंकी ओर देखकर कहा,—भाइयो! विन्ध्यवासिनीके आशीर्वाद और आप लोगोंकी सहायतासे मैं बुन्देलखण्डकी खोई हुई स्वतंत्रता फिरसे प्राप्त करनेके प्रयत्नमे लगा हूँ। लेकिन जब तक आप सब लोग एक न होंगे तब तक इस कार्य्यमें सफलता नहीं होगी। बुन्देलखण्डके स्वतंत्र हो जानेमें यहॉके प्रत्येक निवासीका हित है। जिन लोगोंके हितका प्रयत्न हो रहा है वे ही यदि एक न हुए, वे ही यदि अपने हित करनेवालोंसे लडने लगे तो फिर स्वतन्त्रता कैसे मिल सकेगी? यदि हम लोग आपसमें लडकर ही अपनी शक्ति और शूरताका नाश कर देंगे तो फिर गुलामीके गढेमें ले जानेवाली परकीय शक्तिसे हम लोग किस प्रकार लड़ सकेंगे? अब तक हम लोगोंकी गृह-कलहसे जो कुछ हानि हुई है वह आप लोगोंसे छिपी नहीं है। फिदाईखॉ बुन्देलखण्डके

सूबेदार बनाकर ओडछेमें रक्खे गये और उन्हें आप लोगोंको कठपुतलीकी तरह नचानेका अधिकार दिया गया, इसका कारण आप लोगोंकी गृह कलह ही है। बुन्देलखण्डमें रावसे रक तक प्रत्येक व्यक्तिपर जजिया सरीखा अन्यायपूर्ण कर लगाया गया, इसका कारण भी आप लोगोंका गृह-कलह ही है। बुन्देलखण्डके देव-मन्दिर गिराये जाने लगे, देवताओंकी परम पूज्य मूर्तियाँ पैरों तले रौंदी जाने लगीं, और धर्म्मका पग पग पर अपमान होने लगा, इसका कारण भी आप लोगोंका गृह-कलह ही है। आप लोगोंने पिताजीके साथ विरोध किया, उनके स्वतन्त्रता सम्बन्धी कामोंमें अडचनें डालीं और उनके प्रयत्नोंको सब प्रकारसे निष्फल और व्यर्थ किया। आप ही लोग सोचिए कि इसमें आप लोगोंका क्या लाभ हुआ। इसमें आप लोगोंने बुन्देलखण्डकी प्रजाका कौनसा कल्याण किया? जरा आँखें खोलकर देशकी अवस्था देखिए, तब आपको मालूम होगा कि आप लोगोंकी इस गृह-कलहके कारण बुन्देलखडकी कितनी अपरिमित हानि हुई है। महाभारत आदि ग्रन्थोंमें आप लोगोंने कौरवों और पाण्डवोंके घनघोर युद्धकी बहुतसी कथायें पढी होंगी। परस्पर एक दूसरेका नाश करनेके लिए वे कितने प्रयत्न किया करते थे? लेकिन आप लोग इस बातका विचार नहीं करते कि जब दूसरोंके साथ लडनेका प्रसग आता था तब वे किस प्रकार मिलकर एक हो जाते थे। गृह-कलहमें पाँच पाण्डव भले ही सौ कौरवोंसे लड़ते हों, पर दूसरोंसे लडनेके समय वे कितने अभिमानसे कहा करते थे कि हम लोग सौ कौरव और पाँच पाण्डव इस प्रकार एकसौ पाँच कौरव-पाण्डव हैं। आज हम लोगोंको कौरवों और पाण्डवोंके उपदेश पर ध्यान देना चाहिए। आप लोगोंसे तथा शाही सेनासे लडते लडते ही पिताजीके प्राण निकल गये। लेकिन अब वे जीवित नहीं हैं। अब तो उनके साथ आप लोगोंका किसी प्रकारका द्वेष नहीं है न? पिताजीने प्रमादके कारण, नासमझीके कारण अथवा ईर्ष्याके कारण आप लोगोंका अपमान किया होगा, आप लोगोंके साथ वैर खडा किया होगा, आप लोगोंको मानसिक और शारीरिक कष्ट पहुँचाये होंगे लेकिन ये सब कार्य उन्होंने स्वतन्त्रताके उदात्त कार्य्यके लिए ही किये थे। लेकिन तो भी वह कार्य पूरा न हो सका। अन्तमें उन्होंने समझ लिया कि बन्धु द्रोह और गृह कलहके कारण ही हमे सफलता नहीं हो सकी। अपने इस घोर प्रमादके लिए उन्हे बहुत पश्चात्ताप हुआ था। लेकिन अपनी भूल उन्हें बहुत देरमे मालूम हुई थी। इस

लिए वे इस भूलका सुधार न कर सके थे। अब मैंने वह कार्य्य अपने ऊपर लिया है। पिताजीने आप लोगोंका जो कुछ अपराध किया हो, उसके लिए अब मैं आप लोगोंसे क्षमा माँगता हूँ। यदि आप लोगोंको पिताजीका अपराध अक्षम्य जान पडता हो तो उसके लिए आप लोग जो दण्ड उचित समझें वह मैं भोगनेके लिए तैयार हूँ। यह छत्रसाल नि शस्त्र होकर अपने पिताकी ओरसे क्षमा मांगनेके लिए आप लोगोंके सामने खडा हुआ है। यदि आप लोग उचित समझें तो पुरानी बातोंको भूलकर स्वतंत्रताके प्रयत्नमे मुझे सहायता दें। अथवा यदि आप लोगोंको उचित जान पडे तो आप लोग मुझे प्राण-दण्ड दें और स्वयं सब लोग मिलकर स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए प्रयत्न करें। आप लोगोंके शस्त्रोंके घावों और क्षमाके शब्दोंको मैं समान प्रेमसे ही स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ।"

एक राजाने गद्गद स्वरसे कहा,—"छत्रसाल! तुम्हारे पिताने हम लोगोंका कोई अपराध नहीं किया। हम लोगोंने केवल इस दुष्टा हीरादेवीके फन्देमें फँसकर ही इतने अनर्थ किये और अन्तमे चम्पतरायके प्राण लिये। अब हम लोग समझने लग गये हैं कि आपसके वैरसे अबतक हम लोगोंकी कितनी हानि हुई है और कितनी हो रही है। महाराज प्राणनाथने हम लोगोंको वास्तविक अवस्थाका बोध करा दिया है। हमारी आँखोंके सामनेसे भ्रमका परदा बिलकुल हट गया है। हम लोग हीरादेवीका पक्ष छोडकर तुम्हारा साथ देने और स्वतंत्रताके झण्डेके नीचे लड़नेके लिए तैयार हैं। हम लोगोंने अबतक जो निन्दनीय कृत्य किये हैं, आशा है, तुम उदारता-पूर्वक उनके लिए हम लोगोंको क्षमा करोगे। हीरादेवी! तुम्हारा अन्यायपूर्ण और पातकी पक्ष आजसे हम लोगोंने छोड दिया। अब हम लोग छत्रसालके कथनानुसार सब काम किया करेंगे।"

हीरादेवीका क्रोध बहुत अधिक बढ गया, उसकी समझमें न आता था कि अब मैं क्या करूँ और क्या न करूँ। वह मानो उच्चाकाक्षाओंके शिखरपरसे अपमानके गहरे गड्ढेमें गिर पड़ी। उसे लाखों बिच्छुओंके एक साथ काटने-कासा कष्ट होने लगा। उसकी दृष्टि चचल हो गई। सब लोगोंको ऐसा जान पडने लगा कि वह अपनी आँखोंसे छत्रसाल पर चिनगारियाँ बरसा रही है। उसने बड़ी ही विलक्षण दृष्टिसे अपने हाथकी तलवार और पास ही खडे हुए

छत्रसालकी ओर देखा। उसके पैर काँपने लगे और वह छत्रसाल पर वार करनेके लिए विकल हो गई। इतनेमें छत्रसालकी गम्भीर और मधुर ध्वनि उसके कानोंमें पडी। छत्रसालको वोलते देखकर वह वडी शानसे अपने स्थान पर बैठ गई।

छत्रसालने वडी प्रसन्नतासे कहा,—"राजाओ और सरदारो! आप लोगोंने आज मुझे धन्य किया। आप लोगोंने प्राणनाथ प्रभुके प्रयत्नको धन्य किया। आप लोगोंने बुन्देलोंके तेजस्वी रक्तको धन्य किया। आप लोग परस्परके पिछले अपराधोंको क्षमा करें और बुन्देलखण्डके सुखके रथको दासताके अन्धेरे गड्ढेसे निकाल कर स्वतन्त्रताके भव्य प्रासादकी ओर ले चलें। आइए, हम सब लोग आनन्दपूर्वक एक दूसरेसे गले मिलें और आगेके लिए अपना कार्य्यक्रम निश्चित करें।"

छत्रसाल यह बात कह ही रहे थे और राजा तथा सरदार प्रेमपूर्वक गले मिलनेके लिए आगे वढ ही रहे थे कि इतनेमें हीरादेवी बाघिनकी तरह गरजती हुई छत्रसाल पर टूट पडी। छत्रसालके मस्तकपर वह अपने हाथकी तलवारसे वार करना ही चाहती थी कि किसीने ऊपरसे ही उसका हाथ पकड़ लिया। उसने क्रोध भरी दृष्टिसे अपना हाथ पकडनेवालेकी ओर देखा। देखते ही उसका सारा क्रोध नष्ट हो गया और वह उसकी ओर भयभीत मुद्रासे देखने लगी।

मेघके गर्जनकी तरह भीषण गर्जन हुआ,—"पातकी स्त्री! तेरे अपवित्र हाथको स्पर्श करना मैं अपना दुर्भाग्य समझता हूँ। लेकिन बुन्देलखण्डके इस अमोल हीरेकी रक्षाके लिए मुझे विवश होकर ऐसा करना पडता है। अपना हाथ नीचे कर और अपनी आँखोंपर चढा हुआ खून उतार डाल। तेरे समान राक्षसी इस ससारमें ढूँढे न मिलेगी। पर आज मैं तुझे सब अपराधोंका पूरा दण्ड दूँगा। उस दिन तू मुझे बहकाकर निकल भागी थी, पर आज तू मुझसे न बच सकेगी। मैं जो कुछ पूछता हूँ उसका ठीक ठीक उत्तर मुझे मिलना चाहिए। यदि उसमें तूने किसी तरहकी चालाकी की या कोई बात तेरे मुँहसे झूठ निकली तो तेरी ही तलवार तेरे खूनसे भरी हुई दिखाई देगी। तू सच सच बतला कि ललिताके प्राण किस प्रकार गये।"

हीरादेवीका चेहरा बिलकुल काला पड गया। उसमें एक शब्द बोलनेकी भी शक्ति न रह गई। थोडी ही देर बाद उसने समझ लिया कि अब शुभकरण मुझे किसी प्रकार न छोडेंगे। तो भी उसने उनके प्रश्नका कोई उत्तर न दिया। उसकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी।

शुभकरणने उसे चुप देखकर फिर कडककर पूछा—" हीरादेवी! मेरे प्रश्नका उत्तर तुरन्त मिलना चाहिए। नहीं तो क्षण भर बाद तेरी गरदन जमीनपर लोटती हुई दिखाई देगी। "

लाचार हीरादेवीने सिसकते हुए कहा—" ललिताका कौमार्य्य नष्ट नहीं किया गया था और न उसने आत्म-हत्या ही की थी। वह पहाडीपरसे गिरकर मर गई थी। "

हीरादेवीकी बात सुनकर शुभकरण थोडी देर तक चुप रहे। तदनतर उन्होंने यह जानना चाहा कि हीरादेवी इस सम्बन्धमें झूठ क्यों बोली थी। पर हीरादेवी केवल रोती ही रही वह एक शब्द भी न बोली। बहुत देर बाद उसने केवल इतना कहा,—"मैंने लोगोंके मनमें केवल चम्पतरायके प्रति घृणा उत्पन्न करनेके लिए झूठमूठ वह बात कही थी।" इसके बाद वह फिर पहलेकी तरह रोने लगी।

शुभकरणने आवेशमें आकर कहा,—"राजाओ और सरदारो! आजसे सोलह वर्ष पहले इसी दीवानखानेमें आप लोगोंके सामने मैंने प्रतिज्ञा की थी कि मैं चम्पतरायके प्राण लूँगा और उनके स्वतंत्रता सम्बन्धी कार्य्योंको विध्वस करूँगा। लेकिन आज मैं आप लोगोंके सामने अपने आपको उस प्रतिज्ञासे मुक्त करता हूँ। मुझे धोखा देकर और बहका कर मुझसे वह प्रतिज्ञा कराई गई थी। इस लिए उस प्रतिज्ञासे मुक्त होनेका मुझे पूरा अधिकार है। हीरादेवीने मुझसे जिस प्रकार प्रतिज्ञा कराई थी वह आप लोग जान ही चुके हैं। अब आप ही लोग बतलावें कि मुझे उस प्रतिज्ञासे मुक्त होना चाहिए या नहीं?"

सब राजाओं और सरदारोंने कहा,—" आजसे हम लोगोंने भी हीरादेवीका पक्ष छोड दिया और छत्रसालका पक्ष ग्रहण किया है। आपको इस नीच प्रतिज्ञाके छोडनेका पूर्ण रूपसे अधिकार है। आप सरीखे योद्धाकी सहायतासे बुन्देलखण्ड शीघ्र ही स्वतत्र हो जायगा। "

शुभ०—" अब आप लोग बुन्देलखंडको स्वतन्त्र हुआ समझिए। मैं आप लोगोंके सामने अपनी पुरानी प्रतिज्ञाका त्याग करता हूँ और इस बातकी नई प्रतिज्ञा करता हूँ कि जब तक मैं जीता रहूँगा तब तक बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र करनेका प्रयत्न करता रहूँगा। आप लोग स्वातन्त्र्य-रवि और अपने युवक नायकका जयजयकार मनावें।"

सब लोगोंने उन्नत और गम्भीर स्वरसे कहा,—" छत्रसालकी जय।"

इसके उपरान्त शुभकरणने छत्रसालसे कहा,—"छत्रसाल! मेरा प्रिय पुत्र दलपतिराय कहाँ है? उससे मिलनेके लिए मेरा मन आतुर हो रहा है।"

छत्र०—" महाराज! वे अपनी सेना लेकर विमलदेवकी सहायताके लिए चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर गये हैं।"

शुभ०—" क्या विमलदेव हाथमें तलवार लेकर लड रहे हैं?"

छत्र०—" जी हाँ।"

शुभ०—" विमलदेव किससे लड रहे हैं?"

छत्र०—"चतुर्भुजका मन्दिर तोड़नेके लिए गई हुई फिदाईखाँकी सेनासे।"

शुभ०—" राजाओ और सरदारो! जब विमलदेव सरीखा युवक हाथमें तलवार लेकर शत्रुसे लड रहा है तब हम लोगोंका यहाँ बैठकर वाग्युद्ध करना ठीक नहीं। चलिए, सब लोग चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर चलें।"

शस्त्रोंकी प्रचण्ड झनझनाट हुई। तुरन्त ही सब लोग " छत्रसालकी जय" कहते हुए चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर दौड पडे।

* * *

छब्बीसवाँ प्रकरण।

बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताका दिन।

ओडछेके युद्धमें विजय-श्रीने छत्रसालके गलेमें माला डाली। ओडछेके प्रासाद और प्रवेशद्वारपर बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताके निशान फडकने लगे। स्वातन्त्र्यरविकी पहली किरणका आनन्द ओड़छेके नागरिकोंके हिस्सेमें ही आया और उनके चतुर्भुजके मन्दिरकी रक्षा बडी ही चतुरता और दक्षतासे

हुई। इसी लिए ओडछेके लोग छत्रसालको ईश्वरका अवतार समझने लगे। स्वतन्त्रताके लिए उन्होंने तन, मन, धनसे लडना निश्चित किया।

ओडछेमें छत्रसालके विजयी होनेका समाचार वडी फुरतीसे सारे बुन्देलखण्डमें फैल गया। थोडी ही देरमें सबके मुँहसे यही सुनाई देने लगा कि छत्रसालने फिदाईखाँको हराकर कैद कर लिया। जो थोडे वहुत मुसलमान बुन्देलखण्डमें इधर उधर पडे हुए थे वे फिदाईखाँके कैद हो जानेकी खबर सुनकर भाग खडे हुए। ज्योंही युवक बुन्देलोंको यह मालूम हुआ कि छत्रसाल ओडछेमे स्वतन्त्रताके लिए युद्धकी तैयारियाँ कर रहे हैं त्यों ही उन युवकोंकी टोलियोंकी टोलियाँ उनके पास पहुँचने लगीं। छत्रसालका तेज और वल नित्यप्रति शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी तरह वढता गया।

दीवानखानेमें एकत्र राजाओं और सरदारोंको अपने पक्षमें होते देखकर छत्रसालको वहुत ही आनन्द हुआ था। लेकिन जव उन्होंने देखा कि शुभकरणसरीखे वीर भी हमारी ओरसे लडेंगे तव तो उनके आनन्दकी सीमा न रही। उन्होंने समझ लिया कि अव यह कार्य्य अवश्य पूरा हो जायगा।

यद्यपि दलपतिराय और शुभकरण दोनों परस्पर गले नहीं मिले तो भी उन्होंने युद्धमें जो अप्रतिम पराक्रम दिखलाया वह अवश्य ही इस योग्य था कि उसके लिए आकाशसे देवता उनपर पुष्प-वृष्टि करते। वे दोनों परस्पर नेत्रोंसे मिले, वदनकी प्रफुल्लतासे मिले, रणोत्साहके गर्जनसे मिले और इस भावनासे मिले कि हम लोग एक ही पक्षमें होकर लड रहे हैं। तो भी उन लोगोंको जितना आनन्द हुआ उतना आजतक ससारमें कदाचित् ही किसी और पिता–पुत्रको हुआ होगा।

लेकिन पुष्पके समान कोमल, नवनीतके समान मृदु और नक्षत्रके समान तेजवान् विमलदेवका अद्भुत धैर्य्य और शौर्य्य छत्रसालकी आँखोंके सामनेसे हटता ही न था। उन्होंने विमलको युद्धके अन्ततक तलवार चलाते हुए देखा था। श्रमसे रक्तवर्ण होनेके कारण जो ठीक दोपहरमें बाल सूर्य्यके समान सुन्दर जान पडता था, जिसके मुखपरके पसीनेको अपने हाथसे पोंछनेमें शुभकरणको अभिमान होता था, उस सुन्दर सुकुमार कुमारके एकदम अदृश्य हो जानेके कारण छत्रसालको रह रह कर बहुत ही आश्चर्य होता था। उन्हें सन्देह होने

लगा कि कहीं वह सुन्दर पुष्प रण-क्षेत्रमें गिर तो नहीं पड़ा और इसी लिए वे स्वयं उसे ढूँढनेके लिए जाने लगे। इसपर शुभकरणने हँसते हुए कहा,—

"छत्रसाल! तुम विमलके विषयमें चिन्ता न करो। वह सकुशल है, पर वह अभी तुम्हारे सामने नहीं आना चाहता।"

शुभकरणकी बात सुनकर छत्रसाल और भी चकराये। छायाकी तरह हर दम अपने साथ रहनेवाले सुकुमार मित्र विजयदेवसे उन्होंने अपने मित्र विमलका पता लगानेके लिए कहा। लेकिन उनसे भी उन्हें वही शुभकरणवाला उत्तर मिला। छत्रसाल बहुत ही चकित हुए। उन्होंने विजयदेवसे पूछा कि क्या विमलदेव मुझसे मिलना नहीं चाहते? इस पर विजयने उत्तर दिया कि उपयुक्त अवसर आनेपर वे स्वय ही आपसे मिलेंगे। छत्रसालने बड़ी कठिनतासे अपना समाधान किया और वे डाँडेर चलकर रणदूलहखाँका प्रबन्ध करनेकी तैयारी करने लगे।

प्राणनाथप्रभु और छत्रसालको कल्पनासे भी अधिक यश मिलने लगा। बुन्देलोंकी नैसर्गिक उदार मनोवृत्ति पूर्णरूपसे जागृत हो गई। धीरे धीरे छत्रसालकी शक्ति इतनी बढ गई कि ओडछेमें रहना उन्हें असम्भव जान पड़ने लगा। ओडछेका किला छोटा था और युद्धके कामके लिए उपयुक्त नहीं था, इस लिए प्राणनाथ महाराज और शुभकरणकी सम्मतिसे गढाकोटेके किलेमें सब सामान रक्खा गया और वहीं सैनिक केन्द्रस्थान बनाया गया। चामुण्डराय ओडछेमें रहकर वहाँकी रक्षा करने लगे।

हीरादेवी मुलाकाती दीवानखानेसे निकलते ही एक दम गायब हो गई। किसीको पता भी न लगा कि वह कब कहाँ चली गई। छत्रसालके एक दूतने आधी मरदानी पोशाक पहने एक पागल स्त्रीको दिल्लीकी ओर जाते हुए देखा था, पर यह निश्चय नहीं हो सका कि वह हीरादेवी ही थी या कोई और।

छत्रसालने गढाकोटेको अपनी सेनाका मुख्य केन्द्र बनाकर कुछ सेनाके साथ डाँडेरकी ओर प्रस्थान किया। उस समय शुभकरण और दलपतिरायने भी डाँडेरसे होकर अपनी राजधानी सागर जानेकी इच्छा प्रकट की। प्राणनाथ महाराजने सुफलादेवीसे मिलनेके लिए जाना चाहा, इस लिए छत्रसाल अपने साथ उन लोगोंके अतिरिक्त थोड़ीसी चुनी हुई सेना लेकर ही डाँडेरकी ओर बढ़े।

ढॉडेर जब एक ही पड़ाव बाकी रह गया तब अचानक विजयदेव भी गायब हो गये। पहले विमलको खोकर तो छत्रसाल दु खी हुए ही थे, इस बार विजयको भी खोकर वे और भी अधिक दु खी हुए। लेकिन प्राणनाथप्रभुके इस सूखे उपदेशसे ही उन्हें अपना समाधान करना पड़ा कि ससारमे जो कुछ होता है वह अच्छेके लिए ही होता है।

रणदूलहखाँको अपना राज्य देनेकी इच्छा करनेवाले कचुकीरायकी दशा बहुत ही शोचनीय हो गई थी। रणदूलहखाँको मालूम हो गया कि विजयाका विवाह किसी साधारण सरदारके लडकेके साथ नहीं बल्कि चोरीसे ओडछेके युवराज विमलदेवके साथ कर दिया गया है। उसने समझा कि कचुकीराय मेरे साथ छल कर रहे हैं और शायद मुझे राज्य देनेमें भी वे इसी प्रकारका कोई कपट करें। इसके अतिरिक्त विजयाके विमलदेवके साथ व्याहे जानेमे उसने अपना भारी अपमान समझा। इस लिए उसने बहुत ही नाराज होकर कचुकीरायको कहला दिया कि या तो तुम तुरन्त अपना सारा राज्य मेरे सुपुर्द कर दो और स्वयं मेरे वन्दी हो जाओ और नहीं तो युद्ध करने और मरनेके लिए तैयार हो जाओ। यद्यपि कंचुकीराय उसे अपना राज्य देना चाहते थे, पर अपने जीवनकालमे नहीं। पर जब उन्होंने देखा कि रणदूलहखॉ मुझको ही कैद करना चाहता है तब वे बहुत घबराये। विशेषत युद्धका प्रसग देखकर तो उनकी घबराहट और भी बढ़ गई। उनकी समझमें न आता था कि अब क्या करें। वे राज-पदको प्राणोंसे भी अधिक और प्राणोंको राजपदसे भी अधिक प्रिय मानते थे। वे दोनोंमेंसे एकको भी न छोड सकते थे और इसी लिए वे कुछ निश्चय भी न कर सकते थे।

सन्ध्याके समय स्वय रणदूलहखॉ क्रोधसे ऑखें लाल किये हुए कचुकीरायके दरबारमे पहुँचा। उस समय वह उन्हें ठीक यमदूतसा मालूम हुआ। उनके मुँहसे आप ही आप निकल गया,—

"इस यमदूतसे मेरी रक्षा कौन करेगा?"

इतनेमें ही किसीने मानो उनसे कहा,—"छत्रसाल।"

भयसे ऑखें फाड़कर कचुकीरायने सामने देखा। सचमुच उन्हें कुछ लोगोंके साथ छत्रसाल आते हुए दिखाई पडे। उन्हें निश्चय हो गया कि इस समय छत्र-

सालके अतिरिक्त और कोई मेरी रक्षा नहीं कर सकता। वे दौड़कर छत्रसालके पैरोंपर गिरना ही चाहते थे कि इतनेमे महाराज प्राणनाथने कहा,—

" अपने जामाताके पैर पड़ना ठीक नहीं। सकटसे आपकी रक्षा करना छत्रसालका कर्त्तव्य है।"

कञ्चुकीरायने थोड़े शब्दोंमे पर बड़े ही प्रेमसे छत्रसालका स्वागत किया, और उन्हें अपने बहुत ही पास एक आसनपर बैठाया। शुभकरण और दलपतिराय भी पास ही आसनोंपर बैठ गये। उसी समय प्रधान सज्जनराय भी दरबारमें पहुँच गये। दरबारके सब कार्य्य उनके आज्ञानुसार होने लगे। शुभकरणके साथ घूँघट काढे तीन स्त्रियाँ भी थीं जो परदेकी आड़में जाकर सुफलादेवीके पास बैठ गई। छत्रसालको इस बातका बहुत ही आश्चर्य था कि शुभकरणके साथ एक एक करके ये तीन स्त्रियॉं कहॉंसे हो गई। उन्हे चकित देखकर दलपतिराय मुस्करा रहे थे।

रणदूलहखाँको छत्रसालके दो सैनिकोंने गिरिफ्तार कर लिया। इसके उपरान्त सज्जनरायने प्राणनाथप्रभुसे कहा,—

" प्रभो! विन्ध्यवासिनीके गत वार्षिक महोत्सवके समय विमलदेव और राजकुमारी विजयाकी तैयार की हुई माला देवीने छत्रसालके गलेमें डलवाकर जो इच्छा प्रकट की थी, उसका पूर्णरूपसे पूरा होना यद्यपि असम्भव है तो भी रानी सुफलादेवीने मुझसे कहा है कि वे उसे अशत पूरा करना चाहती हैं। राजकन्या विजया राजा छत्रसालकी बहुत ही अनुरूप वधू है और इस सम्बन्धमे वर-माता सरलादेवी और वधू-माता सुफलादेवीमें पहले ही बातें हो चुकी हैं, और इसी लिए विजया पहलेसे ही छत्रसालकी वाग्दत्ता वधू हो चुकी है। यदि आपकी अनुमति हो तो शीघ्र ही विवाहका प्रबन्ध किया जाय।", प्राणनाथप्रभुने कञ्चुकीरायसे पूछा,—" आप रानी सुफलादेवीके विचारसे सहमत हैं न? छत्रसालके साथ आप अपनी कन्याका विवाह करना चाहते हैं न?"

कञ्चु०—" प्रभो! भला इससे बढकर और कौनसी बात हो सकती है? लेकिन कठिनता तो यह है कि विजयाका विवाह पहले ही विमलदेवसे हो चुका है।"

प्रा०—" नहीं! आप इसकी चिन्ता न करें। विजया और आपके राज्यको बचानेके लिए ही यह युक्ति की गई थी। विमलदेव भी वास्तवमें विजयाकी

तरह कुमारी ही हैं। इस लिए विजयाको अभी तक अविवाहिता और कुमारी ही मानना चाहिए।"

कचु०—(प्रसन्न होकर) "मैं कभी आपकी आज्ञासे वाहर नहीं हूँ। आप जो कहें वह सब मुझे मजूर है। मैं केवल यही चाहता हूँ कि मेरा राज्य रणदूलह-खॉके हाथमें न पड़ जाय।"

प्रभु०—"इस सम्वन्धमें आप कोई चिन्ता न करें।"

इतना कहकर प्रभुने विजयाको वुलवाया।

थोडी देर वाद विजया परदेसे वाहर आई। लेकिन वह अकेली नहीं थी। उसके साथ एक दूसरी सुन्दरी वाला भी प्राणनाथप्रभुकी ओर आ रही थी।

विजयाको तो सवने पहचान लिया, पर उसके साथवाली दूसरी वालाको शुभकरण, दलपतिराय और छत्रसालके अतिरिक्त और न कोई पहचान सका।

छत्रसालको जयसागर सरोवरवाले दैवी-सौन्दर्य्य और मानवी-सौन्दर्य्यका ध्यान आ गया। उन्होंने कई वार सुना था कि विमलदेव वेषधारी स्त्री है। उस समय उन्हें शंका होने लगी कि कहीं विन्ध्यवासिनीका भविष्य पूरा तो नहीं उतरेगा।

प्राणनाथप्रभुने विजयासे पूछा,—"विजया! मैंने तो तुम्हें अकेले वुलाया था, तुम इस वालाको अपने साथ क्यों ले आई?"

विज०—"देवी विन्ध्यवासिनीने हम दोनोंपर अनुग्रह किया है। हम लोग चाहती हैं कि उसका फल भी हम लोगोंको वरावर वरावर ही मिले।"

प्राण०—"क्या यही वाला युवराज विमलदेवके वेषमें थी?"

विज०—"जी हाँ।"

प्राण०—"लेकिन पहाड़सिंहकी कन्याका छत्रसालके साथ किस प्रकार विवाह सम्बन्ध हो सकता है?"

शुभकरण अपने आसनपरसे उठ खडे हुए और गम्भीरतापूर्वक कहने लगे, "यह विमला पहाड़सिंहकी कन्या नहीं है, वल्कि मेरी कन्या है।"

शुभकरणकी वात सुनकर सव लोग वहुत ही चकित हुए।

शुभकरणने लोगोंको चकित देखकर फिर कहा,—"आप लोगोंको यह सुनकर आश्चर्य हो रहा है कि विमलदेव अर्थात् विमला मेरी कन्या है। हीरादेवीने

चम्पतरायके विरुद्ध जो षड्यन्त्र रचा था, विमलदेव उसका एक मुख्य अंग था। हीरादेवीको कोई पुत्र नहीं था और उसे भय था कि ओड़छेका राज्य चम्पतराय या उनकी सन्तानके हाथ लग जायगा, इस लिए उसने चार गर्भवती स्त्रियोंको अपने पास महलमें रक्खा था और यह प्रसिद्ध कर दिया था कि मैं गर्भवती हूँ। हीरादेवीको आशा थी कि यदि उन चारों स्त्रियोंमेंसे किसी एकको भी पुत्र हुआ तो ओड़छेका राज्य चम्पतराय या उनकी सन्तानके हाथमें जानेसे बच जायगा। इन चारों स्त्रियोंमेंसे एक मेरी पत्नी भी थी। पहले बाकीकी तीनों स्त्रियाँ प्रसूत हुईं, पर उन सबको कन्यायें ही हुईं। अन्तमें मेरी स्त्रीके गर्भसे भी इसी कन्या विमलाका जन्म हुआ। हीरादेवी इससे बहुत दु:खी हुई। लेकिन वह सहजमें ही माननेवाली स्त्री नहीं थी, इसलिए उसने यह प्रसिद्ध किया कि मुझे पुत्र हुआ है। और तभीसे ओड़छेके युद्ध तक मेरी कन्या विमला विमलदेवके रूपमें रही थी।"

विमलदेवका इतिहास सुनकर सब लोगोंको बहुत ही आश्चर्य हुआ। हाँ, छत्रसालके आश्चर्यमें आनन्दका भी बहुत कुछ पुट मिला हुआ था।

सज्जनरावने इस बातपर बहुत ही आनन्द प्रकट किया कि विन्ध्यवासिनीकी इच्छा अशत नहीं बल्कि पूर्णत पूरी होती दिखलाई पड़ती है।

छत्रसालके प्रफुल्लित वदनकी ओर देखते हुए प्राणनाथप्रभुने विमला और विजयाके हाथ छत्रसालको पकड़ा दिये।

सब लोगोंने विन्ध्यवासिनीका जयजयकार मनाया और वर तथा वधुओंको शुभ आशीर्वाद दिये।

उस समय बदरुन्निसा और दलपतिरायके सम्बन्धकी भी प्राणनाथप्रभुको बहुत चिन्ता थी। उस समय तक वे कुछ भी कर्तव्य निश्चित न कर सके थे। पर तो भी उस प्रश्नको उसी अनिर्णीत अवस्थामें छोड़ना उन्हें उचित न जान पड़ा। अत उन्होंने पहले तो परदेमेंसे बदरुन्निसाको बुलाया और सब लोगोंको और विशेषत शुभकरणको दलपतिराय और बदरुन्निसाके पारस्परिक प्रेमकी बातें बतलाईं और तदुपरान्त यह निश्चित किया कि बदरुन्निसा यवन-कन्या है और एक हिन्दू राजकुमारके साथ उसका विवाह-सम्बन्ध होना लौकिक दृष्टिसे ठीक नहीं जँचता। इसके अतिरिक्त इस विवाह सम्बन्धसे सागरके राजकुलके

दूषित और कलंकित होनेकी भी सम्भवना थी, इस लिए उन्होंने यही निश्चित किया कि वदरुन्निसा कुमारी रहकर ही युवराज दलपतिरायकी सेवा करे। वद-रुन्निसाने इतनेमें ही अपने आपको धन्य माना। सब उपस्थित लोगोंको भी यह व्यवस्था बहुत ही ठीक मालूम हुई।

जिस दिन सब बुन्देले एकत्र हुए, जिस दिन शुभकरण और सब राजा छत्रसालके पक्षमें मिले उसी दिन बुन्देलखण्ड स्वतंत्र हो गया। रणदूलहखाँकी भी फिदाईखाँकी तरह जान बख्श दी गई, पर उसने कृतघ्नता की। हीरादेवीने बादशाहसे मिलकर बुन्देलखण्ड पर फिर आक्रमण करनेके लिए जो सेना भिजवाई थी, उसका अधिपत्य स्वय रणदूलहखाँने लिया। जिस समय गिरहा नामक गाँवमें विमला और विजयाके साथ बडे समारोहसे छत्रसालका विवाह हो रहा था, उसी समय उपयुक्त अवसर देख कर रणदूलहखाँने उनपर आक्रमण किया। ज्योंही यह समाचार छत्रसालको मिला, त्यों ही वे विवाहके कपड़े पहने हुए ही रणदूलहखाँसे लड़नेके लिए चल पड़े।

उस युद्धमें रणदूलहखाँ पूर्णरूपसे परास्त हुआ। हीरादेवी भी उसी युद्धमें मारी गई।

बुन्देलखंडको स्वतत्र करनेवाले राजा छत्रसालको विमल-विजयके साथ ही साथ विमला और विजया भी मिली, और शीघ्र ही उन्होंने बड़े समारोहसे अपनी राजधानीमें प्रवेश किया।
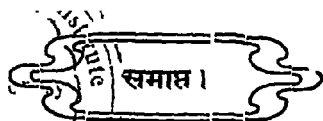
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीज ।

हमारी सीरीजके स्थायी ग्राहकोंको प्रारम्भमें केवल आठ आना प्रवेशफी भेजना होगी । उनको सीरीजकी सब पुस्तकें पौनी कीमतमें दी जाती हैं। अब तक इस सीरीजमें निम्नलिखित ग्रन्थ निकल चुके हैं जिनकी हिन्दीससारमें बडी इज्जत हुई है ।

१-२ **स्वाधीनता**—सुप्रसिद्ध विद्वान् जानस्टुअर्ट मिलकी लिवर्टीका अनुवाद । अनुवादक, सरस्वतीसम्पादक प० महावीरप्रसाद द्विवेदी । मूल्य दो रुपया ।

३ **प्रतिभा**—मानवचरित्रको उदार, उन्नत बनानेवाला अत्युत्तम उपन्यास । मूल्य सवा रुपया ।

४ **फूलोंका गुच्छा**—भावपूर्ण शिक्षाप्रद गल्पोंका सग्रह । मूल्य नौ आने ।

५ **आँखकी किरकिरी**—कविसम्राट् रवीन्द्र टागोरके प्रसिद्ध 'चोखेर वाली' उपन्यासका अनुवाद । मूल्य १॥=)

६ **चौबेका चिट्ठा**—सुप्रसिद्ध वगला लेखक श्रीयुत बावू वकिमचन्द्र चट्टोपाध्यायके कमलाकान्तेर-दफ्तरका अनुवाद । इसमें हँसी मजाकके ढँगपर राजनीति आदिके गूढ तत्त्व समझाये गये हैं । मूल्य बारह आने ।

७ **मितव्ययता**—डा० सेमुएल स्माइल्स साहबकी अँगरेजी पुस्तक थ्रिफ्टका अनुवाद । मूल्य पन्द्रह आने ।

८ **स्वदेश**—डा० रवीन्द्रनाथ टागोरके निवन्धोंका अनुवाद । मूल्य दश आने ।

९ **चरित्रगठन और मनोबल**—प्रसिद्ध अमेरिकन विद्वान् राल्फ वाल्डो ट्राइनकी 'केरेक्टर विल्डिंग थाट पावर'का अनुवाद । मूल्य तीन आने ।

१० **आत्मोद्धार**—डा० बुकर टी. वाशिंगटनका आत्मचरित । मूल्य एक रुपया ।

११ **शान्तिकुटीर**—शिक्षाप्रद गार्हस्थ्य उपन्यास । मूल्य चौदह आने ।

१२ **सफलता और उसकी साधनाके उपाय**—मूल्य बारह आने ।

१३ अन्नपूर्णाका मंदिर—बहुत ही करुणा-रसपूर्ण उपन्यास । मूल्य बारह आने ।

१४ स्वावलम्बन—डाक्टर सेमुएल स्माइल्सके 'सेल्फ हेल्प'का अनुवाद । मूल्य डेढ़ रुपया ।

१५ उपवासचिकित्सा—उपवाससे तमाम रोगोंको आराम करनेके विषयमें इस पुस्तकमें विचार किया गया है । बडे कामकी पुस्तक है । मूल्य बारह आने ।

१६ सूमके घर धूम—एक सभ्य हास्यपूर्ण प्रहसन । मूल्य तीन आने ।

१७ दुर्गादास नाटक—प्रसिद्ध नाटककार द्विजेन्द्रलालरायके अपूर्व नाटकका अनुवाद । मूल्य एक रुपया ।

१८ वंकिम-निबन्धावली । स्वर्गीय वंकिम बाबूके चुने हुए उत्कृष्ट निबन्धोंका अनुवाद । द्वितीयावृत्ति । मू० ॥।=)

१९ छत्रसाल । बुन्देलखण्ड-केसरी छत्रसालके ऐतिहासिक चरित्रके आधारपर लिखा हुआ देशभक्तिपूर्ण उपन्यास । द्वितीयावृत्ति । मू० १॥)

२० प्रायश्चित्त । बेलजियमके सर्वश्रेष्ठ कवि मेटरलिंकके एक भावपूर्ण नाटकका हिन्दी अनुवाद । मूल्य ।)

२१ अब्राहम लिंकन । गुलामोंको स्वाधीन करनेवाले अमेरिकाके प्रसिद्ध प्रेसीडेण्टका जीवनचरित । मू० ॥=)

२२ मेवाड़-पतन । बंग-लेखक द्विजेन्द्रलाल रायके अपूर्व ऐतिहासिक नाटकका अनुवाद । द्वितीयावृत्ति । मू० ॥।)

२३ शाहजहाँ । द्विजेन्द्रबाबूका ऐतिहासिक नाटक । मू० ॥।=)

२४ मानव-जीवन । सदाचारसम्बन्धी उत्कृष्ट ग्रंथ । मू० १।=)

२५ उस पार । द्विजेन्द्रबाबूके एक अतिशय हृदयद्रावक और शिक्षाप्रद सामाजिक नाटकका अनुवाद । मूल्य १)

२६ ताराबाई । द्विजेन्द्रबाबूके एक पद्य-नाटकका अनुवाद । हिन्दीमें सबसे पहला खड़ी बोलीका पद्य नाटक । मूल्य १)

२७ देश-दर्शन । द्वितीयावृत्ति । मू० १॥।)

२८ हृदयकी परख । भाव-पूर्ण सचित्र उपन्यास । मू० ॥।=)

८ **पिताके उपदेश** । एक सुशिक्षित पिताके अपने विद्यार्थी पुत्रके नाम भेजे हुए सदुपदेशपूर्ण पत्रोंका संग्रह । तृतीयावृत्ति । मूल्य =)

९ **सन्तान-कल्पद्रुम** । इसमें वीर, विद्वान् और सद्गुणी संतान उत्पन्न करनेके विषयमें वैज्ञानिक पद्धतिसे विचार किया गया है । मूल्य ।॥)

१० **मणिभद्र** । एक जैन-कथानकके आधारपर लिखा हुआ सुन्दर भावपूर्ण उपन्यास । कई अच्छे अच्छे चित्र हैं । मूल्य ॥=)

११ **कोलम्बस** । नई दुनियाका पता लगानेवाले प्रसिद्ध उद्योगी और साहसी नाविकका जीवन-चरित । मूल्य ॥।)

१२ **ठोक पीटकर वैद्यराज** । मौलियरके फ्रेंच प्रहसनका सुन्दर हिन्दी रूपातर । अतिशय हास्यप्रद । मू० ।~)

१३ **बूढ़ेका ब्याह** । खडी बोलीका सचित्र काव्य । द्वितीयावृत्ति । मू० ।=)

१४ **दियातले अँधेरा** । (गल्प) मू० ~)॥

१५ **भाग्यचक्र** । (गल्प) मू० ~)

१६ **विद्यार्थीके जीवनका उद्देश्य** । तृतीयावृत्ति मू० ~)

१७ **सदाचारी बालक** । एक शिक्षाप्रद कहानी । मू० =)

१८ **बच्चोंके सुधारनेका उपाय** । बुरेसे बुरे बच्चोंको सदाचारी, सुशील, विनयी और बुद्धिमान बनानेके उपाय । मू० ॥)

१९ **अस्तोदय और स्वावलम्बन** । अर्थात् गिरना, उठना और अपने पैरों खडे होना । स्वावलम्बनकी शिक्षा देनेवाली अपूर्व पुस्तक । मू० १=)

२० **देव-दूत** । देशभक्तिपूर्ण खण्डकाव्य । ले०, सुकवि पं० रामचरित उपाध्याय । मू० ।=)

२१ **विधवा-कर्तव्य** । एक अनुभवी विद्वानकी लिखी हुई । मू० ॥)

२२ **भारत-रमणी** । द्विजेन्द्रबाबूका सुप्रसिद्ध सामाजिक नाटक । मू० ।॥=)

२३ **योग-चिकित्सा** । मू० =), २४ **दुग्ध-चिकित्सा** =)

२५ **प्राकृतिक-चिकित्सा** ।=), २६ **श्रमण नारद** =)

२७ **अंजना-पवनंजय काव्य** । मू० =)॥

मिलनेका पता—

मैनेजर, हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, पो० गिरगॉव, बम्बई ।